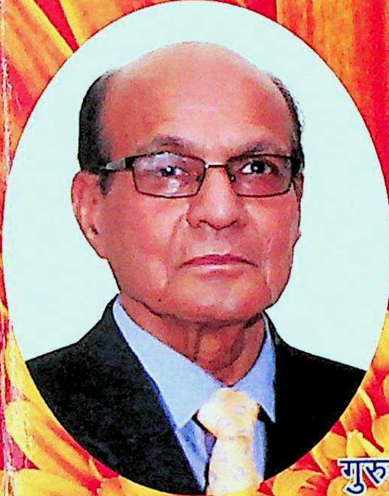
संस्कृत–त्रैमासिकी
अङ्काः १ – ४
यू.जी.सी. केयर–लिस्टेड
ISSN : २२७८–३७४१
जनवरी २०२१–अक्टूबर २०२२
वर्षद्वयम् ४५–४६

अजस्रा

(प्रो० अशोककुमारकालिया–पद्मश्री प्रो० बृजेशकुमारशुक्ल)
आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कः





गुरुतत्त्वञ्च धीमहि



अखिल-भारतीय-संस्कृत-परिषद्
लखनऊ

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नियमाः

१– अजस्रानाम्नीयं त्रैमासिकी संस्कृतपत्रिका मकर–मेष–कर्क– तुला–सङ्क्रान्तिषु (जनवरी–अप्रैल–जुलाई–अक्तूबरमासेषु) प्रकाशिता भवति।

२– अस्याः पत्रिकाया उद्देश्यं संस्कृतसम्पदां संरक्षणम्, विभिन्नपद्धतिजुषां रचनानां संवर्धनम्, प्रातिभनूतनकृतीनां संसर्जनञ्च।

३– समालोचनाभिलाषुकैः प्रकाशकैर्लेखकैर्वा नवीनकृतीनां द्वयी प्रेषणीया।

४– पत्रिकायामस्यां कवितालेखकथानाटकादीनि शोधनिबन्धाश्च स्थानं प्राप्स्यन्ति।

५– प्रकाशनाय प्रेषिताः सर्वविधा रचना एकस्मिन् पत्रपृष्ठे सुस्पष्टाक्षरै–र्लिखिताः टङ्किता वा स्युः।

६– कृतीनां प्रकाशनस्य सम्पादनस्य च सर्वाधिकारः सम्पादके संरक्षितोऽस्ति।

७– अस्वीकृता लेखाः टिकटसहितपत्रपुटके लब्धे सति लेखकेभ्यः प्रत्यावर्तिष्यन्ते।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संस्कृत-त्रैमासिकी यू.जी.सी. केयर–लिस्टेड ISSN-२२७८–३७४१

अजस्रा

प्रो० अशोककुमारकालिया–पद्मश्री प्रो० बृजेशकुमारशुक्ल–आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कः

जनवरी–२०२१–अक्टूबर २०२२ अङ्काः १–४ वर्षद्वयम् ४५–४६

सम्पादकः
प्रो० प्रयागनारायणमिश्रः



अखिल–भारतीय–संस्कृत–परिषद्
देववाणी–भवनम्, अलीगञ्जम्,
लखनऊ–२२६०२४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शुल्कम्

वार्षिकम्	२४०.००	रूप्यकाणि	$ २५.००
एकस्याऽङ्कस्य	६०.००	रूप्यकाणि	$ १०.००
आजीवनम्	५१००.००	रूप्यकाणि	$ २१०.००
आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कस्याऽस्य	११००.००	रूप्यकाणि	$ १२५.००

प्राज्ञपरिषत्

प्रो० राधावल्लभत्रिपाठी

प्रो० राजेन्द्रमिश्रः

प्रो० आजादमिश्रः

प्रो० दीप्तित्रिपाठी

प्रो० गङ्गाधरपण्डा

प्रो० श्रीनिवासवरखेडी

प्रो० रमेशकुमारपाण्डेयः

प्रो० मुरलीमनोहरपाठकः

प्रो० बिन्दाप्रसादमिश्रः

प्रो० राजारामशुक्लः

प्रो० हरेरामत्रिपाठी

प्रो० शशितिवारी

प्रो० रामलखनपाण्डेयः

प्रो० रामसेवकदुबे

प्रो० रामसुमेरयादवः

प्रधान–सम्पादकः

प्रो० रमाशङ्करमिश्रः

सम्पादक :

प्रो० प्रयागनारायणमिश्रः

अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्, देववाणी–भवनम्, अलीगञ्ज, लखनऊ की ओर से मन्त्री, अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् द्वारा प्रकाशित और प्रो० प्रयागनारायण मिश्र द्वारा सम्पादित तथा श्री मनीष मेहता द्वारा प्नार आफसेट, 17 अशोक मार्ग, हजरतगञ्ज, लखनऊ से मुद्रित।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आनंदीबेन पटेल
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश





राज भवन
लखनऊ - 226 027

14 जुलाई, 2022

सन्देश

मुझे यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ द्वारा परिषद के पूर्व उपाध्यक्ष प्रो0 अशोक कुमार कालिया तथा पूर्व मंत्री प्रो0 बृजेश कुमार शुक्ल की स्मृति में 'आचार्यद्वय–स्मृति–विशेषांक' का प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि प्रो0 अशोक कुमार कालिया तथा प्रो0 बृजेश कुमार शुक्ल की स्मृति में प्रकाशित विशेषांक से समाज को उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचित होने का अवसर प्राप्त होगा। मैं इस सराहनीय कार्य के लिए अखिल भारतीय संस्कृत परिषद को साधुवाद देती हूँ।

'आचार्यद्वय–स्मृति–विशेषांक' के सफल प्रकाशन के लिये मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करती हूँ।

आनंदीबेन

(आनंदीबेन पटेल)

दूरभाष : 0522-2236497 फैक्स : 0522-2239488 ईमेल : hgovup@gov.in वेबसाइट : www.upgovernor.gov.in

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डॉ० दिनेश शर्मा
सदस्य विधान परिषद
पूर्व उप मुख्यमंत्री
उत्तर प्रदेश



क- № 049311

दिनांक 07/08/2022



सन्देश

मुझे यह जानकर अतीव प्रसन्नता हो रही है कि अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ द्वारा अजस्रा नामक पत्रिका के **आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांक** का प्रकाशन किया जा रहा है।

संस्कृत सभी भाषाओं की प्रसूता होने के साथ सभी शास्त्रों और दर्शनों के साथ ज्ञान-विज्ञान का मूल श्रोत है। वेद-वेदांग, दर्शन-साहित्य-ज्योतिष, आयुर्वेद और पुराण तथा पुराणगत वाड्मय संस्कृत भाषा में ही अपने ज्ञान-विज्ञान के माध्यम से जन साधारण का कल्याण करने में सक्षम हैं।

संस्कृत का प्रचार-प्रसार करने हेतु स्थापित अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ द्वारा अपने पूर्व उपाध्यक्ष राष्ट्रपति जी द्वारा सम्मानित प्रो० अशोक कुमार कालिया तथा पूर्व मंत्री पद्मश्री प्रो० बृजेश कुमार शुक्ला जी की स्मृति में **आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांक** का प्रकाशन करके इन दोनों आचार्यो के व्यक्तित्व तथा कर्तृत्व के साथ स्तरीय शोधपत्रों द्वारा संस्कृत-साधना में अपना जीवन समर्पित करने वाले आचार्यो के प्रति श्रद्धापूर्वक सच्ची श्रद्धांजलि प्रस्तुत की जा रही है। इससे समाज में संस्कृत सेवा करने वाले तथा भारतीय संस्कृति के संरक्षण में समर्पित विद्वानों के सम्मान की सुन्दर परम्परा विकसित होगी। अतः इसके लिए अखिल भारतीय संस्कृत परिषद लखनऊ के पदाधिकारी तथा अजस्रा के सम्पादक प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र प्रशंसा के अधिकारी हैं।

पत्रिका के सफल प्रकाशन की मंगल कामनाओं के साथ दोनों आचार्यो का विनम्र वाक्पुष्पांजलि समर्पित है।

भवदीय,
(हस्ताक्षर)
(डॉ० दिनेश शर्मा)

प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र,
सम्पादक-अजस्रा,
अखिल भारतीय संस्कृतपरिषद, लखनऊ।

268/10, मास्टर कन्हैया लाल रोड, ऐशबाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश
दूरभाष : 0522-2740409, 9455003929 ई-मेल : profdineshsharma@gmail.com

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ब्रजेश पाठक
उप मुख्यमंत्री



चिकित्सा शिक्षा, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य,
परिवार कल्याण तथा मातृ एवं शिशु
कल्याण विभाग, उत्तर प्रदेश
कार्यालय कक्ष संख्या–99, 100, मुख्य भवन,
विधान सभा सचिवालय
दूरभाष– 0522–2238088/2213272 (का0)
लखनऊः दिनांक



शुभकामना संदेश

संस्कृत समस्त भाषाओं की जननी होने के साथ–साथ शास्त्र व दर्शन सहित ज्ञान–विज्ञान का मूल भी है। वेद–वेदांग, दर्शन–साहित्य, ज्योतिष–आयुर्वेद तथा पुराण एवं पौराणिक वाङ्मय संस्कृत में ही अपने ज्ञान–विज्ञान से जन मानस को उपकृत करते है।

अतः संस्कृत का प्रचार–प्रसार करने हेतु स्थापित अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ द्वारा किया जा रहा **आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांक** का प्रकाशन अपने आचार्यों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है। इससे समाज के समस्त संस्कृत सेवी विद्वानों के सम्मान की सुन्दर परम्परा विकसित होगी जो भारतीय संस्कृति के संरक्षण में सहायक सिद्ध होगी।

मैं इस हेतु अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ को पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु शुभकामनाएं प्रेषित करते हुए परिषद के आचार्यों को विनम्र पुष्पांजलि अर्पित करता हूँ।

(ब्रजेश पाठक)

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी
कुलपति
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित
(पूर्व में राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान,
शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार के अधीन)



Prof. Shrinivasa Varakhedi
Vice-Chancellor
Central Sanskrit University
Established by an Act of Parliament
(Formerly Rashtriya Sanskrit Sansthan,
Under Ministry of Education, Govt. of India)

के.सं.वि./कुलपति-101/2022-23 / 22

दिनांक 18.04.2022



सन्देशः

उत्तरप्रदेशस्य लखनऊमहानगरस्य लब्धप्रतिष्ठ- संस्थया अखिल- भारतीय- संस्कृत - परिषदा प्रकाशित-त्रैमासिक-पत्रिकायाःसाम्प्रतिकः संयुक्ताङ्कः संस्कृत-परिषदः पूर्वोपाध्यक्षानां संपूर्णानंदसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिचराणां यशःशेषानां राष्ट्रपतिसम्मानितानां प्रो.अशोक-कुमारकालियामहोदयानामाथ च पद्मश्रीविभूषितानां यशोवपुषां प्रोफेसर बृजेशकुमारशुक्लमहा-भागानाम् अखिल -भारतीय- संस्कृत- परिषदः पूर्वमंत्रिणां, लखनऊविश्वविद्यालयस्य पूर्वकला-संकायाध्यक्षवर्याणां ,संस्कृतप्राकृतभाषाविभागाध्यक्षचराणां संयुक्तस्मृतौ आचार्यद्वयस्मृतिविशेषा-ङ्करूपेण प्रकाश्यत इति विज्ञाय तोष उपजायते।

यतोहि विगतवर्ष आकस्मिकाकाले आचार्यद्वयस्य परमप्रयाणमाकर्ण्यसंस्कृतजग-दिदमति विषादग्रस्तं जातम्।परन्तु को नु नाम विधेर्विधानमवरोद्धुं पारयतीति विचिन्त्य-धैर्यं धार्यते।

प्रो.अशोककुमारकालियामहोदय स्याप्रतिमं व्यक्तित्वं कर्तृत्वञ्चास्ति सर्वजनविदितम्। नैकवारं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानमुपकृतमेभिराचार्यवर्यैः।पाञ्चरात्रागमपरम्परायां विश्वविश्रुतविद्वांसो विशिष्टाद्वैत दर्शन मर्मज्ञाश्चासन् प्रो. कालियामहोदयः। बहुपरिचिताः सुहृद्वर्याःप्रो.बृजेशकुमार शुक्ल-महाभागाः विविधविद्याविशारदाः प्रथितयशाःसंस्कृतमनीषिण आसन्। आचार्यद्वयानामभावः प्रति-क्षणमनुभूयते। सम्प्रति संस्कृताकाशे तेषां कर्तृत्वं देदीप्यमानभास्करालोकमिवालोकयति संस्कृत - लोकम्।

आजीवनं संस्कृतसाधनाव्रतीनां गुरुशिष्यस्वरूपाणां वशीकृतशारदानामाचार्यद्वयानां संस्मृतौ संयुक्तरूपेण अजस्रापत्रिकाया आचार्यद्वय-स्मृतिविशेषाङ्करूपेण प्रकाशनमभिकल्प्या-खिल- भारतीयसंस्कृतपरिषदा खलु प्रशस्त्य उपक्रम समुपस्थाप्यते। एतदर्थमियमखिल भारतीय-संस्कृतपरिषत् साधुवादपदवीमर्हति।पत्रिकायाःसफलसम्पादनप्रकाशनार्थं परिषदो मन्त्री सम्पाद-कश्चाजस्रायाः प्रयागनारायणमिश्रवर्यः सस्नेहं आशीर्वादार्हः इति मत्वा शुभाशंसनं संप्रेष्यते।

विद्वज्जनविधेयः

(हस्ताक्षर)

प्रो. श्रीनिवास वरखेडी

56-57, सांस्थानिक क्षेत्र, जनकपुरी, नई दिल्ली - 110058
56-57, Institutional Area, Janakpuri, New Delhi - 110058 (INDIA)
Ph. No.: (O) 011-28523949, EPABX : 28524993, 28521994, 28524995
EMAIL : vicechancellorcsu@gmail.com / vc@csu.co.in, WEBSITE : www.sanskrit.nic.in

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो. मुरलीमनोहरपाठकः
कुलपतिः
Prof. Murlimanohar Pathak
Vice Chancellor



श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
(केन्द्रीयविश्वविद्यालयः)
'ए' ग्रेड (नैक)
बी-4, कुतुबसांस्थानिकक्षेत्रम्, नवदेहली-110 016 (भारत)

Shri Lal Bahadur Shastri National Sanskrit University
(Central University)
'A' Grade (NAAC)
B-4, Qutub Institutional Area, New Delhi-110 016 (INDIA)

क्रमांक : ला॰ ब॰ शा॰ / वी॰ सी॰ / २०२२ / ४२ दिनांक : २१ / ०३ / २०२२



शुभाशंसनम्

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदो लखनऊस्थितायाः अजस्रानाम्नीपत्रिका अजस्रं प्रकाश्यते इति नाविदितं विदुषां सुरभारतीसमुपासकानाम्। पत्रिकेयं सर्वत्र प्रसरन्ती अज्ञानान्धकारं नाशयतीति सुविदितचरम्। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः स्थापनायां कीर्तिशेषाणां श्रीमतां सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिचराणां अथ च संस्कृतप्राकृतभाषाविभागस्य अध्यक्षचराणां श्रीमतां अशोककुमारकालियामहोदयानां तथा च पद्मश्रीरित्युपाधिभाजां विमलशेमुषीजुषां संस्कृतप्राकृतभाषाविभागस्य प्राक्तनाध्यक्षवराणां यशश्शेषाणां श्रीमतां बृजेशकुमारशुक्लमहाभागानां कीदृशी भूमिका आसीदिति सर्वे विदन्ति। अस्माकं दौर्भाग्याद् द्वावप्येतौ संस्कृतसंस्कृतिमनीषिणौ कोरोनाविषाणुना अकालकालकवलिता जाताः। घटनयानया समग्रमपि संस्कृतजगत् शोकाकुलम्। एतैर्महानुभावैरेव अजस्रानाम्नीपत्रिकायाः प्रकाशनमपि समारब्धम्। सन्तोषस्य विषयोऽयं यत् पत्रिकायाः एतस्याः सम्पादकमण्डलेन एतस्या आगामि–अंकस्य आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांकरूपेण प्रकाशनार्थं संकल्पो विहितोऽस्ति।

अजस्रापत्रिकायाः आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांकरूपेण प्रकाशनावसरे सम्पादकवर्यान् सभाजयामि, अथ च सफलप्रकाशनार्थं स्वकीयाः शुभकामनाः सम्प्रेष्य दिवंगतस्य आचार्यद्वयस्य पुण्यस्मृतौ प्रणतिततीः विनिवेदयामि। इति शम्।

21.03.2022
(मुरलीमनोहरपाठकः)

Ph. : 011-26851253, 26564003,
E-mail : profmpathak@gmail.com, vcslbsrsv@yahoo.co.in

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

• प्रो० देवीप्रसादत्रिपाठी
कुलपतिः

Prof. Devi Prasad Tripathi
Vice Chancellor



उत्तराखण्डसंस्कृतविश्वविद्यालयः
हरिद्वार-देहली-राष्ट्रीयराजमार्गः
बहादराबादः, हरिद्वारम्-249402 (उत्तराखण्डम्)
सचलदूरभाषः/M : 9868155588
ई-मेलसङ्केतः/E-mail : vc@usvv.ac.in
अन्तर्जालम्/Website : www.usvv.ac.in
Haridwar-Delhi-National Highway
Bahadrabad, Haridwar-249402 (Uttarakhand)



पत्रांक 1669/कुलपतिपरल

दिनांक 22-03-2022

सन्देशः

लक्ष्मणपुरस्थाखिलभारतीयसंस्कृतपरिषद उपाध्यक्षान् सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिचरान् स्मृतिशेषान् प्रो.अशोककुमारकालियामहोदयान्, लखनऊविश्वविद्यालयस्य भूतपूर्वकलासंकायाधिष्ठातॄन् संस्कृतविभागाध्यक्षचरान् लक्ष्मणपुरस्थाखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदो मन्त्रिचरान् यशःशेषान् पद्मश्रीप्रो. वृजेशशुक्लमहोदयांश्चावलम्ब्य तत्स्मृतौ परिषदा प्रकाश्यमानाया अजस्राख्यायाः शोधपत्रिकाया अग्रिमोंऽक आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांकरूपेण प्रकाशयिष्यत इति मोदास्पदम्। एतयोर्द्वयोरपि विदुषोः संस्कृततच्छास्त्रसेवादिमार्गे निरुपमं योगदानं वर्तते। तत्र प्रो.अशोककुमारकालियामहोदयानां वैदुष्येण सह प्रशासनकौशलमप्यत्यन्तं श्लाघनीयमासीत्। एतेषां कुलपतित्वे सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये नैकविधानि प्रशस्तकार्याणि जातान्येव, "उत्तरप्रदेशराज्यविश्वविद्यालय अधिनियम, 1973, राष्ट्रपति अधिनियम सं. 10, सन् 1973" इत्यस्य निदर्शिकापि प्रथमतः प्रकाशिता, यामधिनियमनिदर्शिकायामाश्रित्य अद्यापि सर्वा प्रशासनादिव्यवस्था प्रचलति। अस्माकम् उत्तराखण्डसंस्कृतविश्वविद्यालयोऽपि तामेव निदर्शिकामनुसृत्य प्रशासनादिसमस्तकार्यकलापं सम्पादयति। एवमेव पद्मश्रीप्रो०बृजेशशुक्लमहोदयानाम् अनुपमसहयोगेन लखनऊविश्वविद्यालयीयसंस्कृतविभागान्तर्गतज्योतिर्विज्ञानविभागस्य समारम्भपुरस्सरं सफलं संचालनमभवदित्यभूतपूर्वकार्यं तत्। एतौ द्वावपि विद्वांसौ संस्कृतसंस्कृतिसंरक्षणसंवर्धनप्रचारप्रसारादिकर्मणि सततं समर्पितात्मानौ अत्यन्तं सरलस्वभावौ सहजौ कर्मठौ मधुरव्यवहारौ प्रशासनादिविविधकार्यनैपुण्यचणौ चास्ताम् किन्तु कालोऽयं दुरतिक्रमो नैव केनाप्यवरोद्धुं शक्य इति विदितमेव। एकस्मिन्नेव वर्षे विद्वद्द्वयस्य परलोकगमनं संस्कृतजगतः साहित्यजगतश्चापूरणीयक्षतिरिति कस्य सहृदयस्य हृदयं न दूयते। द्वाभ्यामप्येताभ्यां विबुधाभ्यां सह ममातिशयितः सम्बन्धः समासीत्। अद्यापि स्मारं स्मारं समुदेति हृदये काचिदनिर्वचनीयवेदनोर्मिमाला। वस्तुत एतादृशविदुषां स्मृतौ यत्किमपि सत्कार्यमनुष्ठीयते तत् सकलमपि साक्षात् सरस्वत्या वाङ्मयी सपर्या वर्तत इति मे मतिः।

सम्प्रति आचार्यद्वयव्यक्तित्वकर्तृत्वादिप्रकाशनपरकसंस्मरणलेखादिपरिपूर्णोऽयम् अजस्राया अंकः परिषदा प्रकाश्यते। नूनमेवायम् आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांको यूनां जिज्ञासूनां च कृते प्रेरणाप्रदायक उपकारकश्च भविष्यतीति मदीयो द्रढीयान् विश्वासो वर्तते। अस्मिन् प्रकाशनकर्मणि संलग्नेभ्यः सर्वेभ्योऽपि धन्यवादवितितिं वितरन्नहमस्य प्रकाशनकार्यस्य साफल्यं कामये।

(प्रो. देवीप्रसादत्रिपाठी)
कुलपतिः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रोफेसर डॉ. रामसेवक दुबे
कुलपतिः
Prof. Dr. Ram Sewak Dubey
Vice Chancellor



जगद्गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः
JAGADGURU RAMANANDACHARYA, RAJASTHAN SANSKRIT UNIVERSITY
वेबसाईट : www.jrrsanskrituniversity.ac.in
ई-मेल- jrrsu@yahoo.com टेलीफोन: 0141-2850551-75



सन्देशः

लक्ष्मणपुरस्थयाऽखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा स्वकीयस्योपाध्यक्षचरस्य राष्ट्रपति-सम्मानितस्य प्रो.अशोककुमारकालियामहोदयस्याथ च परिषदःपूर्वमन्त्रिणः पद्मश्रीप्रो०बृजेशकुमारशुक्लवर्यस्य संयुक्तस्मृतौ आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कस्य प्रकाशनं क्रियते, इति विज्ञाय मनसि तोषो जायते। यतो हि विविध विद्याममर्ज्ञानामाचार्यद्वयानामस्त्यपूर्वं योगदानमखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदो विकासे तथ्यमिदमस्ति सर्वविदितमेव। पाञ्चरात्रागमशास्त्रस्य विशिष्टाद्वैतवेदान्तस्य चाऽप्रतिमो विश्वविश्रुतविद्वान् आसीत् सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिचरः गुरुकल्पःप्रो.अशोककुमारकालियामहाभागः,येनाऽऽजीवनं संस्कृतोत्थानाय संस्कृतिसंरक्षणाय चाजस्रप्रयत्नः कृतः॥ स्वभावेन सरलःपरमसाधुहृदयः प्रो.कालियावर्यो रागद्वेषरहितः सिद्धकविरप्यासीत्। पद्मश्री प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यस्य सम्पूर्णमेव जीवनमासीद् आदर्शप्रतिमानं संस्कृतसाहित्याराधनतत्पराणाम् । काव्य-साहित्य-ज्योतिष-तन्त्र-वेद-वेदाङ्गादीनां विविधविद्यानां मर्मज्ञः कविपुङ्गवो बन्धुवर प्रो० शुक्लःपरमसहृदयः सज्जनश्चासीत् ममममित्रम्॥ एतेषामाचार्यद्वयानामाकस्मिकनिधनेनाखिलस्यापि संस्कृतजगतोऽपूर्णनीया महती क्षतिरभवत् । आचार्यद्वयानां शिष्येन प्रो० प्रयागनारायणमिश्रेण सङ्कल्पिता अजस्रापत्रिकायाः आचार्यद्वयविशेषाङ्कप्रकाशनयोजनाऽतीव प्रासङ्गिका प्रशस्त्या चाभाति यतोहि अस्य प्रकाशनेन न केवलं संस्कृतसमुपसकानामाचार्यद्वयानां कर्तृत्वं लोकसञ्ज्ञानविषयत्वमुपयास्यत्यपितु सरस्वतीवरदपुत्राणां योगदानं प्रति श्रद्धाञ्जलिसमर्पणोपक्रमोऽपि साफल्यमधिगमिष्यति। एतदर्थम् अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदियं भूरिशो धन्यवादार्हा। पत्रिकायाः सफलप्रकाशनार्थं शुभकामनाः ॥

7.11.2022
(प्रोफेसर रामसेवकदुबे)

मदाऊ, भांकरोटा-मुहाना लिंक रोड़, जयपुरम्, (राज.)-302026
Madau, Bhankrota- Muhana Link Road, Jaipur, (Raj.)-302026

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्
'देववाणीभवनम्' सेक्टर 'बी', अलीगंज
लखनऊ – 226 024
दूरभाष– 0522-4113350
मो०– 7007684804



Ph.: (0522) 4113350
Akhila Bharatiya Sanskrit Parishad
'Devvani Bhawanam', Sector 'B', Aliganj
Lucknow - 226 024
Mob.: 7007684804
Email: absp1951@gmail.com

पत्रांङ्क :.................................

दिनांक :.................................



अध्यक्षीयम्

अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद् लखनऊ के सर्वविध उत्कर्ष में विविध पदों पर रहते हुए आजीवन सराहनीय भूमिका का निर्वाह करने वाले प्रो0 अशोक कुमार कालिया तथा इनके परम शिष्य प्रो0 बृजेश कुमार शुक्ल के अप्रतिम वैदुष्य, संस्कृत साधना तथा परिषद् के प्रति इनके अनुराग का मैं परिषद् के अध्यक्ष के रूप में लगभग पन्द्रह वर्षों से साक्षी रहा हूँ। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के यशस्वी कुलपति के दायित्व से मुक्त होकर लखनऊ आने के बाद शायद ही कोई ऐसा कार्यदिवस रहा हो जब प्रो0 कालिया जी परिषद् न आये हों। नित्यप्रति समय से परिषद् आकर प्रत्येक कार्य मे सदैव यथावश्यक परामर्श करके अपने अप्रतिम सहयोगी परम मेधावी शिष्य पद्मश्री प्रो0 बृजेशकुमार शुक्ल के साथ मिलकर यह परिषद् के समुत्कर्ष हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहे। इन दोनों गुरुशिष्यों का पारस्परिक अनुराग, श्रद्धा, समर्पण तथा विश्वास आने वाली पीढ़ी के लिए आदर्श प्रतिमान है। विगत वर्ष कोरोना काल से कवलित होकर इन दोनों के लगभग एक साथ हुए असामयिक आकस्मिक निधन से अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद् की ही नहीं सम्पूर्ण संस्कृत जगत् की अपूरणीय क्षति हुई है।। इन दोनों की अनुपस्थिति मेरे लिए वेदना का विषय है। यही वेदना परिषद् के लिए संवेदना बनकर हृदय पर भारस्वरूप प्रतीत होती है। परन्तु नियति के विधान के समक्ष नतमस्तक होकर हम लोग चाहकर भी किंकर्तव्यविमूढ़ बने हुए हैं। परिषद् इनके योगदान के लिए इनकी ऋणी है। अतः यशः शेष इन दोनों की अनुपस्थिति में इनकी पावन स्मृति में अखिल भारतीय सस्कृत–परिषद् द्वारा **अजस्रा** के आगामी अंक को **आचार्यद्वयस्मृतिविशेषांक** के रूप में प्रकाशित करने का निर्णय लेकर इन महान् विभूतियों के प्रति श्रद्धा पूर्वक कृतज्ञात का निवेदन किया जा रहा है, यह सन्तोष का विषय है। **आचार्यद्वयसमृतिविशेषांक** के सफल प्रकाशन के साथ परिषद् के उत्कर्ष हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएं''

(श्री रमेश चन्द्र त्रिपाठी)
अध्यक्ष
अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद
अलीगंज, लखनऊ

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुरुप्रवर पद्मश्री प्रो० बृजेशकुमारशुक्ल–स्मृतिवीथिका

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सम्पादकीयम्

लक्ष्मणपुरस्थ–लब्धप्रतिष्ठसंस्थाया अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः स्थापनकालादेव स्वकीयेन वैदुष्येण, त्यागेन, निष्ठया, समर्पणेन, परिश्रमेण चोत्तरोत्तरोत्कर्षाधानपूर्वकमुपकृतवतां दिवङ्गतानां विदुषां प्रो० अशोककुमारकालियावर्याणथमा चाऽऽजीवनं संस्कृतसमुपासकानां विद्वत्तल्लजानां विविधपदभाजां पद्मश्रीसमलङ्कृतानामाचार्यवर्याणां प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयानां यशःशेषाणामाचार्यद्वयानां संयुक्त–संस्मृतौ परिकल्पितोऽयम् अजस्राया आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कः सहृदयानां संस्कृतानुरागिवर्याणां समक्षमुपस्थाप्यते सश्रद्धयेत्ययं खलु सन्तोषस्य विषयः। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा सहैव संस्कृताराधनं कारं कारमेते महानुभावद्वयं गुरु–शिष्यप्रतिमानं विगतवर्षेऽभिनवगुप्तसंस्थानस्य लखनऊविश्वविद्यालयीयस्य नव्य–भव्य–भवन–लोकार्पणसमारोहे समायोजिते राष्ट्रियसङ्गोष्ठीसञ्ज्ञके सारस्वतमहासत्रे स्वकीयस्य सारस्वतावदानस्याऽन्तिमामाहुतिं दत्तवान् इति संस्मृत्य विषादातिरेकेण कण्ठोऽवरुद्धो जातः व्यथितञ्च हृदयम्, यतोहि आचार्यद्वयानां शिष्यरूपमात्रोऽयं सम्पादकोऽकिञ्चनो भूत्वाऽद्य केवलं श्रद्धाप्रसूनाञ्ज–लितति–निवेदनाय जीव्यतीति प्रतीयते।

अनिर्वचनीयान्येतेषां व्यक्तित्वकर्तृत्वानि च शब्दातीतानि तथापि स्वान्तःकरणतुष्ट्यर्थमेतेषामाचार्यद्वयानां शिष्य–प्रशिष्य–परम्पराणां विदुषां सारस्वतावदानरूपाणि स्मृतिप्रसूनानि संस्मरणानि शोधपत्राणि च सङ्ग्रहय श्रद्धासुमनैर्मनोज्ञमालिकामुपस्थापयितुं वामनायासो विधीयते।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लखनऊ–विश्वविद्यालयस्य संस्कृत प्राकृतभाषाविभागस्य समन्वयकररूपेण संस्कृतवाङ्मयीशोधपत्रिकाया आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कं प्राकाश्यतामुपनीया़ऽधुनाऽखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदस्त्रैमासिकीपत्रिकाया अजस्रायाः संयुक्तविशेषाङ्कमिमं संस्कृतशेमुशीकानां विद्वद्वरेण्यानां समक्षमुपस्थापयितुमीहे।

वस्तुतस्त्वियम् आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्करूपेण प्रकाशिताऽजस्रा वीथिकाख्येन खण्डत्रयेण विभज्य सङ्कल्पिताऽवतिष्ठते। खण्डत्रयेष्वेषु खण्डद्वयमाद्यं समृतिवीथीकारूपेणाऽथ च तृतीयः खण्डः शोधपत्रप्रकाशनेन स्वरूपसाम्पूर्ण्यं वहति। प्रो० अशोककुमारकालिया–स्मृति–वीथिका–नाम्नि प्रथमेंऽशे राष्ट्रपतिसम्मानितानां परिषद उपाध्यक्षचराणां विशिष्टाद्वैतदर्शनविशारदानां पाञ्चरात्रागमनिष्णातानां स्म्पूर्णनन्दसंस्कृत–विश्वविद्यालस्य यशस्विनां कुलपतिचराणां प्रो० अशोककुमारकालिया–महोदयानां पुण्यस्मृतौ विद्वद्भिः प्रणीतानि संस्मरणानि गद्य–पद्य मयांश्चाऽऽलेखान् संयोज्य वाक्प्रसूनश्रद्धाञ्जलिरभिकल्पिता। एवमेवाऽपरेऽशेऽस्याः पत्रिकायाः पद्मश्रीसमलङ्कृतानां वेद–वेदाङ्ग–तन्त्रायुर्वेद–ज्योतिष–वास्तुशास्त्र–काव्य–साहित्य–काव्यशास्त्र–पुराणेतिहासादि–विविधविद्याविशारदानां वशीकृतशारदानां परिषदो मन्त्रिचरवर्याणां प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयानां पावनस्मृतौ तदनुरागिभिर्विरचितानि संस्मरणानि आलेखाः कविताश्च विनिगुम्फ्य श्रद्धासुमनोञ्जलिरभिकल्पिता जाता। आचार्यद्वयस्मृति–शोधपत्राख्ये तृतीयेंऽशे तन्त्रागम–ज्योतिष–साहित्यशास्त्रादिविविधविद्याविषयकानि शोधपत्राणि समलङ्कृतानि।

आचार्या देवो भव, देवमिवाचार्यमुपासीत इति शास्त्रवचनमनुकृत्य पितृ देवो भव इति मत्वा देवर्षिस्वरूपं पितृत्वमधिगतमाचार्यद्वयमधिकृत्य सम्पादितेऽस्मिन् महति सारस्वतसाधनाऽनुसन्धानदेवर्षिपितृयज्ञे खण्डत्रयेषु महार्हाणि संस्मरणानि गद्यापद्यमयानि प्रणयनानि शोधपत्राणि च विलिख्य

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यैर्विपश्चिद्भिर्विद्वद्वरेण्यैर्महदनुग्रहः कृतस्तेभ्यस्सर्वेभ्यः सादरं कार्तज्ञ्यं विनिवेदयितुं सर्वप्रथमं महामहिमशालिभ्यो राज्ययपालमहोदयाभ्य आनन्दीबेनपटेलवर्याभ्योऽथ चोत्तरप्रदेशसर्वकारस्य पूर्वमुख्यमन्त्रिमहोदयेभ्यः प्रो० दिनेशशर्ममहाभागेभ्यः, उपमुख्यमन्त्रिपदमलङ्कृद्भ्यो मा. बृजेशपाठकमहाशयेभ्यः सादरं कार्तज्ञ्यं विनिवेद्यते यतो हि एभिः सर्वैरेव पत्रकायां प्रकाशनार्थं बहुमूल्यसन्देशरत्नं सम्प्रेष्य महदनुग्रहः कृतः। सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिचरेण पद्मश्रीमण्डितेन विश्वविश्रुतविद्वद्वरेण्येन कविपुङ्गवेन प्रो० अभिराजराजेन्द्रमिश्रेण, दिल्लीस्थस्य केन्द्रीयसंस्कृतविश्व– विद्यालयस्य कुलपतिवर्येण प्रो० श्रीनिवासवरखेडीमहोदयेनाथ च लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रियसंस्कृतविश्व–विद्यालस्य लब्धप्रतिष्ठितेन कुलपतिमहोदयेन प्रो० मुरलीमनोहरपाठक–विद्वद्वरेण्येन, उत्तराखण्डसंस्कृत–विश्वविद्यालयस्य कुलपतिपादेन प्रो० देवीप्रसादत्रिपाठिवर्येण, झारखण्डस्थचाईवासास्थस्य कोल्हानविश्वविद्यालस्य कुलपतिपदेऽलङ्कृतेन प्रो० गङ्गाधरपण्डाप्रवरेण, जगद्गुरुरामानन्दाचार्य–राजस्थान–संस्कृत–विश्वविद्यालयस्य कुलपतिवर्येण प्रो० रामसेवकदुबे–महोदयेन चाऽमृतसन्देशान् सम्प्रेष्य यदहेतुकोऽनुग्रहः कृतः तदर्थमेभ्यः सर्वेभ्य एव गुरुकल्पेभ्य आचार्यप्रवरेभ्यः कार्तज्ञ्यनिवेदनं सादरमर्पयति सम्पादकोऽयमस्याः पत्रिकायाः।

आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्केऽस्मिनजस्राया यैरपि ज्ञाताऽज्ञातमीनषिभिः येनकेनाऽपिरूपेण साहाय्यमाचरितं तेभ्यः सर्वेभ्योऽपि भूयोभूयो धन्यवादवचांसि विनिवेद्य अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदोऽध्यक्षवर्यान् श्रीयुद्रमेशचन्द्रत्रिपाठि–महोदयान् प्रति सादरं हृदयेन कार्तज्ञ्यं विनिवेद्यते यतोहि समये समये यथावश्यकं मार्गदर्शनं कारं कारं एभिः परिषदः पदाधिकारिद्वयाऽभावेऽपि संरक्षकत्वेन महत्सहाय्यमकारि। एतेषां कुशलसंरक्षणे आध्यक्ष्ये च आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कोऽयं पूर्णतामुपगतः। परिषदः कार्यकारिण्याः सर्वेरपि सम्मान्यसदस्यैः सार्द्धमेव साधारणसभासदस्येन डॉ० सन्दीपकुमारमिश्रेण

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रूफसंशोधनकर्मणि यथाऽपेक्षितं सहयोगदानमकारि तदर्थं शुभाशंसनं प्रस्तूय परिषदोऽन्यसहयोगिभिः साक्षी–रमेश–सरोज–सार्द्धं प्नारमुद्रकाय श्री मनीषमेहतावर्याय धन्यवादं निवेदयामि येन अदनान–सहयोगेन पत्रिकायाष्टङ्कनचित्राङ्कनादिकं सुष्ठुतया विधाय **आचार्यद्वयस्मृति–विशेषाङ्कमिमं** प्राकाश्यमुपनीतम्।

अतः अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा स्वनामधन्ययोराचार्यद्वयो–र्गुरुशिष्योः स्मृतौ संयुक्तरूपेण **आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्क**मिमं प्रकाश्यमुपनीय विदुषां संस्कृतानुरागिणां करकमलेभ्यः सादरं सम्प्र्य आचार्यद्वयपादपङ्केरुहेभ्यः सश्रद्धं वाक्पुष्पाञ्जलिर्निवेद्यते। पत्रिकाया निष्कृष्टार्थनिवेदनाय श्वेताश्वतरोपनिषदो मन्त्रमेकं प्रस्तूय वक्तुमिदं शक्यते यत्–

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।

इति शम्

शारदीय–नवरात्रम्
०१ अक्टूबर, २०२२

सम्पादकः
प्रो० प्रयागनारायणमिश्रः
मन्त्री
अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषद्,
देववाणीभवनम्, अलीगञ्जम्, लखनऊ

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो. अशोककुमारकालिया-स्मृति-वीथिका



प्रो. अशोककुमारकालिया

(20.04.1944 - 11.04.2021)

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रो० अशोककुमारकालियामहोदयानां
पूज्यपाद-माता-पिता



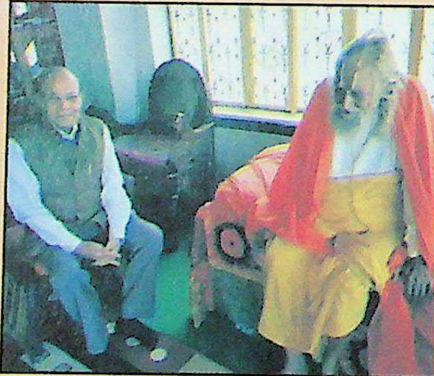
सश्रीकाः प्रो० कालियामहाभागाः, तेषामनुजः सश्रीकः सुरेशकुमारकालिया, पुत्रद्वयम् अंशुल-कालिया प्रत्यूषश्च, पुत्रवधू पायल-स्वातीकालिया, पौत्रद्वयं श्रेयान् आर्षश्च, पौत्री हृद्या



प्रो० कालियामहोदयेभ्यः समं तेषां सहधर्मिणी श्रीमती सन्तोषलक्ष्मी कालिया



सश्रीकाः प्रो० अशोककुमारकालियावर्याः सश्रीकेण विजय-सुरेश-दिनेशाख्य- भ्रातृत्रयेण सार्द्धम्



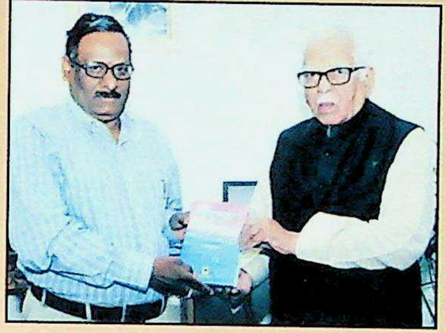
अयोध्यास्थसुग्रीवकिलायाः जगद्गुरुपुरुषोत्तमाचार्यैः सह प्रो० कालियामहोदयाः



अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः अध्यक्षमन्त्रीकोषाध्यक्षादि-पदाधिकारिभिः सह प्रो० वृजेशकुमारशुक्लमहोदयानाम-भिनन्दनसमारोहे दीपं प्रज्ज्वालयन्तः परिषद उपाध्यक्षाः प्रो० अशोककुमारकालियावर्याः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh















शिक्षकश्री-सरस्वती-व्यास-कालिदासादिविविध-
पुरस्कारैः प्रो० शुक्लवर्याणामलङ्करणम्

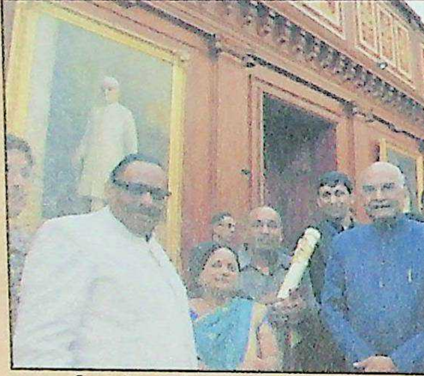


विविधविद्वद्वरेण्यैः विविधेष्वरेषु समलङ्करणं
प्राप्नुवन्तः विदुषामलङ्करणं कुर्वन्तश्च
प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्याः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh









राष्ट्रपतिभवने पद्मश्रीसम्मान-समलङ्करणसमारोहे राष्ट्रपति-प्रधानमंत्रिभिः सह रराजमाणः पद्मश्रीविभूषितो बृजेशकुमारशुक्लवर्यः स्वजनेषु मध्ये



अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि पद्मश्रीसम्मानेनालङ्कृतानां प्रो. बृजेशकुमारशुक्लवर्याणामभिनन्दनं कुर्वन्तः परिषदः अध्यक्षः श्रीरमेशचन्द्रत्रिपाठिवर्यः, उपाध्यक्षः प्रो. अशोककुमार-कालियावर्यः, अपरमन्त्री प्रो. प्रयागनारायणमिश्रश्च



लखनऊविश्वविद्यालयस्य अभिनवगुप्तसंस्थाने सरस्वतीपूजना-वसरे कुलपतिवर्याणां प्रो.आलोककुमारायमहोदयानामलङ्करणं कुर्वन्तः संस्थानसमन्वयक-प्रयागनारायणमिश्रेण सह प्रो० शुक्लवर्याः





लखनऊविश्वविद्यालयस्यस्याभिनवगुप्तसंस्थानस्याभिनवनव्यभव्यभवनस्य लोकार्पणकार्यक्रमे मुख्यातिथिभिः प्रो० दिनेशशर्ममहा-भागैरुपमुख्यमन्त्रिभिः सह भवनस्य लोकार्पणं कुर्वन्तः प्रो० शुक्लवर्याः उ.प्र.संस्कृतसंस्थानस्याध्यक्ष- डा० वाचस्पतिमिश्र-प्रो० नवजीवनरस्तोगिवर्यैः समम् अभिनवगुप्तसंस्थानेनायोजितराष्ट्रियसंगोष्ठीसमुद्घाटनावसरे

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नान्दीवाक्

पद्मश्री प्रो० अभिराजराजेन्द्रमिश्रः
पूर्वकुलपतिः
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी

संस्कृतविद्यापरम्परायाः युगलानामपि वर्तते कश्चिदविलक्षण एवेतिहासः। एतद्युगलं पतिपत्न्योस्त्वासीदेव, परन्तु प्रायशः गुरुशिष्य योरेवासीत्। समेषां ब्रह्मवादिनां भार्याश्चापि तत्तुल्यब्रह्मवादिन्य एवासन्। तत्रारुन्धत्यनसूया लोपामुद्रा काक्षीवती घोषादयो निदर्शनम्। एवमेव वैश म्पायनयाज्ञवल्क्ययोः, गौतमसत्यकामयोः, विश्वामित्रदेवरातयोः, गौडपादाद्यशङ्करयोः, कुमारिलभट्टमण्डनमिश्रयोः रुय्यकमङ्खकयोः, अभिनवगुप्तक्षेमेन्द्रयोश्चापि किमपि अनितरसाधारणं युगलमासीत् येन महदुपकृतं विद्यापरम्परायाः। तत एवाचार्यो देशिक इति शिष्यश्चाप्यन्तेवासीति कथ्यते।

पुत्रेण पितुरवशिष्टं कार्यं पूर्यते न वा, परन्तु निष्ठावताऽन्तेवासिना स्वोपाध्यायस्यावशिष्टं कार्यं प्रायशः पूरितमेव। जैनपरम्परायां जिनसेनस्यादिपुराणं तच्छिष्येण हरिभद्रेण पूरितमेव। शिष्यधियैव (न पुत्रधिया) भूषणभट्टेन कादम्बरी पितृप्रणीता पूरिता–

याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्धं
मस्तङ्गतं भुवि च यस्तु कथाप्रबन्धः।

आचार्यमम्मटाभिनवगुप्तादिभिः गुरुकल्पस्यानन्दवर्धनस्य ध्वनिमतं समुपबृंहितं शिष्यवृत्त्यैव। पण्डितराजेन जगन्नाथेन स्वगुरुपरिपन्थिभिस्सार्धं कियद्भीषणं सारस्वतं युद्धं न कृतम्? तत्र मनोरमाकुचमर्दिनी एव प्रमाणभूता। साम्प्रति केऽपि युगेऽपि म०म० मधुसूदनओझावर्यस्यावशिष्टं कार्यं कृतं दृश्यते।

वस्तुतः शक्तिपातपरम्पराया एव परिणमो गुरुशिष्यसम्बन्धः। कोऽपि समर्थो गुरुः स्वजीवनावसानं नेदिष्ठं दृष्ट्वाऽवशिष्टकार्यपूर्त्यर्थं स्वशक्तिं स्वीये सर्वविधयोग्यशिष्ये सङ्क्रान्तयति। रामकृष्णपरमहंसः स्वाखिलामध्यात्मशक्तिं स्वामिनि विवेकानन्देऽन्तरितवान् शक्तिपातमाध्यमेन। शक्तिपातस्येयं परम्परा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतवर्षे एव श्रूयते, नाऽन्यत्र। देवाश्चापि स्वप्न एव शक्तिपातं कुर्वन्तीति श्रूयते। प्रत्यभिज्ञादर्शनस्य दीक्षा भगवता शितिकण्ठेन स्वप्ने एव स्वभक्ताय श्रीवसुगुप्ताय प्रदत्ता। तत एवाऽसौ परम्पराऽग्रेससार। दृष्टिमात्रेणापि शक्तिपातो जायते। तत्रापि विविधनिदर्शनाानि सन्त्येव।

हा हन्त, प्राक्तनभारतवर्षस्य सर्वोऽप्युत्कर्षोऽसौ विनष्ट एव। यथा सूकराणां ताण्डवेन पूजास्थलं विनश्येत् तथैवाऽध्यात्मप्राङ्गणमिदं संस्कारहीन लुण्ठाकानामाक्रमणेन विनष्टम्। भारतस्य पार्श्वे उदग्रात्मशक्तिरासीत्। तेषां पार्श्वे पशुबलम्। पशुबलादात्मबलं यद्यपि पराजितं, तथापि तेनैवात्मबलेनात्मरक्षाऽपि जाता। सम्प्रति राष्ट्रमिदं हस्तच्युतं सर्वमप्यतीत वैभवं भूयोऽप्यात्मसात्कर्तुं प्रयत्नपरं वर्तते, सफलमपि परिलक्ष्यते।

करोनामहामार्यामस्यां गुरुशिष्ययोरीदृशमेव युगलमेकं तिरोहितं जातम्। गुरुपादा आसन् आचार्यप्रवरा श्रीमदशोककालिया महाभागाः, शिष्योत्तमाश्च पद्मश्रियो डॉ० बृजेशशुक्लाः। किञ्चिदन्तरेणैव जातमुभयोस्तिरोधानम्। तेन समुत्सन्नं संस्कृतजगत्। आचार्यकालिया महाभागाः महान्तो दार्शनिकाः कवयश्चिन्तकाश्चासन् लखनऊविश्वविद्यालये संस्कृतविभागाध्यक्षाः सन्तोऽपि अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः उपाध्यक्षा आसन्। पश्चात्ते सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयकुलपतयस्सञ्जाताः। तत्प्रतिबिम्बभूतास्तच्छिष्यवर्या बृजेशशुक्लाश्चापि सरसकवयो ज्योतिर्विद–श्शास्त्रज्ञाश्चासन्। परिषद्यपि कालियामहोदयेन सहैव तेऽपि सचिवा आसन्।

महान् क्लेशः! महान् खेदः!! उभयोः साहचर्यं यावदेव महदानन्दकरमासीत् पर्यायेण तिरोधानं तावदेव मृत्युकष्टकर मस्माकं समेषां सुरभारती सेविनां कृते! किन्तु विवशा वयम् असहाया वयम्, वराका वयम्, अकिञ्चना वयम्। रोदनाहते किमप्यन्यत्कर्तुं न शक्ताः। तस्मादुन्मुक्तं विलपामः। तयोरभिनन्दनस्य स्थाने श्रद्धाञ्जलिं विरचयामः लिखामः। ये गतास्तेषां दुःखकथा समाप्ता। दुर्भाग्यग्रस्ता अस्मादृशा ये पश्चात् स्थिता, तेषां व्यथाकथा प्रारब्धा। आमरणमियं कथा स्थास्यति। भवतु, शिवसायुज्यमुपयान्तु अशोकबृजेशा विद्वद्रत्नभूता इत्येव कामयामहे।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिवसङ्कल्पः

प्रो० गङ्गाधरपण्डा
कुलपतिः
कोल्हानविश्वविद्यालयः, चाईबासा
पूर्वकुलपतिश्च
श्रीजगन्नाथसंस्कृतविश्वविद्यालयः, पुरी

अगायि पुराणवाङ्मयेन–

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमयः।।

एवंभूते जम्बूद्वीपे भरतखण्डे उत्तरप्रदेशे बहराइचजनपदे लब्धजन्मानः भारतराष्ट्रपतिसम्मानविभूषणेन भूषिताः प्राच्यपाश्चात्योभयविद्यायाः कृतभूरिपरिश्रमाः विद्वत्कुलवन्दिताः शिष्यगणपूजिताः सम्पूर्णानन्दसंस्कृत–विश्वविद्यालयस्य कुलपतिचराः लखनऊविश्वविद्यालये संस्कृतविभागस्य सुनामधन्याः पूर्वविभागाध्यक्षाः, तत्रापि अभिनवगुप्तसंस्थानस्य प्राक्तननिदेशकवर्याः श्रीमदभिनवरंगनाथपरकालमहादेशिकानां शिष्येषु अग्रगण्याः पाञ्चरात्रागमविशिष्टाद्वैतदर्शनमात्मसात्कृतवन्तः संस्कृतनाटक–दर्शनादिमहत्त्वपूर्णानां ग्रन्थानां रचयितारः प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयाः अस्माकं मध्ये न वर्तन्त इति प्रत्ययगोचरीभूतव्यापारं रुणद्धि। चेतश्चेखिद्यते, हृदयमान्दोल्यते, मनश्च विकलत्वं धत्ते।

वेदान्तसूत्रमाधारीकृत्य विशिष्टाद्वैतदर्शनं दोधूयमानाः दक्षिणभारते लब्धजन्मानोऽपि महीमण्डलमण्डनायमानाः अनन्त–लक्ष्मण–बलरामावतार–स्वरूपाः श्रीमद्रामानुजाचार्या राराजन्ते स्म। एतद्दर्शनं निजीकर्तुं प्रो. कालियामहोदयानां मैसूरनगरं प्रति जिगमीषा फलीभूता। तत्रेत्य अधीतिबोधाचरणप्रचारणैर्दशाचतस्रः प्रणयन् ताश्चतुर्दशत्वं प्रापितम्। परममोदोऽस्माकं यदुत्तरभारतेऽपि दाक्षिणात्यपरम्परायाः विद्वांसः आसन्।

कार्यमकारि मया वर्षत्रयमेतेषामधीने सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये काश्याम्। कदा ममाधिकारिणः सन्तीति भावना तैर्न समारोपिता, नापि मया

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चानुभूता। विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमन्यायेन एभिर्मयि शास्त्राणामध्ययनायोत्साहः प्रदायि। बहूनां कुलपतीनां नेतृत्वे मया सेवा व्यधायि। प्रायः एतद्भिन्नैः सर्वैरहं केनापि प्रशासनकर्मणाऽतिरिक्तदायित्वेन शासितः। अहो! मयि या भावना निरमायि तदर्थमेते मम कृते अकिल्पतकल्पपादपा आसन्। अहञ्च तैर्बहुरमानि। तेषां कार्यकालेऽधिकतया सरस्वतीसेवाराधनतप्तरोऽहमभवम्।

प्रसङ्गेऽस्मिन् आदिशङ्करपादानां पद्यमेकं मे मनसि स्फुरति–

आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं
प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः।
लक्ष्मीस्तोयतरङ्गभङ्गचपला विद्युच्चलं जीवितं
तस्मान्मां शरणागतं करुणया त्वं रक्ष रक्षाधुना।।

भारतीयपरम्परायां विष्णुशिवयोर्मध्ये भेदस्तत्त्वदृष्ट्या न दृश्यते। मन्ये मङ्गलनिधानशिवेन स्वकरुणावारिणा एते सिञ्चिता। तस्माद् दिव्यज्ञानमेभिः प्राप्तम्। विनयकरम्बिताः मृदुभाषिणः अगाधजलसञ्चारिरोहितमत्स्यवत् गाम्भीर्यं विदधानाः अगाधपाण्डित्यावगाहिनः मूर्त्तशरीरे यद्यपि न वर्तन्ते, परन्तु यशः शरीरे जीवन्त अस्मान् प्रेरयन्तः सन्ति।

एतेषां गुणमहोदधिमन्थितयशोरत्नानि संगृह्य अजस्रायाः स्मृतिविशेषाङ्कः प्राकाश्यं यातीति मे हर्षवर्षप्रकर्षः। पत्रिकायाः सफलप्रकाशनार्थम् अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः अध्यक्षान् श्रीरमेशचन्द्रत्रिपाठिवर्यान् अजस्रायाः सम्पादकं डॉ० प्रयागनारायणमिश्रम–भिनन्दयामि। विश्वसिमि यद् आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्करत्नमिदं सर्वेषामुपकाराय भविष्यतीति।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुरुप्रवराणां प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयानां संस्तवः

प्रो. प्रयागनारायणमिश्रः
मन्त्री, अ.भा.सं. परिषद्, अलीगञ्जम्, लखनऊ

सारस्वतविप्रवंशावतंसः स्वनामधन्योऽपि गुरुप्रवरोऽशोकः कं नाकरोत् सशोकः परमप्रयाणेन इत्ययमकिञ्चनः प्रयागो न जानाति, किन्तु संसारशोकार्णवमुत्तीर्य श्रीविष्णोः परमं पदमधिगम्य निश्चप्रचमेव गुरुप्रवरेणाऽशोकत्वमङ्गीकृतम्। श्रीरामानुजदर्शनालङ्कृतशेमुषीकः श्रीवैष्णवागमरहस्यसाधकः, अद्वैतवेदान्तेऽद्वितीयः काव्यशास्त्रमर्मज्ञः, साहित्याम्बुधिसमुद्रः, सरसकविपुङ्गवो विश्वविश्रुतदार्शनिको देवकल्पो गुरुप्रवरः प्रो० अशोककुमारकालियामहोदयः ब्रह्मलोकमुपगत इत्यवगम्य मूर्छित इव सञ्जातोऽहं प्रायशो ह्येकवर्षपूर्वम् यतो हि मासपर्यन्तं चिकित्सालयमुपसेव्य भगवतो महदनुग्रहेण यदाऽहं कोरौनामभिजित्य स्वगृहमागतवान् तदा मया ज्ञातं यदस्मद् गुरुप्रवरः प्रो० कालियामहाभागः स्वसमक्षं स्वकीयं शिष्यप्रवरं प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवरं कोरौनाकवलितमवेक्ष्य स्वयमपि कोरौनाकालेन ग्रस्तो भूत्वा वैकुण्ठलोकमवाप। हृदयविदारकमिमं वृत्तं श्रुत्वा गुरुद्वयरहितोऽयं प्रयागः अकिञ्चनप्रायो भूत्वा कौरौनामभिभूयाऽपि गुरुवियोगेन हतप्रभ इव सञ्जातः।।

सम्प्रति आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कपरिकल्पनयैव वज्रपातमनुभूयाऽवरुध्यते कण्ठः, किन्तु मनः तोषाय श्रद्धासुमनाञ्जलिततिनिवेदनकामनया नियति–नटी–नियन्त्रणे विवशोऽहं श्रीगुरुसंस्तवनाय। अतो बृहत्तममप्य–निर्वचनीयं श्रीगुरुचरितसङ्कीर्तनमाश्रित्य वामनायासो विधीयते।

एकोनविंशतितमशताब्द्याः परार्द्धे कर्पूरस्थलाराज्यस्य नरपतेरनुरागेणा–मन्त्रितो गेंदाराम इति नामकः कोऽपि ब्रह्मचारी सिद्धयोगीश्वरः सारस्वतब्राहमणवंशीयो महात्मा पञ्जाबप्रान्ततः समागत्य बहराइचजनपदस्य घाघरातटस्थिते बौण्डी–नाम्नि ग्रामे स्वाधिष्ठानं कृतवान्। तत्रागत्य गेंदारामाख्यः स महात्मा तपस्तप्त्वा राज्ञः आदेशानुसारं शिवायतनमेकं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विधिपूर्वकमकरोत्। शनैः शनैः तस्य महात्मनो गेंदारामस्य सम्बन्धिनः परिजनाश्च तत्रागत्य निवासं कृतवन्तः। तेषु परिजनेषु महात्मनो भ्रातृजः पण्डितगौरीशङ्करकालिया आसीत्। एतस्यैव महानुभावस्य गौरीशङ्करकालिया महाभागस्यात्मजः पं० गिरिधारीलालकालिया बभूव। गिरिधारीलालकालिया महाभागस्य सुभद्रानाम्नी परमसाध्वी धर्मपरायणाऽऽसीद्धर्मपत्नी। सुभद्रागिरिधारिलालयोः प्रणयप्राङ्गणे चक्रवर्तिसम्राट् दशरथस्य पुत्रचतुष्टयमिव चत्वारः पुत्रा एका च पुत्री सञ्जाताः। सुभद्रागिरिधारिवर्ययोः पुत्रचतुष्टयेषु द्वितीयपुत्रत्वेन भरत इव धर्मनिष्ठः, मातृपितृभक्तः, भ्रातृपरायणः, आदर्शपुत्रोऽभवद् अशोको नाम महान् साधकः सिद्धपुरुषश्च।

इत्थं बहराइचजनपदस्य बौण्डीग्रामेऽप्रैलमासस्य विशंतिदिनाङ्के १६४४ तमे खिस्ताब्दे जन्मलब्ध्वा मातृपितृप्रसादाद् धार्मिकसात्त्विकसंस्कारैः संस्कृत्य सात्त्विकसंस्कारान् बभार गुरुवरकालियामहाभागः। बाल्यकालादेव विद्याविनयसम्पन्नो गुरुवरकालिया दृढनिश्चयी, गुणवान् दर्प–मात्सर्यरहितः, परमसुशीलः मृदुभाषी, वाग्मी च रमणीयवपुष्मान् सहृदयोऽभूत।

स्वकीये बौण्डीग्राम एव प्रारम्भिकीं शिक्षामवाप्य माध्यमिकी–शिक्षार्थं बहराइचजनपदस्य इकौनानाम्नि स्थले प्रतिष्ठिते जगज्जीतइण्टरकालेजाख्ये ह्युच्चतरमाध्यमिकविद्यालयेऽध्ययनं कृत्वा १६५७ खिस्ताब्दे हाईस्कूलपरीक्षां १६५६ खिस्ताब्दे च इण्टरमीडिएटपरीक्षामुत्तीर्य स उच्चशिक्षाप्राप्त्यर्थं लखनऊविश्वविद्यालये प्रविष्टः। १६६२ खिस्ताब्दे बी०ए० (ऑनर्स) परीक्षां प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्य प्रथमश्रेण्यामेवासौ दर्शनवर्गवैशिष्ट्येन १६६३ खिष्ताब्दे एम०ए० परीक्षां समुत्तीर्णवान्। लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतप्राकृतभाषा–विभागस्य यशस्विनोऽध्यक्षवर्यस्य विशिष्टाद्वैतदर्शनविशिष्टशेमुषीकस्य प्रो० सत्यव्रतसिंहस्यातिकृपापात्रोऽयं गुरुवरः तस्यैव निर्देशने लक्ष्मीतत्त्व धर्म और दर्शन इति विषयमधिकृत्य पी–एच्०डी० उपाध्यार्थं पञ्जीकरणमकरोत्। एतस्मिन्नेव काले स्वकीयस्य शोधनिर्देशकस्य गुरुप्रवरस्य प्रो० सिंहमहाभागस्यादेशमङ्गीकृत्यासौ विशिष्टाद्वैतदर्शनस्य विशिष्टाध्ययनाय १६६३ खिष्ताब्दे मैसूरनगरं जगाम। मैसूरनगरस्य ब्रह्मतन्त्रपरकाल–मठाश्रमेऽस्यमठस्य त्रयस्त्रिंशततमस्य पीठाधीश्वरस्य श्रीमदभिनवरङ्गनाथस्य

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

परकालस्वामिपादस्य पादाम्बुजमुपसेव्य पाञ्चरात्रागमसम्मतां श्रीवैष्णवीं दीक्षां तप्तशङ्खचक्राङ्कनरूपामङ्गीकृत्य आदर्शशिष्यरूपेणानेन श्रीमदभिनव–रङ्गनाथपरकालस्वामिपादपङ्केरुहयोः सविधं श्रवणमनननिदिध्यासनरूपं श्रीभाष्यं विशिष्टाद्वैतदर्शनरहस्यञ्चाधिगतमब्दद्वयपर्यन्तम्। श्रीमदभिनव–रङ्गनाथपरकालस्वामिपादपङ्कजमकरन्दं निपीय पाञ्चरात्रागम–निष्णातानां श्री के०एस्० वरदाचार्य श्री इ०एस्० वरदाचार्य–प्रभृतिनां विद्वद्वरेण्यानां सन्निधौ न केवलं विशिष्टाद्वैतमपितु न्याय–व्याकरण–साहित्यालङ्कारमीमांसावेदोपनिषदां रहस्यानि सम्यक्तयाऽधिगतानि। १९६५ खिस्ताब्दे लक्ष्मणपुरं प्रत्यागत्याद्वितीयं शोधप्रबन्धं सम्पूर्य १९६८ तमे खिष्ताब्दे पी–एच्०डी० शोधोपाधिना विभूषितो जातः।। शोधकार्यावधौ स्वकीयेन मौलिकचिन्तनमननाध्ययनाध्यवसायमाध्यमेन गुरुशुश्रूषया कालियावर्यः स्वकीयां विशिष्टां विद्याज्ञानसुमतिसमलङ्कृतां मेधांमित्थं प्रमाणीकृतवान् यद् विश्वविद्यालयस्याधिकारिभिः संस्कृतविभागे स्थायिप्रवक्तृरूपेण श्रीकालियामहोदयस्य नियुक्तिर्ब्यधायि। स्वकीयनिष्ठा–समर्पण–सेवा–भावैश्चिरकालपर्यन्तमस्थायिप्रवक्तृरूपेणाध्यापनं कुर्वन्नयंमस्मिन् विश्वविद्यालये न केवलं स्थायित्वमधिगतवानपितु क्रमश उपाचार्यपदवीमपि १९८४ तमे खिष्ताब्दे प्राप्तवान्। तदनन्तरं १९८८ तमे खिष्ताब्दे प्रोफेसर इति नामधेयामाचार्यपदवीं समलङ्कृत्य २००० खिष्ताब्देऽस्यैव संस्कृतप्राकृतभाषा–विभागस्याध्यक्षपदं बभार। संस्कृतविभागस्याध्यक्षपदमलङ्कुर्वन्नेवाऽयं लखनऊविश्वविद्यालयस्य अभिनवगुप्तसंस्थानस्य मानदनिदेशकपदमपि भूषणञ्चकार। स्वकीयेऽध्यक्षकार्यकालेऽनेन संस्कृतप्राकृतभाषाविभागस्य भौतिकं स्वरूपमथ च शैक्षणिकं परिवेशं विशदतया समुत्कर्षशिखरं प्रापयमास। अनेन सार्द्धमेव स्वतन्त्ररूपेण ज्योर्तिविज्ञानविभागस्य प्रतिष्ठापनं कृत्वास्य समन्वयकरूपेण स्वकीयश्रेष्ठशिष्यमस्मै प्रदत्तवान्। २००० तमे खिष्ताब्दस्य दिनाङ्कत आरभ्य २००५ खिस्ताब्दस्य सप्तमतारिकां यावत् स संस्कृतप्राकृतविभागाध्यक्षपदमलङ्कुर्वन्नेव ०८ दिनाङ्के वाराणसीस्थस्य सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिपदमलङ्.कृतवान्। इत्थं ०८.०६.२००५ तः ०७.०६.२००८ पर्यन्तं वाराणस्यां कौलपत्यं सुष्ठु सम्पादयत। स्वकीये कौलपत्ये सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य सर्वविधसमुन्नतिं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीवृद्धिं च कुर्वन्न तत्समृद्धयेऽनेका नवीना योजना उपपादयन् काशीं विश्वनाथ इव सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयमलचञ्कार।

प्रारभत एव संस्कृतसेवाव्रतोऽयं गुरुवरो नैकासु शैक्षणिकसंस्थासु सम्बद्धो भूत्वाऽवैतनिकसेवामाध्यमेनाजीवनं संस्कृतसमुपासना कृतवान्। अस्मिन् क्रमे पूर्वोक्तेनाभिनवगुप्तसंस्थानेन सार्द्धमेव नैमिषारणस्य पौराणिक–वैदिक–अध्ययन–अनुसन्धान–संस्थानमथ च लखनऊनगरस्था अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषद्विशेषतया समुल्लेखनीयं प्रतिभाति। सीतापुर जनपदस्य नैमिषारण्यमिति नाम्नि स्थले पौराणिकसंस्थानस्य मानदनिदेशकत्वेनाऽयमाधुनिकव्यास इव प्रतिभाति स्म। भारतवर्षस्य सुप्रसिद्धा या संस्था लक्ष्मणपुरे अखिलभारतीया संस्कृतपरिषद् नाम्नी विलसति देववाणीभवने, अलीगञ्जे तस्या उपाध्यक्षपदे समलङ्कृता आसीत् गुरुवर्याः स्वकीये परमप्रयाणकाले। संस्थाया अस्याः समुन्नतौ स्वकीयं सम्पूर्णमपि जीवनमनेन समर्पितम्। एतेषामेवाथकप्रयत्नेन स्व. श्रीजितेन्द्रत्रिपाठीसहयोगेन परिषदियं स्वकीये भव्यभवने हजरतगञ्जतोऽलीगञ्जे देववाणीभवने विलसति। प्रो. कालियामहोदया–नामायासेनैव अलीगञ्जस्य परिषत्समक्षवर्ति मार्गस्यापि नाम देववाणीमार्गम् इति कृतं तत्कालीन–महापौर स्याथ चाद्यतनीनस्योपमुख्यममुन्त्रिचरवर्यस्य प्रो. दिनेशशर्मा–महाभागस्य सौजन्येन। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः पूर्व उपाध्यक्षप्रवरः प्रो. कालियामहाभागाः प्रायः पञ्चचत्वारिशंद्वर्षेभ्यः छात्रजीवनादेव परिषदा सम्बद्ध आसन्। तेन क्रमशः परिषदो न केवलं विशिष्टसदस्यरूपेणापितु क्वचित् कार्यकारिण्यः सदस्यरूपेण। तदनन्तर क्रमशः क्वचिद् अपरमन्त्रिरूपेण, मन्त्रिरूपेणाऽथ चाऽन्ते उपाध्येक्षरूपेण परिषदो निस्स्वार्थं सेवामकरोत्। सः प्रतिदिनं परिषदमागत्य न केवलं स्वकीयं शारीरिकं मानसिकं योगदानं कृतवानपितु समये–समये यथावश्यक मकार्थिकमपि योगदानं कृतवान्। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि राष्ट्रियपाण्डुलिपिसंरक्षणमिशनपोषितां पाण्डुलिपिसंरक्षणयोजनामङ्गीकृत्य पाण्डुलिपीनां वैश्विकमनुसन्धानं कृतवान्। एतेषामेवानुग्रहेणाहमपि प्रायो विंशाधिकवर्षेभ्यः परिषदा सम्बद्धो भूत्वाऽस्याः विशिष्टपारिषद्, कार्यकारिण्यः सदस्यः, अपरमन्त्री–रूपेण गुरुद्वयमार्गदर्शने संस्कृतसाधनायां तत्पर आसम्।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अद्य गुरुद्वयराहित्येऽनाथ इव एकाकी भूत्वा दुर्भाग्येन परिषदो मन्त्रिणो दायित्वं निर्वोढुं विवशोऽस्मि।।

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितायाः अजस्रानाम्नीत्रैमासिकी पत्रिकायाः प्रधानसमापदकत्वं निर्व्यूढवान् प्रो० कालियावर्यः। संस्कृतप्राकृत–भाषाविभागेन प्रकाशिता वार्षिकीशोधपत्रिका वाङ्मयी इतिनामधेया समपादि गुरुवर्येण सफलतया। स्वकीयानां गुरूणामभिनन्दनार्थमनेनाऽजस्रायाः सार्द्धम् अनेके विशेषाङ्काः प्रकाशिताः येषु आचार्यत्रयस्मृतिविशेषाङ्को विशेषतयोल्लेखनीयः।

निरन्तरं संस्कृतवाङ्मयस्य प्रचारप्रसारसेवां विदधानः च सर्वोच्चपदवीं गतोऽपि स नितरां विनयशीलोऽहङ्काररहितो नियमानुकूल– कर्तव्यतापरायणः साक्षन्नारायण इव देववाणीसमुन्नायकः सहजप्रकृतिः सौम्यप्रसादवदनः सच्चरित्रवांश्चासीत्।। श्रीवैष्णवधर्मस्याध्ययनमध्यापनञ्च कुर्वन् सुदीर्घां सारस्वतसाधनांमनुसन्धानधिया सम्पादयन् पुरुषोत्तम संहितायाः परिशीलनं सम्पादनमिति विषयमधिकृत्य २००४ तमे खिष्ताब्दे लखनऊविश्वविद्यालयस्य सर्वोच्चोपाधि–रूपेण डी.लिट् इत्युपाधिनापि स विभूषितो जातः। सम्पूर्णेऽपि भारतवर्षे किलोच्चविद्याक्षेत्रे प्रो० कालिया विश्वप्रथितो विश्वप्रथमवैकलो विद्वान् वर्तते स्म येन श्रीवैष्णवपाञ्चरात्रागमस्य विशिष्टाद्वैतदर्शनस्य च जैत्रध्वजा दृढतयोच्चैर्व्यधायि। समये समयेऽनेकेषामन्ता–राष्ट्रियसम्मेलनानामायोजनेन शताधिकसंस्कृत–शोधच्छात्राणां शोधं–निर्देशनं कृत्वा शताधिकानि शोधपत्राणि दशाधिकग्रन्थरत्नानि प्रणीतानि। ग्रन्थरत्नसर्जनप्रियः महानुभावो गुरुवर्यः प्रो० कालियावर्यः स्वकीयैरनुसन्धानकर्मभिः संस्कृताराधनाभिश्चानेकवारमनेकाभिः संस्थाभिः पुरस्कृतो जातः। महामहोपाध्यइत्युपाधिना समलङ्कृतः प्रो. कालियामहोदयः राष्ट्रपतिश्रीमतीप्रतिभापाटिलकरकमलैः राष्ट्रपतिसम्मानेन सम्मानितोऽभवत् पञ्चाधिकदार्शनिकप्रणयनेन सार्द्धमेवानेन सुधाभोजननाख्यं संस्कृतनाटकं प्रणीय शताधिकाः संस्कृतकविताः विरचिताः याषां सङ्कलनं मणिमञ्जीर इति रूपेणाखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशिता जाता। प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागानां कर्तृत्वं प्रमुखतया मौलिकाऽनुसन्धानमूलक समीक्षितसन्दर्भग्रन्थरूपेण, पाण्डुलिपिसम्पादनानुवादरूपेणाथ च

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मौलिकसाहित्यसर्जनत्वेन त्रिधा विभज्य उल्लेखनीयम् –

क–मौलिकानुसन्धानमूलकसन्दर्भ–ग्रन्थाः

गुरुवर्येण प्रो. कालियामहोदयेन पी–एच्.डी. शोधोपाध्यर्थं शोधप्रबन्धत्वेनारभ्यानुसन्धानपरकसन्दर्भग्रन्थरूपेण त्रयो ग्रन्था व्यलेखि येषु ग्रन्थद्वयं 'लक्ष्मीतन्त्र धर्म और दर्शन अथ च पाञ्चरात्रपरिशीलन इति प्रकाशितमथ चैको ग्रन्थोऽस्यान्तिमग्रन्थरूपेण प्रकाशनाधीनो विद्यते' वैष्णव धर्म और दर्शन के मूलस्रोत इति नामधेयः ऐतेषां समासेन परिचयोऽधिलिखितरूपेण द्रष्टव्यः

१. लक्ष्मीतन्त्र धर्म और दर्शन

लखनऊविश्वविद्यालयस्य पी–एच्.डी. शोधोपाध्यर्थं शोधप्रबन्धरूपेण प्रणीतमिदं ग्रन्थरत्नं हिन्दीभाषया पाञ्चरात्रागमरहस्यभूतस्य लक्ष्मीतन्त्रस्य धार्मिकं दार्शनिकञ्च विवेचनं सुष्ठु प्रतिष्ठापयति। विशिष्टाद्वैतदर्शनस्य पाञ्चरात्रागमस्य च गभीरज्ञानार्थमयं ग्रन्थो विपश्चिद्भिः परमोपयोगी स्वीक्रियते। ग्रन्थस्यास्योत्कृष्टत्वमवेक्ष्य अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा लखनऊतो ग्रन्थोऽयं १९७७ तमे वर्षे प्रकाशितो जातः।।

२. पाञ्चरात्रपरिशीलन

विश्वविद्यालयानुदानायोगस्य बृहच्छोधप्रकल्परूपेण 'पांञ्चरात्रागम–परम्परा धर्म और दर्शन' इति विषये मौलिकानुसन्धानं विधाय लखनऊ–विश्वविद्यालयस्य डी.लिट् उपाध्यर्थं प्रस्तुतः पाञ्चरात्रपरिशीलनं नाम शोधप्रबन्धो दिल्लीस्थेन भारतीयविद्याप्रकाशनेन प्रकाश्यमुपनीतः। पाञ्चरात्रागमसंहितासु वर्णितपाञ्चरात्रविषयकानां धर्मदर्शनादितत्त्वानां समालोचनात्मकं विवरणं हिन्दीभाषायां विशदतया प्रस्तूय प्रणीतोऽयं ग्रन्थो विश्वप्रथितो भूत्वा पाञ्चरात्रगमसिद्धान्तान् विद्वज्जनप्रियतामुपनयतीत्यत्र नास्ति लेशोऽपि सन्देहः।

३. वैष्णव धर्म और दर्शन के मूल स्रोत

वैष्णवधर्मदर्शनयोः प्रथितपरम्परामनुसृत्य प्रो. कालियामहोदयेनान्तिमे चरणे संस्कृतसाहित्यसर्जनयात्रायां वैष्णवाचार्याणां प्रामाणिकं परिचयमवदानञ्च प्रकाशयितुमेको ग्रन्थो व्यलेखि औपक्रमिकाधिकार–नैगमिकाधिकार–आगामिकाधिकार–आचार्यानुक्रमिकाधिकारसञ्ज्ञकैश्चत–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सभिरध्यायैः समलङ्कृतस्य अस्य ग्रन्थस्य प्रकाशनेन पाञ्चरात्रागमसाहित्यस्य श्रीसंवर्धनं भवितुं शंक्यते स्म किन्तु दुर्भाग्येन तमप्रकाश्यैव पाञ्चरात्रगमविशारदोऽयमाचार्यशिरोमणिर्ब्रहमलोकमुपगतः। अत एव शीघ्रमेवाप्रकाशितमिमं ग्रन्थं प्राकाश्यतामुपनीय अखिलभारतीयसंस्कृत–परिषदियं तस्य महानुभावस्यान्तिमं सर्जनं विदुषां समक्षमुपस्थापयिष्य–तीत्याशासे।

ख– पाठालोचनपूर्वकं पाण्डुलिपिसम्पादनं सानुवादप्रकाशनञ्च

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि हस्तलिखितग्रन्थानामथ च दुर्लभपाण्डुलिपिनामक्षयः सङ्ग्रहो विद्यते। अतः समये–समये तः पाण्डुलिपिप्रकाशनकर्मणि कुशलैः परमानुरागिकालियावर्यैः नैकेषां–पाण्डुलिपीनां पाठालोचनपूर्वकं सम्पादनमनुवादपुरस्सरं कृत्वा ग्रन्थचतुष्टयानां प्रकाशनं कारितं येषां संक्षिप्तपरिचयोऽत्र प्रस्तूयते–

१. आचार्यपञ्चाशत्

श्रीवैष्णवाचार्येण वेङ्कटाध्वरिणा विरचितोऽयं ग्रन्थः पाण्डुलिपि–रूपेणावतिष्ठते स्म। कालियावर्येणास्य मातृकामासाद्य पाठालोचनपुरस्सरं न केवलं सम्पादनमपितु आंगलभाषयानुवादोऽपि विहितः। अस्य दुर्लभग्रन्थस्य महत्त्वमवलोक्य लक्ष्मणपुरस्थयाऽखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदास्य प्रकाशनमकारि।

२. तन्त्राधिकारनिर्णयः

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि हस्तलिखितग्रन्थागारे संरक्षितं भट्टोजिदीक्षितविरचितं तन्त्राधिकारनिर्णयं नामग्रन्थं सम्पादयितुं कृतसङ्कल्पः प्रो० कालियामहोदयोऽस्य ग्रन्थस्य मातृकाः प्राप्य पाठालोचनपुरस्सरं विस्तृत भूमिकया च सार्द्धं सुष्ठु सम्पादनं कृतवान्। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितेऽस्मिन् ग्रन्थे श्रीपाञ्चरात्रागमस्य सिद्धान्तानामाचाराणाञ्च खण्डनं कृत्वा तन्त्राधिकारिनिर्णय इति विषयो विस्तरतया प्रपञ्चितः।

३. प्रश्नोत्तरमणिमाला

ग्रन्थस्याऽस्यानेकमातृकाभ्यः सुष्ठु पाठं समालोच्य प्रकाशितं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लघुपुस्तकमिदं प्रो. कालियावर्येण समपादि। वैराग्यविषयकानेकप्रश्नोत्तर–मण्डितमिदं पुस्तकमप्यखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितम्। ग्रन्थेस्मिन् निम्नलिखितरूपेणानेकानि वैराग्याध्यात्मविषयकानि प्रश्नानि तेषामुत्तराणि चोपनिबद्धानि यथा–

अपारसंसारसमुद्रमध्ये सम्मज्जतो में शरणं किमस्ति।
गुरो! कृपालो कृपया वदैतद् विश्वेशपादाम्बुजदीर्घनौका।।[1]

एतादृश एव ३२ संख्यकाः श्लोका अत्रास्य ग्रन्थस्य श्रीसंवर्धनं कुर्वन्ति।

४. पुरुषोत्तमसंहिता–

पाञ्चरात्रागमस्याऽनेकासु संहितासु पुरुषोत्तमसंहितास्त्येकाति महत्त्वपूर्णा प्रकाशिता संहिता। अस्याः संहिताया एकैव मातृका केवलमान्ध्रलिपावुपलभ्यते। अनया मातृकयातिजीर्णतया पठितुमशक्ययापि अहर्निशं परिश्रमं कृत्वा कालियामहोदयेन पाठान् संशोध्य संहितैषा समपादि। तिरुपतिराष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य डॉ. ति. विजयराघवाचार्यसहयोगेन देवनागरीलिपौ लिप्यन्तरणं कारयित्वाऽथकप्रयत्नेन पुरुषोत्तमसंहितेयं प्रो. कालियावर्येण न केवलं सम्पादिताऽपितु न्यू भारतीयबुककार्पोरेशन–नामधेयेन दिल्लीस्थेन प्रकाशनेनेयं २००७ तमेऽब्दे सुष्ठु प्रकाश्यतामुपनीता पुरुषोत्तमसंहिताया, सम्पादने परिशीलने च प्रो. कालियावर्यः २००४ खिस्ताब्दे लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतप्राकृतभाषाविभागतो डी.लिट् इत्युपाधिनालङ्.कृतोऽभूत। पाञ्चरात्रसंहितासु सम्भवतः अर्वाचीनाप्येयं संहिता त्रयस्त्रिंशदध्यायात्मिका स्वयमेव स्वप्रतिपाद्यान् विषयान् निरूपयतीत्थम्–

पुरुषोत्तमेन देवेन पूर्वं भगवता स्वयम्।
पाञ्चरात्रागमं दिव्यं मम पित्रे स्वयम्भुवे।
प्रोक्तं तच्च मया लब्धं वारिधेरमृतं यथा।।

कर्षणादिप्रतिष्ठान्तं प्रतिष्ठाद्युत्सवान्तकम्।
उत्सवं तु समारभ्य प्रायश्चित्तान्तमेव हि।
यस्यां समग्रं सम्प्रोक्तं पुरुषोत्तम–संहिता।।[2]

---

१. प्रश्नोत्तरमणिमालायाम्–श्लोक–१

२. पुरुषोत्तमसंहितयाम्, १.२२–२४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ग– मौलिककाव्यसर्जनम्

यथाऽवोचि पूर्वं यदस्मदगुरुप्रवरो न केवलं दार्शनिकाध्यात्मिकसाधकः परमवैष्णाचार्य आसीत् प्रत्युत स आसीदेकोऽनुत्तमः सहृदयसामाजिकः कारयित्रीभावयित्रीप्रतिभासम्पन्नश्चोत्कृष्टकविपुङ्गवः, यतोहि प्रारम्भिक एव काले तेनैकं दार्शनिकं रूपकं व्यरचि सुधाभोजनम् नाम, अथ च तेषांमनेकाः सरसा हृदयस्पर्शी च काव्यरचना अपि प्रकीर्णतया श्रुता यासां सङ्ग्रहं कृत्वा मणिमञ्जीरम् इति नाम्ना प्रकाशितः काव्यसंग्रहः पाठकानां मनांसि प्रमोदयति। अत एवैतेषां गुरुवर्याणां साहित्यिक प्रणयनद्वयस्यापि समासेन प्रपञ्चनमत्र विधीयते–

१. सुधाभोजनम्

संस्कृतप्रतीकनाट्यपरम्परामनुसृत्य नृत्यनाटिका रूपत्वेन रचितमेकं दार्शनिकं रूपकमस्ति सुधाभोजनम्। अङ्कद्वयात्मिकेऽस्मिन् रूपके शक्रस्य चतस्रः कन्याः श्रीश्रद्धाऽऽशाही–नामधेयाः सुधां लब्धुं महर्षेः कौशिकस्य पार्श्वे जग्मुः। एतासां गुणधर्मान् निरीक्ष्य कौशिकाः अन्यान् सर्वान् उपेक्ष्य सुधापानाय हीनानामधेयायाः। कन्याया वरणञ्चकार तस्यै चाऽमृतं प्रददौ। यद्यपि सर्वाः कन्याः गुणयुक्ता आसन् तथापि केन कारणेन हीनाम्नी कन्यैव सुधायै पात्रीकृता महर्षिभिरित्यस्य चित्रणं नामानुसारं कालियामहोदयेन यथा विहितं तदस्ति द्रष्टव्यम्–

आढ्या नु मां श्रीः प्रतिभाति मातले
श्रद्धा त्वनित्या श्रुणु देव सारथे।

आशा विसंवादितया मतं हि मम
हीरेव चाऽऽर्या प्रगृणे प्रतिष्ठिताम्।।[1]

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितेस्मिन् रूपके नान्दीपाठ एवास्य शान्तरसप्रधानत्वमुपपादयितुं श्रीरङ्गनाथमाध्यमेन प्रो० कालियामहोदयस्य भक्तेः प्रकर्षमभिव्यनक्ति, यथा

---

१. सुधाभोजने, २.३६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धरति हृदि सदाम्बा यस्स्वशक्तिं नटी।
तं चिदचिदखिलनाट्यस्यादिमस्सूत्रधारः।।[1]
नटति सकललोको यस्य सङ्कल्पलेशात्।
विहरतु हृदि रङ्गे रङ्गनाथो यथेच्छम्।।[1]

प्रो. कालियावर्याणां रसोऽलङ्कारमाधुर्यं गीतेषु व्यज्यतेतराम्। सुधाभोजन एकैमस्मिन् गीतमापूर्य यच्चालङ्कारप्रयोगजातं तेनावर्णिषाताम्, तत्तु तत्रभवतः काव्यशास्त्रीयं ज्ञानंमथ च उत्तमकवित्वप्रतिभां प्रामाण्यपदवीमवतारयति, यथा?

हंसशिञ्जिते लहरिनर्तने कीचकतानसमीरे।
अलिकुल कल कलकलिते गीते सङ्गीतवति तीरे।
पुलकितजघनपुलिनबहुचपले सरसे सरसि सुकूले।
उरसिजसरसिजसज्जितसलिले भ्रमरकुले ह्यनुकूले।।[2]

इत्थं वक्तुमिदं शक्यते यदङ्कद्वयात्मिके सुधाभोजने प्रतीकनाट्यपरम्पराया अमूर्तपात्रविनियोगपुरस्सरं शान्तरसपरिपाकेन कविहृदयस्य प्रो. कालियावर्यस्य कारयित्री प्रतिभा सुतरां जरीजृम्भते। अस्य रूपकस्य प्रकाशनांन्तरमस्य मञ्चनं प्रसारणमपि चाभवत् लखनऊत आकाशवाणीतः। सरलतया संस्कृतभाषया विरचितमिदं गद्यपद्यान्वितं रूपकं कविवैदुष्यं विभूषयति। रूपकमेतद् लखनऊविश्वविद्यालयस्य स्नातकतृतीयवर्षकक्षायां पञ्चमषाण्मासिकसत्रस्य पाठ्यक्रमरूपत्वेनापि छात्राणामनुरञ्जानाय विनियुक्तमस्ति।।

२. मणिमञ्जीरम्

प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयस्य इतस्ततः प्रकाशितानाम–प्रकाशितानां कवितानां सङ्कलनं कृत्वास्य महाभागस्य परमशिष्येन पदमश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्लमहोदयेन सुष्ठु सम्पादनपूर्वकं मणिमञ्जीरम् इति नाम्ना

१. तदेव, १.१
२. सुधाभोजने, १.१३–१४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविता सङ्ग्रहः अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितो जातः। मणिमञ्जीरमिति कवितासङ्ग्रेऽहस्मिन् काव्यमणिरिव विस्फूर्तयः, तद्धि युद्धं विचिन्त्यम्, शीकराः, इतस्ततः इत्यभिधानाश्चत्वारः शीर्षकाः सन्ति। एतेषु चतुर्षु शीर्षकेषु कालियामहोदयेन विरचितानां संस्कृतकवितानामपूर्वा विच्छित्तिरवलोक्या भवति।

कविषु सूर्य इव तेजस्वी यः कविः कालिदासयते तस्य कवितासु भावो नरीनर्ति, रसो वरीवर्ति छन्दो छन्दति उच्छलन्ति चालङ्काराः। यशः कामनामनिच्छतः प्रो० कालियामहोदयस्य कविता अतिरमणीयाः रसभावरञ्जका भूत्वा यावच्चन्द्रदिवाकरं कवेः कीर्तिं प्रतिष्ठाययितुं क्षमा इत्यस्ति सर्वथा सिद्धम्।।

मणिमञ्जरीमाद्यन्तं निपीय वक्तुमिदं शक्यते यत् कविनात्र विविधविषयेषु स्वकीयं कवित्वं विस्फूर्जितम्। वैष्णवपरम्परानुगतं प्रणतितर्तिं निवेद्य विस्फूर्तय इतिशीषर्के स्वातन्त्र्यविषयकं कवितासप्तकं प्रणीतम्।। प्रजातन्त्रविषये, युद्धविषये, राष्ट्रविषये, महापुरुषविषये तथा चान्यान्यविषये संस्कृतकविता मणिमञ्जर्यामनुस्यूताः। मणिमञ्जर्या इतस्ततः शीर्षके विश्वविद्यालयगीतम्, मदीयं भारतवर्षम्, सैका श्रितिः इति, हे वर्षा सुकुमारि, समायाति मन्दं वसन्तो दिगन्तः, शारदी रजनी, रसघन, अनन्तं पदं, अवगुण्ठनं अवनी प्रमदवनी, प्रस्थितोऽसि विदेशम्, काकोऽहमस्मि, निद्रागता मम नयनयोः, किं करवाणि क्व यानि, अनुशासनमेव वरं वृणु त्वम् इत्यादयाः रमणीयाः कमनीयाः कविताः सहृदयानां हृदयान्यावर्जयन्ति।

जय हे इति कवितया प्रारभ्य मणिमञ्जीरमिदं बौण्डीग्रामः इति कवितया सम्पूर्तितां गता। अनेनावगऽम्यते कविप्रवरस्य मातृभूमि–समाराधकत्वम्।। व्यावहारिकजीवने वीतराग इव राजनीतिपराङ्मुखोऽप्ययं महाभागो भारतस्य यशस्विनं प्रधानमन्त्रिणं श्रीनरेन्द्रमोदिमहोदयमधिकृत्यैका कश्च मोदते नाम कविता रचितवान्, यथा–

अनेक जन्मार्जितपुण्ययोगतः
स्वराष्ट्रभाग्यादुत दैवयोगतः।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रधानमन्त्रित्वमवाप कोऽप्ययं
नरेन्द्रदामोदरदास–सेवकः।।[१]

अतो देव–गुरु–राष्ट्र–राष्ट्रसेवकादीनां कमनीयसङ्कीर्तनपूर्वकमनेन गुरुवर्येण यानि कानि च कवितारत्नानि प्रणीतानि तानि सर्वाण्येव मणिभूतानि दरीदृश्यन्ते। सर्वे विषयाः कविप्रतिभया नवीना इवाभान्ति, यथोक्तमानन्द–वर्धनेन ध्वन्यालोके–

दृष्टपूर्वा अपि ह्यर्थाः काव्ये रसपरिग्रहात्।
सर्वे नवा इवाभान्ति मधुमास इव द्रुमाः।।[२]

मणिमञ्जीर्यां गीतिशैली स्वकीयामाभां प्रसार्य कविता वनितेव राजते इति वचनं प्रमाणी कराति। सम्पूर्णेऽपि प्रणयने कवेः काव्यशास्त्रीयं कामशास्त्रीयञ्च ज्ञानं स्फुरतितराम्। प्रो. कालियामहोदयानां मुक्तककाव्येऽस्मिन् क्वचित् काव्यस्य ध्वनित्वं, क्वचिद्गुणीभूतव्यङ्ग्यत्वं क्वचिच्च चित्रत्वमपि दृष्टिपथमुपयाति। सर्वत्र प्रायो वैदर्भीरीतिः क्वचिच्च पाञ्चालीरीतिर्दरीदृश्यते। सर्वे काव्यगुणाः पुष्यन्ति च काव्यमिदं मुक्तकमिति। इत्थं समेषां काव्यशास्त्रीयगुणानामाकरभूतत्वेन मणिमञ्जीरं नाम ग्रन्थरत्नमिदं न केवलं प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयस्य महाकवित्वं पुष्णाति अपितु प्रतिभावतां श्रीमतां गुरुप्रवराणां कीर्तिकौमुदीमपि वैश्विकपटले वितनोति।।

एवं प्रायो दशाधिकग्रन्थरत्नैस्सार्द्धं शताधिकानि शोधपत्राणि संस्कृतकविताश्च विभिन्नपत्रपत्रिकासु द्रष्टुं शक्यन्ते।। आजीवनं सारस्वतसाधनाया महद्यज्ञे लेखनाध्ययनाहुतयो विनिवेद्याऽयं महामनीषी दुर्दैवेनाऽकाल एवाकस्मिककाले कोरौनाकालेन कवलितो भूत्वा ११.०४.२०२१ दिनाङ्के विष्णोः परमे धाम्नि परब्रह्मणि विलीनो जातः। सम्प्रति प्रो. कालियावर्याणां शोकाकुले कुटुम्बेऽस्मन्मातृकल्पा परमसाध्वी तस्य सहधर्मचारिणी श्रीमती सन्तोषलक्ष्मी कालिया, ज्येष्ठपुत्रः अंशुलकालिया ज्येष्ठपुत्रवधू श्रीमतिपायलकालिया, अपरः पुत्रः प्रत्यूषः, पुत्रवधू स्वाती च द्वौ पौत्रौश्रेयानार्षौ हृद्या नाम्नी चैका पौत्री अष्टौ परिजना विद्यन्ते। प्रो.

१. मणिमञ्जर्याम्, पृ० २१
२. ध्वन्यालोके, ४.४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कालियामहाभागस्य ज्येष्ठभ्राता विजयकालिया स्वकीये पैतृके बहराइचजनपदेऽथ चानुजः सुरेशकालिया लक्ष्मणपुरे वरिष्ठाधिवक्तृरूपेण पुत्रादिभिः सह उच्चन्यायलये जनेभ्यः न्यायव्यवस्थां प्रतिष्ठापयन्ति। एकश्चास्यानुजो दिनेश इति नाम्ना वैङ्किंगसेवायाम् उच्चाधिकारिरूपेण समाजसेवारतो दरीदृश्यते।।

प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयस्योत्कृष्टशिष्यानामपि सुदीर्घ–शृङ्खला विद्यते यस्य सुमेरुवत् लब्धप्रतिष्ठस्य पद्मश्रीविभूषितस्य यशः शेषस्य प्रो. बृजेशकुमारशुक्लस्य नाम को न जानाति। प्रो. शुक्लवर्य आसीत् सर्वश्रेष्ठो विश्वविश्रुतो विद्वाञ्छिष्यः अतएव तस्य परमप्रयाणदृश्यमधिसमक्षमेव चिकित्सालयेऽवलोक्य तदनुगतो भूत्वा सप्ताहन्तर्गतमेव ब्रहमलोकं गतवान् गुरुवर्यः। अन्ये च ये शिष्या अद्य जगति स्वकीययाऽऽभया जनान् प्रकाशयन्ति तेषु वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारिवर्यश्चन्द्रभूषणत्रिपाठी महाभागोस्मिन् समये हमीरपुरजनपदस्य जनपदाधिकारिरूपेणाथ च डॉ. युग्गीलालदीक्षितमहोदयो वित्तीयप्रबन्धप्रशिक्षणतथाशोधसंस्थाने उपनिदेशकपदमलङ्कृत्य उपाध्यक्षकोषाध्यक्षरूपेणाखिलभारतीयपरिषदमुपकुर्वन्तौ प्रयागनारायणमिमं शिष्यं सर्वविधं साहाय्यं प्रयच्छतः। वस्तुतोस्माऽकं सर्वेषामेव शिष्यप्रशिष्यानां सम्पूर्णाप्याभा परमगुरुदेवस्य आभामण्डलस्य प्रतिबिम्ब इव आभासते अत एवेयमुक्तिः सर्वथा सार्थकत्वं भजते गुरुवर्याणां व्यक्तित्वमधिकृत्य–

तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।।

अतोऽद्यातीवक्लान्तोऽयं प्रयोगोऽनाथ इव भूत्वा किङ्कर्तव्यविमूढो जातः। पाञ्चभौतिकशरीरेणाद्यास्माकं मध्येऽनुपस्थितोऽपि स परमगुरुदेवः सदैवाऽस्माकमन्तःकरणे प्रविश्याऽस्मान् प्रेरयति सत्यपन्थानञ्च आलोकयति। तस्याऽपूर्णानि कार्याणि शुभसङ्कल्पनाञ्च पूरयितुं यथाशक्ति यथामति चाऽऽजीवनं शुभसङ्कल्पं विधाय मन्ये यद् यावच्चन्द्रदिवाकरमस्य यशःकायस्य कीर्तिकौमुद्या संस्कृतजगदिदमालोकितं भविष्यति, यतोहि प्रोक्तम्–

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वन्दनञ्च गुरोस्तस्य

आचार्य–बिन्दाप्रसादमिश्रः
पूर्वकुलपतिः,
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालय, वाराणसी

महर्षिभरद्वाजस्य कुले जाता महाजनाः।
केचिच्छास्त्रमर्मज्ञाः केचिच्छस्त्रभृतां वराः।।१।।

तस्यैव च कुले जाताः कालिकपूजका जनाः।।
तस्मात् कालान्तरे तेऽन्याः कालियेति जनाश्श्रुताः।।२।।

जनास्ते सर्वसम्पन्नाः पूजिता विविधैर्नृपैः।
सश्रमाः कृतविद्याश्च बभूवुर्धरणीतले।।३।।

पञ्जाबदेशवासीयाः केचित् ते तत्कुलोद्भवाः।
उत्तरप्रदेशबहराइचबौण्डीग्रामे शुभे।
जग्मुश्च ते महाभागाः पण्डिता ब्रह्मचारिणः।।४।।

पण्डितप्रवरश्चैको ''गौरीशङ्करकालिया''।
सोऽपि गतवांस्तत्र कालियाकुलभूषणः।।५।।

तत्सुतः 'श्रीगिरिधारीलालः' श्रुतिपरायणः।
श्रीगिरिधारिलालस्य 'सुभद्रादेवि' नामिका
भार्या पुण्यवती चासीच्चतुष्पुत्रैकपुत्रिका।।६।।

ज्येष्ठा 'मालती' पुत्री चत्वारः पुत्रास्तथा।
जाता विजयोऽशोकः सुरेशो दिनेशस्तथा।।७।।

श्रीअशोककुमारो यः संस्कृताध्ययने वरः।
सदा वाणीव्रतो धीमान् 'कालिया' चेत्युपाह्वयः।।८।।

विश्वविद्यालये तेन लक्ष्मणपुरीये वरे।
संस्कृतशोधापर्यन्तं श्रेष्ठञ्चाध्ययनं कृतम्।।९।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विभागे संस्कृतस्यैवच्छात्राणां पाठनाय वै।
नियुक्तिस्तस्य सञ्जाता प्राध्यापकपदे शुचौ।।१०।।

आचार्यपदवीं श्रेष्ठां संस्कृतविभागे तथा।
विभागाध्यक्षतां प्राप्य तेन काशीपुरी गता।।११।।

कुलपतिपदं प्राप्तं काशीविवुधाकरे।
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये मते।।१२।।

कृत्वा तत्र सुकार्याणि प्रतिष्ठा तेन वर्धिता।
अर्जिता बहुकीर्तिस्तु पुरागमनं गृहे।।१३।।

लक्ष्मणनगरे वासे गुरुर्वसति निःस्पृहः।
धन्यो धीरस्सुखी श्रीमान् सर्वशास्त्रसुचिन्तकः।।१४।।

सेवातो हि निवृत्तस्स श्रीकालिया सतां वरः।
राष्ट्रविधानपालश्री–राष्ट्रपतिना पुरस्कृतः।।१५।।

आर्या संतोषलक्ष्मीर्या भार्या जीवनसङ्गिनी।
संस्कृतविदुषी सापि पतिच्छान्दानुगामिनी।।१६।।

'अंशुलः' प्रत्यूष 'श्चेति पुत्रौ तौ चिरजीविनौ।
विद्याविनयसम्पन्नौ पितृभक्तिपरायणौ।।१७।।

पत्नीपुत्रप्रियश्चेत्थं श्रीकालिया गुरुवरः।
सर्वप्रकारसन्तुष्टो भगवद्धर्मभूषितः।।१८।।

लोकव्यवहारमर्मज्ञो यश्च कश्चित् कविः क्वचित्।
स कालियामहाभागो लक्ष्मणनगरे घने।।१६।।

शास्त्राणि मानसे यस्य भावाः परोपकारिणः।
वन्दनञ्च गुरोस्तस्याऽभिनन्दनं मुहुर्मुहुः।।२०।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अविस्मरणीयाः स्मृतयः

प्रो० चन्द्रकान्तशुक्लः
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
राँचीविश्वविद्यालयः, राँची

श्लाघ्योऽयं विषयः यद्विद्वद्वरेण्ययोः आचार्ययोः स्मृत्यर्थं लखनऊ–विश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागस्य आचार्यद्वयोर्गुरुशिष्ययोः संयुक्तस्मृतौ स्मृतिविशेषाङ्कस्य प्रकाशनं क्रियते। पञ्चविंशत्यधिकवर्षेभ्यः पूर्वं लखनऊविश्वविद्यालये एव यन्नैकट्यमभवत्तद् दिनानुदिनेषु 'छायेव मैत्री खलु सज्जनानाम्' इति भर्तृहरिवचनानुसारं वर्धमानमेवाभवत्। ममार्धाङ्गिनी डॉ० मीना शुक्ला (सेवानिवृत्ता संस्कृतविभागाध्यक्षा, रांचीविश्वविद्यालयस्य) पुनश्चर्या– पाठ्यक्रमार्थं लखनऊनगरं गतवत्यासीत् तस्मिन्नेवावसरे द्वावपि आत्मीयभावेन मिलितवन्तौ।

विविधेष्वसरेषु प्रो० अशोककुमारकालियामहोदयेन प्रो० बृजेशकुमार शुक्लमहोदयेन च भारतर्षस्य विभिन्नेषु नगरेषु तयोः सह मेलनं सञ्जातम्। यदा श्रद्धेयः कालियामहोदयः सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये कुलपतिः आसीत्तदा तत्रापि तेन महोदयेन सह मेलनं जायते स्म।

इत्थमेव यदाहं २००१ तः २००४ पर्यन्तं कामेश्वरसिंहदरभंगा संस्कृतविश्वविद्यालये प्रतिकुलपतिरासम् तदा द्वयोरपि आगमनं तत्राभवत् कुलपतिना आचार्येण किशोरकुणालेन सम्मानितावपि जातौ। तत्र द्वावपि स्वीयेन वैदुष्येण प्रसिद्धिं प्राप्तवन्तौ।

एकदा प्रो. कालियामहोदयः राँचीविश्वविद्यालये आगतः आसीत् तदा मानुरोधेन च बोकारो–नगरे संस्कृतप्रसारपरिषदायोजिते संस्कृतदिवस कार्यक्रमे उपस्थितो भूत्वा सम्मानितोऽपि जातः। कालियामहोदयः सर्वदैव दूरभाषमाध्यमेन मम परिवारजनानां कुशलकामनां करोति स्म, यतोहि सः तु सर्वैः घनिष्ठतां प्राप्तवानासीत्।

दरभङ्गानगरे मम कार्यकालसमापनानन्तरमपि द्वावपि तत्र निरन्तरं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आगतवन्तौ सम्मानञ्च प्रप्तवन्तौ। तद्दिनं स्मरामि यस्मिन् दिवसे प्रो. शुक्लमहोदयः पद्मश्रीसम्मानार्थमधिसूचितोऽभवत्तस्मिन्दिवसे सः दरभङ्गानगरे एवासीत् पूर्वनिर्धारितकार्यक्रमानुसारं सः तृतीये दिवसे राँचीविश्वविद्यालये उपस्थितोऽभवन् विश्वविद्यालयस्य कुलपतिना सम्मानितो जातश्च।

प्रो. बृजेशकुमारशुक्लः प्राच्यविद्यासम्मेलनेनस्याधिवेशनेषु मया सह निरन्तरमेकात्मभावेन संयुक्तो भवति स्म शैक्षणिकेषु प्रशासनिकेषु निर्णयेषु च मत्समर्थनं विदधति स्म। विविधेषु प्रभागेस्वध्यक्षरूपेण सः वैदुष्यं प्रदर्शयति स्म किञ्चिद्विशिष्टं शोधपत्रं च प्रस्तौति स्म। तस्य प्रतिभया वैदग्ध्येन च जनाः आनन्दिताः जायन्ते स्म। २०१६ खीस्ताब्दे सम्मेलनस्य ४८ तमेऽधिवेशने यदा कार्यकारिण्याः उपवेशनमासीत्तदा ४६ तमस्याधिवेशनस्य कृतेऽध्यक्षपदहेतोः मम निर्वाचनार्थं तस्य भूमिका महत्त्वपूर्णासीत्।

राँचीविश्वविद्यालये एकवारं कुलपतेः निर्देशानुसारं सर्वेषु विभागेषु कोऽपि कोऽपि विद्वान् विभिन्नविश्वविद्यालयेन दिनत्रयस्य कृते आदर्श शिक्षणार्थमाहूतो जातः। तत्र मम पत्न्याः प्रस्तावेन एतदर्थं प्रो. शुक्लमहोदयः एवाहूतोऽभवत्, दिनत्रयपर्यन्तञ्च काव्यशास्त्रदर्शनज्योतिषविषयेषु सः विस्तरेण व्याख्यानं दत्तवान्। तत्र न केवलं छात्राः, अपितु मादृशाः अपि शिक्षकाः ज्ञानं प्राप्तवन्तः।

इत्थमेव २०१८ खीस्ताब्दे मदीया भार्या विभागध्यक्षारूपेण अन्ताराष्ट्रियां सङ्गोष्ठीमायोजितवती, समारोपसत्रे च झारखण्डस्य राज्यपालमहोदयानां विश्वविद्यालयानां कुलाधिपतीनां श्रीमती द्रौपदीमुर्मू–महोदयानां मुख्यातिथित्वे शुक्लमहोदयो विशिष्टातिथिरासीत्।

भवतु नाम, कालस्य गतिः ईश्वराधीनास्ति, अत एव प्रो. अशोककुमार–कालिया, प्रो. बृजेशकुमारशुक्लश्चास्मत्कृते स्मृतिशेषौ जातौ परं तयोः स्मरणमस्मानुद्वेलयति। परमेश्वरं प्रति प्रार्थये यत्सः द्वयोः सायुज्यमुक्तिं प्रदद्यात्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मृतिशेषाः आचार्याः

प्रो० रमाशङ्करमिश्रः
विभागाध्यक्षचरः
संस्कृतविभागः, लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषत्पक्षतः प्रकाश्यमानायाः अजस्रेति पत्रिकायाः विशेषाङ्कं विद्वज्जनसम्मुखीकृत्य हर्षविषादञ्च सहैवानुभूयते मया। हर्षस्यायं विषयो यद् विशेषाङ्कोऽयं गुरुवर्याणां कुलपतिचराणाम् आचार्य–अशोककुमारकालियामहाभागानां तथा च पद्श्रीबृजेशकुमारशुक्ल–महाभागानां सम्मानमधिकृत्य प्रकाश्यते। किन्तु असीमव्यथाया विषयोऽयं यदेते महानुभावाः अस्मिन् समये अस्माकं समक्षं न विराजमानाः। ते २०२१ ईसवीस्य वर्षस्य अप्रैलमासस्य प्रथमसप्ताहे गोलोकवासिनः सञ्जाताः कोरोनामहामारी प्रकोपेण ते आचार्यः कालकवलिता अभवन्।

एभि आचार्यैः सह मम कुटुम्बसदस्येव सम्बन्धः आसीत्। १९६७ ईसवीये वर्षे आचार्यकालियामहोदया मम गुरवः आसन् लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागस्य स्नातकोत्तरप्रथमवर्षस्य कक्षायाम्। ततः प्रभृति श्वासन्पर्यन्तं दिनस्य परार्धछायेव निरन्तरं तैः स मम सम्बन्धो वृद्धितरं वृद्धितञ्च जगाम। गुरुवर्यकालियासम्माने मम प्रयासः आसीत् अभिनन्दनग्रन्थप्रकाशनस्य किन्तु आकस्मिकदेहावसाने सति अभिनन्दनग्रन्थः तेन न दृष्टः। गुरूणाम् देहांन्तानन्तरं स्मृतिरुपेण सः ग्रन्थः प्रकाशितः।

यदा अहं लखनऊ–विश्वविद्यालये संस्कृतविभागे नियुक्तोऽभवम् तदा विश्वविद्यालयस्य आवासे (७८, बादशाहबागे) मया निवासः प्राप्तः। तस्मिन्नेव निवासे मम अनुजकल्पः पद्श्री–आचार्यबृजेशकुमारशुक्लमहाभागाः आवासं प्राप्तवान्। मम अवकाशप्राप्तिसमयर्प्यन्तं वयं तत्रैव अनिवसामः। असामयिके कोरोनामहामारीप्रकोपेण मम अनुजोऽपि गुरुवर्यकालियातः पञ्च–षड् दिवसपूर्वमेव गोलोकं गतः। बज्राघतसमं कष्टं मयानुभूतम्, बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा इति विचिन्त्य धैर्यं धारयामि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आदर्शप्रतिमूर्तिः आचार्यद्वयम्

डा० पत्रिका जैन
पूर्व पी.डी.एफ.
संस्कृतविभागः, लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

प्रो. कालियागुरुवर्येभ्यः प्रो. शुक्लवर्येभ्यः स्मरणसहितं सर्वप्रथमं प्रणमामि। इमौ गुरू प

ये समयस्य अभावो वर्तते, आचार्यौ सर्वथा विविधकार्येषु संलग्नौ जातौ तथापि यदि कोऽपि कार्यः सम्बधो वा आगच्छेत् तदा सर्वाणि कार्याणि परित्यज्य तौ कार्यसम्पादने संलग्नौ जातौ।

परमसम्माननीयाचार्यद्वयं चिंतक–प्रशासक–निर्देशक–मार्गदर्शक–सम्पादक–वाक्पटु–संरक्षक–सरलचित्त–साहित्यमर्मज्ञ–वैदुष्यप्रतिमूर्ति–सरस्वतीपुत्र–सुधीर–सुविचारक–छात्रवत्सलश्च आसीत् बहूनि विशेषांणानि तयोः अग्रे न्यूनानि प्रतिभासन्ते।

अस्माकं गुरवः श्रेष्ठमार्गगामिनः सन्ति। सर्वथा प्रत्येककार्यश्रेष्ठतया संपादनाय दत्तचित्ता आसन् सरलहृदयाश्च आसन्। 'गाहात्तसई' ग्रन्थस्य प्रथमे शतकं नायकस्य सम्बन्धे एका गाथा वर्तते। अस्यां गाथायां लोकव्यवहारो वर्ण्यते। नूनम् अस्मिन् समये लोकस्य हृदये अन्यद् वचने च अन्यद् दृश्यते। अयं पुनः प्राक्तन संभावितमार्गः श्रेष्ठपुरुषाणां समये केवलं भवति एव र्निव्यूढो यद् हृदये स्यात्तदेव वचने एवेति।

"अह संभाविअमग्गो सुहअ तुए जेव्व णवरँ णिव्वूढो।
एह्णिं हिअए अण्णं अण्णं वाआइ लोअस्स।।"

गुरुद्वयस्य व्यक्तित्वे एते गुणाः दृश्यन्ते। गुरुः अन्धकारस्य नाशको ज्ञानस्य च प्रकाशकोस्ति। धर्मशास्त्रे उद्घाटितं यद् यः शिष्यानां कर्णेषु ज्ञानामृतस्य अभिसिंचनं करोति धर्मश्च रहस्योद्घाटनं करोति स एव गुरुः। आचार्यद्वयम् अस्य नीतिवचनस्य प्रतिरूपकमस्ति। शिष्यस्य मार्गदर्शकः गुरुः जीवनं ऊर्जामयं करोति। भारतीयसंस्कृतौ गुरोः विशिष्टं महत्त्वमस्ति। अस्यां

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धरायां एवं च जनजीवने गुरोः महत्त्वं ईश्वरतुल्यं मन्यते। शतश्लोकीरचनायां शंकराचार्येण निगदितम् यत् त्रिषु लोकेषु स्वर्ग–पृथ्वि–पातालेषु ज्ञानप्रदातुः गुरोः कोऽपि उपमा न दृश्यते। गुरु पारसमणिवद् मन्यते। परम् इदं सम्यक् नास्ति। यतः पारसमणिः तु केवलं लौहं स्वर्णत्वेन परिवर्तते, स्वतुल्यं न करोति। सद्गुरुस्तु निजचरणाश्रितशिष्यम् आत्मसदृशं करोति। अस्मात् कारणात् गुरोः कृते काऽपि उपमा दातुं न शक्यते। गुरुस्तु अलौकिकोऽस्ति। सत्यमुक्तम्–

"दृष्टान्तो नैव दृष्टस्त्रिभुवनजठरे सद्गुरोर्ज्ञानदातुः
स्पर्शश्चेत्तत्र कल्प्यः स नयति यदहो स्वर्णतामश्मसारम्।
न स्पर्शत्वं तथापि श्रितचरणयुगे सद्गुरुः स्वीयशिष्ये
स्वीयं साम्यं विधत्ते भवति निरुपमस्तेन वालौकिकोऽपि।।"

अस्माकं उभौ आचार्यौ धीर–वीरौ आस्ताम। सदैव धैर्यं धारयतः। प्रशासनिकपदमपि अलंकुरुतः तथापि अहं तौ कदापि उद्विग्नौ न दृष्टवती। पद्मश्री आचार्यशुक्लवर्यः अधिष्ठातृपदम् अलंकृतवान्। दिवसपर्यन्तं दैनिककार्येण सह व्यस्तता वर्तते तथापि चातुर्यपूर्वकं सहजतया दायित्व सम्पादितवान्। गाथासप्तशतीग्रन्थस्य एका गाथा आचार्यद्वयस्य व्यक्तित्वे उपयुक्ता प्रतिभासते। सत्पुरुषः विपत्तिकाले उद्विग्नो न भवति, वैभवे गर्वं न करोति, भयकाले धैर्यं धारयति, समे–विषमे समये समानस्वभावी भवति।

वसणम्मि अणुव्विग्गा विहवम्मि अगव्विआ भए धीरा।
होन्ति अहिण्णसहावा समेसु विसमेसु सप्पुरिसा।।

आचार्यवर्यौ सहृदयौ स्तः। उच्चकोट्याः कवितायाः पठनं पाठनं लेखनञ्च कृतवन्तौ। आचार्यप्रवरकालियामहाभागस्य सम्बन्धे अहं न जानामि यत् सः कविरपि आसीत्, अहं तु सदा व्याकरणशास्त्रविशारद एव जानामि। अभिनवकवि–सम्मेलने तेषां महाभागानाम् अद्भुतकाव्यपाठस्य रसास्वादनावसरं प्राप्तवती–धन्याऽहं। गउडवहोनामके काव्ये कविसम्बन्धे एका सुन्दरा गाथा प्राप्यते। यत् कविः काव्यरचना करोति तदा तस्य हृदयः कदापि भीतः, लज्जितः, स्तम्भितः, श्रान्तः, दुर्मनः, अपूर्णः, खेदखिन्नश्च न भवति अपितु प्रहर्षेण समुन्नतो भवति।यथा–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

"भीअं व लज्जिअं पि व थंभिअमिव किं पि होइ सुढिअं व।
दूमिअमिव अप्फुण्णं व पहरिसुच्चं व इह हिअअं ।। "

आचार्यकालियामहोदयस्य कवितासंग्रहः 'मणिमञ्जीरम् अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषद–माध्यमेन अहं प्राप्तवती। कवितासंग्रहोऽभूत–पूर्वोस्ति। मम सौभाग्यमस्ति किन्तु आचार्यवर्यस्य रिक्तता हृदयं विदारयति। अस्मिन् काव्यसंग्रहे नैकाः कविताः सन्ति परन्तु मे मनसि एका आधिक्येन विलसति यथा–

"समायाति मन्दं वसन्तो दिगन्तः
विशति मन्दमन्दं विसन्तो हृदन्तः।

मदनतन्त्रमन्त्रोभियानेष्वतन्द्रः
वशीकारधिक्कारतन्त्रस्वतन्त्रः

प्रणयवृक्षसेकक्रियायामतन्द्रः
सः कान्तः प्रणयिनां विरहिणां दुरन्तः

समायाति मन्दं वसन्तो दिगन्तः
विशति मन्दमन्दं विसन्तो हृदन्तः।।"

मनसि उभयोः गुर्वोः कृते नैकाः भावनाः वर्तन्ते। पुनरपि बारं बारं सस्मरणं प्रणमामि नमामि च।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो० अशोककालियानिधनावसरे व्यथाभिव्यक्तिः

पद्मश्री प्रो० अभिराजराजेन्द्रमिश्रः
पूर्वकुलपतिः
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी

(१)

शुष्कं नेत्रद्वयेऽश्रु, व्यथितक्वनिका स्तम्भिता कण्ठगैव।
बुद्धिर्जाता हतश्रीः प्रलयघनघटेवोत्थिता कल्पनायाम्।
प्राज्ञः स्वाधीनमृत्युर्निरतिशयधनी मुक्तिभाजां समाजे।
स्वर्लोकं सोऽपि यातः कमिह पशुपतिं श्रावये हा निजार्तिम्।।

(२)

अस्तं शान्तो रसोऽगाद् रतिपतिक्षविधे विप्रलम्भोऽवशिष्टः।
कारुण्यं हाऽशरण्यं, विबुधविषयिणी सा रतिश्चापि मोघा।।
अस्माकं जीवनाशा स्फुटितघटतलच्छिद्रनिर्यज्जलाभा।
स्वर्याते द्रागशोकेऽप्यहह हतविधे! को न शोको बुधानाम्।।

(३)

हा विद्वन् सौम्यरूप! स्वजनसुरवने नन्दने पारिजात।
विद्याप्रावृट्पयोद! प्लुतरवरहितोदात्तमन्द्राभिभाषिन्।।
मन्ये कालो नृशंसोऽनयदनयपरो हन्त नामाक्षराणां।
प्रीत्याऽकाले[२] भवन्तं, विनिहतशरणैरुद्यतेऽस्माभिरद्य।।

***

---

१. पूर्वकुपतिः सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयीयः
२. कालस्य कालियेति नामाक्षरे प्रीतिः। तस्मादकालेऽनयत् इत्युत्प्रेक्षा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आचार्यद्वयसन्निधिः परवशा न क्षीयते संस्मृतिः

डॉ० सत्यकेतुः
सहायकाचार्यः
संस्कृतविभागः, ल.वि.वि., लखनऊ

यशःशेषाचार्य–अशोककुमारकालियामहोदया अप्रतिमप्रतिभया युताः पाञ्चरात्रवैष्णवागमे निष्णाताः संस्कृतवाङ्मयस्य विविधशास्त्रानु–शासनपद्धतावनुशिष्टाः लोकेषु सुश्लोका विनीतेषु सुविनीता विलक्षणधिषणासम्पन्नाश्चासन्। तेषां धवलकीर्तिर्दिक्षु भास्करभासमिव प्रसारं ससार। कालियावर्याणां दाक्षिण्यदक्षताया अनुभवः क्षणिकेनापि तत्साहचर्येणानुभूयते स्म। लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालये संस्कृतप्राकृतभाषाविभागे कस्यचिच्छोधार्थिनो वरिष्ठाध्येतृशोधवृत्तेः साक्षात्कारावसरे मया तेषां साक्षाद्दर्शनस्य लाभोऽलाभि। स्व० आचार्यबृजेशकुमारशुक्लवर्यैरेव एतैर्महाभागैः सह मम परिचयोऽकारि। कालियावर्याणाम् मुखाकृत्यासीमसौम्यतानुभूयते स्म। तेषां स्निग्धगम्भीरवचो विन्यासवैदग्ध्यमाधुरीश्रुतिगोचरीभूयामन्दानन्द–सन्दोहञ्जनयति स्म। आचार्यसन्निधौ वीतशोकत्वं तेषान्नाम्नोऽन्वर्थताम्प्रति–पादयामास। तैस्तु पुनरन्यदेव हेतुरुपन्यस्तः स्वनामधन्यतायाः स्वरचितायां सुधाभोजननाम्नि नाटिकायाम्–

शोकस्यातिशयो यस्य अशोकत्वस्य कारणम्।
अशोकस्य सशोकस्य कृतिस्तस्य वृता मया।

एतेषामाचार्यवर्याणाम् मुखान्निर्गता आशीर्वचांस्यधुनापि माम्प्रेरयन्ति सन्मार्गम्मेऽभिनिवेषं विदधाति। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः कार्यक्रमेषूपाध्यक्षत्वेन तेषां स्वागताभिभाषणानि मन्ये इदानीमप्यभि–नन्दयन्ति चेतांस्यस्माकम्। तत्रैव कार्यक्रमेषु तेषामाभारधन्यवादज्ञापन–पराण्याभणकान्यधुनाप्यनिर्वचनीयधन्यतामावेदयन्तीव भान्ति।

एकदाहम्मम गुरुवर्याभिः प्रो० दीप्तिशर्मत्रिपाठिभिराचार्यकालिया–महोदयानां गृहस्थितस्य पुस्तकालयस्य पुस्तकानां संयोजनाय साहाय्यार्थं निर्दिष्टोऽभूवम्। तदानीं मया सादरं साहाय्याय निवेदिते सति

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रसन्नवदनाकृत्याचार्यकालियावर्यैः तन्निवेदनन्नोररीकृतम्। तैरभिहितं यत् "अहम्मम पुस्तकानां संयोजनं शनैः शनैः स्वयमेव करिष्यामि। भवताम्बहुशो धन्यवादाः।" जराजीर्णवयस्यप्येतादृशाः स्वकर्मनिरताः स्वाभिमानिन आसन्नाचार्यचरणाः। तेषां जीवनेऽकर्मण्यतायाः स्थानन्नासीत्। संस्कृतसंस्कृतिसंस्कारप्रचारप्रसारायैकनिष्ठतयाखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः सञ्चालने सदा रता आसन्नेते महाभागाः। एतेषामेव प्रतिभाप्रतापप्रभावाद् 'अजस्रायाः' प्रकाशनप्रवाहपरीवाहोऽप्यजस्रम्प्रवहन्नस्ति। अहं श्रद्धेयाचार्या–शोककुमारकालियामहोदयानां श्रीचरणेषु स्ववाग्पुष्पाञ्जलिं सप्रश्रयं सश्रद्धं समर्पयन्नानतोऽस्मि।

दारुणदैवदुर्विपाककारणेन प्रवर्त्तितानर्थपरम्परया न केवलमाचार्य–कालियावर्या एव अस्मान् विहाय दिवङ्गता अपितु संस्कृततथाप्राकृत–भाषाविभागस्य यशस्विनोऽध्यक्षा अपि कीर्तिशेषाः सञ्जाता इत्यधुनापि नास्ति विश्वसनीयम्। पद्मश्रीराचार्यबृजेशकुमारशुक्लमहोदयाः नानागमपुराण–साहित्यज्योतिषकर्मकाण्डादिविद्यासु पारङ्गताः बहुश्रुता आसन्। शास्त्रैकमात्रव्यसनिनामेतेषामाचार्याणां सान्निध्यं स्मारं स्मारमस्माकं हृदयानि पौनःपुन्येन वज्रपातमनुभवन्ति। विराट्वटवृक्षछायामिवैतेषामाचार्याणामाश्रये नो जीवनन्न केवलमाजीविकासम्पन्नतामगादपितु जीवनस्य विविधपक्षा–णामप्यव्याहतगतिना प्रगतिर्बभूव। तेषां सौहार्दपूर्णस्नेहवचांसि मन्येऽधुनापि कर्णशष्कुलीम्प्रपूरयन्तीव।

मम लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालये आगमनात्पूर्वमाचार्यशुक्लमहोदयैः साकं कथमपि परिचयो नासीदिति तु दौर्भाग्यमेवामानि मया। लखनऊविश्व–विद्यालयस्य संस्कृततथाप्राकृतभाषाविभागे सहायकाचार्यपदे साक्षात्कारावसरे मयैतेषामाचार्यवर्याणां साक्षाद्दर्शनमिदम्प्राथम्येनाकारि। अनन्तरं साक्षात्कारस्य परिणामसूचनार्थमाचार्यवर्याणां दूरवाण्याः सन्देशदेशनासमयेऽश्रुतपूर्ववचांसि श्रुत्वा यथा हर्षप्रकर्षो मयाधिगतः तस्योपमानं शब्दमात्रेण विधातुमेव शक्यते। अतीव सरलतयाचार्यशुक्लैस्तदानीमभिधायि यद् भवान् सत्यकेतुः वदति किम्? मयावादि आम्। तदा तैरभिहितं यदत्र लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालये भवतां चयनमभूदतोऽचिरमागत्य कार्यभारमधिगृह्णात्विति। तत्र तस्मिन् संवादे कुत्राप्यनार्जवता नासीत्। सर्वथार्जवपूर्णप्राञ्जलवाचैव तैरीरितमासीत्।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आजीविकोपलब्धिराधुनिके युगे कस्यापि जीवनस्य परमल्लक्ष्यम्भवति तदर्थं यथा सद्व्यवहारेण सभाजितोऽहमत्रभवद्भिः आचार्यशुक्लैः तत्तु अद्वितीयमेव। तद्वचोगुञ्जनमसकृत् रोमहर्षं जनयन्ति। एतेषामाशीर्वाग्प्रसादेनात्र प्रतिष्ठाम्प्राप्यानुगृहीतोऽस्मि।

आचार्यशुक्लैर्ममात्र विभागे आगमनेन सहैव निर्धारितपाठ्यपुस्त–कस्यैकस्य लेखनसम्पादनस्य कार्यमार्दिशन्। यथाकालन्तेषां प्रेरणागिरः शास्त्रसमुन्नत्यर्थमेव मे मार्गमादिशन्ति स्म। बहुधा तेषां विस्मृतिपथङ्गताः संस्कृतसाहित्यस्याद्धोक्ताः श्लोकाः मया पूर्यमाणाः तैर्गीर्भिर्गम्भीरगीर्भिर–भिनन्दिताः अभूवन्। पण्डितराजजगन्नाथस्य "गीर्भिर्गुरूणाम्परुषाक्षरा–भिस्तिरस्कृता यान्ति नरा महत्त्वम्" इति वागनुगम्य यदा कदा तेषां परुषप्रैषा अपि मयाधिगता इत्यहम्मम सौभाग्यमेव मन्वे। गुरुकल्पानामाचार्यशुक्लानां श्रीचरणेष्वहं स्वशब्दप्रसूनाञ्जलिं सप्रश्रयं सश्रद्धं समर्पयन्नानतोऽस्मि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कालियाऽशोक आप्तो विनीतो बुधः

आचार्यो रहसबिहारी द्विवेदी
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
रानीदुर्गावतीविश्वविद्यालयः, जबलपुरम्, म.प्र.

लक्ष्मणाख्ये पुरेऽधीत्य डी.लिट्परो–
पाधियुक्तो हि वेदान्तशास्त्रेऽभवत्।
विश्वविद्यालयेऽध्यापने शोधने
यो यशस्वी स्वदेशे विदेशे श्रुतः।।१।।

यः सदध्यापने शोधनिर्देशने
छात्रभद्रङ्करोऽध्यापकोऽभूत्परः।
द्वैतवेदान्तशास्त्रे विशिष्टे वरश्–
चान्यसद्दर्शनाध्यापनेऽपि प्रधीः।।२।।

संस्कृतस्याप्तविद्भिः प्रसिद्धे परे
विश्वनाथास्पदे विश्वविद्यालये।
कौलपत्यं परं साधयन् शान्तिदं
राष्ट्रपत्यादरं कीर्तिदं लब्धवान्।।३।।

संस्कृतायां तथाऽऽङ्ग्ल्याञ्च हिन्द्या परो
भाषणे पाठने नाट्यसत्सर्जने।
मित्रसद्भावनारक्षणे विश्रुतः
कालियाऽशोकवर्यो महामानवः।।४।।

कालियाऽशोक आप्तो विनीतो बुधः
स बृजेशोऽस्य शिष्यो हि पद्मश्रिया–
ऽलङ्कृतो हन्त! कोरोनयोभौ हतौ
कीर्तिशेषौ हि यौ ब्रह्मणा कारितौ।।५।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एतयोराकृती संस्मृतौ राजतः
ईश्वरो ह्यात्मनः शान्तये प्रार्थ्यते।
स्वस्य भावाञ्जलिः शन्तिदो दीयते
सन्ततिश्चैतयो राजतां वर्द्धताम्।।६।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आचार्यवर्याणां प्रो० (डॉ०) अशोककुमारकालिया महाभागानां पुण्यस्मृतौ समर्पितसंस्मरणश्रद्धाञ्जलिः

प्रो० उमारानी त्रिपाठी
अध्यक्षचरा, संस्कृतविभागः,
महात्मागांधीकाशीविद्यापीठम्, वाराणसी

आधुनिकसंस्कृतसाहित्याकाशे मार्तण्ड इव भास्वराः विद्वद्धौरेयाः विशिष्टाद्वैतवेदान्तशास्त्रविशेषज्ञाः विविधविद्यापारङ्गता नानापुरस्कारसम्मानैः समलङ्कृताः कुलपत्यादिमहनीयप्राशासनिकपदेषु प्रतिष्ठिताः सारस्वतकुला-वतंसाः वैष्णवसम्प्रदाये मैसूरस्थपरकालमठस्थानात् समधिगत पारम्परिकदीक्षाः श्रीरामचन्द्रचरणारविन्दचञ्चरीकचेता निरभिमाननिश्छल-सरलस्वभावाः विलक्षणप्रतिभोपेताः सुधीजनानां मानसमानसरे मराल इव राराजमाना अस्मदीयगुरुकल्पाः सम्प्रति यशःशेषाः आचार्यप्रवराः अशोक कुमारकालियामहाभागाः परमश्रद्धया संस्मर्यन्ते विपश्चिद्वरैरिति। मे नैकाः स्मृतयः चित्तेषु विद्यन्ते। तासां मध्ये काचिदेव उद्धरणीयाः। यदाहं लखनऊविश्वविद्यालये संस्कृतविभागे नियुक्तिमवाप्य व्याख्यातृपदे कार्यरता आसम्। तदा तत्रभवतां भवतामाध्यक्ष्येऽपि तदधीना अध्यापनकार्यं कृतवती। इदं तु मम सौभग्यमेव यत्तादृशमहापुरुषस्य नैकट्यमनुभवति स्म। प्रो० कालियामहोदयस्य वैदुष्येन विनम्रव्यवहारेण चाहं नितान्तमुपकृतास्मि तत्र तत्सन्निधौ कार्यावसरेषु समनुभूतानि नैकानि संस्मरणानि चित्तपटले समायान्ति। असौ न केवलं शास्त्रज्ञः कविहृदयश्च अपि तु अध्यात्मविद्यावगाहनेऽपि विशिष्ट आसीद्।

यदा-कदा तेन सह मे आध्यात्मिकी चर्चाऽपि सञ्जाता। मम कृते एष आचार्यप्रवरो गुरुकल्पआसीत्। अनुसन्धानकार्येषु, अध्यापनकार्येषु च तस्य क्रान्तदर्शिनी प्रतिभा कार्यशैली च समेषामेव छात्राणां विदुषां च कृते प्रेरणा-स्रोत एव। नानाविद्यानिष्णातः श्रद्धेयकालियामहोदयोः दृढभक्तियुतोऽपि। एकदा आचार्यमहोदयेन तत्र विभागे देवरहा बाबाविषये एका विशिष्टा वार्ता श्राविता। वार्तायां श्रुतम्मया यत्सिद्धयोगिवर्येण एकदा कस्यचिद् प्राशासनिक अधिकारिणः (IAS) पूर्वजन्मोपात्तपुण्येनैव ब्रह्मर्षि देवरहा बाबादर्शनार्थं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समुपगते तस्मिन् तत्शीर्षपादाङ्गुष्ठस्पर्शेनैव कृपया शक्तिपातपूर्वकं तस्य कुण्डलिनीशक्तिजागरणं कृतम्। तत्र तत्कथाश्रवणप्रसङ्गे आचार्य कालियामहोदयस्य गूढं रहस्यात्मकमध्योत्माज्ञानं निशम्य तस्य साधकस्वरूपमपि अनुमितं मया। पुनश्च, संस्मरणमेकं मे चेतसि समायाति यद् एकदा २००२ तमे वर्षे शोधच्छात्राणां निर्देशनकार्यं प्रति मे त्वरां दृष्ट्वा मया सह वार्तायामुक्तवान्–उमा! त्वं सरलहृदया दयार्द्रचेता असि। अनेके छात्रा स्वार्थं समीहितुं वाञ्छन्ति केवलम्, तर्हि तैः साकं विवेकपूर्वकमेव व्यवहरणीयम्, यतोहि एते स्वार्थसिद्ध्यनन्तरं शिक्षकं मूढं मत्वा उपहसन्ति। अतः सावधानेन वर्तितव्यमिति। एवमेव यदा आचार्यमहोदयः वाराणस्यां सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये कुलपतिपदमलङ्कृतवान् तदाहमपि तत्र महात्मा गाँधी काशीविद्यापीठे संस्कृतविभागे २००५ सत्रे आचार्यपदे नियुक्ताऽभूवम्। तदा प्रायेणैव तेन सह तत्र वार्ताकाले अनेकशः प्रेरणा समुत्साहवर्धनञ्च प्राप्तम्मया। सम्प्रति श्री विष्णोः सायुज्यमुपगते। तस्मिनस्माकं मनसि तस्य सामीप्यकाले व्यतीतानि दिनानि निश्चप्रचं संस्मरणीयानि। प्रार्थये परमेश्वरं यद् आचार्यवर्यं कालियामहोदयं परमकृपया शान्तिं प्रयच्छेदिति। असारे खलु संसारे तं महानुभावं प्रति स्वीयया–धमर्ण्यमनुभवामि भूयोभूयः कार्तज्ञ्यं व्याहरामि। श्रद्धया शिरसाऽवनतास्मि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कालियामहाभागस्याऽभिनन्दनम्

प्रो० शशितिवारी
अध्यक्षः
बृहत्तरवैदिकाध्ययनपरिषद्, दिल्ली

जीवने स्मृतीनां सङ्ग्रहस्तदातिशयोमूल्यो भवति यदा तस्मिन्नागत्य।
वसन्ति केचिद्गुरुजनाः प्रियजनाः महापुरुषाश्च ।।१।।

शैशवस्मृतिरेकमात्रं धूमिलच्छायेव भवति।
परं क्रमशः सघनतापन्ना भवति यदा तत्पारं याति।।२।।

कतिपयपक्वापक्वानि स्मृतिचित्राणीव सा सदैव साहचर्यं।
निर्वहति दृश्यपटलाद्भ्रान्तेव मुखे स्मितिराच्छन्ना भवति।।३।।

मन्ये तूष्णीमतिमात्रं, मितभाषणं, भाषणं चापि परिपूर्णप्रभावि।
कालियामहाभागस्यासन् ओजस्विन उन्नताः लघुस्वराः।।४।।

गुरुसिन्हावद् गम्भीरो धीरोऽत्युदारो मतिः स्थिरधीः।
प्रियबन्धुर्गुणज्ञः कालियावर्य इवच्छात्रहितैषी।।५।।

उज्ज्यिन्या नाट्यसभां प्रति सर्वे शोधार्थिनो यास्यन्ति।
आदेशोऽभूत् सर्वैरागन्तव्यमभिनयाभ्यासो भविष्यति।।६।।

बसयानं गच्छद् लखनऊतः झाँसीं माँडूं भ्रमद्।
रात्र्या विकटसमस्यास्ते ननु चालको न शयीत।।७।।

गुरुवरादेशात् मौनमनुगताः समे शान्तिः प्रसृता सर्वतः।
उक्तं गेयं वाद्यं वाच्यं येन भयं नानुभूयेत।।८।।

कालियामहोदयस्वरलहरी तदाऽभूदाश्रयः सर्वेषाम्।
यदाऽसौ गुरुश्रेणीत आगत्य नो मध्ये संयुक्तो भवति।।९।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विरहितशृङ्गारपरिहासेनापि नावसरस्त्यक्तो लब्धः।
तादृशसदाचारिणि जने खलु सार्थकतापि धन्याऽभूत् ।।१०।।

वादविवादा दीर्घा वार्त्ता न स्वीकार्यास्तस्मै जातु।
किञ्चित् सौम्यः स्थिरश्च सोऽभूत् सहायकस्तदाऽभवदानन्दः।।११।।

संस्कृतकविः साहित्यकारो नित्यं भवेत् काव्यसृष्टौ रतः।
धीरशान्तकालियागुरोः शिष्याः सततं सानन्दाः सफलाः।।१२।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो० अशोककुमारकालिया–यथा मयानुभूतः

प्रो० किरणकुमारथपल्यालः
अधिष्ठातृचरः, कलासङ्कायः,
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

अनुवादिका–सौम्यापाण्डेयः
शोधच्छात्रा, संस्कृतविभागः
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

एकस्यां सन्ध्यायां श्रीमतीसंतोषकालियामाध्यमेन चलदूरवाण्याऽहं सूचनामधिगतवान् यद् अशोककुमारकालिया 'कोरोना' इति रोगेण ग्रस्तः तथा औषधालये प्रेषितः। पुनः सूच्यते यत् तस्य प्राणवायुस्तरः (ऑक्सीजन इति) निम्नो जाता। अतएव सः 'वेण्टीलेटरे' आस्ते। परं ततः तस्य परलोकगमनस्य हृदयविदारिणी सूचना आगता, विश्वसिमि एव न कथमेतत् सर्वमभूत्।

मम कालियामहोदयेन सह प्रथमं वारं मेलनं मत् प्रतिवेशिनः संस्कृतविभागे आचार्यस्य– डॉ० जगदम्बाप्रसादसिन्हामहाभागस्य गृहे समभवत्। तदानीं कालिया शोधच्छात्रः आसीत्। व्यतीते काले इदं प्रथमं मेलनं घनिष्ठमित्रतायां परिवर्तितम्। एतस्य कारणनि अधोलिखितानि सन्ति–

प्रथमः–आवयोः रुचिषु साम्यतासीत्। हितकरचायपानं चलचित्रे च पट्टकन्दुक–यष्टिकन्दुकपादकन्दुकानाञ्च क्रीडानां दर्शनं, तेषाञ्च विश्लेषणम्।

द्वितीयः– संस्कृतविभागस्य ये शिक्षकाः माम् पाठितवन्तः तेषु नैकाः शिक्षकाः पश्चात् कालियामपि पाठितवन्तः इत्थमावां गुरुभ्रातरौ संवृत्तौ। अहं वयसा कालियामहोदयात् ज्येष्ठो आसम्, अतएव सः मां जयेष्ठभ्रात्रा सममन्यत्।

तृतीयः– तस्य पुत्रः मम पुत्रश्च विश्वविद्यालये बी–एस०सी० इति कक्षायां सहपाठिनौ आस्ताम्।

चतुर्थः–विश्वविद्यालयप्रदत्ते यस्मिन् भवने अहमनिवसं पश्चात् तस्य पुरतो भवनं कालियामहोदयम् आवण्टितो जातः।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पञ्चमः– अनन्तरमित्यस्य लॉटरी–भाग्यक्रीडने संयोगतः किञ्चित् दूरे एव आवयोः भूखण्डमपि आवण्टितम् यस्मिन् आवाम् भवननिमार्णं कृतवन्तौ तथा विश्वविद्यालयात् सेवानिवृत्तेः पश्चात् तस्मिन्नेव भवने निवासामः। आवयोः गृहसदस्यानां मध्येपि परस्परं मेलनमासीत्। यद्यपि श्रीमतीकालियायाः तस्य उभयोः पुत्रयोः पुत्रवध्वोश्च स्नेहः समानरूपेण लभते तथापि प्रो० कालियायाः अभावः बहु–तुदति।

कालियामहोदयः वैष्णवसम्प्रदायस्योपरि शोधं कृतवान्। अतो हेतोः तेन दक्षिणभारतं गत्वा वैष्णवसम्प्रदायस्य परम्परागत–अधिकारिभिः विद्वद्भिः सह निवासं कृत्वा अध्ययनं कृतः तथा तत्रस्थः धर्मगुरोः सकाशं दीक्षितः सञ्जातः। तेन संस्कृतविभागे सहायकाध्यापकपदे नियुक्तिं प्राप्य प्रोफसरपदमलङ्कृत्य सेवानिवृत्तिरधिगतासीत्। सः वाराणस्यां सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये 'कुलपतिः' इतिपदमपि अलङ्कृतमकरोत्। सः संस्कृतस्योत्थाने विकासे च महत्त्वपूर्ण–योगदानाय राष्ट्रपतिमहोदयेन सम्मानितः। तेन अनेकानि पुस्तकानि शोधलेखानि च प्रकाशितानि। सः राष्ट्रियान्ताराष्ट्रियसङ्गोष्ठिषु सम्मेलनेषु च प्रतिभागमकरोत् तथा किञ्चित्सु अध्यक्षतामपि कृतवान्। सः संस्कृतभाषायां न केवलं भाषणे दक्षः अपितु सः संस्कृतछन्दबन्धनेऽपि पारङ्गत आसीत्। सः संस्कृतभाषायाः आशुकविः आसीत्। तेन 'अजस्रा' इति नाम्ना सम्पादिता पत्रिका अतीव लोकप्रिया वर्त्तते या शोधपूर्णलेखार्थं प्रसिद्धा।

प्रो० कालिया एकः निपुणः शिक्षक आसीत्। एक आदर्श–अध्यापकः ज्ञानी तु भवति एव परं सः स्वशिष्यान् अपि ज्ञानार्जनाय मार्गदर्शनं प्रददाति। प्रो० कालिया अस्य मापकस्य सम्यगुदाहरणमासीत्। तस्य बहु–प्रतिभाशालिशिष्यैः ज्ञानक्षेत्रे स्वप्रतिमानं संस्थापितम्। प्रो० कालिया स्वशिष्यानां बहु प्रशंसाम् अकरोत् तथा तेषामुपलब्धिषु हर्षितोऽभवत्। यदा–कदा सः तेभ्यः परामर्शमपि अगृहीत्, विशेषतो ज्योतिषविषये स्वप्रियशिष्याद् इदानीं यशः शेषात् प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयात्।

प्रो० कालिया परम्पराधुनिकतयोश्च सङ्गम आसीत्। तस्य निष्कर्षाः तर्केषु आश्रिता आसन्। सः स्वलेखेषु सर्वदा मूलस्रोतादेव सन्दर्भाणि अदात् अथवा यः स्पष्टरूपेण लिखिति स्म यत् मूलस्रोतसः अध्ययनं न कृतम्ः। यतोहि सः प्रायः अकथयत् यद् अनेकेषु ग्रन्थेषु ये श्लोकाः उद्धृताः ते मया मूलग्रन्थेषु

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न प्राप्यन्ते स्म।

संस्कृतभाषासम्बद्ध–प्रागभिलेखानां सम्पादने यदा कदा मया प्रो० कालियायाः विद्त्तायाः लाभः लभते स्म। कदाचित् कस्यचित् खण्डितलेखस्य निर्माणावसरे शब्दस्य चयनावसरे मया तस्य परामर्शः गृहीतः आसीत्। तदा सोऽकथयत् यत् अर्थदृष्ट्या तु अयं शब्दोऽत्र समुचितः परं अनेन छन्दो भङ्गो भवति। अतएव इदं समुचितं न एवमुक्त्वा स्वयम् अनेकविकल्पानि प्रस्तौति स्म। सः पूर्वाग्रहात् दुराग्रहाच्च पूर्णतः रहितः आसीत्। सः गुण–दोषाणां सम्यक्–विवेचनं कृत्वा एव स्वकीयमतं प्रस्तौति स्म।

कालियामहोदयः संस्कृतभाषायाः प्रचारार्थं प्रसारर्थं च समर्पितः आसीत्। सः छात्रकालादेव अखिल–भारतीय–संस्कृत–परिषदा सह सम्बद्धोऽभवत् तथा कालेन सह विविधपदानां दायित्वानां निर्वहणमपि कृतवान् विश्वविद्यालयात् सेवानिवृत्तेः पश्चाद् किञ्चित्कालान्तरेण एव तस्य जानुनोः कष्टोऽभवत्। बहूपचारैरपि आरोग्यता नाभवत्। चिकित्सकैः सोपानप्रयोगः वर्जित आसीत् परं सः चिकित्सकानां परामर्शं विस्मृत्य प्रतिदिनं पञ्चाधिकसोपान मारुह्य संस्कृतपरिषदं गत्वा स्वकार्यं सम्पाद्य विनिवर्तते स्म।

प्रो० कालिया तथा तस्य सहकारिणः संस्कृतपरिषत्तत्त्वाधाने सङ्गोष्ठिषु देशस्य प्रख्यातविदुषां भाषणानां समये समये आयोजनमकुर्वन्। तासु गोष्ठिषु जिज्ञासवः नागरिकाः, विश्वविद्यालयस्य उच्चतरा शिक्षासंस्थान च शिक्षकाः शिक्षिकाश्च छात्र–छात्राश्च प्रतिभागम् अकुर्वन्। तथा तैः लाभन्विताः जाताः। दुर्भाग्योऽयं यत् 'कोरोना' इति महाप्रकोपेन न केवलं प्रो० कालियामहोदयोऽपितु तस्य प्रियशिष्यः पद्मश्री–प्रो० बृजेशकुमारशुक्लोऽपि, यस्य संस्कृतपरिषदः विविधेषु क्रियाकलापेषु उच्चस्तरीयः योगदानमासीत्, अस्मान् विहाय दिवङ्गतः।

इदं वीक्ष्य किञ्चिद् आश्वासनं लभते यत् संस्कृतपरिषदः अध्यक्षरूपेण मार्गदर्शिनः संस्कृतस्य भारतीयसंस्कृतेश्च अनन्यप्रेमिणः कुशलप्रशासकश्च श्री रमेशचन्द्रत्रिपाठिवर्याः प्रो० प्रयागनारायणमिश्रवर्यश्च कुशलतया अतिनिष्ठया संस्कृतपरिषदोः गौरवमयी–शृङ्खलाम् अग्रेसारयतः। ***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अशोक–शोकाधिः

प्रो० हरिदत्तशर्मा
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
इलाहाबादविश्वविद्यालयः, प्रयागराजः

कृत्वा सशोकान् खलु सर्वबन्धून्
स्वर्गं प्रयातः सहसा ह्यशोकः।
कालेन नीतः क्व नु कालियाऽसौ
हहा प्रभो! कालगतिर्विचित्रा।।१।।

मासैकपूर्वं स प्रयागराजं
समागतः शोधपरीक्षणाय।
स नीतवान् सङ्गमवारि शुद्धं
गृहं पवित्रीकरणाय नूनम्।।२।।

वैदुष्य–सारल्य–सुसङ्गमेन
सकौशलं तेन धृतं पदत्रयम्।
आचार्यताध्यक्ष्य–सुकौलपत्यं
सुलक्ष्मणेऽस्मिन्नगरे च काश्याम्।।३।।

स पाञ्चरात्रागम–धर्मदृष्टिं
तन्त्राधिकारं च विशिष्टयुक्तम्।
अद्वैतशास्त्रं बहु वैष्णवान्तं
बभार विद्याभरणं सुविज्ञः।।४।।

ऋतं ह्यजस्रा खलु पत्रिके द्वे
तयोरजस्रं निरतः प्रकाशे।
सा संस्कृताख्या परिषत् समृद्धा
कृता भृशं संस्कृतसेवकेन।।५।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्ये सुनाट्ये प्रतिभाप्रकर्षं
दधत् सुधीस्तद्रचनाप्रवीणः।
नाट्ये प्रदर्श्याभिनये स्वकीयां
कलां स लोकप्रियतामवाप।।६।।

नूनं स स्वर्गे सुरलोक–लोकाँश्–
चमत्करोति प्रतिभाविशेषैः।
सुरास्तु तत्सङ्गति–सौख्यमाप्ता
दुःखाकुला भूमितले मनुष्याः।।७।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मरामि पादाब्जयुग्मं गुरूणाम्

डॉ० प्रमोदिनी पण्डा
पूर्व–प्राध्यापिका,
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी

दाक्षिण्यं स्वजने दया परिजने शाठ्यं सदा दुर्जने
प्रीतिः साधुजने नयो नृपजने विद्वज्जने चार्जवम्।
शौर्यं शत्रुजने क्षमा गुरुजने कान्ताजने धृष्टता
ये चैव पुरुषाः कलासु कुशलास्तेष्वेव लोकस्थितिः।।

भर्तृहरिकथनानुसारेण कुशलपुरुषेषूपर्युक्ताः यावन्तो गुणा भवेयुस्तेषु कतिपये साक्षात्साक्षात्कर्तुं शक्यन्ते प्रो०अशोककुमारकालियामहोदयानां सृष्टिषु कृतिषु च। वैष्णवसप्रदायस्य विशिष्टाद्वैतपरम्परायां दीक्षिता एते विष्टपकष्टहारिणः हरेः कृपालवः सन्तः श्रीकृष्णकरुणया द्वौ पुत्रौ सुचरितौ, पत्नी भर्तुरनुगामिनी, मित्राणि स्निग्धानि, परिजना अवञ्चकाः मनो भगवद्भक्तिभरितम्, आकारो रुचिरः, आननमुपमानरहितं, गौरता शशिकिरणतिरस्करिणी, वाणी अमन्दगामिनी मन्दाकिनी, विद्या च रसनाग्रनर्तकी।

अकरवमहं कार्यमेतेषां नेतृत्वे सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये कतिपयवर्षाणि, यदा एते कुलपतयोऽभूवन्। सम्पत्तौ विपत्तौ चैकरूपता या महतां शीलता सा स्वगरिम्णा एषु वर्तन्त इति मया भृशमनुभूतम्। कुलपतिलक्षणं यच्छास्त्रेषु विजृम्भितं तदेतेषु लक्ष्यते–

मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः।।

सभ्यतायाः विकासवशात्स्वतन्त्रताया अनन्तरं विश्वविद्यालयानुदाना–योगनिर्णयनियामकेन कुलपतियोग्यतायामन्तरमायातं, तथापि तत्त्वदृष्ट्या स एव प्राचीनः सुगन्धोऽत्राप्याघ्रायते। मुनीनां दशसहस्रं नाम, अध्यापकानां सङ्कुलः। इदानीमपि विश्वविद्यालये तदन्तर्गतेषु महाविद्यालयेषु नैके

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अध्यापकाः कार्यं कुर्वन्तः सन्ति। वेतनप्रदानद्वारा कुटुम्बपोषणाय सर्वविधां शिक्षा–व्यवस्थां कलयति स कुलपतिः। आधुनिककाले यत्परिवर्तितं रूपं कुलपतेर्दरीदृश्यते तत्सर्वं प्रो०कालियामहोदयानामाचरणेषु संलक्ष्यते।

सकलगुणनिकेतनस्य भूतभावनस्य ज्ञानसिंहासनमस्ति काशी। तत्र राराज्यते भारतवर्षस्य अस्मितायाः आधारभूतः प्राच्यविद्यायाः वार्तावहः सर्वप्राचीनः सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः विशालवटवृक्षवत्, यः खलु प्रतिष्ठामाप्नुवतामद्यतनीयानां संस्कृतविश्वविद्यालयानां प्रेरणास्रोतः मार्गदर्शकश्च। आङ्ग्लशासनकालादारभ्य अद्यावधि यावत् नैके वैदेशिकाः भारतीयविद्वांसः कुलपतिपदं मण्डयन्तः संस्कृतमातुः सेवां कुर्वन्तः स्वयशः स्थापयन्तः चकासति।

काशी भवति भगवत्याः सरस्वत्याः उपासनास्थली यस्याः पदप्रक्षालनतत्परा अमन्दा मन्दाकिनी उत्तरवाहिनी भूत्वा ज्ञानधारां निवहति आसागरं विदुषां पल्लवनार्थम्। न केवलं भारतवर्षस्य कोणानुकोणात्, अपितु पृथिव्याः तत्तद्देशेभ्यो जनाः स्वतः समागच्छन्तः संस्कृतस्य सुवासेन समाकृष्टाः सन्तः ऐहिकपारलौकिकसुखस्यावबोधनार्थम्। अत्र वसुधैव कुटुम्बकं सन् विश्वं भवत्येकनीडम्। काश्यते प्रकाश्यते इति काशी। अत्रत्याः नीरक्षीरविवेकिनो विद्वांसो गुणानामनुसन्धानाय सततप्रयत्नशीलाः रमन्ते। अहो, आश्चर्यं कलियुगस्य महिमा? आदिशङ्कराचार्यादारभ्य दिवोदास-काशीराजं यावत् स्वपाण्डित्यपीयूषं वर्षयन्ति सुधियः। अद्यापि जनाः स्वसामर्थ्यं प्रमाणयितुं काशीमायान्ति। उक्तं च –

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्।
काश्यां वासः सतां सङ्गो गङ्गाम्भः शम्भुपूजनम्।।

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः विद्यायाः वरीवस्यास्थलम्। प्राचीनगुरुकुलपरम्परां निर्वहन् केवलं चतुर्दशविद्यानां चतुषष्टिकलानां वा ज्ञानस्थली न, अपितु समागतामागन्तुकनां सामर्थ्यप्रदर्शनस्थलं भवति। अस्य कुलपतिपदमलङ्कर्तुं बहव ईषुः। परन्तु कुलपतिपदं बहुनिकषपरीक्षणफलम्। अत्र मुख्यकार्यालयस्य सम्मुखे स्थितस्य वटवृक्षस्य अधः निर्धारितं भवति महामहिमकुलाधिपतिना नियुक्तस्य कुलपतेः वैदुष्यम्। कार्यरताः कर्मचारिणः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अध्येतारः, अवसरप्राप्ताः विद्वांसश्च सर्वे अपेक्षमाणाः भवन्ति नूतनस्य कुलपतेः स्वागतार्थं, कार्यदक्षतायाः अनुशीलनार्थञ्च ।

प्रो० कालियामहाभागाः स्मितहास्यमुखमण्डलेन राजधान्याः लक्ष्मणपुरतः समागताः सन्तः कुलपतिपदवीमलञ्चक्रुः। अदर्शि तेन दक्षता पाण्डित्यस्य। प्राचीनवटवृक्षस्य सुविस्तृतशाखाप्रशाखावत् संस्कृतविश्व-विद्यालयस्य सम्बन्धिताः महाविद्यालयाः देशे विदेशे च परिव्याप्ताः सन्ति।

समस्याबहुला परिस्थितिः। शिक्षाप्रणाली नितरां परिवर्तनशीला। संस्थायाः कर्णधाररूपेण समन्वयस्थापनं, सत्रपरिचालनं, विकासमूलक-कार्यसम्पादनं प्रामुख्यं भवति अमीषां कुलपतीनाम् ।

राजनीतेः अभेद्यदुर्गं भवति अयं विश्वविद्यालयः। मौनिनः कलहं नास्तीति नीतिमवलम्ब्य मितं च सारं च वचो हि वाग्मिता भावमाधारीकृत्य न कस्यापि प्रशंसा न च निन्दा तैरङ्गीकृता। छात्राणामान्दोलनं भवतु, अध्यापकानां वा, तेषामुपरि प्रभावः कदापि न परिलक्षितः। सभासञ्चालनं सम्यक् कृत्वा आक्षेपस्य अवसरं नैव दत्तवन्तः। सर्वं ज्ञात्वाऽपि सर्वैः साकं मित्रवदाचरणं कृत्वा प्रत्येकं क्षेत्रे परिमलस्य स्थापनार्थमभिनवो-पायमवस्थाप्य अजातशत्रुरूपेण प्रमाणितवन्तः परवर्तिकालेषु ।

प्रो० कालियामहाभागाः वस्त्रेण वपुषा वाचा विद्यया विनयेन च पञ्चवकारैः सुशोभिताः सर्वान् प्रभावयांश्चक्रुः। प्रो०बृजेशकुमारशुक्लमहाभागाः एतेषामादरणीयच्छात्रेषु अन्यतमाः सन्ति, ये स्वगुणैः गुरोः गौरवं गीतवन्तः। स्वयोग्यताबलेन गुरुमहिम्ना पद्मश्रीबिरुदभाजोऽपि सञ्जाताः। मम कृते प्रो० कालियामहाभागानां स्नेहः पितृसुलभ आसीत्। न केवलं कर्मक्षेत्रे, अपितु बौद्धिकविकासाय तेषां प्रेरणा अविस्मरणीया तिष्ठति। वाचा वर्णयितुं नाहं समर्था एतादृश कल्पपादपम्। नैमिषारण्यस्य सङ्गोष्ठ्यां मम मुखात् ओडिआभागवतस्य गानं श्रुत्वा अभिभूता अभवन्। निरवधि सरस्वत्याः उपासनां कर्तुं प्रेरितवन्तः। सुखेषु दुःखेषु कार्यक्षेत्रे परिवारे वा तेषाम् एकरूपता अनन्या। अनुगामिनः अग्रे सारयितुं तेषां सहयोगः आजीवनमासीत्। तेषां तिरोधानमपि विलक्षणं सञ्जातम्।

कालः तुच्छतरः, कलिः कलिमयः, तस्मिन् कियज्जीवितम्, सम्पत्तिः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कियती, कियत्यपि मतिर्विद्याबलं वा कियत्। तथापि कालेऽस्मिन् उच्चस्थानमवाप्य गर्वपर्वतधरो लोको वर्वर्ति। एतद्वैपरीत्यं प्रो० कालियामहोदयानां चरितम्। भारते सर्वप्रथमस्थापिते संस्कृतविश्वविद्यालये कुलपतिपदमवाप्य भारतराष्ट्रपतिसम्मानेन सम्मानिताः नैकबिरुदेन विभूषिता अपि कदापि गर्वं नावहन्ति यथा–

विषभारसहर्षेण गर्वो नायाति वासुकिः।
वृश्चिको बिन्दुमात्रेण चोर्ध्वं वहति कण्टकम्।।

तेषां मृदुभाषिता, सरलव्यक्तित्वं, कोमलहृदयं, कर्तव्यनिष्ठता, कर्मठत्वं, वाग्मित्वं, कपट–राहित्यं, कवित्वं, समाजोपकारकत्वं, सहृदयहृदयावर्जकत्वं, संस्कृतपक्षपातित्वं कस्य वा मनो न हरति।

लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागाध्यक्षरूपेण, अभिनवगुप्तसंस्थानस्य निदेशकरूपेण, नैमिषारण्ये आनन्दमयीमातृप्रतिष्ठापितवैदिकपौराणिकानुसन्धानसंस्थानस्य निदेशकरूपेण, अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः सचिवरूपेण उपाध्यक्षरूपेण च संस्कृतस्य जागरितप्रहरीरूपेण ते लोकेष्वम्लानचरिताः। दुष्टान् स्वकुशलनीतौ जयन्ति स्म, यथा भगवान् धर्मस्य गुप्तये खलनिग्रहाय च दण्डं बिभर्ति, तथैव दुष्टान् दूरीकृत्य निजाभिनवशैल्या वहिष्कारं च कृत्वा शासनं चक्रिरे।

तैर्विरचितं सुधाभोजननाटकमद्यापि रङ्गकर्मिषु कौतूहलं जनयति। विशिष्टाद्वैतदर्शनमधिकृत्य पाञ्चरात्रागमविषये योगदानमेषां भगीरथप्रयत्न इति विश्वसिमि। ते कस्यापि उपकारं कृत्वा प्रत्युपकारभावनां न पोषयन्ति, अपितु कृतोपकारं विस्मरन्ति स्म। विष्णुवत्द् अमानी भूत्वा मानं योग्येभ्यः प्रयच्छन्ति। बहुजन्मभ्यः परमेतादृशा युगपुरुषा प्रादुर्भवन्तीति मे मतिः। कस्य कृते ते स्नेहं न साक्षात् प्रदर्शयन्ति, परन्तु सर्वे तत्कृतं स्नेहमनुभवन्ति दृष्टिस्तु सदा करुणाभरिता।

तेषां प्रदत्तमाशिशमिदानीमपि मे हृदयकन्दरमान्दोलयति। उपदेशम् जीवातुरूपेण गृहीत्वा कर्म कुर्वती अस्मि। तदुपदेशं स्मारं स्मारं तेषां कीर्तिकौमुदीं ध्यायं ध्यायमलौकिकीं प्रतिभां च भावयामि। कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः इत्यूपनिषद्वचनं सत्यं कुर्वन्तः स्वर्गताः। वयं तेषां

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संवादिनीमाकृतिं केवलं स्मरामः। तैरुक्तं कदाचित्–

सर्वद्रव्येषु विद्यैव द्रव्यमाहुरनुत्तमम्।
आहार्यत्वादनर्घ्यत्वादक्षयत्वाच्च सर्वदा।।

यथाब्धेस्तरङ्गास्तत्रैव लयं यान्ति तथैव विष्ण्वंशसम्भवास्ते विष्णावेव लयं गताः। यद्यपि तेषां वैकुण्ठप्रस्थानं लक्ष्मणपुरेऽभवत्, परन्तु आदिशङ्करदृष्ट्या ते काशीमलभन्त यतो हि तैर्ज्ञानमाध्यमेन काशी विदिता, जिता, प्राप्ता च। यतो हि–

काश्यां हि काशते काशी काशी सर्वप्रकाशिका।
सा काशी विदिता येन तेन प्राप्ता हि काशिका।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अजातशत्रुः समभूद् अशोकः

प्रो० आजादमिश्रः
प्राचार्यचरः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
भोपालपरिसरः, भोपालाम्, म.प्र.

(१)

कुमारशोभो वयसा युवा यद्
वाणी च धीरा मधुरार्थपूर्णा।
श्रीकालियाः कालदयोऽपि नित्यम्
अजातशत्रुः समभूद् अशोकः

(२)

विष्णुप्रियः सन्नपि सर्वदेवप्रसादमासादयितुं प्रवीणः।
नैसर्गिकी विप्रमतिः कदापि न सम्प्रदायग्रहणेन दीना।।

(३)

भवति स्म पुरा शास्त्रचर्चा परिषदोऽङ्गणे।
हजरतगञ्जस्थिते तत्र दर्शनं प्रथमं मम।।

(४)

जगदम्बाप्रसादेन सिन्हाख्येन सहानुगः।
अध्यक्षेण ह्यशोकोऽभूत् परिषत्कर्मतत्परः।।

(५)

विश्वविद्यालये तद्वै संस्कृतस्य मनीषिणाम्।
आचार्याणां प्रियश्चाभूद् अशोकः कालिया जनः।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(६)

सैद्धान्तिकः सन्नपि सर्वभावात्
प्रवर्तितोऽसौ व्यवहारमार्गे।
युगानुसारी क्व नु युक्तिमन्तरा
स्वमर्थमासादयितुं समीहते।।

(७)

येनासादितगौरवेण बहुधा शिष्याः प्रशिष्याः कृताः
लोके संस्कृतवाङ्मयस्य विविधा सेवासपर्याः पुनः।
नानाग्रन्थनिबन्धलेखनपटुर्वक्ता विपश्चिद् वरः,
अध्यक्षो विबुधप्रियः कुलपतिः काश्यां समासीच्चिरम्।।

(८)

निवृत्तः खलु सेवातः शासनस्य विधानतः।
अशोकोऽसावुपाध्यक्षः परिषत्सेवां चकार ह ।।

(९)

पदवाक्यादिशास्त्रेषु वेदे तन्त्रागमे तथा।
पाञ्चरात्रागमे जातो विशेषज्ञो हि कालियाः।।

(१०)

सद्भिः समं वसति योऽनुदिनं प्रसन्नः
सद्भावनाधिभर इद्धतपाः सुविद्वान्।
तस्मै नु विष्टपमिदं वसते समाजे
क्षाराऽप्यहो परिणता मधुराम्बुधारा।।

(११)

स्तौति मधुकरो भूमन्! कालिया भवतां प्रियः।
देहि सायुज्यमस्मै हि श्रुतं भक्तानुगो हरिः।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मम स्मृतिकोशे गुरुवर्याः प्रो० ए.के. कालियामहोदयाः

डा० रेखा शुक्ला
विभागाध्यक्षचरा, संस्कृतविभागः
जुहारीदेवी गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कर्णपुरम्

'विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्' इति सूक्तेः प्रत्यक्ष–निदर्शनं गुरुप्रवराः प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागाः वैष्णवागमस्य रामानुजदर्शनस्य विशिष्टाद्वैतदर्शनपरम्पराविपश्चिताः विद्यावैभवविभूषिताः नानाग्रन्थरचयितारः पारम्परिकाधुनिकशिक्षायाः विग्रहवान्मूर्तिरस्वरूपाः अवदातहृदयमनीषिणः सतां कुलमणिभूताः सदाचारवन्तः गुणग्राहिणः गैर्वाण्याः समुपासकाः सारस्वतशेवधिसम्पन्नाः विनम्रसौम्यस्वभावयुक्ताः नितान्तसहजसरलाः सर्वदा शिष्याणां हिते संलग्ना दार्शनिकोऽपि सहहृदयकवयः नाट्यकलालङ्कृताः स्वकीर्तिकौमुद्या लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयं प्रकाशयितारः सर्वेषां गौरवास्पदभूता आसन्।

प्रतिभाशालिविद्यार्थीरूपेण स स्वगुरूणां प्रियशिष्यः आसीत्। प्राध्यापक रूपे ते छात्राणां लोकप्रिया आसन्। प्राच्यसंस्कृतविभागास्य अध्यक्षपदे स्थितोऽपि कर्मचारिणां सम्मानभाजन आसीत्।

अहं तु साहित्यवर्गस्य छात्रा आसम्। परास्नातकस्य पूर्वार्द्धे अस्माकं काऽपि कक्षा ताभिः न अध्यापिता। तेषां परिचयोऽतिविलम्बेन जातः। किन्तु यदा तेषां साक्षात्कारोऽभवत् एवं प्रतीयते स्म यदहं बहुसुपरिचिता अस्मि।

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः सर्वेषु कार्यक्रमेषु ते स्वयं दूरवाणीतः सूचनामददुः। नैमिषारण्ये स्व० प्रो० श्रीनिवासरथमहाभागस्य व्याख्याने श्रोतृरूपेणभागग्रहणावसरो ताभिः एव प्रत्तः।

मम महाविद्यालये छात्राणां मौखिकी–परीक्षा–हेतवे ते सहर्षं स्वस्वीकृतिं दत्त्वा स्वीकीयकारयानेन कर्णपुरमपि आगतवन्तः। एका घटना मम स्मृतिजालेषु सर्वाधिका माम भावविभोरं करोति। मम निर्देशने एकस्याः छात्रायाः पीएच०डी० इत्यस्य मौखिकी परीक्षा आसीत्। तदानीं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्णपुरविश्वविद्यालये मौखिकी बहुकालानन्तरं भवति स्म। मम पादे तु अस्थिभङ्गः जातः। स्व० प्रो० के० के० मिश्रवर्यः गुरुवर्यश्च तस्मिन् विशेषज्ञौ आस्ताम्। गुरुवर्यः टैक्सीयानेन स्व० प्रो० के० के० मिश्रमहोदयैः सह मम गृहमागत्य माम् कर्णपुरविश्वविद्यालयं नीतवन्तः। तेषां शब्दाः अद्यापि मम कर्णे गुञ्जन्ति। 'त्वम् एकाकिनी कथम् आगमिष्यसि? अतएव आवाभ्यां सहैव चलितव्यम्।' गुरोः कृपायाः एतद्वैलक्षण्यं तु मम कृते अकल्पनीयमेवासीत्।

कर्णपुरे स्व० डा० प्रेमाअवस्थी दीदी तेषां सहपाठिनी आसीत्। ते माम् तासां विषयेऽपृच्छन्। रतनलालनगरे तासामावासः आसीत्। ते अकथयन् 'तस्याः गृहं चलतु' तत्र प्राप्त्वा तेऽति हर्षितोऽभूवन्। दीदी अपि बहु प्रसन्ना जाता। ताः तेषां बहु स्वागतमकुर्वन्।

यदा ते सम्पूर्णानन्दविश्वविद्यालयस्य कुलपतिपदमलङ्कृतवन्तः मम महती अभिलाषा आसीत् तेषां दर्शनाय। ईश्वरेणाऽहं सकामा कृता। स्व लघुपरियोजनानुसन्धानकार्यवशादहं तत्र गतवती। प्रो० गङ्गाधरपण्डामहोदयैः अस्माकं निवासभोजनादि व्यवस्था कृता। कुलपतिकक्षाद्बहिः अहं प्रतीक्षारता आसम्। यदा कक्षद्वारमुद्घाटितं केनचिद् तेषां दृष्टिनिक्षेपं मामुपर्यभवत्। सत्वरमेव ताभिरहम् आहूता। स्वव्यस्ततमे समयेऽपि पूर्वमनिर्धारिते कार्यक्रमेऽपि सहजरूपेण 'उपविशतु' इत्युक्तवा ममागमनस्य कारणं पृष्ट्वा मार्गदर्शनमकुर्वन्। शिक्षायाः उच्चतमे पदस्थेऽपि एतादृशी निरभिमानिता सहजता सारल्यञ्च वस्तुतः ज्ञानमण्डितानामाभूषणमस्ति। तेषां विषये पण्डितराजजगन्नाथस्य उक्तिः चरितार्थाऽस्ति–

सत्पुरुषः खलु हिताचरणैरमन्द–
मानन्दयत्यखिललोकमनुक्त एव।
आराधितः कथय केन करैरुदारै–
रिन्दुर्विकासयति कैरविणीकुलानि।।

एवमेव स्मृतिपटले नैकाः स्मृतयः सन्ति। सर्वासामुल्लेखं कर्तुं नात्र शक्नोमि। मसीलेखनीपत्रमपि न्यूने भविष्यतः किन्तु तेषां गुणसङ्कीर्तनं पूर्णतां न लप्स्यते। अन्ते सहस्रनमस्काराञ्जलिततयो गुरुप्रवरेभ्यः विनिवेद्य विररामि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भावाञ्जलिः

(अग्रजाचार्य–अशोककुमारकालिया महाभागाय)

प्रो० ओम्प्रकाशपाण्डेयः
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः,
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

(१)

समायाता 'कोरोनाख्या नवेयं या महामारी
ह्यसंख्याता जना विश्वेऽचिरं ग्रस्तास्तयाऽऽघ्नाताः।
चिकित्सा–साधनं लब्धं जनैर्यैर्भाग्यवद्भिस्ते
प्रभोरनुकम्पया केचिज्जनास्तिष्ठन्ति सप्राणाः।।

(२)

सुधीः स्यादेष मूर्खो वा धनी वा निर्धनः कोऽपि
नरः स्यादेष नारी वा नृपो वा पण्डितो वाऽपि।
इयं दुष्टा महामारी न पश्यन्ती गुणग्रामं
दशत्येवाखिलं दृष्ट्वा समीपस्थं कमप्येव।।

(३)

अशोकः कालियोपाख्यो यशस्वी पण्डितश्चायं
बभूवाऽस्यास्तथाऽऽखेटो महामार्या अगत्यैव।
गुरुर्वाऽऽचार्यवर्योऽसौ मनीषी वैष्णवो भक्तः
कुले सारस्वते जातः कविः सम्पादकश्चापि।।

(४)

गुणागारश्च विख्यातः परं सारल्य सम्मूर्तिः
बभूवासौ शुभैषी मे स निर्व्याजञ्च निः स्वार्थम्।
कियन्तश्छात्रवृन्दास्तं स्मरन्तः श्रद्धयाऽद्यपि
गुणाँस्तस्यैव, मन्यन्ते विधात्रा वञ्चितास्तस्मात्।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(५)

सशोका विद्यते जाया, सशोका विद्यतेऽजस्रा'
गतोऽशोकस्ततः सर्वः सशोको विद्यते लोकः

वरेण्या अग्रजाः आश्रय, सन्तो भवन्तो नश्च ह्यात्मीयाः,
वयं वन्दामहे भवतो निधिस्ते संस्मृतिर्नः स्यात्।।

(६)

न विद्यते सम्प्रति नः पुरस्तादयं मनीषी स्वयमेव साक्षात्
तथापि तस्य प्रतिमा हृदिस्था विवेक–विद्या–विनयान्वितेयम्।
सदा विनिर्देक्ष्यति सत्प्रवृत्तिं स्वजीवनादर्शगुणैरसङ्ख्यैः
इति स्मरन्तो वयमर्पयामः स्वहार्दभावाञ्जलिमेव तस्मै।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हा हन्त किं कृतमकल्पितमेव धात्रा!

डॉ० नवलता
पूर्वसंस्कृतविभागाध्यक्षा
विक्रमजीतसिंहसनातनधर्ममहाविद्यालयः, कानपुरम्

२०२१ तमे वर्षे सम्पूर्णे जगति यथा महामारीजन्यो ध्वंसोऽजायत तद्विदितमेव सर्वेषाम्। संस्कृतजगत्यपि विशेषतो लखनऊविश्वविद्यालयस्य 'संस्कृत एवं प्राकृतभाषाविभाग' इत्यत्रापि तस्य कालस्य प्रभाववशाद् वर्षारम्भ एव जनवरीमासस्य प्रथमदिनाङ्क एव विभागाध्यक्षचराः प्रोफेसरकृष्णकुमारमिश्रवर्याः ततः मासत्रयानन्तरमेवास्मद्गुरवः स्वनामधन्याः सारल्यैकमूर्तयः सौम्याकृतयः शान्तचेतसो वेदान्तविदः विशेषतो रामानुजप्रवर्तितविशिष्टाद्वैतवेदान्तस्य तलस्पर्शिनो विद्वांसो गरिष्ठाः वरिष्ठा आचार्यवर्या अशोककुमारकालिया इत्याख्यया प्रथिताः ममानुजकल्पः संस्कृतजगति बहुश्रुतः प्रोफेसरबृजेशकुमारशुक्लश्च प्राणघातिन्याः कोरोनाहतकायाः ग्रासत्वङ्गता इति महद्दुःखस्य विषयः। तत्राखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदः रत्नभूतान् प्रातःस्मरणीयान् कालिया-गुरुवर्यान् प्रियमाचार्यबृजेशकुमारशुक्लवर्यञ्च क्रमशः संस्मरणमिषेण श्रद्धाञ्जलिं समर्पयामि।

प्रातःस्मरणीया गुरुवर्याः–

प्रातःस्मरणीयाः कालियोपाह्वया आचार्य–अशोककुमारनामधेयाः गुरुवर्याः सदैवास्माकं स्मृतौ तिष्ठन्तस्तत्तद्विषयकैः स्वस्याचारैः यद्यप्यद्यापि मार्गदर्शनमिव कुर्वन्तः सन्ति तथापि तद्विषयकाः कतिचित्प्रसङ्गाः सदैव मे मनसि स्फुरन्तीव।

१९७५ तमे अहम् एम.ए. परीक्षामुत्तीर्णवती। यद्यपि प्रथमवर्षे सामान्यदर्शनविषयमध्यापयन्त आसन्नाचार्वर्याः द्वितीये वर्षे च ब्रह्मसूत्रचतुःसूत्र्याः रामानुजभाष्यं पाठयन्त आसन्। मया शैवदर्शनं विकल्पतया स्वीकृतमासीदतः साक्षाद्रामानुजभाष्यं नाधीतवती किन्तु कक्षायाः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शैक्षणिकगतिविधिषु मम सक्रियतावशादाचार्यवर्याणामपि साधुदृष्टिः ममोपर्यासीदेव। पुनश्च द्वितीये वर्षे लघुशोधकार्यस्य सन्दर्भे ग्रन्थानवेक्षितुं विश्वविद्यालयावधेरनन्तरं हजरतगञ्जस्थितायामखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि नित्यं गच्छामि स्म। तत्र प्रातःस्मरणीयाः गुरुवर्याः आचार्यजगदम्बाप्रसाद–सिन्हमहोदयाः शैवदर्शनमर्मज्ञा गुरुवर्या आचार्यनवजीवनरस्तोगिवर्याः असावाचार्यकालियोपाह्वया गुरुवर्याश्च प्रायशो नित्यमेव सायं परिषदि सम्मिलन्ति स्म। अस्माकं शोधच्छात्राणां यथापेक्षितं मार्गदर्शनमपि निःस्वार्थभावेन कुर्वन्त आसन्। गम्भीराकृतयोऽपि गुरुवर्याः स्मेरमुखा आसन्नस्माभिः शिष्यैः सह तेषां व्यवहारस्तदनुगुण एव सरलआसीत्। तेषां मुखे सदैव कश्चिन्निःस्पृहभावः शान्त सागर इव लक्ष्यते स्म। 'दुःखेष्वनुद्विग्नमना सुखेषु विगतःस्पृह' इति वचनं चरितार्थयन्तः गुरुवर्याः विश्वविद्यालये निर्विवादव्यक्तित्वस्य स्वामिनः सर्वेषां प्रिया आसन्। ते सङ्गीतज्ञा अप्यासन्निति स्मितासिंघलनामधेयया मम सख्या बोधितमासीत्। कालियागुरुभिः सह तस्या आसीत्कश्चित्पारिवारिकः सम्बन्धः।

मम स्मृतौ द्वित्रा अवसरा आयान्ति। एकदा आकाशवाण्यां वार्ताया ध्वन्यङ्कनार्थमहं गतवती। मया सह मम पतिः श्री शीतलप्रसादोऽप्यासीत्। तत्र गुरुवर्याः मिलिताः। यथा मम स्मरणं जायते यदाचार्यपदे कार्यरताः कारयानं स्वीकुर्वन्तोऽप्यमी स्कूटरयानेन गता आसन्। स्कूटरयानस्य तालकमुद्घाटयितुं व्यवसितान् गुरुवर्यान् शीतलमहोदयः वार्तालापमिषेण सहजतया पृष्टवान्– गुरुवर्याः, भवन्तोऽद्य कारयानस्य स्थाने स्कूटरयानेन.... इति। अमी गुरवः गम्भीरभावेन तालके पिनद्धां कुञ्चिकां निःसार्य तथैव हस्ते स्थितां तां कुञ्चिकां स्वीकृत्य आवयोः किञ्चिन्निकट आगतवन्तः। क्षणेनैव मम मनसि भयमजायत–

गुरव इमे। एतैः सह संवादोऽयं न विधेय आसीत्। निकटमागत्य तर्जयिष्यन्ति इमे–

'कथं ते साहसो जात एतस्या पृच्छायाः?'

किन्तु ते परिहसन्त इवोक्तवन्तः–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'शीतल! एतत्स्कूटरयानं मम पार्श्वे द्वाविंशद्वर्षेभ्यो वर्तते खलु। पुरातनं वस्तु कदापि न त्यजामि। चिरसहचरं खलु स्कूटरयानमेतत्।'

इत्युक्त्वा साशयमावयोर्दृष्टिपातं विधाय तथैव गत्वा स्कूटरयानमुद्घाट्य प्रस्थितवन्तः। स्वाभाविकेन शान्तभावेनापि मन्दस्मित्यैव गम्भीरवाचा मया प्रथमं वारमेतेषामेतत्सहजपरिहासो दृष्टः। लघुसंवादेऽपि गुरुवर्याः व्यङ्ग्यध्वनिनावां शिक्षितवन्तः। उल्लेखनीयं यदावयोः (ममशीतलवर्ययोः) विवाहोऽचिरादेव सम्पन्नाआसीत्। अभिज्ञानशाकुन्तलस्य कण्ववद् गुरुवर्याः दृढदाम्पत्यस्यसन्देशं सम्प्रेषितवन्त आसन्निति मयानुभूतमधिगतञ्च। सः प्रसङ्गोऽद्यापि तद्वदेव मे चित्ते चित्रितः।

एकोऽपरः प्रसङ्गोऽवश्यमुल्लेखनीय इति। प्रसङ्गस्तदावर्णनीयोऽस्ति यदा एते सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य सम्मान्याः कुलपतयः आसन्। कानपुरविश्वविद्यालये कस्मिंश्चिदवसरे (सम्भवतः कस्मिंश्चत्साक्षात्कारे) गतवन्त आसन् इमे। ततः कारयानेन प्रत्यागमने आचार्यवर्याः मया सहैव लखनऊं प्रत्यागच्छन्त आसन्। मार्गे उन्मुक्ततया अनौपचारिकतया बहुविधो वार्तालापः प्रचलति स्म। तस्मिन्नेव क्रमे अधीनस्थैः सहकर्मिभिः सह कथमाचरितव्यमिति लोकव्यवहारस्य चर्चाप्रसङ्गे ते उक्तवन्तः–

'चेत् कनिष्ठानामानुकूल्यमिष्यते तर्हि सैद्धान्तिकविरोधेऽपि सति तेषामौद्धत्येऽपि धैर्यपूर्वकं प्रेम्णा आत्मीयव्यवहारः कदाचित्तान् अनुकूलान् करोत्येव अतः गृहपरिवारे वा कार्यक्षेत्रे वा कनिष्ठेभ्यः सदैवोत्कर्षस्यावसरो दातव्यः तैः सह सदैवाभिभावकत्वेन व्यवहारो विधेयः।

एतद्द्वयमपि संस्मरणं मम जीवनस्य पाथेयमभवदिति नास्ति संशयोऽतिशयोक्तिर्वा।

मध्ये बहुकालं तेषां दर्शनं न जातम्। तदनु सेवानिवृत्त्यनन्तरं पुनः कस्मिंश्चित् कार्यक्रमे एते मिलितवन्तः। तत्र वार्ताप्रसङ्गे मया स्वस्य सेवानिवृत्तेः विषये बोधितम्। गुरुवर्याः झटित्येवाभिमुखीभूय मन्दस्मितेन साश्चर्यमुक्तवन्तः–

किं वदसि नवलते, इदानीमेव कथं सेवानिवृत्ता! कतिचिदेव वर्षेभ्यः पूर्वं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तु मम छात्रात्वेन विश्वविद्यालये प्रवेशं स्वीकृतवती। गुरुवर्याणां वात्सल्यमेवासीदेतद् यत् मां बालवत्पश्यन्त आसंस्ते।

यद्यपि पाञ्चभौतिकशरीरेणास्माकं मध्ये न सन्ति गुरुवर्याः किन्तु कान्तासम्मितोपदेशतया मम चित्ते आजीवनं स्थास्यन्त्येते। तान् प्रति सश्रद्धं शतशः प्रणतयो मे समर्प्यन्ते।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो० अशोककुमारकालिया–महोदयस्याद्भुतव्यक्तित्वम्

डॉ० अभिमन्युसिंहः
असि० प्रोफेसर, संस्कृतविभागः,
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

उत्तरप्रदेशस्य बहराइचजनपदस्य बौडीग्रामं तीर्थस्थलसदृशं प्रसिद्धम् अस्ति, यत्र गुरुप्रवरः प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागस्य जन्म श्रीमद्गिरधारीलालकालियामहोदयस्य द्वितीयपुत्ररूपेण अभवत्। प्रो० अशोककुमारकालियामहोदयः अप्रैलमासस्य २० तारिकायां १६४४ खिस्ताब्दे जन्म अलभत्। तस्य मातुर्नाम श्रीमती सुभद्रादेवीकालिया आसीत्। धार्मिक सात्त्विकसंस्कारैः संस्कृते परिवारेऽवतीर्णत्वात्पूज्यः प्रो० अशोककुमार कालियामहोदयोऽपि हृदयेन सात्त्विकसंस्कारान् वहति स्म।

गुरोः प्रथमदर्शनं लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागे बी०ए० कक्षायाम् अभवत्। गुरुप्रवरो मृदुभाषी शान्तिस्वभावसम्पन्नश्च आसीत्। सः कमपि छात्रं सहयोगिनं वा प्रति कदापि क्रोधं न करोति स्म यदा कोऽपि समस्यां नीत्वा भवतां समक्षं गच्छति स्म तदा निदानं सहसा एव करोति स्म। गुरुप्रवरः कदापि दीर्घस्वरेण वार्तालापं न कृतवान् एवं द्रष्टा मया। गुरोः व्याख्यानं रसपूरितं सहजं बोधगम्यं च भवति स्म। गुरुप्रवरः छात्रान्प्रति वात्सल्यपरिपूर्णव्यवहारं करोति स्म। संस्कृतविभागस्य अध्यक्षपदे अलङ्कृतोऽसौ प्रशासनिककार्येषु व्यस्ततमो भूत्वापि नियतरूपेण कक्षाऽध्यापनं तेषां वैशिष्ट्यम् आसीत्। मया सम्यग्रूपेण स्मर्यते यद् विभागे भवतामद्वितीयच्छविः आसीत् न केवलं छात्राः अपितु शिक्षकाः अपि प्रभाविताः आसन् यत् सः स्वछात्राणां, स्वसहयोगिजनानां कृते सहजः उपलभ्यते।

गुरुप्रवरस्य व्यक्तित्वे गम्भीराध्ययनं, चिन्तनं विस्तृतरूपेण दृश्यते स्म। भवतां न केवलं भारतीयधारायामपितु धर्मदर्शनसंस्कृतसाहित्यानां गूढतममध्ययनमासीत्। सः पाश्चात्यज्ञानालोचनेमपि सम्यग्रूपेण परिचितो आसीत्। भवतां संस्कृतविषयेतर शास्त्राणां गम्भीरतमं ज्ञानं मधुरा वाणी सरल–व्याख्यानशैली–गम्भीर्यचिन्तनं–कलानुभूतिसौन्दर्यानुभूतिकाव्यानुभूति

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्च प्रशस्ता आसीत्। संस्कृतसाहित्यस्य समृद्धये न केवलं पत्रिकाणां सम्पादनमकरोत् अपितु संस्कृते नाटक–कथादीनपि रचितवान्।

गुरुप्रवरस्य सुधाभोजनं नृत्यनाटिकारूपत्वेन रचितमेकं रूपकमस्ति। नाटिकायाः कथावस्तु बौद्धजातकग्रन्थाद्गृहीतम्। अत्र शक्रस्य चतस्रः कन्या वर्णिताः। एताः श्रीश्रद्धाऽऽशाही नामधेयाः शक्रकन्यकाः सुधां लब्धुं महर्षेः कौशिकस्य पार्श्वे गच्छन्ति एतासां गुणधर्मान् निरीक्ष्य कौशिकेन सुधापनाय ह्री नाम्नी कन्या एव वृता। यद्यपि सर्वाः कन्या गुणयुक्ता आसन् केन कारणेन 'ह्री' नाम्नीकन्यैव पात्रीकृता महर्षिकौशिकेन कृतम् एतस्य चित्रणं गुरुवर्यस्य कविहृदयत्वं प्रकटयति।

गुरुवर्यः प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागः यथा विद्यावान् तथैव विनयी, यथा गुणवान् तथैव दर्परहितश्च यथा प्रज्ञावान् तथैव दृढ़निश्चयः आसीत्। वस्तुतो विद्या ददाति विनयमिति सूक्तिरपि तद्व्यक्तित्वे सम्यग्रूपेण परिलक्ष्यते। अतः गुरुप्रवरस्य प्रो० कालियामहाभागस्याद्भुत् व्यक्तित्वमासीत्। तस्य चरणाम्बुजयोः पुष्पाञ्जलिं विनिवेद्य सश्रद्धं नमामि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आचार्यकालिया–कृत–सुधाभोजनस्यामृतरसत्वम्

डॉ० ऋतुसिंहः
असि. प्रोफेसर, संस्कृतविभागः
महिलास्नातकोत्तरमहाविद्यालयः, लखनऊ

कोरोणाविषाणुना सम्पूर्णविश्वं भयभीतञ्जातम्। अनेन महाविषाणुना तु सम्पूर्णविश्वस्य हानिरभवत्। अस्मिन्नेव क्रमे संस्कृतजगदपि कोरोणाविषाणुना सन्त्रस्तं सञ्जातम्।

अजस्रायाः स्मृतिविशेषाङ्कोऽयं तयोः महद्विभूतिद्वयोर्विषये वर्तते, यौ संस्कृतस्य समुन्नयनहेतौ नैरन्तर्यरूपेण संलग्नौ सञ्जातौ। नैकाषां ग्रन्थानां रचनां कृत्वा ताभ्यां न केवलं साहित्यजगतः समृद्धिर्विहिता अपितु स्वज्ञानगङ्गाद्वारा नैकेषां शिष्याणां जिज्ञासुनाञ्च साहित्यपिपासायाः तृप्तिः सम्पादिता।

शब्दोऽयं मे नियत आसीत् यद् लखनऊविश्वविद्यालयस्याभिनवगुप्तसंस्थाने समायोजिते द्विदिवसीयराष्ट्रियसमारोहे गुरूणामभिदर्शनं कालक्रूरचक्रद्वारान्तिमभिदर्शनं सञ्जातम्। लखनऊविश्वविद्यालयस्य सहयुक्तमहाविद्यालयेऽध्यापनकाले विद्वज्जनानां ज्ञानांशान् पाठयितुमवसरो लब्धः। गुरुजनानामेतासां रचनानां काव्यसौन्दर्यप्रस्तुतिकरणस्य लघुप्रयासः मया क्रियते।

आदरणीयाचार्यकालियामहोदयानां नाटकं "सुधाभोजनम्" ग्रन्थस्य अध्ययनाध्यापनकाले अत्यन्तहर्षाणां प्रसन्नतानाञ्च अनुभूतिरभवत्। एतन्नाटकं मानवीयभावेभ्यो युक्तं प्रतीकात्मकं नाटकं वर्तते। संस्कृतिधर्मदर्शनादिभ्यो युक्तं गुणेभ्यः विशिष्ट एतत् काव्यमत्यन्तप्राचीनसाहित्यानां प्रतिनिधित्वं कृत्वा सम्पूर्ण– मानवजीवनस्य व्याख्यानं करोति। तस्माद् व्याख्यानात् सहृदयानां हृदयाननि अत्यधिकमानन्दम् अनुभवन्ति।

पालिभाषायां निबद्धजातकसाहित्यं सर्वे भारतीयवाङ्मयस्नेहीनां

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुज्ञातमपि अस्ति। तेषु जातकेषु एतत् समाध्तम् "सुधाभोजनम्" नाम जातकं वर्तते। एताः जातककथा अधिकृत्य एतत् "सुधाभोजनम्" रूपकस्य स्वरूपं सज्जितमभवत्। जातकस्य बृहद्कथायाः एकांशं अस्य रूपकस्य कथास्वरूपे स्वीकृतं जातम्। एतासु कथासु अपेक्षानुसारं भिन्नभिन्नस्थानेषु संशोधितपरिवर्धितपरिवर्तितानि चापि जातानि।

अस्य ग्रन्थस्य प्रमुखप्रयोजनमानन्दमेवास्ति। इदं जातकसाहित्य–मत्यधिकं विस्तृतं वर्तते। तेषु "सुधाभोजनम्" जातकं स्वीकरणस्येच्छा तस्य स्वरूपं प्रेरणाप्रदशिक्षाप्रदश्च एवं मनोहरं प्रतीयते। अयं जातकः सहृदयानां मनसां विशेषरूपेण स्पर्शयति। समग्रमानवव्यवहारस्य नियामिका, आशा, श्रद्धा, श्री, एवं ह्री एते चतस्रः प्रवृत्तयः सन्ति। एतस्मिन् नाटके मानवीयभावान् साकाररूपं प्रस्तूय जीवने मानवीयभावस्य महत्त्वपूर्णं वर्णनं दरीदृश्यते। पात्राणां दिव्यता नाटके अलौकिकतां प्रतिष्ठापयति। एतन्नाटकं रङ्गमञ्चदृष्ट्याऽपि सफलं प्रतीयते। अस्य अध्ययनस्य अन्तराले ग्रन्थविषयेभ्यः पाठकाः रुचीमनुभवन्ति येन प्रत्येकपात्राणां चरित्रांशान् स्वजीवनेन सह उपाख्यानं कुर्वन्ति। "सुधाभोजनम्" इत्यत्र सुधाशब्दः (अमृतम्) अस्माकं जीवनान् अत्यन्तानन्दार्थं शान्तिप्रदानार्थञ्च समर्थोऽस्ति। पात्राणां दृष्टिकोणेभ्यः प्रत्येकं पात्रस्य स्वस्य स्थानमहत्त्वे च वर्तेते। इन्द्रः पितास्वरूपे परमसत्तायाः अनुभूयते। देवराजशक्रस्य चतस्रः कन्याः मानवीयमनोभावानां प्रतीकात्मकरूपिण्यः सन्ति यस्मात् समस्ताः वौद्धिकवर्गाः प्रभाविताः जाताः। एतासां चतसृणां भावानां सन्तुलनेभ्यः एव अस्माकं जीवनं श्रेयस्करं भवितुमर्हति। नाटके प्रत्येकं पात्राणां नकारात्मकचरित्राणां प्रस्तुतीकरणे अत्यधिका लौकिकता तथ्यात्मकता च दृश्येते। प्रत्येकं मनोभवानां सकारात्मकनकारात्मकं च पक्षद्वयं विद्येते। एतत् तु व्यक्तिरेव निर्धारयति यत्सः कं पक्ष गृहीत्वा स्वस्यजीवनस्य सम्यङ्मार्ग प्रदातुं समर्थोऽस्ति न वा। आशासु सर्वे जनाः किं किं न कुर्वन्ति। सर्वदा श्रेष्ठफलानामेव प्राप्तिं न भवति, अपितु अनिच्छया अनिष्टस्यापि प्राप्तिं भवति। श्रद्धायाः प्रेरितो व्यक्ति कस्मिन्नपि विषये यदा पक्षपातरहितो भवति करणीयाकरणीयाभ्यां विवेकहीनमूढं भूत्वा निष्पक्षाचरणं न कर्तुं शक्यते। लक्ष्मीः सत्यासत्युचितानुचितानां,

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करणीयाकरणीयानां विवेकान् नाशयति। कस्मादपि प्रवृत्याः प्रेरितो व्यक्तिः यदा कमपि दुष्कार्यं प्रति प्रवृत्तो भवति तदा लज्जा एव तम् अवरोधयति। लज्जा एव सर्वत्र मर्यादायाः कारणमस्ति। इत्थं तस्य महत्त्वं प्रकृष्टञ्च अस्माभिः ज्ञातुं शक्यते। अयमेव अस्य नाटकस्य साधनीयः अंशोऽस्ति।

एते भावरूपा मूर्त्तप्रवृत्तयः एव रूपकेऽस्मिन् इन्द्रस्य कन्याः सन्ति। रूपकेऽस्मिन् सन्देहरूपे इन्द्रस्य कन्यानां भावान् प्रतिपादयन्ति–

"विचारभूता नु सुचारुविग्रहा,नु रम्यवशाः पुरुषप्रवृत्तयः।
प्रपञ्चभूता उत सत्यसंस्थिताः, स्वरूपभासामनिरूप्यमाततम्" ।।[1]

एतेषां प्रवृत्तीनां स्वरूपं रूपकस्य भूमिकायामेव निरूप्यते–

"सकलास्त्वर्थसमनुकृतसञ्ज्ञाः, श्रीरिति चपला तरुणी।
छलिनि श्रद्धा मरीचिकाऽऽशा, ह्रीस्तुतटी निर्झरिणी" ।।[2]

अस्य संस्कृतनाटकस्य संस्कृतदिवसस्य शुभावसरे अगस्तमासे २६तमे दिनाङ्के १६७७ तमे वर्षे स्थानीय रवीन्द्रालयप्रेक्षागृहे अखिलभारतीयसंस्कृत-परिषद्लखनऊपक्षतः प्रथमोऽभिनयः प्रस्तुतो जातः तमभिनयं प्रदेशस्य पूर्वमुख्यमन्त्री श्री चन्द्रभानुगुप्तः, लखनऊ तथा वाराणसीसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य पूर्वकूलपतिः प्रो.को.अ. सुब्रह्मण्यअय्यर, एवं प्रसिद्ध-उपन्यासकार– श्री अमृतलालनागर– सदृशैः सहृदयैः सामाजिकैः भूरि भूरि प्रशंस्यन्ते। आकाशवाणी, भोपालम् अस्य नाटकस्य प्रसारणं १६७३तमें वर्षे अकरोत्। अगस्तमासस्य १६७४ तमें वर्षे पुनः आकाशवाणीलखनऊतोऽस्य प्रसारण्रामभवत्।

अस्याः समीक्षा सागरिकापत्रिकायामेतावद् रूपेणाभिहिता–

"नाटके गीतिप्रवणता नाट्योचित्तेवास्ति कृतावस्यां कवेः।
काचिन्नूतना नाट्यसरणिरभिनन्दनीया" ।।[3]

---

१. सुधाभोजने, २/२०
२. सुधाभोजने, २/१२
३. सागरिकायाम्–षोडशेवर्षे द्वितीयेऽङ्के, पृ–२११

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सागरिकायां, षोडशे वर्षे, द्वितीयोऽङ्के, लखनऊविश्वविद्यालयस्य भूतपूर्व संस्कृतविभागाध्यक्षः तथा सम्पूर्णानन्दसंस्कृत– विश्वविद्यालयस्य भूतपूर्वकुलपतिः डा० सत्यव्रतसिंहः अधोलिखितशब्देषु स्वकीयं यत् सारसन्देशञ्च प्रस्तुतवान्–

"सुधाभोजनमेतद् यद् ह्यशोककविकल्पितम्
सेव्यतां रसिकैः कामं सौहित्यं चाऽपि लभ्यताम्।
श्रद्धाऽऽशाश्रीह्रियो ह्यत्र दृश्यन्तां रसमेदुराः।
भूयात् किन्तु भवत्प्रीत्यै ह्रीर्या सर्वातिशायिनी"।।[४]

परमपूज्य– श्रद्धेय– गुरुवर्यस्य आचार्यकालियामहोदयस्य अत्यन्तप्रियः विद्वन्मण्डले अग्रणीशिष्यशिरोमणिश्च आचार्यबृजेशकुमारशुक्लो न केवलं लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागस्यैव संस्कृतसाहित्यजगतोऽपि प्राणाधार आसीत्। आचार्यशुक्लमहोदयस्य निर्देशने लखनऊविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागो नूतनासफलता मात्रं न प्रापितः, अपितु अभिनवगुप्त– संस्थानस्य निर्माणमपि तेन कृतम्, एतादृशानाम् अनेकेषां कार्याणां निर्वहणात् गुरुजनानां सर्वदा श्रेष्ठता आचार्यत्वञ्च सिद्ध्यते। आचार्यशुक्लमहोदयानां ज्ञानानां लाभो अनेके छात्राः शिक्षकाश्च नीतवन्तः।

***

४. सागरिकायाम् षोडशवर्षस्य द्वितीयेऽङ्के पृ. २६१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो० अशोककुमारकालियाकृतमणिमञ्जीरे राष्ट्रभावः

सौम्यापाण्डेयः
शोधच्छात्रा, संस्कृतविभागः
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागः वाराणसेयसम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य पूर्व–कुलपतिः, अखिल–भारतीय–संस्कृत–परिषदः उपाध्यक्षचरः, विशिष्टाद्वैतदर्शनस्य निष्णातो विद्वान्, सहृदयः कविश्चासीत्। तस्य रचना 'मणिमञ्जीरम्' इति एकः कवितासङ्ग्रहो वर्तते। एतस्मिन् कवितासङ्ग्रहे राष्ट्रभावः, वसन्तादिप्रकृतिरमणीयता, शृङ्गारभावश्चेत्यादयो विषयाः प्रमुखरूपेण वर्णिताः। परं राष्ट्रभावना मणिमञ्जीरे सर्वत्र दरीदृश्यते। एषः कवितासङ्ग्रहो 'विस्फूर्तयः' तद्धि युद्धं विचिन्त्यम्, शीकराः, इतस्ततः इति चतुर्षु शीर्षकेषु विभक्तो वर्तते। कवितासङ्ग्रहेऽस्मिन् 'विस्फूर्तयः' इति नाम्नि शीर्षकान्तर्गते 'जय हे' इति कविता आस्माकीनस्य भारतराष्ट्रस्य राष्ट्रियगानमेव स्मारयति। तद्यथा–

"जय हे, जय हे, जय हे, जय हे
भारतभाग्यविधातः! जय हे।"[1]

जय हे! इति शीर्षके कविः भारत–भाग्यविधातारम्प्रति बहुविधानि अनुवदति। भारतराष्ट्रं सन्मार्गं प्रति गच्छेत्।[2] भारतराष्ट्रः आन्तरिकबाह्याक्रमणात् सुरक्षितो भवेत, सामयिकप्रवृत्तेः अनुकूलशिक्षा–जीविकादिव्यवस्था च भवेत्।[3] कविः सङ्ग्रहे स्वतन्त्रतायैः स्वजीवनमपि समर्पितान् देशभक्तान् प्रति श्रद्धाञ्जलिमिव प्रददाति।[4] तेन स्वतन्त्रतासङ्ग्रामस्य प्रारम्भिकदिनात् प्रारभ्य स्वतन्त्रताप्राप्तिपर्यन्तं वर्णनं

---

१. मणिमञ्जीरे, प्र०सं०–१२
२. तत्रैव, पृ०सं०–१३, बहुकालिककारानिर्मुक्तं, नय सुपथा दुःशासनमुक्तम्।।
३. तत्रैव
४. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विहितम्। कविना स्वकाव्ये स्वतन्त्रतासङ्ग्रामसेवकानामुल्लेखो विहितः तद्यथा– लालालाजपतरायः–बालगङ्गाधरतिलकः–विपिनचन्द्रपालः–महात्मागान्धिः सुभाषचन्द्रबोसः– पं० जवाहरलालनेहरूः–भीमरावअम्बेडकरः, सरदारबल्लभभाईपटेलः–लालबहादुरशास्त्रीः–श्रीमती इन्दिरागान्धीः–अटलबिहारी–बाजपेयी च।[५] कविना महात्मागान्धीमहाभागस्य अहिंसायाः शस्त्रस्य बहुप्रशंसा व्यधायि।[६] स्वतन्त्रतायाः प्राप्त्यर्थं न जाने कति महापुरुषाः स्वप्राणान् त्यक्तवन्तः। यतोऽस्माभिः बहुमूल्या स्वतन्त्रता प्राप्ता। इयं स्वतन्त्रता सर्वथा अस्माभिः रक्षणीया।[७]

कविना वर्ण्यते यत् स्वतन्त्रताप्राप्तेरनन्तरं राष्ट्रस्य नेतृत्वस्य वहनं 'कांग्रेस' इति दलस्य माध्यमेन प्रारभ्यते।[८] देशस्य स्वातन्त्र्यकाले न्यायव्यवस्थायाः स्थापनं बहु–आवश्यकमासीत् यतोहि यानहीनः नौकारहितः वा को महासागरं पारयितुं शक्नोति?[९] अतएव संविधानस्य निमार्णमभवत्।[१०] प्रो० कालियामहाभागेन 'नव–धर्मशास्त्रम्' इति शीर्षके संविधाननिर्माणस्य प्रक्रियायाः आवश्यकतायाश्च सम्यग्रूपेण व्याख्यानं कृतम्। तेनोच्यते यत् 'प्रधानमन्त्री' प्रधानः भवति, अन्ये सर्वे मन्त्रिणः सहायकाः भवन्ति।[११] वस्तुतः सकलराष्ट्रं जनतन्त्रम्भवति। यतो हि जनतामाध्यमेन निर्वाचिताः प्रतिनिधयः एव शासनं कुर्वन्ति, नियमानि चाभिकल्पयन्ति–

"समग्रराष्ट्रं खलु लोकतन्त्रे
नेपथ्यतो लोकमनः प्रशास्ति।।"[१२]

---

५. तत्रैव
६. आयुधं कीदृशं गान्धिना निर्मितम्। येन हिंसां बिना रक्तपातं विनानिर्जिताश्शत्र–वश्चाऽर्जितं काक्षितम्। तत्रैव
७. तत्रैव, श्लोक–०६
८. तत्रैव, श्लोक–१४
९. तत्रैव, पृ० सं०–१६
१०. तत्रैव
११. तत्रैव
१२. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो० कालियागुरुप्रवरेण कवितासङ्ग्रहे प्रजातन्त्रस्य अवधारणायाः अतिसरलशब्देषु वर्णनं क्रियते। शासनपद्धतेः तिसृणां प्रकाराणां सुष्ठुरीत्या वर्णनं विहितम्।[१३] तथा तेषु प्रजातन्त्रं श्रेष्ठमुद्घोषितवान्–

"प्रजायाः शासनं ह्येतत् प्रजाधीनं प्रजाहितम्।
प्रजातन्त्रमतः श्रेष्ठः सर्वतन्त्रेषु कथ्यते।।"[१४]

कविना लिखितं यद् दोषस्तु सर्वत्र भवति परं दोषाणामल्पता एव प्रजातन्त्रस्य मुख्या विशेषता वर्तते।[१५] यतोहि प्रजा एव भवति शासिका तथा प्रजा एव भवति शिष्या। अत एव सर्ववरं ह्येदम्।[१६] अब्राहमलिङ्कनमहोदयस्य प्रजातन्त्रस्योपरिप्रसिद्धा उक्तिः वर्तते–

"Democracy is the government of the people, for the people, by the people."

प्रो० कालियामहाभागेन स्वयमपि कवितासङ्ग्रहे विलिखितम्–

"प्रजा विजानाति निजं हितं यतस्
त्वतः स्वतन्त्रताऽस्ति सुमार्गमार्गणे।।"[१७]

प्रजातन्त्रस्य महिमानं वर्णयित्वा कविः सम्प्रदायवादं, धर्मवादं, जातिवादं, गालिवादादिसदृशं लोकतन्त्रविरूपकम्प्रति दुःखमपि अभिव्यनक्ति।[१८]

समयेव लोकतन्त्रस्य सफलतायै उपायमपि कथितवान्–

"परन्तु प्रजातन्त्रसाफल्यसिद्धिः।
स्वधर्मक्षमप्रातिनिध्याऽऽश्रिता स्यात्।।[१९]

---

१३. "राजतन्त्रमधिनायकतन्त्रं, प्रजातन्त्रमिति चारुचरितम्।" तत्रैव, पृ०सं०–१७,
१४. तत्रैव
१५. तत्रैव, (श्लोक–०५)
१६. तत्रैव
१७. तत्रैव
१८. तत्रैव, पृ० सं० –१८
१९. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविः राष्ट्रस्य एकामपरां विशेषतामपि वर्णयति यद् गणतन्त्रं वर्तते। गणतन्त्रस्य प्रमुखःकारकः 'निर्वाचनम्' अस्ति। कवितासङ्ग्रहे निर्वाचनं धर्मक्षेत्रमिति, कुरुक्षेत्रमिति, युद्धक्षेत्रमिति च नामभिः कविना सम्बोध्यते।[२०] कविवर्येण निर्वाचनस्य विविधानि पक्षाणि सङ्ग्रहे वर्ण्यन्ते। निर्वाचने साफल्यमनिश्चितम्। अत एव कविः जय–पराजयौ समभावं धारयितुं निर्दिष्टवान्।[२१] तथा कविः प्रजातन्त्रे सर्वथा प्रजामेव विजयिनीं समुद्घोषयति। यथा विलिखितम्–

"हन्त जैत्रो रथः कस्य रिक्थं मतं
लोकतन्त्रे प्रजा सर्वदा जित्वरी।।"[२२]

कविः भारतराष्ट्रस्य ऐतिहासिकतां प्रस्तूय सामयिकप्रधानमन्त्रिणः श्रीनरेन्द्रदामोदरदासमोदिमहाभागानामपि चित्रणं कृतवान्। तथा तत्सम्बन्धि–विविधानि द्रष्टान्तान्यपि निरूपितवान्।[२३] कविः एकमात्रवैभवं राष्ट्रमेव देशभक्तियुतां प्रज्ञामेव च धनम् अभिव्यनक्ति।[२४]

प्रो० कालियामहाभागः 'मणिमञ्जीरम्' इति काव्यसङ्ग्रहे 'विस्फूर्तयः' नाम्नि शीर्षके पौनः पुन्येन भारत–भाग्य–विधातारम् प्रति जयमुद्घोषितवान्।[२५] तथा सङ्ग्रहे कविना प्रोक्तं यत् मामकीनं भारतवर्षं भूमौ स्वर्गमिव विद्यते।[२६]

उपसंह्रियते यत् प्रो० गुरुप्रवरैः आचार्यकालियावर्येण कवितासङ्ग्रहे स्वप्रतिभया राष्ट्रभावं बहुसरसरीत्या उद्भाव्यते। अतः काव्यसङ्ग्रोऽयं सहृदयजनस्य हृदयं संवेदयितुं प्रोत्साहयितुञ्च पूर्णतया समर्थो वर्तते।

***

२०. तत्रैव
२१. "निर्वाचने ध्रुवां सिद्धिं न मन्यन्ते विपश्चितः। समीक्ष्यातो युयुत्सेत समौ कृत्वा जयाऽजयौ।।" तत्रैव
२२. तत्रैव
२३. "विविच्य सञ्चित्यपदानि यत्नतः, सुचिन्त्य सङ्गुंफ्य च तानि माहध्वत्। विजित्य चेतांसि विभातिसंस्कृता, नरेन्द्रदामोदरदास–बैखरी।।" तत्रैव, पृ०सं०–२१–२३
२४. "अस्माकं खलु राष्ट्रमेव विभवः तेनैव धन्या वयम्, एका भारतराष्ट्रभक्तिभरिता प्रज्ञाऽस्मदीयं धनम्।।" तत्रैव
२५. तत्रैव, पृ०सं०–२४
२६. "धरित्रीस्वर्गकुलसञ्ज्ञं, मदीयं भारतं वर्षम्।।" तत्रैव, पृ०सं०–५०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मणिमञ्जीरम्–रसभावमयी रचना

डॉ० रेखा शुक्ला
पूर्वसंस्कृतविभागाध्यक्षा
जुहारीदेवीगर्ल्स पी.जी०. कालेज, कर्णपुरम्

निर्गलद्रसनिर्व्यूढं गुणालङ्कारसचिञ्तम्
निर्दुष्टं भावभूयिष्ठं काव्यसाहित्यमेव तत्।
अनादिनिधनः साक्षात् परमात्मा कवीश्वरः
विश्वरूपमिदं काव्यं प्रणीते चिरसुन्दरम्।।[1]

गुरुप्रवराः (स्व०)–प्रो० अशोककुमारकालियामहोदयाः विशिष्टाद्वैत-दर्शनस्याप्रतिमविद्वांस आसन् सर्वे जानन्ति एव। किन्तु तेषां गम्भीर दार्शनिकरूपे साहित्यिकरससमन्वितभावलहरीणामुत्तालतरङ्गयुक्ता स्रोतस्विन्यपि विद्यते केचन एव जानन्ति। तेषां कविता रमणीयाः रसभावरञ्जिकाश्च सन्ति। 'मणिमञ्जीरम्' तेषां कवितानां सङ्ग्रहोऽस्ति। एतत्पूर्वं 'सुधाभोजनम्' इति नाटकमपि ताभिः विरचितम्। तस्मिन्नाटके रसभावमाधुरी प्रकर्षरूपेण विद्यते। एकं निदर्शनं द्रष्टव्यम्–

हंसशिञ्जिते लहरीनर्तने कीचकतानसमीरे
अत्रिकुलकलकलकलिते गीते सङ्गीतकवतितीरे।

पुलकितजघनपुलिनबहुचपले सरसे सरसि सुकूले
उरसिजसरसिज सज्जितसलिले भ्रमरकूले ह्यनुकूले।।

अस्मिन् साङ्गीतिकनादसौन्दर्यं सहसैव पाठकानां दर्शकानाञ्च चित्तं मुग्धं करोति। प्रायः प्रकृत्यम् विविधनदनदीवनवृक्षलतापुष्पसुरभित-समीरवनौषधयः रात्रिन्दिवं मधुरसङ्गीतं प्रस्तुतवन्तः दरीदृश्यन्ते। अत्रानुप्रासालङ्कारप्रयोगेण रमणीयसङ्गीतात्मकानुभूतिः सञ्जायते।

---

१. साहित्यसन्दर्भः प्रो० शिवजी उपाध्यायः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शङ्खधरो कथयति यत् कवीनां यशः प्रसारं कल्पान्तकोटिपर्यन्तं परिस्फुरति–

कतिपयनिमेषवर्तिनि जन्मजरामरणविह्वले जगति।
कल्पान्तकोटिबन्धुः स्फुरति कवीनां यशः प्रसारः।।

गुरुप्रवरविषये एतदक्षरशः सत्यमस्ति!

प्रो० कालियाविरचितम् 'मणिमञ्जीरम्' इति कवितासङ्ग्रहो नाम्ना सार्थकोऽस्ति। अत्र मणिमञ्जीराणां मृदुध्वनिवद् मधुरसाङ्गीतिकध्वनिः मन्दं मन्दं प्रसरति। कवितासङ्ग्रहेऽस्मिन् 'प्रणतयः' पूर्वकं 'विस्फूर्तयः' तद्धि युद्धं विचिन्त्य 'शीकराः' 'इतस्ततः' इत्यभिधानाश्च चत्वारः शीर्षकाः सन्ति। एतेषु शीर्षकेषु विविधकवितानां प्रस्तुतीकरणमभवत्। तासां काव्यसौन्दर्यं सहजैव सहृदयानां चित्ताकर्षि अस्ति। वस्तुतः काव्यपरिशीलने तात्कालिका–नन्दानुभूतिः पाठकस्य श्रोतुः वा सहृदयतामेवापेक्षते। यथा धनददेवेन कथितम्–

कवयः परितुष्यन्ति नेतरे कविसूक्तिभिः।
न ह्यकूपारवत्कूपा वर्धन्ते विधुकान्तिभिः।।[२]

'प्रणतयः' वस्तुतः कवेः प्रणामाञ्जलयः सन्ति याः श्रीरामचन्द्रचरणयोः, सीतापदकमलयोः, श्रीब्रह्मतन्त्रपरकालयतीन्द्रपंक्तिचरणेषु स्वगुरुश्रीमद–भिनवरङ्गेशपरकालगुरुचरणयोः समर्पिताः भक्तिप्रसूनानि सन्ति।

प्रथमशीर्षके 'विस्फूर्तयः' इत्यस्मिन् जय हे!, 'स्वातन्त्र्यम्', 'नवधर्मशास्त्रम्', 'प्रजातन्त्रम्', 'निर्वाचनम्', 'कश्च मोदते' 'जय हे। भारतभाग्यविधातः' इति सप्तकविताः सन्ति। 'तद्धि युद्धं विचिन्त्य' अतिसंवेदनशीला रचना अस्ति। अस्यां हिमगिरितटे स्थितयोद्धाकृते तस्य भार्यायाः सन्देशं पत्रमाध्यमेन प्रेषितम्। पत्रमेतदतिशयमार्मिकमस्ति। 'शीकराः' कवेः राष्ट्रप्रेमभक्तिञ्च प्रदर्शयति। 'इतस्ततः' वह्नीकवितानां गुच्छमस्ति।

कवेः राष्ट्रप्रेमपूर्णं हृदयं स्वमातृभूमेः पारतन्त्र्यगतपीडां स्मरन् अति

२. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र पृ० १६० म.म. प्रो० अभिराजराजेन्द्र मिश्रा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शोकाकुलं भवति।–

सहस्रब्ददासत्वदुःखाब्दिमग्ना
भृशं घर्षिता कर्शिता मातृभूमिः।
बलादङ्गभङ्गं बहन्ती त्वगत्या
प्रपीडामसह्यां कथञ्चिच्च सेहे।।[३]

प्रजातन्त्रंशीर्षके कविः प्रजातन्त्रस्य परिभाषा अत्यन्त सरलतया प्रस्तौति–

प्रजायाः शासनं ह्येतत् प्रजाधीनं प्रजाहितम्।
प्रजातन्त्रमतः श्रेष्ठं सर्वतन्त्रेषु कथ्यते।।[४]

प्रजातन्त्रशासनस्य प्रशंसां कुर्वन् स कथयति–

विविच्य सम्यक् च विचित्य हृदगतं
यत्र प्रजा संवृणुते निजं हितम्।
यदृच्छया स्वेष्टफलानि चाऽश्नुते
ततो वरं वा भवितुं किमर्हति।।[५]

कविना अनेकाः विषयाः स्वप्रतिभया काव्यरूपे प्रस्तुताः। ते सर्वे हृदयावर्जकासहृदयचिन्तरञ्जकाश्च सन्ति। भारतवर्षस्य प्रधानमन्त्रिणः वर्णने तस्य प्रतिभा अवलोकनीऽऽयास्ति यत्र स अस्माकं यशस्विनः प्रधानमन्त्रिणः तुलनां राजा चन्द्रगुप्तेन करोति–

अहो समुत्पाट्य च राजवंशं सुखेन सिंहासनमारुरोह।
नितान्त साधारण भूमिपुत्रः नरेन्द्रमोदि स च चन्द्रगुप्तः।।[६]

---

३. मणिमञ्जीरे स्वातन्त्र्यम् १०
४. प्रजातन्त्रम्–४
५. मणिमञ्जीरे प्रजातन्त्रम् ८
६. कश्च मोदते–५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तेनानुसारेण राष्ट्रभक्तियुक्ता प्रज्ञैवास्मदीयं धनम्–

लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुधेत्यादीनि हृद्यानि वै
रत्नानीह चतुर्दश प्रतिगृहं प्रसादयन्तु श्रिया।

अस्माकं खलु राष्ट्रमेव विभवः तेनैव धन्या वयम्
एका भारतराष्ट्रभक्तिभरिता प्रज्ञाऽस्मदीयं धनम्।।[७]

अन्यत्र भारतीयसंस्कृतेः प्रकर्षं प्रकटितम्–

हृदिन्यस्य या रक्षिता पूर्वजैर्नः
पुराणी तथा संस्कृतिर्न्यासभूता।

तदेतद् धनं पुण्यपैतामहं नो
कथं वा न नो गौरवाय प्रभूतम्।।[८]

'मदीयं भारतवर्षम्' इत्यस्यां कविः भारतस्य महिमानं गायति।

श्रुतिस्मृत्यादिभिः शास्त्रैः
पुराणैः ऐतिहासाद्यैः

तथा स्वर्गस्थितैर्नैकैः
सुरैरीशावतारैश्च

महाचार्यैः सुविख्यातैः
सुधीभिर्यन् महाकविभिः

प्रगीतं मुक्तकण्ठं तन्
मदीयं भारतवर्षम्।।

धरित्रीस्वर्गकुलसञ्जं मदीयं भारतंवर्षम्।।[९]

प्रकृतिवर्णनेषु कवेः भावानाम् सारल्यमवलोकनीयम्। अनुप्रासालङ्कारेण

७. कश्च मोदते–१४
८. शीकराः–१०
९. मदीयं भारतवर्षम्–१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सङ्गीतं जनयन्तमेतत् वर्षायाः वर्णनमीव मनोहरम्–

मन्द्रमदिरकाकलिनिस्वनने।
मन्दसुरभिमारुतनिःश्वसने।

श्यामे! ब्रूहि त्वमसि किं मुग्धा
यौवनदेहलीधृत–पद–कमले

हे वर्षासुकुमारि![10]

वसन्तर्तोः हृदयहारि एतद्वर्णनमपि कवेः प्रकृतिप्रेम प्रदर्शयति–

प्रवेपथुमतीं पश्य पृथिवीवधूटीं
सपीतांशुका हरितवर्णशाटीम्

मनोहर्षसूचकविकटपुष्पवाटीं
भवेयुर्न मुग्धाः सहृदयाः कियन्तः

समायाति मन्दं वसन्तो दिगन्तः
विशति मन्दमन्दं वसन्तो हृदन्तः।।[11]

अत्र हरितवर्णशाटिकायां पीतांशुकपृथिव्याः वधूरूपे कल्पना अत्यन्तरमणीया सुपेशला च। एवमेव 'शारदी रजनी' इत्यस्यां रचनायामपि सुकोमलभावानामभिव्यक्तिः दर्शनीया–

मधुमृद्वीका चतुरचन्द्रिका कुपितकामिनी कोपकर्षिका
भग्नहृदामाशागवाक्षिका चित्रेयं चलचित्तरञ्जनी
हृदयं हरति राजते रजनी।[12]

अत्रापि 'भग्नहृदामाशागवाक्षिका' इति रूपकालङ्कारस्य विधानम् अतिशयनवीनमस्ति।

---

१०. हे वर्षा सुकुमारि १–२
११. समायाति मन्दं वसन्तो दिगन्तः ३
१२. शारदी रजनी–२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविः वर्तमानकालिकप्रदूषणस्य समस्यामपि प्रकटयति–

जाड्याकाशे ह्यवगतिदिशस्सन्ति मालिन्यवेशाश्
चान्द्री शोभा कथयति नु किं सूर्यरश्मिश्च किं वा।

नाऽहं जाने तव च वसतिं कोकिलालापदौत्य।
प्राप्तोऽसि त्वं कथमपि ततस्स्वागतं ते वसन्तः।[१३]

अत्र कविः प्रकृतौ व्याप्तप्रदूषणे वसन्तस्यागमनं दृष्ट्वा किञ्चिदुद्विग्नः प्रतीयते। 'कोकिलालापदौत्य!' इति सम्बोधनेऽपि नवीनता दृश्यते।

'बौण्डीग्रामः' इत्यस्यां कोमलपदावलीसंयुक्तचित्रणमपूर्वं प्रतीयते। शब्दानां चयनं वर्णसङ्गीतञ्चात्र अवलोकनीये–

शस्यश्यामला धरा सलज्जा
पिहितानया मनोज्ञा सज्जा

आम्रमञ्जरीमधुसौरभ्यम्
मलयानिलवलितैरुपलभ्यम्

वसति वसन्तस्तु सकामः
अहो मदीयो बौण्डीग्रामः।।[१४]

अन्यत्रापि कवितायाः गीतितत्त्वं जनानां चित्तमाकर्षयति–

कवितावनिताकलासु हृदयहरणपटुतरासु।
बहुविधासु तासु तासु कमपि रसं मिश्रय मिश्रय।।[१५]

स्रग्विणी छन्दसि विरचितमेतत् पद्यमवलोकनीयम्–

भारती स्रग्विणी भारती स्रग्विणी
स्रग्विणी भारती स्रग्विणी भारती।

---

१३. स्वागतं ते वसन्तः–अन्तिमपद्यः
१४. बौण्डीग्रामः–३
१५. रसघन!–२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतं मौक्तिकं भारतं मौक्तिकं
मौक्तिकं भारतं मौक्तिकं भारतम् ।।[१६]

'तद्धि युद्धं विचिन्त्य' हिमगिरितटस्थ–वीरयोद्धाकृते भार्यायाः हस्ताङ्कितं पत्रं मार्मिकतां जनयति–

आशासेऽहं त्वमसि कुशली, सूचयेथास्तथापि
स्वस्योदन्तं प्रतिदिनमहं त्वां यतश्चिन्तयामि ।
शैथिल्येन स्खलितमिह यत् तत् समस्तं क्षमस्व
स्वामिन्नित्थं प्रणमति जनः सर्वदा तेऽनुरक्तः ।।[१७]

अत्र मन्दाक्रान्तावृत्तस्य सौन्दर्यमपि कवेः वैशिष्ट्यं प्रस्तौति। महाकविः कालिदासः 'मेघदूतम्' इत्याख्यकाव्ये एतस्य वृत्तस्य प्रयोगं करोति। यत्र शापवधिनिर्वासितो यक्षः स्वप्रियतमां मेघं दूतं कृत्वा स्वविरहसन्देशं प्रेषयति।

कविना अत्र शास्त्रीयपरम्पराव्यतिरिक्तं कतिपयनवीनविषयेषु अपि छन्दसां प्रयोगः कृतः। यथा स्वातन्त्र्यमिति शीर्षके भुजङ्गप्रयातवृत्तं दर्शनीयम्–

सहस्राब्ददासत्वदुःखाब्धिमग्ना
भृशं घर्षिता कर्षिता मातृभूमिः ।
बलादङ्गभङ्गं बहन्ती त्वगत्या
प्रपीडामसह्यां कथञ्चिच्च सेहे ।।[१८]

कवित्वं देवप्रदत्तं सांसारिकगुणोऽस्ति यः प्रशस्तरूपेण सम्पूर्णवाङ् मयस्यालङ्करणभूतमस्ति। एतत्काव्यसम्बन्धो प्रो० रहसबिहारीद्विवेदिनः एतद् कथनं सर्वथा समुचितं प्रतीयते–

लोकोत्तरे हृदाह्लादे लोकोद्बोधे च सङ्गता ।
प्रज्ञावतः कवेः सद्वाक् काव्यमित्यभिधीयते ।।

***

१६. शीकराः–५०
१७. तेद्धि युद्धं विचिन्त्य–४४
१८. स्वातन्त्र्यम्–१०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद्मश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्ल-स्मृति-वीथिका



प्रो. बृजेशकुमारशुक्लः ‘‘पद्मश्री’’
(01.10.1962 - 06.04.2021)

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh




प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यस्य पूज्यपाद-माता श्रीमती चन्द्रकला,
पिता श्रीयुत् प्यारेलालशुक्लश्च



प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयस्य
अनुजः डा० राजेशशुक्लः भ्रातृवधुः मंजुशुक्ला च



सहधर्मिणी श्रीमतीशान्तिशुक्ला
पद्मश्री प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यश्च



प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यः स्वकीयैः
पत्नी-पुत्र-पुत्रीद्वय-जामातृभिः
सह ज्येष्ठकन्यायाः विवाहावसरे



प्रो० शुक्लवर्यस्य भगिनी डा. ऋचाशुक्ला,
भगिनीपतिः श्री के. के. तिवारी,
भागिनेयश्च कौस्तुभतिवारी

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh



लखनऊविश्वविद्यालयीयसंस्कृतविभागेन आयोजिते पद्मश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्लस्य अभिनन्दसमारोहे मुख्यातिथिरूपेण विराजमानाः प्रो० कालियावर्या विभागीयप्राध्यापकैः सह



सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये विद्वद्रत्नमध्ये राराजमाणाः राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य कुलपतिभिः प्रो० राधावल्लभत्रिपाठिवर्यैस्सह कुलपतिप्रवराः प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागाः



अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदि आचार्यद्वयस्मृति-व्याख्यानमालायाः समुद्घाटनोपक्रमः



लखनऊविश्वविद्यालयस्थसंस्कृतविभागीयानां प्राध्यापकानाम्मध्ये विभागाध्यक्षरूपेण प्रो० कालियामहोदयाः



सपत्नीकेन प्रियशिष्यद्वयेन प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्येणाथ च प्रो० प्रयागनारायणमिश्रेण सार्द्धं सश्रीकाः प्रो० अशोककुमारकालियमहाभागाः



लखनऊविश्वविद्यालस्याऽभिनवगुप्तसंस्थानस्य नव्य-भव्य-भवनस्य लोकार्पणावसरे प्रो० शुक्लवर्येण सह विराजमानानां प्रो० कालियावर्याणामन्तिमं दर्शनम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh



राष्ट्रपति-प्रतिभापाटिल-महोदयाभ्यः राष्ट्रपतिपुरस्कारं
प्राप्नुवन्तः प्रो० अशोककुमारकालियावर्याः



राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य कुलिपतिमहाभागैः
प्रो. रायावल्लभत्रिपाठिवर्यैः सह प्रो. कालिया महोदयाः



लखनऊविश्वविद्यालये अभिनवसंस्कृतकविसम्मेलनस्य
अध्यक्षरूपेण विराजमानाः प्रो. कालियावर्याः
प्रो. शुक्लवर्येण सार्द्धम्



सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये कर्नलरूपेण विशिष्ट-
सम्मानमलङ्कुर्वाणाः कुलपतिप्रवराः प्रो० कालियामहोद



सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य दीक्षान्तमहोत्सवे
महामहिमराज्यपाल श्री टी०पी० राजेश्वरमहोदयैस्सह
मञ्चस्थाः कुलपतयः प्रो० अशोककुमारकालियावर्याः



सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये कर्मचारिसंघेन
प्रो. अशोककुमारकालियामहोदयानामभिनन्दनम्



प्रो. पी.सी. मिश्र-प्रो. कृष्णकुमारमिश्रयोः सह दीपं
प्रज्ज्वालयन्तः प्रो. कालियावर्याः प्रो. शुक्लवर्येण सह

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद्मश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्लवर्यस्य सारस्वतमवदानम्

प्रो० प्रयागनारायणमिश्रः
मन्त्री,
अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषद्, लखनऊ

श्रीकान्यकुब्जविप्रवंशसुमेरुः श्रीभारद्वाजगोत्रावतंसो बाराबंकी–जनपदस्य तिलोकपुरं त्रिलोकमिव विभूषयन् साक्षाद् ब्रजपुरं व्रजन्तो बृजेशः लोकशोकार्णवमुत्तीर्य दिव्यलोकमुपगतः इत्यवगम्य मनो में स्तम्भितञ्जातं विगतवर्षे यदाहं कोरौनासङ्कष्टमुत्तीर्याऽप्रैलमासान्ते चिकित्सालयाद् गृहमागतवान्। गुरुशिष्ययोर्द्वयोरेवाऽशोकबृजेशयोर्दिवलोकप्रयाणेन गुरुद्वयरहितोऽयं प्रयागो हतप्रभो भूत्वाऽकिञ्चन इव सञ्जातः।

सम्प्रति आचार्यद्वयस्मृतिविशेषाङ्कप्रकाशनपरिकल्पनयैवापहृत–चेतनोऽयमकिञ्चनो मनस्तोषाय श्रीहरिसङ्कीर्तनमभिकल्प्य स्वनामधन्यस्य पद्मश्रीबृजेशस्य सारस्वतसंस्तवं कामयते, श्रद्धासुमनाञ्जलिं निवेदयितुम्। वस्तुतः सारस्वतसाधनाया मूर्तिमान् स्वरूपमासीदयम् अनिर्वचनीयस्वरूपोपेतः सरस्वतीसूनुः। विद्याया अधिष्ठातृदेव्या भगवत्याः सरस्वत्याः वरदपुत्रोऽयमस्माकं दिव्यस्वरूपोपेतः गुरुप्रवरः पद्मश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्लो जन्मत एव श्रीशुक्लवंशस्य कल्पवृक्ष आसीत्। सासांरिकलोभमोहमदमात्सर्य–रहितः श्रीप्रियलालसुतोऽयं चन्द्रकलोदरभवः श्रीबृजेशः तिलोकपुरं सनाथीकृतवान्। यतोहि २०१८ वैक्रमाब्दे श्रावणमासस्य कृष्णपक्षस्य चतुर्थीतिथौ सोमवासरेऽर्द्धरात्रौ पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रे वृषलग्ने जातोऽयं महामनस्वी कृष्णवर्णत्वमङ्गीकृत्यापि स्ववंशस्य शुक्लत्वमङ्गीचकार षोडशकलोपेतकृष्ण इव लोकोत्तरमहापुरुषों यतोहि सः सर्वगुणोपेतः प्रत्युत्पन्नमतिसम्पन्नः परमकुशलः सहृदयः परमकारुणिकः साक्षात् कृष्ण इव सिद्धपुरुष आसीत्। तेषामनुरागिणामेतादृशी निष्ठा आसीत् तं प्रति यत् सिद्धसरस्वतीकस्यास्य वाचि विधेर्विधानं वशीभूतमवभाति स्म। बाल्यकालादेव तन्त्रमन्त्रादीनां विलक्षणा सिद्धिरनेन सिद्धीकृता येन सर्वाः सिद्धयस्तस्य वाचि विलसन्ति स्म इत्यपि वक्तुं शक्यते। एतस्मादेव कारणात् सहस्राधिका

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भक्तास्तस्य गुणसङ्कीर्तनं कृत्वापि तस्य पारं न यातुं शक्यन्ते।

मादृशा अनेके विपन्नाः सङ्टापन्नाः समस्याग्रस्ता जनास्तेन निर्दिष्टान् मार्गाननुसृत्याद्य सुखिनः सङ्कटसमस्याऽवमुक्ताश्च भूत्वा श्रीसमृद्धिपन्थानमधिगम्य तस्य श्रीसङ्कीर्तनं कुर्वन्ति नास्त्यत्र शङ्काया लेशमात्रमपि तथापि मयाप्यत्र तस्य दिव्यसिद्धीनां प्रपञ्चनं न कृत्वा केवलं सारस्वतसाधना पक्षमेवोररीक्रियते–

शिक्षा–साहित्यक्षेत्रेऽस्याऽप्रतिमं योगदानमवेक्ष्य २०१६ तमे खिष्ताब्दे भारतसर्वकारेण पद्मश्रीरितिसर्वोच्चसम्मानेनालङ्कृतो जातः प्रो० शुक्लवर्यः। अस्य सारस्वतमवदानं सर्जन–समीक्षा–सम्पादनरूपेण मुख्यतया त्रिधा विभक्तुं शक्यते। प्रो० शुक्लवर्याणां सम्पूर्णमपि सारस्वतमवदानं साहित्यिक–ज्योतिषशास्त्रीय–पौराणिक–तन्त्रशास्त्रीय–भेदेन प्रमुखतया चतुर्धा निरूपयितुं शक्यते। सर्वप्रथममास्य मौलिक–सर्जनरूपं साहित्यिकं सारस्वतमवदानं निरूयते।

प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयस्य साहित्यिकमवदानम्

पद्मश्री–प्रो. बृजेशकुमारशुक्लः संस्कृतसाहित्यस्य श्रीसंवर्धकशीलः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रो विश्वविश्रुतो लब्धप्रतिष्ठ आचार्य आसीत्।

विद्याविनयसम्पन्नोऽयमाचार्यः श्रेष्ठादर्शगुणसम्पन्नः, परमतेजस्वी मातृ–पितृ–भक्तः, सर्वोत्कृष्टमहाकविः साहित्यसर्जकश्चासीत्। अस्य साहित्यिकसर्जनान्तर्गतं विशिष्टतया ग्रन्थचतुष्टयं समुल्लेखनीयम्। प्रियलालजनकशतकम्, गुञ्जनमञ्जीरम्, श्रुतिमञ्जरी, बृजेशयशोभूषणञ्चेति ग्रन्थचतुष्टयमधिकृत्यात्र सारस्वतसाधनायाः प्रतिमानं प्रस्तूयते–

१. श्रीप्रियलालजनकशतकम्

पद्श्री–समलङ्कृतेन गुरुप्रवरेणाचार्यबृजेशकुमारशुक्लमहोदयेन प्रणीतं श्रीप्रियलालजनकशतकमिति नामधेयं खण्डकाव्यम्मयाद्यन्तं सम्यक्तयाधीतम्। खण्डकाव्यस्याखिलं काव्यशास्त्रीयं स्वरूपमधिकृत्य प्रणीतस्यास्य खण्डकाव्यस्य नायकरूपेण स्वकीयं पितृदेवं श्रीप्रियलालशुक्लवर्यमाधारीकृत्य तस्याद्यन्तं जीवनवृत्तं सुष्ठु व्यरचि गुरुप्रवरेण प्रो० बृजेशकुमार शुक्लवर्येण।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पितृभक्त्या प्रणीतमिदं खण्डकाव्यं स्वान्तःसुखाय प्रणीय गुरुवर्येण प्रो. शुक्लमहोदयेन मादृशां सम्प्रेरयन् न केवलं स्वकीयं महाकवित्वं प्रतिष्ठापितमपितु यशोवैभवमवाप्य स्वजीवनसाफल्यमधिगतं यथाऽवोचि खण्डकाव्यान्ते—

रचितकवितया कीर्तिकान्तिर्बुधेषु
पठितकवितयाभून्नो रसास्वादलाभः।
जनकशतककाव्यं पितृभक्त्या प्रणीय
तदुभुयमपि रिक्थं प्राप शुक्लो बृजेशः।।[1]

प्रायः पञ्चदशाधिकैकशतपद्यप्रणीतं शतककाव्यमिदं निश्चप्रचमेव खण्डकाव्यनिकषे सफलतमं खण्डकाव्यमङ्गीकर्तुं शक्यते यतोहि काव्यमिदं न केवलं विश्वनाथादिकृतं खण्डकाव्यस्वरूपं वहत्यपितु प्रो. राधावल्लभत्रिपाठि— प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र—प्रभृतीनां काव्यलक्षणानि सुष्ठु निर्वहति।

इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयमित्युक्त्वा[2] यथा नायकादि—निर्धारणं विश्वनाथादिभिरभ्यधायि तथैव **चारुचर्योऽथवा कोऽपि सज्जनश्चरितोज्ज्वलः**[3] इत्यादिरुपेणाभिराजराजेन्द्रमिश्रेणापि स्वीकृतम्। इत्थं शास्त्रोचितं स्वपितृचरितमाश्रित्य न केवलं पितुर्जीवनवृत्तं विशदतया चित्रितमपितु ग्राम—आश्रम—पुराराम—अरणोद्यानादिपूर्वकं पुत्रजन्मादि—वृत्तान्ताः विरलमेधया निरूपिताः, यथाऽवोचि प्रो. अभिराजराजेन्द्रमिश्रेण—

ग्रामाश्रमपुरारामदुर्गसैन्यरणोद्यमाः।
पुत्रजन्मादिवृत्तान्ताः पामरावाससङ्कथाः।।[4]

एतस्मादेव प्रियलालजनकशतकारम्भे तिलोकपुर—ग्रामस्य रामचबूतरास्थं मौनीबाबां प्रणम्य ग्राम्यसीम्न्यवस्थितं वेणी—राम—सतीमाता—

---

१. प्रियलालजनकशतके ११
२. साहित्यदर्पणे ६/३१८
३. अभिराजयशोभूषणे ४/६७
४. तदेव ४/६६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अक्लशाहबाबा–हनुमद्‌देवचतुष्टयं प्रणमति शुक्लवर्यः –

कुट्यां स रामपरिपूजनतत्परात्मा
मौनीति नामरमणो हितपश्चकार

x x x x x

श्रीवेणिरामयतिरक्षितपूर्वभागे
देवी सती सततरक्षितदक्षिणे च।

श्री अक्लशाहमुनिरक्षितवारुणीये
ग्रामे रराज जिमिपूजित– नेमिनाथः।।[1]

देवग्राम–पितृ–वर्णनपूर्वकमत्रास्मिन् काव्ये प्राकृतिकसौन्दर्यम चेतांसि आह्लादयति यथा

अश्वत्थजम्बूवटकीकरनिम्बताल
जम्भीरविल्वपनसाः कदली– रसालाः

प्लक्षोऽथ शाल्मलिशमीमदनाश्च वृक्षा
स्तम्भा वितानविततते किमु रोपिता वै।

तत्रत्य वृक्षलतिका हि घना विशालाः
ग्रीष्मेऽपि भानुकिरणाः न तपन्ति यत्र

तस्मान्निदाघसमये खलु शीतलं तद्
वातानुकूलितसमं विपिनं विभाति।।[2]

शान्तरसप्रधानमिदं मातृपितृभक्तिसंवलितं खण्डकाव्यं पानकरसास्वा समुपजनयत् कमपि विचित्रमेव समाधिं सृजति। पठने नानारसच्छन्दा ङ्कारसमुच्छलितमिदं काव्यं स्वपितृपादानामीश्वरसायुज्यावाप्त्यनन्त तद्‌विरहव्यथया परमश्रद्धादया प्रणीय पितृव्याजेन स्वकीय जन्मस्थानभूतस्य ग्रामस्य तत्रस्थप्रतिठिष्तानां स्थानानां, मन्दिरा श्रद्धास्पदानां वंशजानाञ्च चरितानां निरूपणं कविप्रतिभया कृत

१. प्रियलालजनकशतके ११–२२
२. तदेव ५–७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यमाधारीकृत्यैव मयापि गुरुकृपया श्रीदेवदत्तीयम् इति पितृभक्तिकाव्यं प्रणीतमतो ग्रन्थस्यास्य शिवसङ्कल्पे प्रो. गङ्गाधरपण्डाकृतेन मङ्गलाशंसेन गुरुवर्यस्य काव्यगुणसङ्कीर्तनं प्रस्तूय प्रणामाञ्जलिनिवेदनपूर्वकं वाक्तुमिदं शक्यते–

इदं मनोज्ञं महनीयकाव्यं नानारसं मञ्जुलशब्दचित्रम्।
श्रीशुक्लवर्यस्य कृपावलम्बं ममाग्रगण्यं जयतु प्रसिद्धम्।।[3]

२. श्रुतिमञ्जरी

दिल्ली–महानगरस्थेन 'सत्यम् पब्लिशिंग हाउस' इति प्रकाशनेन २०13 तमे खिष्टाब्दे श्रुतिमञ्जरीति नाम्ना प्रकाशिते संस्कृत–मुक्तक–कविता–सङ्ग्रहे सङ्कलिता विविधविषयका मुक्तककविताः पूर्वं संस्कृतपत्र–पत्रिकासु प्रकाशिताः, दूरदर्शनेनाकाशवाणीतश्च प्रसारिता आसन्। इत्थं प्रकीर्णरूपेण यत्र–तत्र प्रकीर्णानि विविध–विध–विषयकानि संस्कृतपद्यानि सङ्ग्रह्य चतुस्त्रिंशत्–संस्कृत–मुक्तक–कविता–सङ्ग्रहोऽयं प्रकाशितो जातः। मन्येऽहं प्रो. शुक्लवर्यस्य श्रुतीति ज्येष्ठपुत्र्या नामवैभवमाधारीकृत्य प्रणीते श्रुतिमञ्जरी नाम सङ्ग्रहे विषयवैविध्यमवलोक्यते। सङ्ग्रेहऽस्मिन् मङ्गलाचरणप्रसङ्गे श्रीगणेश–सरस्वती वेङ्कट–कामाख्या–कालीनां स्तुतिः, घनमालोत्कर्षप्रख्यापने लसतिघनमालो विजयते इति प्रावृट्वर्णनम् शारदकच्छपीति शरदर्तुवर्णनम्, कविप्रशंसा, कामसङ्कीर्तनम्, गीताप्रामाण्ये दार्शनिक–श्लोकाः, अवन्तीबाला, माडर्नपतिव्रताप्रश्नोत्तरहासः, श्वपतिः श्वपत्नी, के मल्ला न पराजिताः, त्रोटयामि चलञ्चापि दूरभाषं मनोहरम् इत्यादि–विविधविषया उपन्यस्ताः। राष्ट्रानुरागं राष्ट्रचिन्तनञ्चाधिकृत्य झाशीश्वरीशौर्यम्, नैव यूकस्तु कर्णेषु नो रिङ्गति, वृन्दावनयमुनाप्रणतिख्यापने यमुनावर्णनम्, न शिष्टापि क्वचिदेका कपर्दिका, जहसुश्च सर्वे, जयतु नो जयघोषनादः, शिष्या भोग्या सुदुर्लभो इत्यादयः संस्कृतकविताः प्रस्तूय कतिपये हास्यपद्याः, वेदवाङ्मये लेखकानां कृते व्यङ्ग्योक्तिश्लोकाः– वेदवाङ्मये धणाधणं लिखन्ति नो रूपेण प्रस्तूयन्ते देववाणी–महिमा

३. स्वरचितम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वकवितया निरूपिता।

इत्थं वक्तुमिदं शक्यते यदस्मिन् काव्यसङ्ग्रहे क्वचिद्भक्तिः, क्वचिद्हासः, क्वचिच्छक्तिः क्वचिद्रासः क्वचिद्ज्ञानं क्वचिद्दर्शनञ्च सहृदयानामोदयति। श्रुतिमञ्जर्याम् आद्यन्तं कविकौशलमवेक्ष्यैवमनुभूयते यत् काव्यसङ्ग्रहोऽयं सहृदयजनानामाह्लादकत्वात्, स्वयमपि विचित्ररसं विधानकचातुरीं कविताशोभामाधुरीञ्च प्रख्यापयति। गुरुवर्यस्य कवितासु भावो नरीनर्ति रसो वरीवर्ति, छन्दो छन्दति, अलङ्काराश्चोच्छलन्ति। सङ्ग्रहस्यास्य प्रायः सर्वाः कविताः व्यङ्गयार्थसम्मिता वस्त्वलङ्काररसादि-भेदेनाऽनेकविधत्वमासाद्य सहृदयानां चेतांसि चमत्कुर्वन्ति।।

३. गुञ्जनमञ्जीरम्

श्रीमद्भागवतपुराणान्तर्गतमनेकानि गीतानि पाठकानां चेतांसि मोदयन्ति येषु भ्रमरगीतम्, गोपीगीतम्, वेणुगीतम् चेति गीतानि सुविदितानि सन्ति। एतादृशान्येव कृतमधुरमङ्गलानि श्रीजयदेवभणितिमधुराणि गीतगोविन्द–धृतानि च को न जानाति गीतानि। आधुनिककविताश्रेयोभूतानां अभिराजराजेन्द्रमिश्ररसराजप्रभृतीनां रणरणकमाधुरीविलासितानि गीतानि सुपरिचितानि विद्वद्भिः। श्रीमद्भागवतपुराणस्य गीतानामथ च राजेन्द्रमिश्र-प्रभृतीनामाधुनिकाचार्याणां कवीन्द्राणां प्रेयोमार्गमनुसरन् परमभगवद्भक्तः प्रो. बृजेशकुमारशुक्लवर्योऽपि कानिचिद् भ्रमरगुञ्जितानि पिककाकलीकलितानि वा सुमधुराणि गीतानि रचितवान्। समये–समये चानेकेष्वसरेषु सुमधरकण्ठेन सहृदयाननुरञ्जनीयानि चेमानि गीतानि विविधमञ्चेषु मया श्रुतानि। इमानि पञ्चविंशांधिकानि गीतानि विविधासु पत्रपत्रिकासु सुप्रकाशितानि जातानि। इमान्येवाऽप्रकाशितानि प्रकाशितानि च गीतानि सुसम्पाद्य सुधीजनानामनु रञ्जनाय गुञ्जनमञ्जीरम् इति नाम्ना संस्कृतगीतसङ्कलनमेकमनेन प्रकाशितं जातम्।।

२०१३ तमे खिष्टाब्दे 'सत्यम् पब्लिशिंग हाउस इति' प्रकाशनकेन्द्रेण प्रकाशितेऽस्मिन् गुञ्जनमञ्जीरनाम्नि सङ्कलने एकत्रिंशत् सङ्ख्यकानां विविधविषयकानां संस्कृतगीतानां वैभवमस्मान् आह्लादयति।।

आदौ अन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते इति मतमनकृत्यात्रास्मिन्

...it Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुञ्जनमञ्जीरे कविमतल्लिकाश्रियं प्रणम्य मनो गुञ्जनम्, गुञ्जनं गुञ्जनं गुञ्जनं गुञ्जनम्, घनो घनं वर्षति, उच्छलितोऽयं रागतरङ्गः, यत्र नीता सखे मे प्रिया दिवसाः, मदीया मदीया, आभया कि कृतं शोभया किं कृतम्, अहो कुसुमाकरवेला, श्रमिकोऽहम्, किं किं न कृतं किं किं न धृतम्, नहि भ्रमर पङ्क्तितोऽहं चक्षुर्निवर्तयामि, हृदि त्वं राजसे कलिके, प्रत्तं न केनचिद्, जीवने केवलं प्रतिशोधः कृतः, शैथिल्यं गतं रक्षावन्धनम्, मधुमयं प्रियं भारतं मम, मदयति कालिदासकविता, भारतमाता ग्रामवासिनी, पश्य सखि भ्रमति मनो भ्रमरो मम, यादृशं तव प्रियत्वं दरीदृश्यते, वासन्ती विराजत आभा, मनो नित्यं प्रसीदतु नवलवर्षे, जीवने तव नवत्वम्, यच्छतु तेऽखिलम्, आभाति आभावसन्ते, वर्धापनं रघुवंशे भवति तनयो जातः, निवर्तय मे पीडां शान्तिम्, अहो यौतुकप्रथा, स्वार्थं विना प्रेमगीतं जगौ, उच्छलितो रसरागो विरागे मे हृदये, अहो शारदीयं वेला इत्यादीनि रसमयानि रागानुबद्धानि गीतान्यनुस्यूतानि।।

नानागीतविलिखिते कवितामये रसात्मके गुञ्जनमञ्जीरे भणितानि गीतान्यास्वाद्य वक्तुमिदं शक्यते यद्यदि कस्मिंश्चित् कवौ प्रतिभागुणत्वं स्यात् तर्हि काव्यानन्तत्त्वं दरीदृश्यतेऽतो गुरुवर्यस्य कविताकामिनी निश्चप्रचमेवाचार्यानन्दवर्धनस्य सूक्तिमिमं प्रमाणीकरोति–

न काव्यार्थविरामोऽस्ति यदि स्यात् प्रतिभागुणः।।

गुञ्जनमञ्जीरं नाम सङ्कलनमवलोक्य कवयः सहृदयाश्च स्वकीयां कारयित्रीं भावयित्रीं च प्रतिभां नवनवोन्मेषशालिनीं च कर्तुं शक्यन्ते। गुञ्जनमञ्जीरस्य नानारससमन्वितानि गीतानि शब्दब्रह्मण्येव पर्यवस्यतानि प्रतीयन्ते।।

४. श्रीबृजेशयशोभूषणम्

विविद्यविधाविशारदो वशीकृतशारदो गुरुवर्यः प्रो. शुक्ल आसीत् न केवलं महाकविरपितु काव्यशास्त्रमर्मज्ञः सुधीः काव्यशास्त्रीयोऽप्यासीद् यतोऽयं प्रो. रेवाप्रसादद्विवेदी–प्रो. राधावल्लभत्रिपाठी–प्रो. रहसबिहारी–द्विवेदी प्रो. अभिराजराजेन्द्रमिश्र– प्रभृतिनामाधुनिककाव्यशास्त्रप्रणेतृणां तत्तद्ग्रन्थानुवर्तिनमेकं काव्यशास्त्रीयमपि ग्रन्थरत्नं विरचितवान् यस्य नामकरणमनेन

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीबृजेशयशोभूषणमित्यभ्यधायि। काव्यशास्त्रीयमिदं स्याददद्भुतं प्रणयनं काव्यशास्त्रीयपरम्परामनुसृत्य विलास इति नाम्ना विभक्त–विषयं षड्विलासात्मकमस्ति हीदं काव्यशास्त्रीयं प्रणयनम्, यस्य केवलं विलासत्रयमेवाद्यतनीनम् अजस्रा–पत्रिकायाः एकचत्वारिंशदाब्दीयस्य १–४ संयुक्ताङ्के ११– पृष्ठतः आरभ्य १८ पृष्ठपर्यन्तं प्रकाशितं वरीवर्ति अन्ये चाऽप्रकाशितं विलासत्रयमद्यापि प्रकाशनाधीनमेव सन्ति।

बृजेशयशोभूषणस्याऽभिनवकाव्यशास्त्रीयग्रन्थस्य प्रथमो विलासः मङ्गलाचरणपूर्वकं काव्यशास्त्रीयाणामाचार्याणां वन्दनादिभिर्विभूषितत्वाद् आचार्यवन्दनं नाम इति ज्ञायते। ग्रन्थारम्भे श्रीगणेशं नमस्कृत्य भगवती त्रिपुरसुन्दरी, शब्द–शक्तिस्वरूपिणी सरस्वती, काव्यविग्रहा श्रीकालीदेवी सुवन्दिता। तदनन्तरं भरत–भामह–दण्डीं–रुद्रट्–उद्भट–इन्दुराज–भट्टतौत–शङ्कुक–वामन–मङ्खुक–आनन्दवर्धन–अभिनवगुप्त–भट्टनायक–मम्मट–मुकुल–कुन्तक–भोजराज–वाग्भट्ट–रुय्यक–भट्टमहिम–विश्वनाथ–शारदातनय–धनिक–धनञ्जयं–रामचन्द्र–गुणचन्द्र विद्याधर–सागरनन्दी–हेमचन्द्र–रूपगोस्वामी–केशवमिश्र–कर्णपूर–शिङ्गभूपाल–भानुदत्त–विद्यानाथ–जगन्नाथ–जयदेव–राजशेखर अमरचन्द्र– अप्पयदीक्षित–बालकृष्णभट्ट–विश्वेश्वर–सञ्ज्ञाकानां प्राचीनानामाचार्यवर्याणामभिनन्दनं कृतम्।

एतदनन्तरं कविचन्द्र–नृसिंहभट्ट–आशाधर–हरिप्रसाद–देवशङ्कर –श्रीकृष्ण–छज्जुराम–सोमेश्वररमाशङ्कर–श्रीपाठकवनेश्वर–गोविन्द–चन्द्रपाण्डेय–ब्रह्मानन्द–कृष्णदीक्षित–रामानन्दठाकुर–मथुरादीक्षित–सामराजदीक्षित–विश्वनाथपञ्चानन–श्रीकृष्णभट्ट–लक्ष्मीधरदीक्षित रामानन्दपति–बलदेव–लक्ष्मण–शिवरामत्रिपाठी–सदाशिव दीक्षित श्रीनिवास–सुखलाल–इन्दुपति–चित्रधर–गदाधर–भट्ट–गौरनारि–कल्याण–सुब्रह्मण्य–वेङ्कप्रभु–त्रिमल–वेणिदत्त–रामप्रताप–अमरनाथ–पाण्डेयादिसहितं साम्प्रतिकानां काव्यशास्त्रज्ञानां मौलिभूतं श्रीरेवाप्रसादद्विवेदिनम् अभिराजराजेन्द्रमिश्रम्, रहसबिहारीद्विवेदीवर्यमथ च प्रो. राधावल्लभत्रिपाठिवर्यं सादरं प्रणामो विहितः। इत्थं

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्यशास्त्रीयाचार्यवन्दनं नाम प्रथमो विलासः पूर्णतामुपगतो येन भरताचार्यादारभ्याऽद्यतनीनां काव्यशास्त्रज्ञानामेकेकशः विशदसंस्तवः पञ्चत्रिंशत् कारिकााभिः विद्वज्जनसुलभो जातः।।

बृजेशयशोभूषणस्य काव्यहेतु–प्रयोजनभेद–शब्दशक्ति–निरूपणमिति नाम्नि द्वितीये विलासे सप्तदशकारिकाः सन्ति यासु काव्यहेतवः, काव्यप्रयोजनानि, काव्यलक्षणं काव्यस्य वैलक्षण्यञ्च निरूप्य शब्दशक्तिरर्थशक्ती च सुष्ठु प्रपञ्चिते स्तः। एतेषामभिमते एको वाचक एव शब्दो भवति नान्यः कश्चन शब्दभेदः सम्भवति इति सुष्ठु प्रतिपादितम्। एतेषामभिमते लक्षणाव्यञ्जनेऽर्थविस्तारिकाशक्ती भवतो न शब्दशक्ती यथोक्तम्–

अर्थविस्ताररिका शक्ती लक्षणाव्यञ्जने मते।
न स्यातां शब्दशक्ती हि लक्षणाव्यञ्जने त्वुभे।।[1]

संविद्भिन्नतयार्थभिन्नत्वं प्रतीयमानत्वञ्चाङ्गीकृत्य व्यञ्जना शक्तिर्वाच्य–लक्ष्ययोरर्थविस्तारिका सिद्धी कृता। एवं लक्षणाव्यञ्जनयोः भेद–प्रभेदानां सङ्केत–पूर्वकं द्वितीयो विलासः सम्पूर्णतां याति।

अष्टाविंशकारिकात्मके रसादिनिरूपणाख्ये तृतीये विलासे रसस्वरूप प्रतिपादनधिया रसनिष्पत्तौ प्रतिबिम्बवादमङ्गीकृत्य रसनिष्पत्तौ अन्यवादनिरासपूर्वकं रसे साधारणीकरणं तस्य ब्रह्मस्थरूपत्वं सहोदरत्वभावेन रसस्य बिम्बरूपत्वमनेन प्रतिष्ठितम्, यथा–

भावानुभावसञ्चारि–विम्बरूपा भवन्ति च।
तत् प्रतिबिम्बरूपोऽसौ रमणीयो रसो भवेत्।।[2]

काव्ये नाट्ये च सर्वत्र नवैव स्थायिभावा रसाश्चेत्यङ्गीकृत्य शान्तरसस्य स्थायीभावः शम एव प्रतिष्ठितोऽनेन। एवं सर्वसम्मतान् नवसङ्ख्याकान् रसान् प्रस्तूय श्रृंगार–भेदौ, भावाभास–रसाभासौ, वीररसस्य पञ्चभेदाश्चेत्यादयो विषया विशदतया प्रपञ्चिताः।।

---

१. बृजेशयशोभूषणे २/११
२. तदेव ३/१३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इत्थं प्रो. शुक्लवर्याणामेकमात्रं काव्यशास्त्रीयं प्रणयनमांशिक-रूपेणाप्यवलोक्यास्य काव्यशास्त्रीयप्रतिभाजुषामनुरागः काव्यशास्त्रे-भिनिवेशत्वञ्चोररीभवति।

काव्यशास्त्रीयस्यास्य ग्रन्थरत्नस्याऽन्येषु विलासेषु के के विषया निरूपिता इति शेषांशानुशीलनेन बिना वक्तुं न शक्यते। तेषां गृहे हस्तलिखितं– शेषांशान्वेषणतत्परोऽयं प्रयागः तदधिगमार्थं प्रयासरतोऽस्ति। यदि चेत् शेषांशोऽयं प्राप्यते तर्हि ग्रन्थरत्नमिमं निश्चप्रचमेव प्राकाश्यमुपनेष्यामि इत्यस्ति मम सङ्कल्पो दृढविचारश्च।

प्रो. शुक्लवर्याणां प्रातिभप्रणयेनेषु उपर्युक्तग्रन्थानां मौलिकत्वमवेक्ष्य वक्तुमिदं शक्यते यद् गुरुप्रवर आसीत, संस्कृत–साहित्यसर्जको मर्मज्ञः साहित्यशास्त्री कविप्रवरः। एतैर्ग्रन्थैः सार्द्धमेव अन्येऽपि नैके ग्रन्थाः पाण्डुलिपि सम्पादनपूर्वकं सानुवादं प्रकाशिताः। प्रो. शुक्लमहोदयैः सम्पादिताना-मनूदितानां साहित्यिकग्रन्थानां संक्षिप्तपरिचयोऽत्र दीयते–

५. ध्वनिगाथा पञ्चिका

श्रीराजानकरत्नाकर–विरचिता ध्वनिगाथा–पञ्चिका नाम ग्रन्थः, १९६६ तमे खिष्टाब्दे लखनऊनगरस्थया अखिलभारतीयसंस्कृत–परिषदा प्रकाशिता। भण्डारकरप्राच्यशोधसंस्थाने पूनानगरे हस्तलिखितग्रन्थालये पाण्डुलिपिरस्य आसीत्। एका चान्या पाण्डुलिपिः गर्वन्मेण्ट ओरियण्टल लाइब्रेरी–मद्रास–नगरे अपि आसीत् किन्तु अतित्रुटित खण्डितत्वादेषा उपयोगार्हा नासीत्। अतएव भण्डारकरप्राच्यशोधसंस्थानस्यैकामेव पाण्डुलिपिंमाश्रित्य एकयैव मातृकया बहुकाठिन्येनेयं ध्वनिगाथापञ्चिका सम्पादिता।

ध्वनिगाथापञ्चिकायामगता गाथा ध्वन्यालोकानुसारमेव उद्योतेषु विभक्ताः सन्ति। ग्रन्थेस्मिन् ध्वन्यालोकवदेव उद्योतचतुष्टयं विद्यते। ध्वन्यालोकस्य प्रथम–द्वितीय–तृतीयचतुर्थोद्योतेषु समागतानां गाथानां संस्कृतच्छायापुरस्सरं व्याख्यानं रत्नाकरेण प्रस्तुतम्। अधिकांशगाथः श्रृंगार रसात्मिका वर्तन्ते। ध्वन्यालोके आगतासु गाथास्वेतासु ध्वनित्वं गुणीभूतव्यङ्ग्यत्वं रसवदाद्यलङ्कारत्वञ्चेत्यादयो विषया उदाहरणत्वेन

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चर्चिताः। प्रो. शुक्लेन ग्रन्थोऽयं न केवलं सम्यक्तया समपादि अपितु उद्योतचतुष्टयानां गाथानांमनुवादोऽपि हिन्दीभाषयाऽकारि। ध्वनिसम्प्रदाये प्राकृतवाङ्मये चैतद्ग्रन्थोऽतिमहत्त्वपूर्णोऽस्ति।

६. अलङ्कारमञ्जरी

अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशितोऽयं ग्रन्थः अङ्कारमञ्जरी त्रिमल्लभट्टविरचितोऽस्ति। त्रिचत्वारिंशत्श्लोकात्मकेस्मिन् ग्रन्थे एकोनचत्वारिंशदलङ्काराणां लक्षणं सूत्रशैल्या निरुप्यालङ्काराणामुदा-हरणान्यपि त्रिमल्लभट्टेन स्वयं व्यलेखि। लखनऊविश्वविद्यालयस्य टैगोरपुस्तकालयात् सम्पूर्णा मातृकाधिगताऽपराञ्च मातृकामस्य ग्रन्थस्य भण्डारकरप्राच्यशोधसंस्थानेनाथ चान्यैका मातृका पुण्यपत्तनस्य भण्डारकरप्राच्यशोधसंस्थानेन सम्प्राप्य ग्रथोऽयं पाठालोचनपूवर्कमाचार्यवर्यैः समपादि। अलङ्कारमञ्जर्या भ्रामरी नामधेयाटीकाथ च हिंदी भाषानुवादपूर्वकं श्लोकानुक्रणीं प्रस्तूय ग्रन्थोऽयं विद्वज्जनसुलभः कृतः।।

७. श्रुतबोधः

प्रो. शुक्लवर्याणां सम्पादनानुवादकर्मणि श्रुतबोधो नाम अप्रतिमो ग्रन्थः न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन–नाम्ना प्रकाशकेन नवदेहलीतः प्रकाशितः २००० तमे खिष्टाब्दे। ग्रन्थेऽस्मिन् नैकानि छन्दासिं सोदाहरणं विवेचितनि। प्रो. शुक्लवर्यैः श्रुतिनाम्नी संस्कृतटीकाथ च स्मृतिनाम्नी हिन्दीटीका प्रणीता। साहित्यशास्त्रेऽस्य ग्रन्थस्य छात्राणां कृतेऽतिमहत्त्वं वरीवर्ति।

८. अलङ्कारसारः

श्रीबालकृष्णभट्ट–प्रणीतः अलङ्कारसारो नाम ग्रन्थः प्रथम्मतयाऽ प्रकाशित एव मातृकारूपेण प्राप्यते। प्रो. शुक्लवर्येण यथोपलब्धमातृकानां पाठालोचनपूर्वकं सम्पादनं कृत्वा तत् सम्पादनपूर्वकं समीक्षणं कृतम्। अलङ्कारसारस्य पाठालोचनपूर्वकं समीक्षणं कृत्वा प्रो. शुक्लवर्येण लखनऊ विश्वविद्यालयस्य डी० लिट् उपाध्यर्थं शोधप्रबन्धः प्रस्तुतः, २००३ तमे वर्षे गुरुवर्याणां प्रो. अशोककुमारकालियामहाभागानां संरक्षणे डी. लिट्–उपाधिना समलङ्कृतो भूत्वा सम्पूर्णनन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयेन २००६ तमे खिष्टाब्देऽयं ग्रन्थः प्रकाशितो जातः। काव्यशास्त्रीयग्रन्थेषु ग्रन्थस्यास्याऽप्रतिमं महत्त्वं वर्तते।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

९. **अलङ्कारसार–समीक्षणम्–** अलङ्कारसारसमीक्षणं नाम काव्यशास्त्रीयः समीक्षाग्रन्थोऽपि गुरुवर्येण प्रो. शुक्लमहोदयेन प्रणीतम्। दशाध्यात्मकोऽयं ग्रन्थः २००९ तमे खिष्टाब्दे दिल्लीस्थेन नागप्रकाशकेन प्रकाशितो जातः वस्तुतो ग्रन्थोऽयमासीत् प्रो. शुक्लवर्यस्य डी० लिट्–शोधप्रबन्धो यतोहि श्रीबालकृष्णभट्टप्रणीत– अलकांरसार–समीक्षण तथा पाठालोचनात्मक सम्पादन विषयेऽनुसन्धानकार्यं पूरयित्वा प्रो. अशोककुमारकालियामहाभागानां निर्देशने २००३ तमे वर्षे लखनऊविश्वविद्यालयस्य डी० लिट् उपाधिरधिगतः शुक्लवर्येण।

अलङ्कारसारस्य सुष्ठु सम्पादनं कृत्वास्मिन् प्रबन्धेऽध्यायदशकेषु क्रमशः अलङ्कारसारप्रणेतुः परिचयः, ग्रन्थस्य कालनिर्धारणं वर्ण्यविषयश्च काव्यप्रयोजनहेतुः, लक्षणादिविमर्शः, शब्दार्थतत्त्वविचारसमीक्षा–ध्वनिकाव्य–समीक्षणम्, काव्यदोषपर्यालोचनम्, काव्यगुणसमीक्षा, शब्दालङ्कार समालोचनम्, अर्थालङ्कारपर्यालोचनेत्यादयो विविधविषया विशदतया प्रपञ्चिता। इत्थं ग्रन्थोऽयम् अलङ्कारसम्प्रदायस्यैको महत्त्वपूर्णोऽप्रतिम–समीक्षा ग्रन्थरूपेण प्रथितो वक्तुं शक्यते।

१०. वाङ्मयशेमुषी

संस्कृतशोधनिबन्धसङ्ग्रहरूपेण प्रकाशितो वाङ्मयशेमुषी–सञ्ज्ञकग्रन्थो नागप्रकाशकेन २०१६ तमे खिष्टाब्दे प्रकाशितः। अखिलदेववाणीवाङ्मये समाम्नाता अनेके विषयाः समुल्लसन्ति। येषु वेदकाव्यशास्त्रसाहित्यपुराणेतिहासाद्यतनकाव्यसाहित्यदर्शनागमप्रभृतयो विषया विशेषतया समुल्लेखनीया वर्तन्ते। प्रो० शुक्लवर्येण वाङ्मयशेमुषीं शेमुषीपञ्चकेनाऽलङ्कृत्य ग्रन्थोऽयमुपकल्पितः। क्रमशः वेदशेमुषी–काव्यशास्त्रशेमुषी–साहित्योपपुराणशमेुषी–आधुनिककाव्यशेमुषी–दर्शनाग–मशेमुषीरूपेण पञ्चविभागेषु अस्मिन् ग्रन्थे नामसदृशात्मकान् शोधपरान् विषयान् सङ्ग्रहय पञ्चत्रिंशद्विषयात्मकं ग्रन्थरत्नं व्यलेखि गुरुवर्येण।

११. सुरगवीसमालोचनिका

नागप्रकाशकेन २०१७ तमेऽब्दे प्रकाशितः सुरगवीसमालोचनिका नाम सङ्ग्रहप्रबन्धोऽपि वाङ्मयशेमुषीव प्रो० शुक्लवर्याणां मौलिकशोधनिबन्धाना

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मद्भुतं प्रणयनमस्ति ग्रन्थेऽस्मिन् वेदसमालोचनिका–पुराणसमालोचनिका–दर्शनागमसमालोचनिका–काव्यसमालोचनिका–धर्मशास्त्रसमालोचनिका. आयुर्वेद–रसायन–समालोचनिका सञ्ज्ञकेषु षट् प्रमुखविभागेषु तत्तद्विषयकानां षड्विंशतिसङ्ख्यकानामुच्चस्तरीयान्तर्विषयानां विशदनिरूपणं हिन्दी–संस्कृत–आङ्ग्लभाषामाध्यमेन कृतम्। ग्रन्थस्यास्य सर्वाण्यपि शोधपत्राणि मौलिकानुसन्धानधिया व्यलेखि प्रो. शुक्लवर्येण।

प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयस्य ज्योतिषशास्त्रीयमवदानम्

गुरुप्रवरः प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यो ज्योतिष शास्त्रस्याधिकारी विद्वान् आसीत्। ज्योतिषशास्त्रस्य सिद्धान्त–संहिता–होराख्यानां स्कन्धत्रयाणमनेके ग्रन्था एभिः सुष्ठु सम्पादिताः। प्रो. शुक्लवर्येणाऽनेकेषां ज्योतिशास्त्रीयग्रन्थानां पाण्डुलिपीनां सम्पादनमनुवादश्च व्यधायि येषु शुकजातकम्, शीघ्रबोधः, सिद्धान्तशिरोमणिः, हायनरत्नमिति ग्रन्थचतुष्टयेन सार्द्धमेव मौलिकग्रन्थरूपेण ज्योतिर्विज्ञानसन्दर्भसमालोचनिका नाम ग्रन्थोऽपि बहुधोपयोगित्वं प्रसाधयति। अत एव प्रो. शुक्लवर्याणां पञ्चसङ्ख्यकानां ज्योतिषीयग्रन्थानां संक्षिप्तपरिचयोऽत्र प्रस्तूयते

१. शुकजातकम्

चौखम्भा–सुरभारती–प्रकाशनेन १९९६ खिष्टाब्दे प्रकाशितो ग्रन्थः शुकजातकं षट्सङ्ख्यकेषु अध्यायेषु विभक्तः २१६ श्लोकात्मको लघुग्रन्थोऽस्ति। अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदो हस्तलिखितग्रन्थगारतोऽस्य पाण्डुलिपिद्वयमधिकृत्य पाठालोचनात्मकं सम्पादनं कृत्वा शुक्लवर्येणाऽस्या–नुवादोऽपि हिन्दीभाषायां विहितः। स्वमातुर्नामाश्रिता चन्द्रकला टीकाविभूषिता ज्योतिषग्रन्थरत्नमिदं प्रो० शुक्लस्य प्रथमतया प्रकाशितो ग्रन्थोऽस्ति होरास्कन्धाश्रितो जातकग्रन्थो यस्य नितरां साम्यं श्रीवराहमिहिरस्य बृहज्जातकेन सह कर्तुं शक्यते। शुकजातकमिदमनेकानि जातकसम्बद्धानि मतानि निरूप्य बालारिष्टायुर्दायवर्णनेऽन्यजातकेभ्यो विलक्षणमेव मतमुपस्थापयति। ग्रन्थेस्मिन् राशिस्वरूपग्रहबलाबलं निषेकादिवर्णनं त्वस्य बृहज्जातकानुसारमेवास्ति किन्तु वालारिष्टादियोगानां वर्णनं क्वचिद् बृहज्जातकसारावलिबृहत्पाराशरहोराशास्त्रानुसारं क्वचित्तु विलक्षणमेवेतेभ्यो ग्रन्थेभ्यः प्रतिभाति।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

२. शीघ्रबोधः

पं. काशीनाथप्रणीतः शीघ्रबोधो यद्यपि बहुधाप्रकाशितो जातः किन्तु छात्रोपयोगी विविधविषयान् संयोज्य विस्तृतव्याख्याविभूषितः छात्रेभ्यः शीघ्रबोधाय प्रो. शुक्लेन सम्पादितः शीघ्रबोधो नाम ग्रन्थोऽयं २००३ तमे खिष्टाब्दे न्यूरायलबुककम्पनी–लखनऊ– द्वारा प्रकाशितो भूत्वा ज्योतिष शास्त्रप्रवेशाय सौकर्यं वहति।

३. सिद्धान्तशिरोमणिः

भास्कराचार्यप्रणीतः सिद्धान्तशिरोमणिर्नाम ग्रन्थः पूर्वं प्रकाशितोऽपि छात्रेभ्यो दुर्लभो दुर्बोध्यश्चासीत्। अत एवास्य गणिताध्यायो गुरुवर्येण विशदव्याख्यासंवलितं कृत्वा २००७ तमे ईसवीये वर्षे रायल–बुक–कम्पनी–सहयोगेन प्राकाश्यतामुपनीतः। ग्रन्थेऽस्मिन् पूर्वव्याख्यतृणामभिमतं समीक्ष्य गुरुवर्येण विशिष्ट–टिप्पण्यो व्यलेखि। शोधार्थिनामध्येतृणाञ्च कृते ग्रन्थोऽयमतिमहत्त्वपूर्णोऽस्ति।

४. हायनरत्नम्

ताजिकशास्त्रस्याऽप्रतिमोऽप्रकाशितोऽयं बलभद्रमिश्रप्रणीतो ग्रन्थो हायनरत्नमिति पाण्डुलिपिरूपेण प्राप्यते स्म। अस्य हायरत्नाभिधस्य ग्रन्थस्य प्रथमेऽध्याये ग्रहराशिस्वरूपप्रवेशाद्यायनम् द्वितीयेऽध्याये ग्रहाणां दृष्टिःसांगबलाबलेष्टद्यानयनम्, तृतीयेऽध्याये इक्कबालादिषोडशयोगाः, चतुर्थेऽध्यायेसहमविचार–फलञ्च, पञ्चमेऽध्याये वर्षेषादिविचारफलम्ः षष्ठेऽध्याये द्वादशभावविचारः, सप्तमेऽध्याये दशान्तर्दशानयनं तत्फलञ्च अष्टमेऽध्याये च मासप्रवेशादिविषया निरूपिताः अष्टाध्यायात्मकस्य ग्रन्थस्याऽस्योपयोगित्वं वैलक्षण्यमवेक्ष्य प्रो० शुक्लवर्येण पाठालोचनपूर्वकमस्य सुसम्पादनं कृत्वा २०१६ तमे वर्षे प्रतिभाप्रकाशनेन नवदिल्लीस्थेन प्रकाशनमकारयत्। ताजिकनीलकण्ठी–ताजिक–भूषणादि ग्रन्थ रत्नसरणावतिमहत्त्वपूर्णं ग्रन्थरत्नमिदमनेकानि वैष्ट्यिानि संवहति।

५. ज्योतिर्विज्ञानसन्दर्भसमालोचनिका

ज्योतिर्विज्ञानसन्दर्भसमालोचनिका नाम सन्दर्भग्रन्थोऽयमपूर्व इवाभाति वस्तुतः शोधप्रबन्धरूपेण प्रणीतोऽयं प्रबन्धः प्रो. शुक्लवर्येण २००६ तमे वर्षे

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लखनऊविश्वविद्यालयस्य ज्योतिर्विज्ञानविभागस्य डी० लिट् उपाधि–हेतवे परीक्षणाय प्रस्तूय डी. लिट् उपाधिरधिगतः २०१३ तमेऽब्दे प्रतिभाप्रकाशनेन नवदिल्लीस्थेन प्रकाशितोऽयं ग्रन्थो महर्षिसान्दीपनिवेदविद्याप्रतिष्ठा नेनायोजिते विश्वसंस्कृतसम्मलेने सुधीजनगोचरत्वमगात् लोकार्पणकार्यक्रम माध्यमेन। वस्तुतो ग्रन्थोऽयं प्रो० शुक्लप्रवराणां ज्योतिर्वैज्ञानिकशोध विषयानामपूर्वसङ्कलनरूपेण प्रकाशितो जातः मौलिकानुसन्धानसंवलितानि ज्योर्तिर्वैज्ञानिकानि तत्त्वानि विनियोज्य ज्योतिषशास्त्रे संरतानां शोधचिकीर्षूर्णामथ च विद्यार्थिनां कृते बहुमूल्यरत्ननिचयभूतमिदं प्रकाशनमति व्यावहारिकं प्रासङ्गिकञ्च प्रामाणिकं ज्ञानशिखरमावर्धयति। प्रायः सर्वेषामेव ज्योतिषसम्बद्धा जिज्ञासा आशङ्काश्चास्य ग्रन्थस्याऽध्ययनेन शममुपयान्ति इत्यस्ति सर्वथा सिद्धम्।

सप्तसमालोचनिकासमलङ्कृतोऽयं ग्रन्थो वेदाङ्गज्योतिषसन्दर्भ समालोचनिका, काव्यज्योतिषसन्दर्भसमालोचनिका, सिद्धान्तज्योतिषसन्दर्भ समालोचनिका, वेधयन्त्रसन्दर्भसमालोचनिका, संहिताज्योतिषसन्दर्भ समालोचनिका, होराज्योतिषसन्दर्भसमालोचनिका तथा वास्तुशास्त्रसन्दर्भ समालोचनिकारूपेण सप्त–विभागेषु ज्योतिषशास्त्रस्याऽशेषविषयानां विशदविवेचनं प्रस्तौति।

प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयस्य पौराणिकमऽवदानम्–

सारस्वतशेमुषीनां वशीकृतशारदानां प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्याणां पौराणिकवाङ्मयेऽपि प्रशस्त्योऽधिकार आसीत्। पौराणिकाऽभिरु–चिवशादेवाऽनेन लखनऊविश्वविद्यालयस्य पी–एच्. डी. उपाध्यर्थं श्रीमद्भार्गवोपपुराणम् अध्ययनं सम्पादनञ्च इतिविषयमधिकृत्याऽनुसनधानं कृतम्। प्रो० शुक्लवर्याणां पौराणिकवाङ्मयसम्बद्धं ग्रन्थचतुष्टयमद्यावधि प्रकाशितं येषु श्रीमद्भार्गवोपपुराणम् आद्युपपुराणम् इति ग्रन्थ द्वयं सपाठालोचनं सम्पादनरूपमस्ति अन्ये च द्वौ ग्रन्थौ समीक्षा सन्दर्भरूपेण पौराणिकवाङ्मयस्य श्रीवृद्धिं कुर्वन्ति श्रीमद्भार्गवोपपुराणम्–अध्ययनं सम्पादनञ्च, पुराणसाहित्यादर्शश्चेति। एतेषां चतुर्णां ग्रन्थानां संक्षिप्तपरिचयोऽत्र प्रस्तूयते–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१. श्रीमद्भार्गवोपपुराणम्

उ०प्र० संस्कृतकादम्या प्रदत्तेन आर्थिकसाहाय्येनाऽखिलभारतीय-संस्कृतपरिषदा १९६४ खिष्टाब्दे प्रकाशितोऽयं ग्रन्थः प्रो. शुक्लवर्यस्य पी–एच्. डी. शोधस्य आसीदाधारग्रन्थः, यतोहि श्रीमद्भार्गवोपपुराणस्य समुपलब्धासु एकादशमातृकासु मातृकाचतुष्टयमाश्रित्य पाठालोचनपूर्वकं सम्पादनं कृत्वा स समीक्षणं शोधप्रबन्धः प्रस्तुतः। भार्गवोपपुराणस्योपलब्धमातृकाणां परिचयः प्रो. शुक्लेन श्रीमद्भार्गवोपपुराणस्योपोद्घाते विस्तृतरूपेण प्रस्तुतः। श्रीमते रामानुजाय नमः इत्यारभ्य विश्वकसेनं नमस्कृत्य प्रारब्धमिदमुपपुराणं वैष्णवमुपपुराणमस्ति। अस्मिन् पपुराणे चत्वारिंशदध्यायाः २११६ श्लोकाश्च सन्ति। पुराणप्रसिद्धः सूतोऽस्योपपुराणस्याऽस्ति मुख्यो वक्ता शौनकादय ऋषयः श्रोतारः प्रष्टारश्च। अस्मिनपुराणे न्यासयोगस्य महत्त्वं प्रतिपाद्य क्षेत्रयात्रां कुर्वता भूतसरो महदाह्वय–भक्तिसार–शठकोप-मधुरकविकुलशेखर–विष्णुचित्तगोदाम्बापादरेणुमुनिवाहनपरकालयोगिनां चरित्राणि वर्णितानि। एतदतिरिक्तं नाथयामुनरामानुजादीनामपि चरित्राणि प्रतिपादितानि। अस्य कथाः सूतशौनकादिसंवादेन नरनारायणसंवादेन च चर्चिताः सन्ति।

२. आद्युपपुराणम्

वेदव्यासप्रणीतम् आद्युपपुराणं हिन्दीभाषाऽनुवादसहितं २००३ तमे खिष्टाब्दे नागप्रकाशकेन प्रकाशितम्। सनत्कुमारोक्तमिदमुपपुराणं सूत–शौनक– संवादरूपेण एकोनविंशत्यध्यायात्मकमस्ति। वस्तुतो बैष्णवोपपुराणमिदं श्रीमद्भागवत्पुराण–ब्रह्मवैवर्तपुराणयोः गृहीतकथावस्तु प्रतीयते। विशिष्टतया राधाया उल्लेखेनसहितमिदं पुराणं शान्ति-विनय–शिष्टाचारपूर्वकं श्रीकथामभिव्यनक्ति। पूर्वप्रकाशितमपीदंमुपपुराणं सानुवादं प्रथम्तया प्रकाशितमुपगतम्।

३. श्रीमद्भार्गवोपपुराणम् अध्ययनं सम्पादनञ्च

दिल्लीस्थेन नागप्रकाशनेन १९६७ तमे खिष्टाब्दे प्रकाशितोऽयं शोधप्रबन्ध आसीत् प्रो. शुक्लवर्याणां पी–एच्.डी. उपाध्यर्थं प्रणीतमनुसन्धानकार्यम्, यमाश्रित्यै वलखनऊविश्वविद्यालयस्य पी–एच्.डी. उपाधिरधिगतः। ग्रन्थेऽस्मिन् पुराणलक्षणमाश्रित्य श्रीमद्भार्गवोपपुराणस्य सुष्ठु

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समीक्षणं कृत्वा सर्वाणि खलु तत्त्वानि विशदीकृतानि।

४. पुराणसाहित्यादर्शः

पुराणसाहित्यादर्शो नाम ग्रन्थः न्यू–भारतीय–बुक–कार्पोरेशन–दिल्ली द्वारा १९९८ तमे ईसवीयेऽब्दे प्रकाशित एकोऽतिमहत्त्वपूर्णः पुराणवाङ्मयस्याऽशेषपरिचायको ग्रन्थो यस्मिन् आपुराणपञ्चलक्षणाद् विशिष्ट–पुराण परिचयपूर्वकं सर्वमेव पौराणिकवाङ्मयं ससन्दर्भमनुस्यूतम्। संस्कृतभाषया प्रणीतेऽस्मिन्ग्रन्थे पुराणसाहित्यं खलु समग्रतया चित्रितं जातम्।

इत्थं साहित्य–काव्यशास्त्र–ज्योतिष–पुराणादिषु विविधक्षेत्रेषु प्रणीतानामनेकेषां स्तरीयग्रन्थानमेका, सुदीर्घा सूची दृष्टिपथमुपयाति एतदतरिक्तमपि तन्त्र–व्याकरण–दर्शन–शास्त्राणामप्यनेके ग्रन्था आचार्यवर्यैः सम्पादिता अनूदिताः समीक्षिताश्च येषामपि सङ्क्षिप्तपरिचयोऽत्र प्रस्तूयते।

प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयस्य तन्त्रशास्त्रीयमवदानम्

प्रो० बृजेशकुमारशुक्लवर्यैः तन्त्रशास्त्रमधिकृत्य ग्रन्थद्वयं समपादि पाठालोचनपूर्वकं तयोरनुवादसमीक्षणमपि विहितम्। सर्वप्रथममेभिः उड्डामरेश्वरतन्त्रमिति नामधेयं ग्रन्थं पाठालोचनपूर्वकं समपादि। ग्रन्थमिमधिकृत्याऽस्य हिन्दीभाषयाऽनुवादोऽपि कृत्वा शान्तीश्वरीति नाम्नी टीका प्रणीता। ग्रन्थोऽयं वाराणासीस्थ–कृष्णदासअकादमीतः १९९६ तमे ख्रिष्टाब्दे प्रकाशितः। पाशुपततन्त्रमिति नामधेयमपरं ग्रन्थं पाठालोचनपूर्वकं सुसम्पाद्य विस्तृतसमीक्षणपूर्वकं प्रकाशनमप्येभिरुपकल्पितम्। ग्रन्थोऽयं राष्ट्रिय पाण्डुलिपि मिशन–देहलीतः प्रकाशनयोजनान्तर्गत पोषितोऽप्यासीत्।

एतदतिरक्तमप्येनेके ग्रन्थाः कर्मकाण्डधर्मशास्त्र–व्याकरण –विषयका अपि प्रो. शुक्लवर्येण प्रणीता येषु नागप्रकाशकेन प्रकाशितः कर्मकौमुदी, तेजकुमारबुकडिपो लखनऊ तः, प्रकाशितः अष्टावक्रगीताऽथ च शङ्र्गधरसंहिता, प्रकाशनकेन्द्रेण प्रकाशितः संस्कृतकाव्यसन्दर्भसङ्ग्रहः, न्यू रायल बुक डिपो–लखनऊतः प्रकाशितः काव्यशोभा, वृत्तसंग्रहः, श्रुतिप्रभा कविलोचनिका, नवरूपकमित्यादयो ग्रन्था अपि समुल्लेखनीयाः सन्ति। वेदाङ्गज्योतिष–वाल्मीकिरामायण–एक परिचय, वराहपुराणम्, पुराणेषु

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नैमिषारण्यम्, श्रीमद्भागवतमहापुराणतत्त्वविमर्श इत्यादयो ग्रन्था अपि शुक्लवर्येण सहलेखकत्वेन सहसम्पादकत्वेन च प्रणीताः। वाङ्मयी—शोधधारा—संस्कृतमवाङ्मयी—संस्कृतं विज्ञानञ्च, अजस्रा इत्यादयो विविधशोधपत्रिका अपि प्रो. शुक्लवर्येण सम्पादिताः। संस्कृत शोधपत्रपत्रिकासु शताधिकाः कविताः शोधपत्राणि दृष्टिपथंमुपयान्ति। सम्प्रति पाराशर्यधर्मशास्त्रम्, श्रीगुरुचरितमतल्लिका बृजेशयशोभूषणस्या-वशिष्टांशश्चेति प्रणयनैः सार्द्धमेवाऽनेके ग्रन्थाः प्रकाशनाधीना एवाऽऽसन्। अन्ये चाऽनेकके ग्रन्थास्तेषां प्रकाशनयोजनानतर्गतं भतितुमर्हन्ति इति ज्ञातुं न शक्यते।

इत्थं निष्कर्षरूपेण वक्तुमिदं शक्यते यत् सरस्वती—वरदपुत्रस्वरूपे जातः स आचार्यवर्यः सारस्वतावदानस्य प्रर्तिमूतिरिव संस्कृतजगत्प्रकाशयितुं कृतसङ्कल्प आसीत् किन्तु विधेर्विधानमाश्रित्य स ज्ञानसूर्योऽद्यं क्वगत इत्यस्ति क्लेशस्य विषयः। सम्प्रति प्रतीयते यद् दिव्यलोकेऽपि देवानालोकयितुं ज्ञानसूर्यप्रभोऽयं विद्वान् मनीषी देवकल्प आचार्यो द्युलोकमाश्रित्य भगवच्चरणारविन्दयोरुपविश्य भगवान्भास्कररूपेणाऽखिलमपि लोकं ब्रह्माण्डं वाऽऽलोकयितुं द्यवि द्योतते। अतोऽहं प्रतिदिनं प्रणामाञ्जलिततिं सश्रद्धया श्रीगुरुपादपङ्केरुहेभ्यः समर्प्य धैर्यं धारयामि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीबृजेशाञ्जलिः

प्रो० मिथिलाप्रसादत्रिपाठी
कुलपतिचरः,
महर्षिपाणिनि–संस्कृतविश्वविद्यालयः, उज्जयिनी, म०प्र०

देवभाषागमप्रोक्तविद्यार्णवे
पोप्लवीति स्म वेदाङ्गपारङ्गतः।
शास्त्रयूथान्तरङ्गशुभः पण्डितः
हा!! बृजेशोऽद्य दुर्दैवतोऽगादिदवम्।।१।।

भारतीयं नरीनर्ति यस्यानने
यत्र वर्वर्ति साहित्यसिन्धुर्हृदि।
यश्च नक्षत्रविद्याप्रवीणः सुधीः
नैव जाने विधात्रा हृतोऽसौ कथम्?।।२।।

यस्तु विद्वत्सु बद्धादरः सर्वतः
सद्विनीतः सुशीलः सुहृत्सज्जनः।
शास्त्रचर्याचणः सत्कविः सुप्रियः
सोऽद्य दुर्दान्तदैवेन कस्मादधृतः।।३।।

श्रीबृजेशोऽर्चनाराधने तत्परः
कर्मकाण्डेऽपि वेदागमे निष्ठितः।
विश्वविद्यालये छात्रवृन्दैर्वृतः
स्वर्गतोऽस्मान् परित्यज्य कस्माद् बुधः।।४।।

येन साहित्यशास्त्रे तथा ज्योतिषे
डी. लिडाख्योऽर्जितोऽभूदुपाधिःशुभः।
शोधगोष्ठीषु सच्छोधलेखादिभिः
यश्च राराज्यतेऽसौ बुधः क्वास्ति नः।।५।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिष्यमित्रैस्तथाचार्यवर्यैः प्रियः
क्रूरवृत्या करोणामिषेणैव सः।
पश्यतां सद्बुधानां सतां मारितः
हन्त! रोद्धुं क्षमः कोऽपि नाभूत्तदा।।६।।

शुक्लवृत्तिः सदा वर्तने भाषणे
पाठने वक्तृता सद्भिराशंसिता।
यस्य वेधाप्यकाले जघान स्वयं
तं स्मरामश्च शुक्लं बृजेशाभिधम्।।७।।

वीक्ष्य वैदुष्य–पाण्डित्यपूर्णं बुधं
सर्वकारेण पद्मश्रियाऽलङ्कृतः।
शिष्यवृन्दैरयं जीवितो भूतले
भाति विद्वद्बृजेशेन विद्यानभः।।८।।

दिक्षु कीर्तिस्तता भूरि विद्याकुलं
भासते मित्रविद्वद्वरैः कीर्त्यते।
कीर्तिकायोऽमरः पाठकैः सन्ततं
देहहीनो विदेहः सदा स्मर्यते।।६।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रतिभासमुच्चय आचार्यबृजेशकुमारशुक्लः

डॉ० नवलता
पूर्वविभागाध्यक्षा, संस्कृतविभागः
वी.एस.एस.डी. महाविद्यालयः, कानपुरम्

अल्पे वयस्येवाचार्य–विभागाध्यक्षपदे प्रतिष्ठितः पद्मश्रीरित्यनेन महनीयराष्ट्रियेनालङ्करणेन विभूषितः प्रोफेसरबृजेशकुमारशुक्लवर्यः लखनऊविश्वविद्यालयस्याथ च लखनऊनगरस्य किंवोत्तरप्रदेशस्य गौरवभूत आसीदित्यत्र न विप्रतिपत्तिः। संस्कृतविदुष आत्मजोऽसौ लखनऊ–विश्वविद्यालय एवोच्चशिक्षां प्राप्याऽत्रैव शिक्षकत्वेन नियुक्तः। यथा मयाऽनुभूतम् अस्य व्यक्तित्वमन्तर्मुखमपि बहिर्मुखमासीत्। अन्तर्मुखव्यक्तित्व–वशात् सर्वत्र सर्वैः सह स्वयमेवालापे तस्याभिरुचिर्न दृश्यते स्म किन्तु बहिर्मुखव्यक्तित्वं विद्यास्वभावाभिरुच्यादिषु स्वसदृशैः सममेकवारमपि तस्य परिचयः चिरस्थायी जातः। बहुमुखिप्रतिभायाः स्वामी असौ पुराणेतिहासविशेषज्ञो ज्योतिर्विज्ञानेऽपि बहुज्ञ आसीत्। सम्भवतो विश्वविद्यालयस्येतिहासे विभागद्वयस्याध्यक्षपदमलङ्कृतवानसौ एक एवासीत्। किञ्च एतस्यैव सत्प्रयासेन विश्वविद्यालये पृथक्तया ज्योतिर्विज्ञानविभागः संस्थापितः। समर्थः कविः विविध–विश्वविद्यालयेषु तत्तत्परिषत्सु विशेषज्ञरूपेण संस्तुतः प्राच्यविद्यासम्मेलनेषु नैकवारं प्रतिनिधितया निर्वाचितः मित्रस्य मित्रममित्रस्यामित्रमिति यथावद्व्यवहारनिपुण एवं सरलोऽपि गूढगम्भीरः प्रोफेसरशुक्लः ममानुज इवासीत्। नैकासामुत्कृष्टग्रन्थानां लेखको मातृपितृभक्तो व्यवहारकुशलो महत्त्वाकांक्षानुरूपं कृताध्यवसायो गुरुजनस्य प्रियः स्वयोग्यताबलेन च लब्धप्रतिष्ठ आसीत्।

शुक्लवर्येण सह नैकशः काव्यमञ्चेषु संस्कृतकाव्यपाठं कृतवत्यहं तस्योत्तमाः काव्यरचनाः श्रुतवती। यात्रादिषु तस्य निर्विकारं निश्छलहासमयं किमप्यपरं रूपमेव द्रष्टुं शक्यते स्म। प्रतिष्ठितं पदं प्राप्यापि सहजतया सर्वत्र गमनागमनं तस्य समन्वयक्षमतामेव व्यनक्ति।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कारद्वारा यात्रायां तस्य छर्दिप्रवृत्तिः भवति स्म। मया महाविद्यालये व्याख्यानार्थं निमन्त्रितोऽसौ यदा मया सह कारद्वारा यात्रां कुर्वन्नासीत्तदा किमप्यम्ललेह्यं जम्बीरं वा चूषणार्थमावश्यकं भवति स्म। प्रायेण तेन सह कारयात्रायां वयमम्लचाकलेहं जम्बीरं वाऽवश्यं स्थापयामः स्म। किमधिकं वदानि। तन्मुहूर्तं भर्त्सयामि यस्मिन्मुहूर्ते विश्वविद्यालये तस्य प्रकम्पोत्पादिकायाः सङ्गोष्ठ्याः परिकल्पना रचिता या मुहूर्तज्ञमपि शुक्लवर्यं कालकवलितीकर्तुमस्मान् वञ्चयितुं च मुखस्फारपुरः सरं झञ्झेवागताऽसीत्। कालहतकेन तस्मिन्समारोहेऽन्येऽपि ग्रस्ताः किन्त्वात्मीयत्वाद् गुरुवर्याणां प्रोफेसरकालियावर्याणां प्रियानुजकल्पस्य प्रोफेसरब्रजेशकुमारशुक्लस्य स्मृतिः कदापि मनसो दूरीकर्तुं न शक्यते। गमनागमनात्मके जगति जातस्य मृत्युः मृतस्य च जन्म शाश्वतं सत्यम्। उभावप्यस्माकं संस्कृताभिमानिनौ देवौ (दिव्यत्वात्) चेन्मोक्षं न प्राप्नुयातां तर्हि पुनरपि भारतवर्षे सुरभारतीसमाराधकत्वेन लब्धजनी जन्मनि जन्मनि यशोभाजौ भवेतामिति भगवन्तं भवानीपतिं प्रार्थये।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शास्त्रनिर्वचने दक्षो बृजेशो हा दिवङ्गतः

प्रो० बिन्दाप्रसादमिश्रः
कुलपतिचरः
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी

विद्वन्मान्यान् ज्ञानविज्ञानहेतून्
कृत्वा शोधान् नव्यतत्त्वार्थपूर्णान्।
लब्ध्वा मानं सर्वविद्वत्सभासु,
प्राप्तार्चस्सश्रीबृजेशो मदीयः।।१।।

जानन्नहो श्रीजननीप्रसादाद्
भूतं भविष्यं प्रभवच्च सर्वम्।
तथापि कालस्य गतिर्न दृष्टा,
चान्ते त्वया चेति महद् विचित्रम्।।२।।

प्रियो मदीयश्च सुधीर्बृजेशः
काव्यार्थकूजी कविकानने वै।
श्रीपद्मसम्मानविभूषितश्च
दिवङ्गतो हाऽध्ययने समर्थः।।३।।

अहो! विद्यां धृत्वा विमलशिवसारं हृदि दधन्,
पठन् सर्वाश्शास्त्रान् गणननिपुणो ज्यौतिषविदाम्।
धरायां धीराणां शुचिमयजनानां मतिमतां,
वरो दैवीं वाणीं मुखकृतसु शुक्लः क्व ह! गतः।।४।।

अहो! वेदाऽऽबोधाद् विविधविधिसारं हृदि धरन्,
चिराच्छब्दार्थानां मनननिपुणः कोविदवरः।
सदा वै काव्यानां सकलरसधारं रुचि पिबन्,
बृजेशस्सच्छात्रान् प्रति सितमना हा! क्व स गतः।।५।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनाथभूताश्च विनीतभावाश्
शिष्यत्वदीया गलदश्रुधाराः।
सदा तु ते पालितलालिता हि,
त्वयैकभावेन गता न धैर्यम्।।६।।
'कोरोन' काले सहसा गतस्त्वं,
शिष्यास्त्वदीया बहुधालपन्ति।
हा तात! हा नाथ! वयं विनाथा
अग्रे गतिः का भविता न ज्ञाता।।७।।
यदा हि जातं निधनं त्वदीय–
ममित्रभावोऽपि जनो रुरोद।
जनाश्च ये सन्ति भवत्कुले वै,
तेषां गतिस्तात! अहं न जाने।।८।।
'शान्ती' पत्नी शान्तिमूर्तिः पतिव्रता तपस्विनी।
धैर्यं कथञ्चिद् दधाना चाश्रुपूर्णा विचिन्तिता।।६।।
विवाहिता ज्येष्ठा पुत्री कनिष्ठा च कुमारिका।
अपरस्तु कुले पुत्रो जननी धैर्य–हेतवः।।१०।।
माता च जीविता सत्यं निर्जीवेव तु भासते।
त्वदीयः पुत्रवद् भ्राता मलिनो दृश्यतेऽधुना।।११।।
दुःखिताश्च कुले सर्वे तात! त्वयि दिवङ्गते।
धैर्यं धृत्वा कथञ्चित् ते जीवनं धारयन्ति हा!।।१२।।
विद्या विभूषितो लोके विदुषां चित्तहारकः।
शास्त्रनिर्वचने दक्षो बृजेशो हा! दिवङ्गतः।।१३।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मृतिकोशे पद्मश्री प्रो. बृजेशकुमारशुक्लः

डॉ० रेखा शुक्ला
संस्कृतविभागाध्यक्षचरः
जुहारीदेवीकन्यामहाविद्यालयः, कानपुरम्

पद्मश्री (स्व०) प्रो. बृजेशकुमारशुक्लमहोदयः स्वकारयित्रीभावयित्री–प्रतिभावशाद् लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालये विशिष्टस्थानं प्राप्तवान्। संस्कृत–प्राकृत–भाषा–विभागस्य अध्यक्षव्यतिरिक्तं स अभिनव–गुप्त–संस्थान–अखिल–भारतीय–संस्कृतपरिषद् इति संस्थानयोरपि कार्यभारं गृहीतवान्। कालान्तरेण स कलासङ्कायस्यअधिष्ठातृपदमपि सुशोभितमकरोत् 'पद्मश्री'–शिक्षकश्री–'सरस्वती'–पुरस्कारसहितमनेकैः पुरस्कारैः सभाजितः स विनयसम्पन्नो विविध–विद्यावारपारीणो ज्योतिषवास्तुशास्त्रवेदवेदाङ्गलौकिकसाहित्यायुर्वेदशास्त्रस्य ज्ञाता, संस्कृतप्राकृतभाषाप्रयोगे समानाधिकारी, विविधग्रन्थानां प्रणेता, प्राकृतसंस्कृतभाषामाध्यमेन काव्यरचनाप्रवीणः सुशीलसरलस्वभावो विनयोपेतः कर्मयोगी संस्कृतवाङ्मयस्य अलङ्कारस्वरूपो लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागस्य गौरवश्चासीत्।

मम परिचयस्तु पूर्वत एवासीद् यदा स कान्यकुब्जमहाविद्यालये प्रवक्तापदे नियुक्तोऽभवत्। तस्य वैदुष्यं तु प्रारम्भादेव प्रकटितोऽभूत। अहं लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयस्य छात्रास्मि एतत्कारणादहं तत्र प्रायो गच्छामि। तत्र उ०प्र० संस्कृतसंस्थानस्य च विविधकार्यक्रमाणामायोजनेषु नौ मेलनं प्रायः अभवत्। कविसम्मेलनस्य विविधमञ्चेषु आवयोः काव्यप्रस्तुतिः सञ्जाता। प्राच्य–विद्या–सम्मेलनेषु यथा प्रयाग–दिल्ली–हरिद्वार–उज्जैनादि अखिलभारतीयसंस्कृतसम्मेलनेषु प्रायः आवाम् सहयात्रामकुरुताम्।

यदा स प्रोफेसरपदमलञ्चकार स कर्णपुरविश्वविद्यालये पी–एच्०डी० उपाधि–प्रदानाय विशेषज्ञरूपेण नियुक्तोऽभवत्। छत्रपतिशाहूजीमहाराज विश्वविद्यालये, कर्णपुरे स संस्कृतविभागस्य पाठ्यक्रमसमितेः सदस्य आसीत्। तदानीमहमपि संस्कृतविषयस्य संयोजिका आसम्। प्रायः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्णपुरविश्वविद्यालयं गमनागमनं तेन सहैव भवति स्म। लक्ष्मणपुर-विश्वविद्यालयस्य अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदश्च कार्यक्रमेषु स सदैव माम् आमन्त्रयति स्म। प्राश्निकरूपेणापि स सर्वदा मम नियुक्तिम् अकरोत्।

मयाऽपि स्वविद्यालयेऽपि अखिलभारतीयसंस्कृतसम्मेलनावसरेषु सः अतिथिरूपेणामन्त्रितो जातः। मम महाविद्यालये कविसम्मेलनेषु स आमन्त्रितोऽभूत यतो हि मया प्रतिवर्षं स्वमहाविद्यालये कविसम्मेलनस्यायोजनं कृतम् येषु प्रो० ओम्प्रकाशपाण्डेयमहोदयः, डा० प्रशस्यमित्रशास्त्री, प्रो० हरिदत्तशर्ममहाभागः, डा० रामशङ्करअवस्थी, डा०शिवबालक-द्विवेदीमहाभागः इत्यादयो नैके कवयो भागं गृहीतवन्तः। बृजेश कुमार शुक्लः ग्रामीणपरिवेषे परिपोषितोऽपि स्वकठोरपरिश्रमेण स्वजीवने निरन्तरमुन्नतिं प्राप्तवान्। अल्पायुरपि स स्वयशः सौरभ्येण प्रसिद्धोऽभवत्। अन्तेऽधोलिखितैर्वचोभिर्वाक्पुष्पाञ्जलिर्मयाऽर्प्यते–

निसर्गादारामे तरुकुलसमारोपसुकृती
कृती मालाकारो बकुलमपि कुत्रापि निदधे।
इदं को जानीते यदयमपि कोणान्तरगते
जगज्जालं कर्त्ता कुसुमसौरभ्यभरितम्।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीबृजेश–स्मृतिः

प्रो० हरिदत्तशर्मा
(महामहिम–राष्ट्रपति–सम्मानितः)
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
इलाहाबादविश्वविद्यालयः, प्रयागराजः

आसील्लक्ष्मणपुर्यस्थे विश्वविद्यालये वरे।
देववाणी–विभागे वै गुरुराचार्यशिक्षकः।।१।।

बृजेशशुक्लनामाऽसौ विद्वान् कर्मपरः परः।
वेदे ज्योतिषशास्त्रे वै साहित्ये चैव दर्शने।।२।।

नैकशास्त्रेषु निष्णातः प्राच्यविद्यासु पारगः।
शिक्षाक्षेत्रे सुविख्यातश्छात्रवर्गैः सुपूजितः।।३।।

नैकवारं विभागस्य संस्कृतस्य परस्य च।
कलासङ्कायवर्गस्य ह्याध्यक्ष्यं व्यूढवान् बुधः।।४।।

प्राच्यसम्मेलने चैव सक्रियत्वं प्रदर्श्य तैः।
कार्यकारिसदस्यस्य नूनं निर्वाचनं जितम्।।५।।

नैकवर्गेषु चाध्यक्ष्यं नैकवारं कृतं भृशम्।
रुचिः सक्रियता दृष्टा गोष्ठी–सम्मेलनादिषु।।६।।

तस्य रचनाधर्मित्वात् काव्यसृष्टिरजायत।
सम्मानैश्च पुरस्कारैर्भूयः सम्भूषितः सुधीः।।७।।

संस्कृतसेवाधर्मत्वात् शास्त्र–काव्य–निषेवणात्।
सर्वकारेण पद्मश्री–सम्मानेन स्वलङ्कृतः।।८।।

संस्कृतमातुः सेवायां सकलं जीवनं गतम्।
सेवमानश्च तामेव गोष्ठीबन्धाद दिवङ्गतः।।९।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मृतिसरित् प्रवहति निरवधि दिशि दिशि

डा० सुधा गुप्ता
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
जुहारीदेवीगर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कानपुरम्

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति।।

सुभाषितमिदं प्रो० बृजेशकुमारशुक्लमहोदयानां जीवनमविकलं कलयति। यतोहि किमपि कार्यं भवतु–शैक्षिकं प्राशासनिकं, वैयक्तिकं वा यदारभ्यते परिसमाप्तिं यावन् नयन्ति स्म। एभिर्महानुभावैः साकं यः कश्चन प्रथमवारं मिलति स्म तेषां दर्शनमात्रेण पुस्तकस्य सूचिपत्रवत्समग्रं व्यक्तित्वमवगच्छति स्म।

अतसीकुसुमश्याम–नवजलधरसमं यद्यपि तेषां कलेवरमासीत् परन्तु हृदयं पार्विकशर्वरीश्वरसदृशं स्वच्छस्फटिकवच्च बभूष। स्मेरमुखं सदैव सदयसदनं शीलतामुमोच। वचनं पीयूषवर्षि। शैशवशेषवन्तः इमे प्रतिदिनं दिनेश्वरश्रियं दधिरे। ब्राह्मणकुलावतंसाः शुक्लपरिवारतिलका बाल्यात् तुलसीदलवत् स्वगुणैः पित्रोः प्रणयलोलतां गताः। अजस्रमभ्यासमुपेयिवांसः इमे बुध–शुक्र–बृहस्पति–सदृशीं स्वचमत्कारितां विकासयामासुः। उत्तरप्रदेशस्य बाराबंकी–जनपदे त्रिलोकपुरग्रामे विद्यावकाशं लब्ध्वा लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयं भूषयांश्चक्रुः। परमकारुणिकराष्ट्रपतिसम्मानभाजो विशिष्टाद्वैत–दर्शने पाण्डित्यमादधानाः प्रो० अशोककुमारकालिया–महोदया गुरुष्वेतेषां प्रमुखतामाजग्मुः। एवं विधप्रकारेण संस्कृतसाहित्ये ज्योतिषे च वैशारद्यमवाप्य पितृवंशं गुरुवंशञ्च धन्यधन्यतां प्रापितवन्तः।

कवित्वं, सहृदयत्वं, गणकत्वं, दार्शनिकत्वञ्च सर्वत्र समस्तं न दृश्यते यत्खलु एतेषु। यतोहि संस्कृते ज्योतिषे च कृतभूरिपरिश्रमाः डी०लिट् उपाधिद्वयेन भूषिताः। तेषां तलस्पर्शिपाण्डित्यमवगाह्य मुरारिकविं स्मरामि–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देवीं वाचमुपासते हि बहवः सारं च सारस्वतं,
जानीते नितरामसौ गुरुकुलं क्लिष्टो मुररिः कविः।
अब्धिर्लङ्घित एव वानरभवैः किन्त्वस्य गम्भीरता–
मापातालनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मन्थाचलः।।

अधीतिबोधाचरणप्रचारणैः त आरम्भतः ग्रामं ग्रामं विद्याया विस्तारं चक्रुः शास्त्राणि च शिरसि बभ्रुः। आदिशङ्करस्य दिग्विजयवत् सर्वत्र एतै विदुषः न केवलं वाक्यधिर्निर्जितवन्तः अपितु पाण्डितैर्विमोहितवन्तः। शरच्चन्द्रमरीचिवदेतेषां रुचिः सर्वत्र विवर्द्धिताः। पुराणेतिहासे आसन्नेतेऽप्रतिमाविद्वासः। उपपुराणानि अधिकृत्य प्रकाशित ग्रन्थ इदानीमपि कनिष्ठकाधिष्ठित एव। गुरवः प्रो० अशोककुमारकालियामहोदया आगमतन्त्रेषु पारदर्शिन आसन्।

ऐतेषां पदाङ्कं ध्यायं ध्यायं तेषु तेषु शास्त्रेषु लब्धस्वादाः सञ्जाताः। एवंविधं वेदवेदाङ्गायुर्वेदवास्तुशास्त्रादिष्वप्रतिहतगतयोऽभूवन्। अधीतशास्त्राणां प्रचारप्रसाराय लक्ष्मणपुरमतिरिच्य राष्ट्रे राष्ट्रियाऽन्ताराष्ट्रियाश्च सङ्गोष्ठीः आयोजयामासुः। पुराणप्रसिद्धे नैमिषारण्यक्षेत्रे आनन्दमयीमातृभिः संस्थापिते पौराणिकवैदिकानुसन्धानकेन्द्रे सदस्यतां निभाल्य नानाविधसङ्गोष्ठीषु च भागोऽग्राहि। मातृकरुणा आसादि च। एतेषामनुसन्धानप्रवृत्तिमुनभूय मधुमक्षिसदृशाः शोधच्छात्राः शिष्यत्वं स्वीकृत्य विभिन्नविश्वविद्यालयेषु पी–एच्०डी०, डी० लिट् इत्युपाधिधारिणोऽभूवन। एतेषां शिष्यसम्पत्ति–र्गुरुकलां नितरां पुष्णान्ति–

काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।
व्यसनेन तु मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा।।

निजीकरणमनुभूयते एतत् श्लोकरहस्यमेतेषां जीवने। व्यसनमेतेषां न विभवेषु न काञ्चनेषु न कादम्बरीषु नाङ्गनासु अपितु विद्यासु। विश्वस्मिन् वश्वे शुक्लमहोदयान् को न जानाति।

अखिलभारतीयप्राच्यविद्यासम्मेलन–विश्वसंस्कृतसम्मेलन– World Congress of Vedic Sciences- Research Board of Advisers- Astrological

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Research Committee प्रभृतिषु न केवलं सदस्यरूपेणाऽपितु महत्त्वपूर्णदायित्वसम्पादनेन शास्त्रसुमेरुमेरुदण्डरूपेणं कल्पपादपरूपेण सर्वेषामक्षिलक्ष्यीविषयिणो बभूवुः। यथा साधकः स्वसाधना द्वारा स्वीयं विश्वं सृजति तथैव योगिविवेकानन्दारविन्दसदृशा एते योगिजनसंवेदशीलतां स्वजीवने आदधते स्म। आप्रभातान्नववादनं यावद् योगसाधनतत्पराः सन्तश्चित्ते कुर्वन्ते स्वेष्टं धारणशक्त्या। योगशक्त्या कुण्डलिनीं जागरयित्वाऽधारि बहुविधं शास्त्रहरस्यम्। अनया प्रत्यपादि शस्त्रपरम्परा जगत्यां जगति। लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालये ज्योतिर्विज्ञानविभागस्थापनाद्वारा तत्खण्डस्य महदुपकारः कृतः। येऽधिकारिणः कर्मचारिणः पारम्परिकशिक्षयामुत्साहिनः सन्तः पूर्वयोग्यताराहित्याद् वञ्चितास्तेषां कृते विभागोऽयं वरदानरूपः। चानुभूतं मया लक्ष्मणपुरस्य नैके अधिकारिणः संस्कृतेतरविद्वांसोऽपि ज्योतिषशास्त्रे महिममण्डिताः।

एकं संस्मणं स्मरामि किल हृदयेमेतेषां सामाजिकव्यवहारमभिलक्ष्य। मम पुत्रस्योद्वाहे यद्यपि तेषां निलयं प्रति गत्वाऽऽमन्त्रयितुं नायं जनो गतवान् तथापि असुस्थाः सन्तोऽपि गृहं मे आगत्यानल्पाशीराशिभिर्दम्पती कलयामासुः। एवमेषां लोकानुरञ्जकत्वं सहृदयसंवेदनत्वं लोकव्यवहारनैपुण्यं स्वबन्धुजनेषु प्रीतिपराकाष्ठा चाक्षिलक्ष्यीभवति। परोपकार एतेषां रोमकुपेषु निवसति। एषामुपदेशपालनेन तदाश्रितानां दारिद्रयं दरिद्रतां गतम्। लक्ष्मीनित्यं निवासिनी सरस्वती च युगपत् सहगामिनी बभूवतुः। एभिः कारणैः मन्ये भारतसर्वकारैः प्रदत्तः पद्मश्रीबिरुदो वामन इव एतेषां पुरतो भाति। उक्तं च–

न सा विद्या यत्र न सन्ति बृद्धाः न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम्।
नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति, न तत्सत्यं यत् छलेनाभ्युपेतम्।।

शास्त्रसभासु धर्मपूर्विकां छलरहितां युक्तिं प्रदर्श्य कीर्तिकौमुदीं च प्रसार्य युगपुरुषरूपेण न केवलं कुटुम्बजनानां हृदये राराज्यमानाः अपितु संस्कृतज्ञानां हृदयमान्दोलयन्तः २०२१ तमे वर्षे अप्रैलमासस्य षष्ठदिनाङ्के शिवसायुज्यमलभन्त तथापि सर्वेषां हृदयसीम्नि स्पन्दरूपेण चकासन्ते। **'हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति'** इति न्यायेन तेषां कीर्तिकौमुदी आशशिरवी अस्मान् कृतार्थयिष्यतीति। आसंसारं च द्योतयिष्यति। विधातापि एषां वैदग्ध्यकीर्तिमपहर्तुं न समर्थः। ***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अस्तङ्गतः शुक्लिमा

प्रो० आजादमिश्रः
प्राचार्यचरः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः,
भोपालपरिसरः, भोपालम्, म०प्र०

(१)

लोकालोकनिवासिनो बुधवरान् संखेदयन् दुःसहम्
विद्याकाशविसारितारकनिभांश्छात्रान् समुद्वेजयन्।
भव्यां संस्कृतयोजनां निजहृदि व्युप्तां समुन्मूलन्,
पद्मश्रीमहसोऽरुणस्य सहसा चास्तङ्गतः शुक्लिमा।।

(२)

गुणज्ञो नीतिज्ञो विविधगुणयुक्तो नरवरः,
विभागाध्यक्षोऽसौ जयतु भुवि दैवज्ञविबुधः।
सुशास्त्रे सौन्दर्ये सपदि सुरतं यस्य हृदयम्,
सदानन्दो भूयो भवतु भवतां भूतलतले।।

(३)

पाठने भाषणे चैव कविता-ग्रथने तथा।
ग्रन्थानां लेखने वादे पर्यावरणरक्षणे।।

(४)

विद्यायां विनये चैवानुशासनाविधावयम्।
सदाचारे कृतमतिः शास्त्राज्ञां पर्यपालयत्।।

(५)

लेभे जन्म सुधीनरः कविवरो मान्यो महापण्डितः,
ग्रामे पुण्यमहीतले भगवतो रामस्य भू-भागतः।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पार्श्वे यस्य पिता गृहस्थसुभटः सद्धार्मिकः पुण्यवान्,
यस्यासीद् विवुधानुगः कुलवरः ख्यातो बृजेशःसुतः।।

(६)

विश्वविद्यालऽयोऽयं किं निखिलं लखनऊपुरम्।
रोरुदीति निरानन्दं विभागं वीक्ष्य संस्कृतम्।।

(७)

कोरोना राक्षसि! त्वं किं बुधानेव प्रभोक्ष्यसे।
समाजकाञ्चनं मत्वा लोभान्न दयसे मनाक्।।

(८)

नूनं 'मधुकरो' मातः स्तौति त्वां व्रतधारिणीम्।
बृजेशशुक्लो भक्तः शिवेन सह मोदताम्।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'पद्मश्री'–विभूषितस्य
आचार्यबृजेशकुमारशुक्लमहाभागस्य सारस्वतसाधना

डा० सन्दीपकुमारमिश्रः
संस्कृत–विभागः किसान–पी.जी. कॉलेज, बहराइच

डा० शोभाशुक्ला
निगोहा, लखनऊ

यशःकायशेषो बृजेशशुक्लमहाभागः प्राच्य–पाश्चात्य परम्परयोर्मूर्धन्य–मनीषी आसीत्। प्रस्तुतशोधालेखे तस्य महाभागस्य साहित्यिकवैभवं यथायथं प्रकाशयितुं प्रयासः कृतोऽस्ति। अस्य आलेखस्य प्रथमभागे तज्जन्म–शिक्षा–गार्हस्थ्य–सन्तति–शिष्यसन्तति–विदेशयात्रा–पुरस्कार–सम्मानादीनां विवरणं प्रस्तुतमस्ति। द्वितीयभागे तेषां साहित्यिकावदानस्य विवरणमस्ति। तृतीयभागे तेषां प्रशासनिकदायित्वानां चर्चा कृताऽस्ति। अन्तिमे चतुर्थभागे तन्निर्देशने सम्पन्नशोधकार्याणां विवरणिका प्रस्तुताऽस्ति। आचार्यबृजेशशुक्लमहाभागस्य सारस्वतसाधना यद्यप्यनेकप्रबन्धानां विषयोऽस्ति, या खल्वेकेनैव आलेखमात्रेण नहि पूर्णतया प्रकाशयितुं शक्या, किन्त्वनेन हि आलेखेन अनेके पक्षास्तत्सारस्वतसाधनायाः शेवधिः उद्घाटयितुं शक्याः इति मम दृढो विश्वासः।

जीवनपरिचयः

आचार्यशुक्लमहाभागस्य प्रादुर्भावः ऊनविंशशतद्विषष्टितमवर्षे अक्टूबर मासस्य प्रथमदिनाङ्के (०१.१०.१९६२) उत्तरप्रदेशीयबाराबङ्कीजनपदस्य त्रिलोकपुरग्रामे चन्द्रकला–प्यारेलालशुक्लयोर्ज्येष्ठपुत्ररूपेणाभूत्। पं० प्यारेलालशुक्लो बाराबंकी जनपदस्य एकः लब्धप्रतिष्ठः कृषक आसीत्। पं० प्यारेलालशुक्लमहाभागस्य तिसृषु सन्ततिषु ज्येष्ठ आचार्यो बृजेशशुक्लः, ततश्च द्वितीया सन्ततिः राजेशशुक्लः तथा च तृतीया सन्ततिः वत्सा ऋचा सन्ति। आचार्यो बृजेशशुक्लः प्राथमिकशिक्षणकालादेव प्रशस्तमेधावितथाध्ययनप्रावण्याय विद्यालये निकटस्थक्षेत्रे यशस्वी प्रशंसनीयश्चाभूत्। एष बृजेशशुक्लमहाभागः १९७८ ई० वर्षे उ०प्र० माध्यमिकशिक्षापरिषदो हाईस्कूलपरीक्षां त्रिसप्ततिप्रतिशताङ्कैः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्णवान्, अथ च अशीत्युत्तरनविंशशततमे (१९८०) ई० वर्षे इण्टरमीडिएटपरीक्षामपि प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्णवान्। अस्य महाभागस्योच्चशिक्षा लखनऊविश्वविद्यालयमागत्य पूर्णाऽभवत्। द्वयशीत्युत्तरोनविंशशततमे (१९८२) ई० वर्षेऽनेन स्नातकपरीक्षा प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्णा। चतुरशीत्युत्तरोनविंशशततमे (१९८४) ई० वर्षे परास्नातकपरीक्षायां भवता विश्वविद्यालये प्रथमं स्थानं स्वर्णपदकेन सह लब्धम्। पञ्चाशीत्युत्तरोनविंशशततमे (१९८५) ई० वर्षे राष्ट्रियपात्रतापरीक्षा (नेट) कनिष्ठशोधाध्येतृरूपेण (जे०आर०एफ०) भवता समुत्तीर्णा। लखनऊ-विश्वविद्यालयादेव षडशीत्युत्तरोनविंशशततमे (१९८६) ई० वर्षे साहित्याचार्योपाधिः प्राप्तः प्रथमस्थानं च तत्रापि लब्धम्। ततो नवत्युत्तरोनविंशशततमे (१९९०) ई० वर्षे लखनऊविश्वविद्यालयादेव ''श्रीमद्भार्गवोपपुराणम्–अध्ययनं सम्पादनं च'' इतिविषयमवलम्ब्य स्वकीयाशोधकृतिर्गुरुवरस्य प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागस्य निर्देशने शोधकार्यं सम्पूर्य पी–एच्.डी. उपाधिरधिगतः। उच्चशिक्षाक्रमे श्रीबृजेशशुक्लमहाभागः २००३ वर्षे' 'श्रीबालकृष्णभट्टप्रणीत अलङ्कारसारसमीक्षण तथा पाठालोचनात्मक सम्पादन'' इति विषयमवलम्ब्य प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागस्य निर्देशने शोधकार्यं सम्पाद्य डी०लिट्० उपाधिं प्राप्तवान्, पश्चाच्च ज्योतिर्विज्ञानविषयेऽपि प्रो० अशोककुमारकालियामहाभागस्य निर्देशने एव २००६ वर्षे ''ज्योतिर्विज्ञानसन्दर्भसमालोचनिका'' इति विषयमालम्ब्य डी०लिट्० उपाधिं प्राप्तवान्।

अयमाचार्यप्रवरः नवाशीत्युत्तरोनविंशशततम (१९८९) ई० वर्षात् जयनारायणस्नातकोत्तरमहाविद्यालयेऽध्यापनकार्यं प्रारभत, अनन्तरं च सः लखनऊविश्वविद्यालये एवाध्यापनकार्यरतोऽभवत्, अथ च आजीवनमत्रैव सोत्कर्षं साहित्यिकीं प्राशासनिकीं सेवां सातत्येनादात्।

गार्हस्थ्यजीवनम्– आचार्यशुक्लमहाभागस्य विवाहो बाल्यावस्थायामेव (द्वादशवर्षीयावस्थायाम्) चतुसप्तत्युत्तरोनविंशशततमे (१९७४) ई० वर्षे बाराबंकीजनपदीय–माधोपुरग्रामवास्तव्य–सुश्रीशान्तीदेव्या सह समपद्यत। अस्य शुक्लमहाभागस्य श्रुतिस्वस्तिसञ्ज्ञे द्वे पुत्र्यौ, वेङ्कटललितसञ्ज्ञश्चैकः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुत्र इति तिस्रः सन्ततयः सन्ति।

आचार्यशुक्लस्य शिष्यपरम्परा

पद्मश्रीसमुल्लसिताचार्यशुक्लमहोदयस्य शिष्यपरम्पराप्यतिशयेन समृद्धास्ति। आचार्यप्रयागनारायणमिश्रमहाभागः समन्वयकः संस्कृत–प्राकृतभाषाविभागः, लखनऊविश्वविद्यालयः अस्याःगुरु–शिष्यपरम्परायाः अतीवसुन्दरमुदाहरणमस्ति। अस्यां शिष्यपरम्परायाम् अग्रे तेषां नामान्युद्ध्रियन्ते यैराचार्यप्रवरस्य कुशलनिर्देशने शोधोपाधिः प्राप्तः,एषु केचन शिष्याः यथा–संस्कृतामिश्रा, शशिसिंहः, अनिलकुमारसिंह, निधिमोहनकटियारादयः सम्प्रति प्रशासनिकपदेषु कार्यरताः सन्ति। केचन विविध–विश्वविद्यालय– महाविद्यालय– माध्यमिकविद्यालयादिषु सेवारताः सन्ति। तेषां नामविवरणमग्रेलिखितमस्ति डा० अनिलपोरवालः, सहायकाचार्यो ज्योतिर्विज्ञानविभागे लखनऊविश्वविद्यालये, डा० विपिनकुमारः, सहायकाचार्यो ज्योतिर्विज्ञानविभागे, डा० वर्षादीपकः सहायकाचार्या ज्योतिर्विज्ञानविभागे, लखनऊविश्वविद्यालये, डा० भुवनेश्वरीभारद्वाजः–सहायकाचार्या–संस्कृतविभागे लखनऊ विश्वविद्यालये, डा० चन्द्रश्रीपाण्डेयः–केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयलखनऊपरिसरे, डा० सरोजशुक्लः–संस्कृतप्रवक्ता माध्यमिकविद्यालये, डा० प्रज्ञा बाजपेयी संस्कृतसहायक–प्राध्यापिका माध्यमिकविद्यालये, डा० मनिरामशर्मा संस्कृतसहायकप्राध्यापकः माध्यमिकविद्यालये विराजन्ते एवमस्यगुरुवर्यस्य अनेकशिष्याः स्व–स्वक्षेत्रे सेवारताः सन्ति। एतदरिक्तं तादृशः अपि शिष्याः सन्ति येषां सेवाक्षेत्राणित्वहं न जानामि किन्तु तेषां निष्ठा आचार्यशुक्लमहोदयं प्रति सर्वदासीत्, यथा–रेखा शुक्ला, अन्नपूर्णा, रीना, निवेदिता, सरिता, उषा, सीमा, सुषमा, रेखरानी, आभा, शालिनी मिश्रा, योगेशः, अपर्णा, अर्चना नीलमपाण्डेयः अरुणिमा, शोभादेवी, लबली, सुधा, मंजू, मिलनः, रचना, प्रेमलता, अर्चनादीक्षितः, अंजू, प्रियतमा, नमनप्रतापः, श्रीनिवासः, प्रतीक्षा, नीतिमिश्रा, पूनम, वन्दना, प्रतिभा शुक्ला, शोभा शुक्ला, सपना, मृदुला, सुनीता, शेषमणिः, सञ्जूलता, किरण, नेहा खरे, कविता राठौरः, शिवविलासः, आकांक्षा, धीरेन्द्रः, प्रज्ञापाण्डेयः, सीमा, नम्रता, रीतेशः, शिवेन्द्रः, रविशंकरः, अभिनवः, शची, गिरिजाशंकरः, शिखा, अवनीशः, ऋचा, दीप्तिः, योगिता, रुचिः, अनुपमदेवी, श्रद्धा, प्रेरणा, सूर्यप्रकाशः, संगीता,

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिवा, श्वेता, दीपिका प्रभृतयोऽनेके शिष्याः अस्याः गुरुशिष्यपरम्परायाः सुन्दराणि उदाहरणानि सन्ति।

विदेशयात्रा

आचार्यो बृजेशशुक्लः पञ्चदशोत्तरे द्विसहस्रतमे वर्षे (२०१५) थाइलैण्डदेशे सम्पन्ने षोडशे विश्वसंस्कृतसम्मेलने शोधपत्रप्रस्तुतिपूर्वकं सहभागार्थं थाइलैण्डयात्रामकरोत्।

पुरस्कारसम्मानञ्च

आचार्यो बृजेशशुक्लः संस्कृतसेवायाः कृते हिन्दीसाहित्यसम्मेलने प्रयागे चतुर्दशोत्तरे द्विसहस्रतमेवर्षे (२०१४) **'संस्कृतमहामहोपाध्याय'** सम्मानमलभत्। ऊनविंशोत्तरं द्विसहस्रतमवर्षे (२०१६) बृजेशशुक्लमहाभागः संस्कृतसेवायाः कृते राष्ट्रपतिप्रदत्तं **'पद्मश्री'** सम्मानमलभत्। एतदरिक्तं शुक्लमहाभागोऽसौ दैवज्ञश्रीसम्मानं (१९९०), संस्कृत साहित्यपुरस्कारं (१९९४, १९९५, १९९६, २००३, २०१४)– प्रतापनारायणमिश्रस्मृतिपुरस्कारम् (१९९५)–आचार्यशङ्करपुरस्कारं (१९९५)–नामितव्यासपुरस्कारं (१९९८)-रामकृष्णान्ताराष्ट्रियसंस्कृतसम्मानं (२००१)– ज्योतिभूषणसम्मानं (२००३)-सुभद्राकुमारीचौहानजन्मशताब्दसम्मानं (२००४)–विशेषपुरस्कारं (२००६, २००७, २०१०)– शिक्षकश्रीसम्मानं (२०१०)– ज्योतिषविभूषणोपाधि (२०१०)–विक्रमकालिदासपुरस्कारं (२०११)–विशिष्टपुरस्कारं (२०११)-सरस्वतीसम्मानं (२०१२)–शिरमौरसम्मानं (२०१७) सम्प्राप्य विंशाधिकान् सम्मानपुरस्कारान् सम्प्राप्य बहुशश्चान्यैरनेकसम्मानैः सः सम्मानितोऽभिनन्दितश्च जातः।

आचार्यशुक्लमहाभागस्य साहित्यिकमवदानम्

पद्मश्रीविभूषितः आचार्यशुक्लमहाभागः संस्कृतवाङ्मयस्य यां वन्दनीयां साहित्यिकसेवां व्यदधात् तदर्थमेष शुक्लमहाभागः संस्कृतजगति सदैवसम्मानास्पदः चिरस्मरणीयः श्रद्धेयश्चास्ति। **कृदन्तसूत्रावलीति** रचनयाऽऽरभ्य तस्य सारस्वतसाधनाऽनवरतं जीवनावधिपर्यन्तम् अव्यवहितं प्रवर्तमानाऽजायत। साहित्यसाधनाक्षेत्रे तस्य चतुर्विंशतिकृतयः विविधप्रकाशनसंस्थानैः प्रकाशिताः सन्ति। आसु रचनास्वखिल भारतीयसंस्कृतपरिषदा प्रकाशिताः **श्रीमद्भार्गवोपपुराणम्,**

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अलङ्कारमञ्जरी, ध्वनिगाथापञ्चिकेति ग्रन्थाः प्रमुखाः सन्ति। वाराणसीस्थचौखम्भासुरभारतीप्रकाशनेन प्रकाशितं **'शुकजातम्'**, दिल्लीस्थनागप्रकाशनेन **'श्रीमद्भार्गवोपपुराणम्अध्ययनं'** सम्पादनम् च', **'कर्मकौमुदी', 'आद्युपपुराणम्', 'श्रीबालकृष्णभट्टप्रणीतम्अलङ्कारसारसमीक्षणम्', 'वाङ्मयशेमुषी', 'सुरगवीसमालोचनिका'** च, प्रतिभाप्रकाशनेन प्रकाशिता **'ज्योतिर्विज्ञानसन्दर्भ–समालोचनिका'**, हायनरत्नम् वाराणसीस्थकृष्णदास– अकादम्या **'उड्डामरेश्वरतन्त्रम्'** लखनऊप्रकाशनकेन्द्रेण **'मध्यसिद्धान्तकौमुदी'** तेजकुमारबुकडिपो–लखनऊकेन्द्रेण **'शाङ्र्गधरसंहिता', 'अष्टावक्रगीता'**, सम्पूर्णानन्दसंस्कृत विश्वविद्यालयेन **'अलङ्कारसारः** 'न्यूरायलबुकडिपोलखनऊकेन्द्रेण **'सिद्धान्तशिरोमणिः (गणिताध्यायः)'**, सत्यम पब्लिशिंग हाउस देलहीकेन्द्रेण प्रकाशिता **'गुञ्जनमञ्जीरम्' (स्वरचितगीतसङ्ग्रहः), 'श्रुतिमञ्जरी' (स्वरचितकवितासङ्ग्रहः)** च, **'श्रीप्रियलालजनकशतकम्' (खण्डकाव्यम्)** इति प्रमुखग्रन्थाः सन्ति। एतदतिरिक्तं **'वेदाङ्गज्योतिषम्', 'वाल्मीकिरामायणम्– एकपरिचयः', 'वराहपुराणम्', 'भार्गवपुराणम्', 'पुराणेषु नैमिषारण्यम्', 'श्रीमद्भागवतमहापुराणतत्त्वविमर्शः', 'संस्कृतवाङ्मये मानवाधिकारः'** प्रभृतिनां विविध विषयसम्बद्धग्रन्थानां लेखनं सम्पदानञ्चाऽकरोत्। एतदतिरिक्तं सः पाठ्यक्रमाधारितपुस्तकानामपि रचनाम करोत्। येषु **'संस्कृत महाकाव्य सन्दर्भ सङ्ग्रह'–'काव्यशोभा'–'वृत्तसङ्ग्रह'– 'श्रुतिप्रभा'– 'कविलोचनिका'–'नवरूपक– 'कुमारसम्भवम् (पञ्चमसर्गः)। इत्यादीनि** 'पुस्तकानि सन्ति। अथ च सम्प्रति शुक्लमहाभागस्य नैके ग्रन्थाः प्रकाशनाधीनाः अपि सन्ति, येषु **'पाराशर्यधर्मशास्त्रम्', 'श्री गुरुचरितमतल्लिका', 'पाशुपततन्त्रम्–समीक्षात्मकं सम्पादनम्', 'बृजेशयशोभूषणम्' (अभिनवकाव्यशास्त्रम्)** इति ग्रन्थाः प्रमुखाः सन्ति।

ग्रन्थरचनातिरिक्तमाचार्यशुक्लप्रणीतम् अनके कविता–कथानिका –समीक्षात्मकसाहित्यमपि प्रतिष्ठितपत्र–पत्रिकादिषु प्रकाशितमस्ति। तत्प्रणीतकवितासु– 'श्रमिकोऽहंश्रमिकोऽहम्', 'माडर्न पतिव्रता प्रश्नोत्तरविनोदः', 'पश्य सखि! भ्रमति मनो भ्रमरो मम', 'मधुमयभारतम्', 'वाणी

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पञ्चकम्', 'मीनानां नैराश्यदीपम्', 'यौतकप्रथा', 'नमामि तं यौतकसिंहराज्यम्', 'वाणी वन्दना', 'अवन्तीबाला', 'श्रीसत्यव्रताष्टकम्', 'सरस्वतीदशकम्', 'लसितघनमालो विजयते', 'गुर्वाष्टकम्', 'भारतमाता ग्रामवासिनी', 'श्री हर्षनारायणाटकम्', 'शोभरगीतम्' इति प्रमुख कविताः सन्ति। एवमेव– 'प्रियतमेऽनुकूले तु यौतकः किं करिष्यति'', 'रिक्तः कलशः', 'शैथिल्यं गतं रक्षाबन्धनम्', 'नैव यूकस्तु कर्णेषु नो रिङ्गति', 'प्रो० अशोककालिया का जीवनदर्शन', 'किं किं न कृतं किं किं न धृतम्', 'प्रत्तं न केनचिद् अवन्तीं प्रति', 'जीव्याद् वर्षशतं प्रभो! कुलपतिर्विद्वांश्च वाचस्पतिः', 'यत्र नीता सखेः! मे प्रिया दिवसाः जगदम्बाप्रसादसिनहाषष्टिः, हरिकृष्णावस्थिषष्टिः, 'प्रभृति पञ्चपञ्चाशताधिकैः काव्यैः कथानिकाभिः समीक्षाभिश्च सः स्वकीय प्रतिभायाः दृढप्रभावमस्थापयत्।

आचार्यशुक्लोऽनेकशोधपत्रिकाणां सम्पादनमकरोत्, शोधपत्राणां समीक्षामप्यलिखत्। वाङ्मयी, शोधधारा, संस्कृतवाङ्मयी, अजस्रा प्रभृतिशोध पत्रिकाणां सम्पादनमकरोत् तथा संस्कृतं विज्ञानं च, त्रिदिवसीयराष्ट्रियपुराण सङ्गोष्ठी श्रीमदभिनवगुप्तस्य शास्त्रीयमवदानम्, भारतीय संस्कृति और संस्कार आधुनिक परिप्रेक्ष्य में, राष्ट्रिय संगोष्ठी वेद–वेदांग–ज्योतिषादिशु आदि राष्ट्रियसङ्गोष्ठीनांशोधपत्रसारांशिकाः सुष्ठु समपादि शुक्लमहाभागेन। तस्य शताधिक शोधपत्राणि विविध प्रतिष्ठितपत्रपत्रिकासु प्रकाशितानि सन्ति। सर्वेषां शोधपत्राणां विवरणमत्र विस्तार भयान्नहि दातुं शक्यमस्ति। एषु शोधपत्रेषु 'ओंकारकास्वरूप' नामकं शोधपत्रं दिल्लीस्थविश्वकल्याणपरिषदा १९९६ ई० वर्षे फरवरी मासे पुरस्कृतमभूत्। पद्मश्री विभूषितेनाचार्य शुक्ल वर्येण देशस्य विभिन्नविश्वविद्यालयेषु महाविद्यालयेषु विविधसम्मेलनषु प्रदत्तव्याख्यानानि प्रकाशितान्यपि सन्ति। आचार्यशुक्लमहाभागः चतुराशीत्यधिकराष्ट्रिय सङ्गोष्ठीषु तथा च विंशत्याधिकान्ताराष्ट्रिय सङ्गोष्ठीषु प्रतिभागं कृत्वा शोधपत्राणां वाचनमकरोत्।

आचार्यशुक्लमहाभागस्य प्राशासनिकोपलब्धयः

एष स्वनामधन्यो यशस्वीविद्वान् आचार्यशुक्लमहाभागो न केवलं साहित्यिकप्रतिभायाः एव समृद्धो विबुध आसीदपितु तस्य प्राशासनिकी क्षमताप्यद्भुतैवासीत्। भौतिकजीवनस्य अन्तिमक्षणेष्वपि स लखनऊ

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विश्वविद्यालयीयकलासङ्कायस्याधिष्ठाताऽऽसीत्। अस्यैव विश्वविद्यालयस्य संस्कृत– प्राच्यभाषाविभागयोर्विभागाध्यक्षरूपेणापि कार्यं कुर्वाणः आसीत्। अथ च ज्योतिर्विज्ञानविभागस्य समन्वयक आसीत्। अभिनवगुप्त शोधसंस्थानस्य निदेशकरूपेणापि स्वकीय–महनीय–प्राशासनिकसेवया स्वीयप्रतिभागौरवं प्राकाशयत्। एतदरिक्तमनेकवर्षेभ्यो विश्वविद्यालयीयपरीक्षासञ्चालनेन, अनेक पुनश्चर्याकार्यक्रमसंयोजनसहसंयोजनकौशलेनापि सः स्वकीयमद्भुत प्राशासनिकप्रतिभा–वैशिष्ट्यं प्रादर्शयत्। आचार्यशुक्लः स्वकीयोत्कृष्ट प्रतिभाबलेन देशस्य चत्वारिंशाधिकप्रतिष्ठित–शैक्षणिक–प्रशासनिक–समितिषु महत्त्वपूर्णसदस्यतया प्रतिष्ठित आसीत्। आसु समितिषु आल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, वर्ल्ड कांग्रेस आन वैदिक साइंस, अमेरिकन बायोग्राफिकल इन्स्टीट्यूट, रिसर्च बोर्ड आफ एडवाइजर प्रभृति समितयो विशेषतयोल्लेखनीया। देशस्य विविधविश्वविद्यालयानां संस्कृतशोधसमितिषु सदस्यता, अखिलभारतीयसंस्कृतपरिषदोऽपि विभिन्नपदेषु प्रतिष्ठितोऽसौ शुक्लमहाभागोऽस्यमन्त्रिपदे विभूषित आसीत्।

आचार्यशुक्लमहाभागस्य निर्देशने सम्पन्नशोधकार्याणि

सर्वतन्त्रस्वतन्त्रविद्वदवरेण्यबृजेशशुक्लमहाभागस्य निर्देशने एम०फिल्० पी०एच्०डी०, डी० लिट् प्रभृतिशोधोपाधीनां कृते संस्कृते ज्योतिर्विज्ञाने च एकाशीतिः (८१) शोधच्छात्राः स्वीयशोधकार्यं पूर्णतया सम्पादितकृतवन्तः। एषु पञ्चाशच्छोधच्छात्राः पी–एच्०डी० उपाधये, एकच्छात्रा च डी०लिट् उपाधये शोधं कृतवन्तः।

पद्मश्रीशुक्लमहोदयानां उपर्युक्तविवरणं दृष्ट्वा वयं निश्चयरूपेण वक्तुं शक्नुमो यत् सर्वेषु विषयेषु तेषामद्भुतगतिरासीत्। आचार्यबृजेशशुक्ल–महाभागो निश्चयेन सर्वतन्त्रस्वतन्त्रः आचार्य आसीत्। अन्ते केवलं अयमेव कथयितुमिच्छामि यदाचार्यबृजेशशुक्लमहाभागस्य सारस्वतसाधनास्वल्पशब्दैः स्वल्पकालेन वा सर्वथाऽवर्णनीयैव, तथापि स्व ज्ञानानुरूपं स्वल्पविषयमत्या सङ्क्षेपेण वर्णयितुं मया प्रयासः कृतः सोऽपि पूज्यगुरोरेव कृपाप्रसादः। अत्रास्मिन्नालेखे अज्ञानवशाद् यानि कान्यपि स्खलितानि त्रुटिरूपाणि स्युः तदर्थं क्षमाप्रार्थनापूर्वकं श्रीगुरुपादपङ्केरुहेभ्यः सादरं श्रद्धाञ्जलिर्मया निवेद्यते।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीबृजेशाय शुक्लाय पुष्पाञ्जलिः

आचार्यो रहसबिहारी द्विवेदी
(राष्ट्रपति–सम्मानितः)
संस्कृतविभागाध्यक्षचरः
रानीदुर्गावतीविश्वविद्यालयः, जबलपुरम्, म.प्र.

(१)

उत्तरे सत्प्रदेशे हि शुक्लान्वये
यज्जनिर्वारबङ्कीत्रिलोकीपुरे।
यस्य पित्रा स्वनामानुरूपेण वै
श्रीबृजेशो मुदा लालितः पाठितः।।[१]

(२)

लक्ष्मणाख्ये पुरे विश्वविद्यालये
संस्कृते ज्योतिषे ख्यातनामाऽभवत्।
पाठने भाषणे शोधपत्राङ्कने
लोकरीतौ प्रवृत्तौ च सर्वप्रियः।।

(३)

शङ्कराकादमीव्यासशिक्षाश्रिया
राष्ट्रपदमश्रियाऽलङ्कृतश्चादृतः।
स्वीयसङ्कायवर्ये पदे संस्थितः
कौलपत्येऽपि नामाङ्कितो यः श्रुतः।।

---

१. पं० प्यारेलालशुक्लपितरमाश्रित्य प्रियलालजनकशतकमिति काव्यं बृजेशेन व्यलेखि। अस्य काव्यस्य मत्कृता समीक्षा परिशीलनपत्रिकायां प्रकाशिता विद्यते।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(४)

शब्दशास्त्रे ह्यलङ्कारशास्त्रे ततः
तन्त्रशास्त्रे पुराणेऽप्ययं सत्प्रधीः।
काव्यकारश्च गोष्ठ्यादि–संयोजकः
विश्वतोऽयं प्रसिद्धः स्वकर्तृत्वतः।।

(५)

श्रद्धयाऽयं नतो देवगुर्वादिषु
स्तोस्यरूपेण पित्रोर्गुरूणां कृते।
पत्रिकायां तथा ग्रन्थरूपेण वै
काव्यराजिः परा मुद्रिता विद्यते।।

(६)

कालियाऽशोकवर्यस्य शिष्यः प्रधीः
श्रीबृजेशो विनम्रो महापण्डितः।
हन्त! कोरनयोभौ हतौ पण्डितौ
एतयोरात्मशान्त्यै शिवः प्रार्थ्यते।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुरुभावोपहारः

डॉ. चन्द्रश्रीपाण्डेयः
सहायकाचार्या, के.सं. विश्वविद्यालयः
लखनऊपरिसरः, लखनऊ

आचार्यो बृजेशकुमारशुक्ल इति नाम न केवलं संस्कृतक्षेत्रे सुविदितम्–पितु स्नेहस्य आदरस्य सम्मानस्य च प्रतिरूपमस्ति। संस्कृतमातुः सेवायां स्वकीयं समग्रं जीवनं यापितवताम् एतेषां बहुनि बहुमुखानि च वैशिष्ट्यानि विलसन्ति। स्वनाम्नः सार्थक्यं सम्पादयन्तः इमे संस्कृतकुलस्य विशिष्टाः सन्तः रघुकुलपुरोधा इव संस्कृतकुलस्य सन्मार्गोपदेशने सत्कल्याण–सम्पादने अनवरतं सङ्गताः विराजन्ते। महर्षेः इव एतेषामपि शिष्यसम्पत्तिः अतिप्रसृताः महीयसी चकास्ति। स्वकीयेन सरलस्वभावेन इतरसंश्लेषेण गुणेन च संस्कृतक्षेत्रे अजात्रशत्रवः इमे आसन्। वैदुष्यस्य प्रतिमानमिमे सततपरिश्रमस्य, सम्भूय कार्यकारितायाश्च प्रथमोदाहरणं भूता इमे, यत्र यत्र कार्यं कुर्वन् तत्र सर्वत्र स्वीयां शाश्वतिकसम्प्रतिष्ठां रचयामासुः।

छात्रैः, सहाध्यापकैः, सहकर्मिभिः उच्चतमाधिकारिभिः इत्येवं सर्वैरेव स्वसम्बद्धैः जनैः सत्सम्बन्धप्रतिष्ठापने, आत्मीयतायाः अनुभावने च निरतिशयसामर्थ्यशालिनः आसन् प्रो० शुक्लवर्याः। सारल्यं मृदुता च एतेषां स्वभावसिद्धो गुणः। समन्वयनं समञ्जनं च एतेषाम् उच्छ्वासनिच्छ्वास्–सदृशौ। मतभेद–कर्मभेदादिपरिहरणं निसर्गसिद्धं कौशलम्। छात्राणां कनीयसां च समुचितमार्गदर्शनं तेषां धर्मः आसीत्– समूहिक–सामाजिक–सांस्कृतिक– कार्यक्रमाणां निर्वहणे इमे सिद्धहस्ताः आसन्।

संस्कृताभ्युदयतात्पर्यवतां विविधकर्मणामनुष्ठाने प्रयोजनापेक्षारहितं सेवासमर्पणम् एतेषां नित्यकर्म आसीत्। स्वयम् अत्यधिक–सङ्ख्याकशिष्याणां गुरवः सन्तोऽपि स्वतो ज्येष्ठेषु विनयभावेन प्रर्वतनाम् अनितरसाधारणं वैशिष्ट्यम्।

संस्कृतसम्बद्धेषु सर्वेष्वऽपि कार्यक्रमेषु त्रिभिरपि करणैर्मनसा वाचा कर्मणा वा। सर्वविधसहायय्करणम् एतेषां प्रथमो धर्म आसीत्। इमे प्रथमदर्शने

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रभावजनने असमर्था एवासन् तथापि स्वकीयकार्यकौशलेन सर्वसमञ्जस्वभावेन महान्तमेवान्तरं प्रभावम् अनुभावयितुं समर्था आसन्। अधिकारिगणस्य अध्यापकगणस्य च मध्ये, छात्राणामध्यापकानां च मध्ये, अलङ्घनीयव्यवधान–साधने सेतुबन्ध इव इमे व्यराजन्त आसन्।

एतैः स्वीय–सच्चरित्रद्वारा अनुशासनात्मकोद्बोधनेन च स्नेहसाम्रज्यं संस्थापितमासीत्। केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालये अनुष्ठीयमानेषु बहुविधेषु उपक्रमेषु एतेषां मार्गदर्शनं सर्वदैव सुलभं सुगमम् अपरिहार्यं च आसीत्। न केवलं लखनऊपरिसरेऽपितु एतेषां मार्गदर्शनं राष्ट्रस्तरेषु विविधेषु प्रान्तेषु संस्कृतकार्यसाधयन्तीभिः बहुभिः संस्थाभिः आचार्यशुक्लमहोदयानां विविधाः सेवाः विविधं च मार्गदर्शनं प्राप्तमासीत्। विद्यया वैदुष्येण विनयेन चरित्रेण कर्मयोगनिष्ठ्या परिपूर्णा इमे महामहिम्नः पद्मश्री, राष्ट्रपतेः एवं अन्यैः विविधपुरस्कारैरभिनन्दन–भाजनञ्जाता इत्यत्र नास्ति सन्देहलेशः।

भगवान् विश्वनाथः एतेभ्यः सपरिवारेभ्यः परिपूर्णमारोग्यमायुष्यमैश्वर्यं च अनुगृहणात्विति सर्वशक्तं भगवन्तं विश्नाथं प्रार्थये।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विनम्र–श्रद्धाञ्जलिः

डा० चित्रा श्रीवास्तवः
ज्योतिषविभागः, के.सं.वि.वि.,
लखनऊपरिसरः, लखनऊ

सहृदयहृदयाह्लदकः सरसकविताकामिनीकान्तः, सुरभारती समुपासकः ''पद्मश्री–विभूषितः श्रीबृजेशकुमारशुक्ल'' महोदयः कस्य श्रुतिपन्थः नायातः। अर्थात् सर्वेऽपि ज्ञानपिपासवः तेन ज्ञानेन सिक्तधारायाः आप्ततुष्टयो भवन्ति स्म।

संस्कृतसाहित्यकाशे स एव एको दैदिप्यमान् नक्षत्र इव प्रतिभाति। लखनऊविश्वविद्यालये तेन नैकानि पदान्यलङ्कृतानि। सः संस्कृतस्य प्राकृतभाषायाश्च प्रकाण्डपण्डितः आसीत्, येन भिन्नभिन्नभाषायां अनेकाः रचनाः कृताः। सः ज्योतषशास्त्रस्य अपिः आसीत् मर्मज्ञः। स्वज्ञानेन प्रतिस्पर्धायां, संगोष्ठ्यां मम संस्कृत विश्वविद्यालये आगत्य ज्यतिषशास्त्रस्य अन्तर्गते व्यवहारिकज्ञानस्य प्रतिष्ठा कृतवान्। सः स्वज्ञानेन अस्मान् अभिभूतं कृतवान्। मम अति सौभाग्यः यत् तेन व्याख्यानेन ज्योतिषशास्त्रस्य नैकानि रहस्यानि अधिगतानि। अहम् एका ज्योतिषशास्त्रस्य शोधछात्रा या संस्कृतविश्वविद्यालये लखनऊपरिसरे शोधकार्यं कृतवाती, तदैव यस्य ज्योतिषास्त्रस्य व्याख्यानेन ज्योतिषस्य सूक्ष्मतां ज्ञातुं समर्थाऽभवम् सः केवलं बृजेशशुक्लः एव आसीत्।

संस्कृतानुरागिणां मध्ये तस्य स्थानं सदैव अविस्मरणीयम् यद्यपि कालवशात् सः अद्य अस्माकं मध्ये न विद्यमानः, तथापि स्वव्याख्यानेन, स्वज्ञानेन सः सदैव अविस्मरणीयः। संस्कृतानुरागिणः सदैव तस्य ज्ञानस्य प्रकाशपुञ्जस्य स्मरणं करिष्यन्ति। संस्कृतसाहित्याकाशे सः सदैव ज्ञानसूर्य इव अस्मान् प्रकाशयिष्यति इति मत्वा प्रणतिततिर्निवेद्यते।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भावाञ्जलिः
(ममानुजाय डॉ० बृजेशकुमारशुक्लवर्याय)

प्रो० ओम्प्रकाशपाण्डेयः
अध्यक्षचरः, संस्कृतविभागः
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

ममानुजः शुक्लकुले प्रसूतो बृजेशसञ्ज्ञश्च कुमारकल्पः।[1]
बभूव, ग्रस्तोऽपि च सार्धमेव[2] कोरोनयाऽऽचार्यपदे नियुक्तः।।१।।

गुरोः कृपां प्राप्य तथा श्रमेण समुन्नतोऽभूदयमत्र क्षिप्रम्।
अलब्धवैदग्ध्यमसौ विपश्चिद् यशोऽपि ह्यल्पायुषि शीघ्रमेव।।२।।

पुराणवेत्ता सुकविर्ग्रहज्ञः स कर्मकाण्डेऽपि बभूव दक्षः।
अवाप सौमित्रपुरे सुकीर्तिं समादरञ्चैव पदप्रतिष्ठाम्।।३।।

स प्राप लोकप्रियतामनल्पां विधाय दैवज्ञकथामनन्ताम्।
विचारयन् भाग्यदशाञ्जनानामनन्यक्षेत्रप्रियतामवाप।।४।।

लिलेख ग्रन्थानपि शोधलेखान् सुशिक्षकोऽसौ नितरां मनस्वी।
पपाठ पत्राणि च पण्डितनां प्रकृष्टगोष्ठीषु समाह्वयेषु।।५।।

ललाटलेखां लिखितां विधात्रा परं निजां वेत्ति न कोऽपि विद्वान्।
भवेदसौ शुक्र–बृहस्पतिर्वा महाग्रहज्ञो भुवि दैवद्रष्टा।।६।।

निरीक्ष्य सर्वान् पुरुष–प्रयत्नान् समुद्यमाँश्चैव विचारयामः।
बलीयसीयं नियतिर्विचित्रा, न यत्नराशिर्न च कीर्तिराशिः।।७।।

ममानुजो भाग्यवशात् तदित्थं दिवङ्गतोऽल्पायुषि ह्येव, मन्ये।
लभेत शान्तिं सुतरां तदात्मा, कुटुम्बिनोऽप्यस्य शर्म लभेरन्।।८।।

***

---

१. कुमारकल्पः–कार्तिकेयसमः
२. आचार्यकालियासमकालमेव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद्मश्री–आचार्यबृजेशकुमारशुक्लगुरूणामेकं संस्मरणम्

दिव्या श्रीवास्तवः
शोधच्छात्रा
संस्कृतविभागः, ल.वि.वि., लखनऊ

यदा वयं संस्कृतजगतः चर्चां कुर्मः तत्राऽस्माकं समक्षे एकं व्यापकक्षेत्रमुपस्थितं भवति। यस्मिन् साहित्य–नाट्य–ज्योतिष–वेद–इत्यादयाः नैकाः विस्तृतविद्याः सम्मिलितास्सन्ति। समेषामपि पृथक्–पृथग् विद्वांसः स्वस्वक्षेत्रे वैदुष्यं प्रसारयन्तः सन्ति। किन्त्वेतेषां समष्टिरुपेण संस्कृतजगतः समस्तविषयाणां समस्तविद्यानाञ्चोपरि समानाधिकारमस्ति। संस्कृतरूपीकानने विचरन् काननमलङ्कुर्वाणानां सिंह इव सर्वश्रेष्ठानां सर्वोत्कृष्टमूर्धन्यविदुषां पद्मश्री **बृजेशकुमारशुक्लगुरूणां** विषये को न जानाति? यैः स्वविद्वत्तायाः प्रकाशेन संस्कृतजगदेतत् पुष्पितं पल्लवितञ्च।

परोपकारस्य प्रतिमूर्तिस्वरूपाणां संस्कृतमातुः अहर्निशं सेवां कुर्वाणानां विद्वन्मूर्तिस्वरूपाणां आदरणीयगुरूणां परिचयः स्नातककक्षायां तैः प्रकाशितपुस्तकैः प्राप्तः। तेषु पुस्तकेषु मया तेषां जीवनपरिचयः उपलब्धयः वैदुष्यपरिचयश्च प्राप्ताः। प्रारम्भत एवाहं तैः प्रभाविता अभवम्। मुख्यरुपेण **'कविलोचनिका'** पुस्तके प्रकाशिता **''जयतु मम स्वातन्त्र्यसरणिः''** रचना सर्वाधिकप्रियासीत्। अतस्तेषां रचना माध्यमेन मे मनसि तेषाम्प्रति भक्तिः जागृता।

गुरुभक्तेः वास्तविको भावः मम मस्तिष्के तेषां माध्यमेनैवाभवत्। तेषां साक्षात्कारो भविष्यतीति मया नैव विचारितम्। मत्कृते त ईश्वरसदृशाः, येषां केवलं स्वरूपकल्पना एव कर्तुं शक्यते, वन्दनम् अर्चनञ्च कर्त्तुं शक्यते। तेषां दर्शनं कुत्र कदा कस्मिन् स्वरूपे भविष्यतीति ज्ञातुं न शक्नुमः।

मया इदमनुमानं न कृतं यद् ईश्वरेण सम्बन्धेऽस्मिन् मम भाग्यं स्वर्णलेखन्या लिखितम्। ईश्वरकृपया ८ जुलाई २०१६ तमे वर्षे मज्जन्मदिनस्यैव दिने मया लखनऊविश्वविद्यालये प्रवेशः प्राप्तः। एषा घटना

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मत्कृते स्वप्नसदृशासीत्।

कक्षायाः प्रारम्भः जातः। शनैः शनैः गुरुभिस्साकं मत्परिचयोऽभूत्। एतादृशानां संस्कृतानुरागिणां विदुषां सङ्गतिः पूर्वं न प्राप्ता। यदाऽस्माभिः समय–सारणी प्राप्ता तथा अन्ये छात्रास्समयसारणीं न दृष्टवन्तः तत्र मद्दृष्टिः एकत्र स्थिराभवत् तत्र लिखितमासीत्–काव्यप्रकाशः प्रो. बृजेशकुमारशुक्लः इति। विश्वासो नाभवत् यदद्य गुरूणां सान्निध्ये विद्याग्रहणस्यावसरप्राप्तिः भविष्यति। वारं वारमस्य क्षणस्य वास्तविकतायां सन्देहो अभवत्। उत्सुकतावशाद् रात्रिपर्यन्तं निद्राविरहोऽप्यभवत्।

अन्ततः स दिवसः समागतः यदा मया देवतुल्यगुरूणां प्रथमदर्शनस्याऽवर्णनीयसौभाग्यः संप्राप्तः। गुरुभिः कक्षायां प्रविश्य स्वपरिचयः प्रत्तः। तेषां भावपूर्णं व्यक्तित्वं श्रुत्वा मम मस्तिष्के या स्थितिरभूद् तत् मम लेखन्या वर्णयितुम् अशक्यमेव। अनन्तरं गुरुभिः समेऽपि छात्राः स्वपरिचयं प्रदातुं सम्प्रेरिताः। तस्यां पङ्क्तौ यदा ममावसरः आगतः तदा मे मनसि कथनीयमधिकम् आसीत् किन्तु मे वाणीः स्तब्धाऽभवत् भावातिरेकेण सम्भ्रमावस्थायामहं स्तब्धाङ्गता। यदा गुरुवर्यैः उक्तं कोऽपि समस्यास्ति किम्? तदा मया महत्साहसेन मम परिचयः प्रदत्तः। तस्मिन् समये मम प्रसन्नतायाः सीमा नासीत्। एतादृशी प्रतीतिरभवद् यथा स्वयमीश्वरः मूर्तिमत्स्वरूपेण मत्समक्षमुपस्थितो भूत्वा वार्तालापं कृतवान्। यदा तैः विषयारम्भः कृतः ते पुस्तकमदृष्ट्वैवापाठयन्। मध्ये शास्त्रचर्चामप्यकुर्वन्। तेषां कण्ठे मन्ये सरस्वती विराजमाना आसीत्। तेषां वैदुष्यसागरैराप्लाविताऽहं प्रतिदिनं नूतनं ज्ञानं प्राप्तवती।

अस्मिन् क्रमे मया तेषां नैकेषां प्रणयनानामध्ययनमपि कृतम्। तेषामनेकवैदुष्यपूर्णानां व्याख्यानानां श्रवणस्याऽवसरोऽपि प्राप्तः। तस्मिन् समये परमानन्दप्राप्तिरभूत्। यदा कदा स्वसौभाग्यस्योपरि गर्वानुभूतिरप्यभवत्। गुरोः सान्निध्ये व्यतीतानां ज्ञानपूर्णक्षणानां, तेषां सरलतया पितृतुल्यस्नेहस्य गुणोत्कृष्टतायाः संस्कृतानुरागितायाश्च वर्णनं सीमितशब्देषु न कर्तुं शक्यते इत्यत्र नातिशयोक्तिः। मया यज्ज्ञानमर्जितं तस्य कृतेऽहं सदैव तेषां ऋणी अस्मि।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विश्वविख्याता अपि भूत्वा ते फलसंयुक्तवृक्षमिवावस्थिताः। तेषां स्वभावोऽतीव निर्मल आसीत्। तेषां सान्निध्ये यानि क्षणान्यतीतानि तानि स्वर्णिमक्षणान्येव। अद्यापि तेषां स्मरणेन तानि सर्वाणि चित्राणि मत्समक्षमुपस्थितानि भवन्ति। मया गुरोः सान्निध्ये शोधावसरः प्राप्तः। तैः स्वशोधार्थीनां पङ्क्तौ मां सम्मेल्य महती कृपा कृता। अहं सदैव विधातुः कोटिशः धन्यवादान् निवेदयामि। यत्तेषाम्प्रसादेन गुरुसदृशैः महद्विभूतिभिः सह मेलनं विहितं मज्जीवनञ्च कृतार्थताङ्गतम्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रो. बृजेशकुमारशुक्लमहाभागानां दिव्यस्मरणम्

माण्डवी त्रिपाठी
शोधच्छात्रा
संस्कृतविभागः, ल०वि०वि०, लखनऊ

समयः परिवर्तते प्रतिवर्षं कोऽपि नूतनो मिलति कुत्रचित् केचन चिराय वियुक्ता भवन्ति सर्वस्मात्। एतानि कथनानि सत्यं प्रतिभान्ति यदा नववर्षस्य प्रतिस्पन्दनेन साकं वर्षमेकं व्ययति तद् व्ययमानेन वर्षेण सह केचन मुखाः पश्चिमं संस्थिताः जायन्ते न ते कदापि पुनः आगच्छन्ति परन्तु अतीतस्य कालस्य स्वर्णस्मृतिषु देदीप्यामानाः दृश्यन्ते। ईदृशानि कानिचिन् नामानि सुपरिचिताः मुखाश्च गतवर्षेऽपि अस्मान् संत्यज्य गतवन्तः।

संस्कृतजगतो मूर्धन्यविद्वांसो धर्मशास्त्रज्ञाः ज्योतिर्विदः संस्कृत-साहित्यनिष्णाताः लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयस्य कलासङ्कायस्य अधिष्ठातारः पद्मश्रियाऽलङ्कृताः प्रो. बृजेशकुमारशुक्लमहाभागाः तेषां निधनं ०६ अप्रैल २०२१ इति दिनांङ्के कोरोणाकारणात् जातम्। कृत्रिमतायाः दिशि उन्मुखे लेखनजगति माननीयशुक्लवर्याणां गते सति अवभासते यत् तेन साकं एकस्य युगस्य अवसानम् अभवत्। २०१६ तमे वर्षे पद्मश्रीपुरस्कारेण विभूषितानां प्रो. शुक्लवर्याणां संस्कृतभाषायां विशेषाधिकार आसीत्। एवञ्च काव्यजगति संस्कृत-प्राकृत-आङ्ग्ल-भाषायां प्रभावीलेखन-काव्यरचनार्थं लोके प्राथिता आसन्। उत्तरप्रदेशे बाराबङ्कीजनपदस्य त्रिलोकपुरग्रामाद् आरभ्य लक्ष्मणपुरविश्वविद्यालयस्य कलासङ्कायस्य अधिष्ठातृरूपेण संस्कृतजगति गणमान्यकवीनां मध्ये सम्मानितस्थानप्राप्तिपर्यन्तं शुक्लवर्याः सातत्यपरिश्रमेण सत्यनिष्ठया च देव्याः सरस्वत्याः सेवां कृतवन्तः। तेषां काव्येषु गज्जलिकासु "हृदि त्वं राजसे कलिके!" एवं अलङ्कारमञ्जरी इत्यादिषु ग्रन्थेषु सुकुमारता स्फुटयति अनन्तरं "मध्यसिद्धान्तकौमुदी" एवं "कृदन्तसूत्रावली" इत्यादिषु क्लिष्टव्याकरणिकग्रन्थेषु प्रौढ़तां प्रथयति।

शताधिकाः शोधपत्र-पत्रिकाश्च प्रकाशिताः सन्ति। प्रो. शुक्लवर्यै रत्यन्तकुशलतया पाण्डुलिपिरूपाणि नैकानि तालपत्राणि अपि सम्पादितानि

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सन्ति। तेषां कविताः छन्दोबद्धाः तथा च गज्जलिकाशैल्यामपि प्राप्यन्ते। प्राचीनं वा अर्वाचीनं वा सर्वेषु विषयेषु प्रो. शुक्लवर्यैः भावानां संयोजनं शब्दचयनञ्च अर्थावबोधदृष्ट्याऽकारि।

विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।।

एतादृशा एव अस्माकं गुरवः प्रो० शुक्लवर्याः सर्वत्र सर्वपूज्या आसन्। न केवलं ते धर्मनीतीनां कुशलज्ञातार आसन्। स्थाने स्थाने वेद–उपनिषदादिग्रन्थानां सुभाषितोद्धरणेन सर्वान् कर्मिणः विद्यार्थिनश्च प्रेरितवन्तः। विभागे कार्यरतेभ्यः कर्मचारिभ्य आरभ्य अन्यविभागीयैः आचार्यैः साकं मित्रवद् आचरणं शुक्लवर्याणां प्रखरव्यक्तित्वस्य सहजस्वभावस्य च परिचायक आसीत्। प्रो. शुक्लसदृशान् प्रज्ञान् अतिरिच्य न्यूनशब्देषु गूढ़तम–उपदेशानां प्रतिपादनं कर्तुं नार्हन्ति सामान्यजनाः।

संस्कृते वा हिन्द्यां वा यस्यामपि भाषायां वक्तव्यं दातुं ते यदा आरभन्ते स्म सा तेषां मातृभाषा इव अवभासते स्म। छात्राणां "प्रियः" एवं तान् सदैव उन्नयनार्थ प्रेरणादायकाः श्रीमन्तः शुक्लगुरवः वदन्तः आसन् "अत्यन्त व्यस्ततमे कार्यक्रमे सन् अपि विद्यार्थीनां कक्षाः स्वीकर्तु सर्वदा उत्कण्ठोऽहं भवामि इति। त्रयाणां विभागानां कुशलकार्यसम्पादनं नहि सामान्यजनानां कृते सम्भवति। एतत् शुक्लवर्याणां चतुर्मुखीं प्रतिभां द्योतयति। तेषाम् अकालनिधनम् अत्यन्तदुःखदायिका घटना अस्ति। तेषाम् असमयनिधनेन न केवलं संस्कृविभागोऽपितु सम्पूर्ण–विश्वविद्यालयएवाऽनाथोऽभवत्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मम अविस्मरणीयगुरुवरः पद्मश्रीविभूषितः प्रज्ञापुरुषः प्रो० बृजेशकुमारशुक्लः

स्वप्निल–गुप्ता
शोधच्छात्रा, संस्कृतविभागः,
ल.वि.वि., लखनऊ

समाजे द्विविधमनुष्याः भवन्ति, एके तादृशाः ये संस्थामासाद्यौन्नत्यं लभन्ते तथा च अपरे ते येषामागमनेन संस्थाः गौरवान्विताः भवन्ति। गुरुवर्याः प्रो० शुक्लमहोदयाः तेषु आसन् येषामागमनेन न केवलं संस्थायाः गौरववृद्धिर्जाता अपितु संस्था सम्बद्धाः समस्ता अपि जना धन्यधन्याः सञ्जाताः।

भवद्यशोगानं संश्रुत्य मदीयोत्कण्ठा, मदुल्लासश्चानुदिनं भवन्तं साक्षात्कर्तुं वर्धमानौ आस्ताम्। नानाविधाः कल्पनाः मनोमस्तिष्कमध्ये उद्भवन्ति स्म, विश्वविद्यालये प्रवेशानन्तरं मया भवद्दर्शनस्य सौभाग्यं लब्धम्। भवदीयं नैसर्गिकं सारल्यं, भवतो विनम्रता, भावत्कीं तेजस्विताञ्चावलोक्याहं नतमस्तकाभूवम्। भवन्तं प्रति मम हृदये श्रद्धासम्मानौ पराकाष्ठाङ्गगतौ, तावदुच्चपदासीनस्यापि भवतः सारल्येनाहं मन्त्रमुग्धाभवम्। तात्कालिकात् सङ्क्षिप्तपरिचयादपि भवता कक्षायामहमभिज्ञाता, मच्चित्तं भावनाभिरुद्वेलितमभवद् यद् बहुजनैस्सह मेलनात्परमपि भवता मादृशी छात्रा स्मृतिं नीता, अयं मम कृते महद्गर्वस्य विषयः।

मयाऽद्यापि स्मर्यते यद् यदा भवान् अस्माकं प्रथमकक्षायां प्रहेलिका क्रीडामकारयत् तदा भवता इयं प्रहेलिका पृष्टा–

''विद्वान् कीदृग्वचो ब्रूते को रोगी कश्च नास्तिकः।
कस्याश्चन्द्रं न पश्यन्ति सूत्रं तत् पाणिनेर्वद।।''

तदनन्तरं **''अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्''** इति मया सुष्ठूत्तरदाने सति भवता मम नाम पृष्टं, तदा अहमत्यन्तं प्रसन्नाभवम् तथा च मया महत्या प्रसन्नतया स्वगृहे, सर्वाणि मित्राणि चापि सूचितानि यदद्य भवता यः प्रश्नः कृतः तस्य साधूत्तरं मया पत्तम्, ततश्च सदा मम नाम भवतः स्मृतौ तिष्ठति

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एतत्ततोप्यधिको मोदावहो विषयः।

२६ जनवरी २०१६ तमे वर्षे यदा भवान् ''पद्मश्री'' इत्याख्योपाधिना विभूषितः, तदा चलभाषयन्त्रद्वारा वर्धापनज्ञापनार्थं सम्पर्कः कृतः आसीत् मया, भवता तावदतिव्यस्ततमेऽपि दिवसे स्वीयो बहुमूल्यसमयः प्रदत्तः, अयं व्यवहारो भवतः सहजतायाः अहङ्कारशून्यतायाश्च परिचायको वर्तते।

''महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः।
पद्मपत्रस्थितं तोयं धत्ते मुक्ताफलश्रियम्।।''

अर्थात् महापुरुषाणां सामीप्यं कस्य कृते न लाभदायकम्। पङ्कजपर्णे पतज्जलबिन्दुरपि मौक्तिकवत् शोभायते।

अयं श्लोको मत्सन्दर्भे अक्षरशः चरितार्थो भवति, कमलपत्रस्थः सः बिन्दु अहमेव, येन गुरोः सान्निध्येन मौक्तिकशोभाऽधिगता। लखनऊविश्वविद्यालयात् परास्नातककक्षामुत्तीर्याहं यस्मिन्नपि क्षेत्रे गता तत्र मां भवन्नामप्रभावेणैव जनाः अभ्यजानन्, अधुना तु अहं तावदल्पज्ञास्मि यत् मदीयं वैयक्तिकमभिज्ञानं परिचयो वा नास्ति। अहमात्मानमत्यन्तं गौरवान्वितामनुभूतवती आसम् यदा केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालये ''शुक्लवर्यस्य शिष्या'' रुपेणाहं सम्बोधिताभवम्। मया तु प्रवेशोऽपि भवदनुकम्पयैव लब्ध आसीत्।

भवतो गुणानुवर्णनं मम कृते शब्दातीतमेव। भवत्कृते काव्यस्य समस्ता उपमाः तुच्छा एव भाव्यन्ते मया, मम कृते भवान् सदैवासाधारण एवावर्तत किञ्च काव्यस्योपमास्तु साधारणजनानां कृते निर्मिताः, न वा भवादृशाणाङ्कृते। भावत्कमसाधारणव्यक्तित्वं मदर्थं श्रेष्ठतायाः मानदण्ड एवास्ति, यत्र विरला एव प्राप्नुवन्ति।

संस्कृतवाङ्मये यैः श्लोकैः गुरोः महिमायाः यशोगानं गौरववर्णनञ्च कृतमस्ति तदक्षरशः भवन्तमेव चरितार्थयन्ति–

''प्रेरकः सूचकश्चैव वाचको दर्शकस्तथा।
शिक्षको बोधकश्चैव षडेते गुरवः स्मृताः।।

विद्वत्त्वं दक्षता शीलं सङ्क्रान्तिरनुशीलनम्।
शिक्षकस्य गुणाः सप्त सचेतस्त्वं प्रसन्नता।।''

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निवर्तयत्यन्यजनं प्रमादतः
स्वयं च निष्पापपथे प्रवर्तते।
गुणाति तत्त्वं हितमिच्छुरङ्गिनां
शिवार्थिनां यः स गुरुर्निगद्यते।।"

मनसि भवत्कृते या श्रद्धा यच्च सम्मानं वर्तेते, तत्सर्वं शब्देषु सूत्रयितुमहमात्मानमसमर्थां भावयामि, हृदये भावझञ्झावातो वाति परन्तु वाणी मूकीभवति। भवदीया छात्रवत्सलता निःसीमं ज्ञानं, उच्चादर्शः, श्रेष्ठं मार्गदर्शनञ्चास्माकं समेषां जीवनपन्थानम् अग्रेसरणाय सदैव प्रेरणा स्रोतांसि भविष्यन्ति। स्थूलशरीरेण भवान् अस्माकं मध्ये नास्ति, किन्तु सूक्ष्मशरीरेण भवान् सदैवास्माकं मार्गदर्शनं करिष्यति, त्रुटिभ्यो मां रक्षिष्यति च। मदीया हार्दा इच्छा अस्ति यदा अहं स्वं लक्ष्यं प्राप्नुयां तदा जनाः मां भवतः एव छात्रारूपेण अभिजानीयुः। एतदेवोक्त्वा श्रद्धापुष्पाञ्जलिः भवच्चरणकमलयोः विनिवेदयन् विरमामि।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविलोचनिकानुगतं श्रीबृजेशवैभवम्

डॉ० ऋतुसिंहः
असि. प्रोफेसर
महिलामहाविद्यालयः, लखनऊ

आचार्यशुक्लाः स्वल्पीयां कवितां रचितवन्तः, तेनैव सम्पादितं **"कविलोचनिका"** पुस्तकम्। तद् पुस्तकं स्नातकपाठ्यक्रमे वर्तते, एतदर्थं अध्ययनाध्यपनार्थं पठितुं मया सौभाग्यं प्राप्तम्। पुस्तकेऽस्मिन् आचार्यशुक्लेन स्वकवितानां सङ्कलनं तु कृतमेव, एतदतिरिक्तम् आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र–आचार्यश्रीनिवासरथ–आचार्यराधावल्लभत्रिपाठी–आचार्यरासविहारीद्विवेदी–आचार्यजगन्नाथपाठक इत्यादिविदुषामाचार्याणामपि कवितानां सङ्कलनं कृतमाचार्यशुक्लैः। आचार्यशुक्लस्य प्रथमा कविता **"जयतु मम स्वातन्त्र्यसरणिः"** अस्यां कवितायां स्वतन्त्रतायाः विषये वर्णनं कृत्वा रानीलक्ष्मीबाई–योद्धायाः वीरतायाः प्रतिपादनं करोति आचार्यशुक्लः। **"हृदि त्वं राजसे कलिके"** गानमस्ति संस्कृते कवितारूपी। यस्मिन् मधुमासभ्रमरपरा–गादीनाम् अनुभावविभावाभ्यां श‍ृङ्गाररसस्य वर्णनं वर्तते। **"प्रत्तं न केनचिद्"** एकं गीतमस्ति, अस्मिन् मधुमासो यदा आगच्छति तदा भ्रमराणां मदोन्मत्तदशानां, वृष्टिकाले मेघानां चञ्चलतानां, मयूरादीनां च वर्णनानि प्राप्यन्ते। **"नैव यूकस्तु कर्णेषु नो रिङ्गति"** अस्यां पङ्क्त्यां कश्मीररूपीस्वर्गाः रक्तरञ्जिता अभवन् एवं भारतदेशः स्वर्णरूपीपक्षी आसीत् एतावद् वर्णना सहितं दासवृत्तादीनां तात्कालिकसामाजिकदशानां च वर्णनं विहितम् आचार्यवर्यैः।

"लसति घनमालो विजयते" इत्यस्यां कवितायां ग्रीष्मकाले वन्यजीवस्य दुर्दशामेव मेघानामागमनादीनाञ्च वर्णनं कृतं शुक्लवर्येण। एतेषां कवीतानामध्ययनाद् एतावत् सम्यक् रूपेण प्रतीयते यत् **"कवेः कर्म काव्यम्"** अनेन वाक्येन इदं ज्ञानं भवति यत् कवेः प्रतिभैव कवेः काव्यमेव निर्धारयति।

काव्याद् अभिभूताः सहृदयजनाः यदा काव्यं प्रशंसयन्ति तदा नूनमेव एतत् प्रमाणयति, यत् कवेः सत्काव्यं सहृदयजनान् रसाप्लावितान् करोति।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तादृश्यामुच्चश्रेण्यामाधुनिककविषु प्रमुखरूपेण आचार्यशुक्लमहोदय आसीत् आचार्यस्य कवितासु आधुनिकपरिवेषे रसपरिपाकानां सम्यग् दर्शनं भवति कविताया: स्वरूपं छन्दोबद्धगीतशैल्यां प्रतिपादितमस्ति। कवितायां वैदर्भीरीतेः, माधुर्यप्रसादगुणानाञ्च दर्शनं भवति। आधुनिकं तथा प्राचीनविषयमधिकृत्य आचार्यस्य लेखनी सामान्यतया प्रचलित स्म। रसाऽलङ्कारध्वनिदृष्टिभिः कवितायामुत्कृष्टतां सर्वे जानन्ति एव। भावशब्दचयनार्थावबोधानां दृष्टिभ्यः कवितायामुत्तमतानां भावानां सुष्ठुप्रयोगो दरीदृश्यते। अस्य विलक्षणप्रतिभायाः तथा भावप्रवणतायाः दर्शनम् अस्याः कवितायाः माध्यमेन सम्यग् रूपेण कर्तुं शक्यते। शोधपरकप्रतिभावैदुष्येन अनेकानेकपुरस्कारेभ्यः पदकेभ्यश्च समलङ्कृतो जातः सर्वकारेण।

अतो निष्कर्षरूपेणेदं वक्तुं शक्यते यत् प्रो० शुक्लवर्यः संस्कृतजगतोऽप्रतिम आचार्य आसीत्। संस्कृतस्योन्नतये तेन आजीवनं यत्कार्यं कृतं तम वलोक्य एवमाभाति यदद्याऽस्माकं मध्ये भौतिकशरीरेणाऽनु- स्पतिथोऽपि स यशः कायेन प्रतिष्ठितः, यतोहि प्रोक्तम्–

"नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्"।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शोधपत्र-वीथिका

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सप्तस्रोतस्विनी मुक्तिः

प्रो० अभिराजराजेन्द्रमिश्रः, 'पद्मश्रीः'
कुलपतिचरः, सं०सं०वि०वि०, वाराणसी

सप्तस्रोतस्विनी मुक्तिस्सा मे मुष्टौ न संशयः।
जीवन्मुक्तोऽस्म्यहं जातो देहो यातु निजेच्छया।।

नेदमुद्घोषयति ममाहङ्कारः, ममाज्ञानं, मम चित्तभ्रान्तिर्वा। इदं व्याहरति ममात्मानुभवः, ममावस्था, मदीश्वरीयनिष्ठा, मम विवेकश्च। सम्प्रति श्रुत्वा, ज्ञात्वा चेदं विश्वसन्तु भवन्तो मामुपंहसन्तु चेति भवदधीनं, भवत्कार्यम्। तत्र न कोप्यवरोधोऽनुरोधो वा। यन्ममासीत्, तन्मया कृतं, यद् भवतां स्यात् तद्भवन्तः कुर्वन्तु। परन्त्वात्मोपनिषन्मया प्रकाशिता। का च साभिराजोपनिषत्? सप्तस्रोतस्विनी मुक्तिरित्येव। यथा स्रोतस्विन्यः कुतश्चिन्निर्गत्य विविध-जनपदयात्रां कुर्वाणा महोदधिं सङ्गच्छन्ते, कामपि महानदीं वा, तथैव ममेमा सप्तस्रोतस्विन्योऽपि श्रीमद्भगवद्गीता– गोमुखात्प्रसूय मम जीवनजनपदे विहरन्त्यो मुक्तिमहोदधौ विलीयन्ते।

कास्ताः सप्तस्रोतस्विन्यः? सम्प्रति निरूप्यते। तमाऽत्मस्वरूपज्ञानं प्रथमा स्रोतस्विनी। स्थिरप्रज्ञता नाम द्वितीया। योगसिद्धिस्तृतीया स्रोतस्विनी। यज्ञनिष्ठेति चतुर्थी। दैवीसम्पदिति पञ्चमी। आत्मसमर्पणभावनेति षष्ठी। अध्यात्मदृष्टिश्चेति सप्तमी स्रोतस्विनी। एभिरेव सप्तस्रोतोभिर्मया मुक्तिरवाप्ता। श्रुत्वैव जनाः विस्मिताः स्युः। भवता मुक्तिरवाप्ता? कथमिदं सम्भाव्यम्? शरीरं धारयति भवान्। प्रत्यक्षं पश्यामो वयं भवन्तं मिश्रमहोदय तत्कथमक्ष्णोर्धूलिं प्रक्षिपति भवान्? सर्वथा जीवति भवान् स्वेन पाञ्च–भौतिकेन संहननेन। तदलमसत्यभाषणेन। उत्तमवृद्धो भवान्। न युक्तं भवतोऽनृतभाषणम्। मुक्तिर्मोक्षो वा और्ध्वदैहिको विषयः।

अलमलम् अलम्भोः। उक्तं भवद्भिर्यद् वक्तव्यमासीत्। मह्यमप्यवसरं दत्त। जानन्त्येव भवन्तो यन्मुक्तिर्द्विविधा भवति–जीवन्मुक्तिर्विदेहमुक्तिश्च। जीवतैव साधकेन या मुक्तिरधिगम्यते सा भवति जीवन्मुक्तिः। विदेहेन च प्राप्ता

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मुक्तिरुच्चते विदेहमुक्तिः। मया तु मुक्तिः प्राप्तेति मदीया निष्ठा। तथापि शरीर मिदं धारयामि, तन्मे वैवश्यम्। किं करोमि?आत्मघातेन शरीरनाशस्तु भवत्येव महत्पापम्, तदहं कर्तुं न प्रभवामि। किञ्च, यथा जन्म नासीन्ममाधिकारे तथैव मृत्युरपि न मद्वशे तिष्ठति। तत एव विदेहमुक्तिर्न जाताऽद्यावधि। तदर्थं मया पि, भवदितरपि प्रतीक्षा करणीयैव।

प्रथमा मुक्तिस्रोतस्विनी तावद् विचार्यते। सास्ति आत्मज्ञप्तिः। प्रायशो जना आत्मविषयेज्ञा अल्पज्ञा अवज्ञा वा तिष्ठन्ति। लौकायतिकाश्चार्वाकास्तु अवज्ञा आसन्। तेषामिदमेव चिन्तनमासीद्यत् शरीरे, शरीरात् पृथक् न किञ्चिदप्यन्यत् तत्त्वं तिष्ठति। शरीरं तु शरीरमात्रं साङ्गोपाङ्गम्, यद्यात्माभिधं नाम किमपि तत्त्वं प्रकल्प्येनापि तर्हि तत् शरीरादभिन्नमेव। वस्तुतो देह एव आत्मापि। अतएव–

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

चार्वाकाणामिदं चिन्तनमेव देहात्मवादोऽभिधीयते। देह एव आत्मेति येषां वादस्सिद्धान्तस्ते देहात्मवादिनः। अयं सिद्धान्तो भारते तु तिरस्कृतो जातो वेदान्तमताश्रयिणां प्रबलैस्तर्कप्रहारैः। आर्हताः सौगताश्चापि आत्मवादिन आसन्नेव अतस्तेऽपि आत्मचर्चायां श्रद्धावन्तो दृश्यन्ते। परन्तु भारताद् बहिः यत्र कुत्रापि अस्माकं पूर्वपुरुषा भारतीया गतास्तत्रत्यास् संस्कृतीषु देहात्मवादोऽयं परां प्रथां गतः। मिस्रदेशे या फराहसंस्कृतिः संस्थापिता सा भारतीया संस्कृतिरेवासीत् इति प्रमाणैर्निश्चीयते। परन्तु तेषामपि द्रढीयानयं विश्वास आसीत् यत् मृतशरीरेणैव मानवो भूयोऽपि जीवितो जायते। अतएव शरीरं न नाशनीयम्। किञ्च शतसहस्रप्रयत्नैः रक्षणीयम् इति भावनयैव ते मृत शरीरस्य ममीं विधाय समाधिमन्दिरे (पिरामिडे) तत्सुरक्षितं कुर्वन्ति स्म। एवमेव, खिस्तमतावलम्बिनः इस्लामानुयायिनश्चापि शरीरं श्वभ्रे (कब्रे) सुरक्षितं विदधति यथा कयामत– (महाप्रलय) दिवसे परमेश्वरोपस्थितौ तेषां सुकृतदुष्कृतानां सम्यङ्. निर्णयस्यात्।

परन्तु तत्त्वज्ञानपरायणा भारतीया ऋषयो महर्षयः स्वतपः प्रभावेणैव गूढमात्मविज्ञानं ज्ञातवन्तः। तैरनुभूतं यद् ईशावास्यं जगत्सर्वं यत्किञ्च

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जगत्यां जगत्। तैर्ज्ञातं यद्यथा तन्तुजालस्य प्रकटनं तिरस्करणञ्चोभयमपि लूताधीनमेव तथैव स्थावरजङ्गमात्मकस्यास्य संसारस्य निर्माणं संहारश्चोभयमपि परमात्माधीनमेव। इयं दृष्टिरेव समुच्यतेऽध्यात्मदृष्टिः। आत्मनि इत्यध्यात्मम्। अध्यात्मस्य दृष्टिरेवाऽध्यात्मदृष्टिः। इयं दृष्टिरेव ख्यापयति यत्–

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नाऽपरः।[1]

आत्मपरमात्मनोर्न कोऽपि भेदः। यतो हि यस्य चैतन्यस्य समष्ट्यात्मिकी अभिव्यक्तिः परमात्मेति कथ्यते, तस्यैव व्यष्ट्यात्मिका भिव्यक्तिरुच्यते आत्मा। पृथगात्मा एव भवति जीवः जीवात्मा वा। समन्वितात्मा एव भवति परमात्मा। अतएव यथा सूर्यो दीप्तस्रोतोभूतो भवत्यंशी, दीपकश्च भवत्यंशः, यथा समुद्रो भवत्यंशी तरङ्गाश्च भवन्त्यंशास्तथैव परमात्मा भवत्यंशी, जीवाश्च सर्वे भवन्त्यंशभूतास्तस्य।

इमे परमात्मांशभूता आत्मान एव अविद्यामोहग्रस्ताः अक्षीणवासना सम्पृक्ताः स्वपूर्वजन्माचरितसत्कर्मदुष्कर्मासक्तिवशात्, परमार्थतो मुक्तनिसर्गाः सन्तोऽपि, बद्धा जायन्ते। यथा स्वभावतोऽनपराद्धः मानवो दुष्कृत्याचरणवशात् कारागारे बन्दीजीवनं बद्धजीवनं वा यापयति तथैव वराको मानवोऽपि सकामाचरित–कर्मसु लिप्तत्वात् तस्य फलानि अनुकूलानि (सुखानि) प्रतिकूलानि (दुःखानि) भुङ्क्ते। भोगानन्तरमेव तस्य बन्धनं विनश्यति।

परन्तु यदि आत्मस्वरूपज्ञानं भवेत्समेषां तर्हि को नु बन्धनं समीहते?यदि रहस्यमिदं सर्वज्ञातं स्याद् यत् कर्मफलासक्तिवशादेव जीवैस्तत्फलानि शुभाशुभानि भोक्तव्यानि भवन्ति तर्हि निश्च–प्रचमसौ पापकर्म नैव करिष्यति दुर्गतिकारकम्। अथवाऽनासक्तभावेन, कर्मफलस्पृहां विनैव कर्म करिष्यति यथा तत्फलेन शुभाशुभेन सर्वथा मुक्तो भवेत्। अतएव मुक्तस्वभावमात्मानं मा बधानकर्मभिः। यतो हि परमात्मांशभूतत्वात्–

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।[2]

१. ब्रह्मसूत्रशाङ्करभाष्ये
२. श्रीमद्भगवद्गीतायाम् २.२०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तर्हि किमिदं जन्म, मरणं वा? कस्य जन्म मरणञ्च भवति? शरीरस्य, आत्मनो वा। उभयोर्वा?

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्। जन्म मरणञ्च केवलं पाञ्चभौतिकशरीरस्य जायते, न तावदात्मनः। आत्मा तु—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः।।

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽ यमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि।।[1]

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतौ नायं हन्ति न हन्यते।।[2]

न जायते म्रियते वात्मा। केवलं बद्धजीव एव जायते, म्रियते च। इदमपि तस्य कृते दण्डस्वरूपमेव। म्रियते शरीरं, जायते शरीरं—तथापि तच्छरीरसम्पृक्तिवशान् मुक्तात्माऽपि जीवनमरणयोः पीडां सहते। यथा नीडनाशेन नीडासक्तिवशाद् विहगस्यापि कष्टं जायते, नीडनिर्माणवशात् तस्यानन्दानुभूतिरपि भवेत् तथैव बद्धात्मनोऽपि सुखदुःखानुभवः।

तत्कथं मुक्तिर्भवेत्? स्वरूपज्ञानेन। आत्मनः स्वरूपं विज्ञाय तथैवाचरणीयं येनात्मा क्षीणवासनानिबद्धो न जायते। कर्मफलासक्तिरेव भवन्तं निबध्नाति, तर्हि कर्मफलमवधूय कर्म करोतु भवान्। यदि फलं परिणामं वाऽभिलक्ष्य कर्म क्रियते तर्हि निश्चप्रचमनुकूलफलेन सुखं, प्रतिकूलफलेन दुःखञ्च भविष्यत्येव। अतएव योगीश्वरो भगवान् वासुदेवः कथयति —

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।[3]

१. श्रीमदभगवदगीतायाम्, २.२३–२५
२. तदेव, २.१९
३. तदेव, २.४६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

परन्तु एतत्सर्वं कथं सम्भविष्यति? सांसारिका जना वयम्। अत्र वयं जाताः सुखोपभोगार्थम्। सर्वेऽत्र सुखवादिनः (Hedonist) न कोऽपि दुःखलेशमपि वाञ्छति अथ च सृष्टावत्र पदे–पदे वैषम्यं दृश्यते एव। कुलाङ्गनाः एव प्रायशः कुरूपाः। स्वैरिण्यो रूपाजीवा भिक्षुक्यश्चैव देवाङ्गनोपमरूपसौन्दर्यसम्पन्नाः। प्रतिभाशालिनः निर्गृहधट्टाः। निरक्षरा मूढा एव, शिक्षककुलदीपकत्वात् प्राध्यापकाः। दस्यवः तस्कराः खण्डितवृत्ताः लोकसन्तापका एव सुखिनोऽसुखिनश्च ऋतसत्यपथारुढाः। एतादृशे विषमसंस्कारेऽसामञ्जस्यप्लाविते कथं वा जीवेद् विवेकपरायणो मानवः? वैषम्यं दृष्टवैव मनः समुच्छलत्युद्भ्रान्तपाथोनिधिरिव। अस्माकं शरीरे वर्तन्ते पञ्च–कर्मेन्द्रियाणि, पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि, मनः, बुद्धिः आत्मा च। मनस्तावत् मध्यस्थेन्द्रियोऽपि कथ्यते, यतो हि मध्ये इदं तिष्ठति इन्द्रियाणां बुद्धेश्चैतन्यस्य च। इदं मन एव इन्द्रियाणामर्थैः बुद्धिं प्रकाशयति आत्मानं च। इदं मन एव सङ्कल्पविकल्पयुक्तत्वाद् भवति प्रमाथि दुराधर्षञ्च।

वस्तुतो मन एव सर्वेषामनर्थानां मूलम्, यतो हि विषयानिदमेव चिन्तयति। तत एव प्रारभ्यतेऽनर्थपरम्परा–

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽपि जायते।।

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशाद् विनश्यति।।[1]

यथा नद्यां तरन्तीं नौकां प्रबलो वायुः प्रसह्य स्वदिशायां कर्षति तथैवेन्द्रियाणि स्वविषयाभिषङ्गैर्मनोऽपि दिग्भ्रष्टं विदधति–

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।।

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।[2]

१. श्रीमद्गीतायाम् २.६२–६३
२. तदेव, २.६०–६१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।[१]

एवं मनोनियन्त्रणमावश्यकम्। यतो हि मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः। अविरक्तमनसां जनानां कृते रौरवकल्पमपि स्वभवनमेव स्वर्गास्पदम्। परन्तु विरक्तमनसां श्रीहरिचरणानुरक्तानां कृते स्वर्गास्पदमपि वैभवैश्वर्यमण्डितं भवनं नरकमेव।

मनसो नियन्त्रणेनैव प्रज्ञा स्थिरा भवति। स्थिरप्रज्ञतैव तावत्साधनायाः आधारभूमिः। अस्थिरप्रज्ञया न रागो न चापि विरागः सिध्यति। नाऽहं योगी, न साधकः, न चापि योगभ्रष्टः कोऽपि महापुरुषः। तथापि कथयितुमिच्छामि सशपथं यन्नाहं स्वमनसो नियत्रणे। प्रत्युत मन एव तिष्ठति मम नियन्त्रणे। यन्नियन्त्रणे यन्मनस्तिष्ठति, स खलु क इत्यहं न वेद्मि। परन्तु अस्ति कोऽपि अभिराजराजेन्द्राभिमानी अवश्यमेव मत्कलेवरे यो जीवभूताद् बद्धाद राजेन्द्रादन्य एव। तदधीनमेव तिष्ठति मन्मनः। मम मनोऽतितरां भक्तो मदात्मनः। न जातु आत्मनो मार्गे कमप्वरोधं विन्यस्यति। न कदापि स्वशक्तिभ्यां सङ्कल्पविकल्पाभ्यां मामसन्तुलयति। वंशवदभृत्य एव मनो मे मामनुगच्छति तत एव यदहं निश्चिनोमि श्रेयस्करं तदेव करोमि।

योगसिद्धिस्तृतीया मुक्तिस्रोतस्विनी। न तस्यां कृतावगाहोऽहं निमज्जनभयात्। सन्तरणकलाऽनभिज्ञोऽहम्। तथापि योगसिद्धिस्रोतस्विन्यास्तटे एव जातं मे जन्म। सायं प्रातस्तत्रैव विहृतम्मया, तत्रैव स्नातम्मया अतएव सम्यक्परिचयो वर्तते मे तया सार्धम्। योगसिद्धिस्रोतस्विन्या अपि तिस्र उपधारा दृश्यन्ते श्रीमद्भगवद्गीतायाम्। तत्र समत्वं योग उच्यते इति प्रथमोपधारा। योगः कर्मसु कौशलमिति द्वितीयोपधारा। सर्वसङ्कल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते इति तृतीयोपधारा। तथापि किञ्चिचद्वक्तुं समीहे।

किन्न महैश्वर्यम्मया प्राप्तं सारस्वते जगति प्रारम्भत इदानीं यावत्।

१. तदेव, २.५८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इलाहाबादविश्वविद्यालये १९६४ तमे एम.ए. परीक्षायां समग्रेऽपि कलासङ्काये प्रथमस्थानमवाप्तम्। शोधकार्यसम्पूर्तेः प्रागेव प्राध्यापकपदमवाप्म्। नूतने वयस्येव विदेशयात्रा सञ्जाता वालीद्वीपस्य। नूतने वयस्येव साहित्याकादमीपुरस्कारः लब्धः। षष्टेः प्रागेव महामहिमराष्ट्रपतिना–राष्ट्रपतिपुरस्कारः सम्प्राप्तः। प्रयत्नं विनाऽपि शासनेन पदमश्रीः प्रदत्ता। कालिदास–वाल्मीकि–विश्वभारती–दीनदयालोपाध्यायराष्ट्रभाषापुरस्काराः सम्प्राप्ताः। केनापि मत्समीक्षकेन सम्यगेव लिखितं यन्मदीयं जीवनमेव तावत् सततकीर्तिमानानां जीवनं जातम्।

एवम्भूतेऽपि न मया कदापि नग्ननर्तनं कृतम्। न चपि स्वमुखेन स्वमुखमाधुर्यं प्रकटितं, न चाप्यमर्यादितो हर्षप्रकर्षः प्रकटितः। मम धर्मपत्न्यपि साधु जानाति यत् कपित्थकल्पोऽयं जनः। न हसति, न नृत्यति, न द्विपदीं, चर्चरीं, छलिकं वाऽभिनयति, न प्रपाद्यति। सर्वमपि सुखसौभाग्यसन्दोहं तटस्थभावेनैव गृहीतवानहम्। यदाऽपि एतादृशः कोप्यवसरस्समायातः पत्नी केवलमिदमुक्तवती 'गृहमन्दिरे भगवत्याः पराम्बायाः समक्षं दीपवर्तिकां प्रकाशय।' एवमेव विपच्चक्रकालेऽपि न मया रुदितं न मूर्च्छितं, न चापि रोषक्रोधादिकं समाश्रितम्। स्वभाग्यचक्रं ज्ञात्वा स्वीकृतं तदपि। इतोऽधिकं स्वयोगित्वविषये किमहं कथयिष्यामि?

किं संस्मरामि मधुरं किं विस्मरामि कटुकम्।
स्मरणीयतामुपात्तो जीवामि भूतलेऽहम्।।

मन्ये कृतान्तगेहे भ्रान्ताऽस्ति मृत्युवाला।
यस्मादहोऽभिराजो जीवामि भूतलेऽहम्।।[1]

यज्ञनिष्ठेति चतुर्थी स्रोतस्विनी। सारस्वतसाधकत्वात् शिक्षकत्वाच्च निःस्वार्थयाज्ञिकोऽस्मि। पञ्चाशद्वर्षेभ्यो ज्ञानयज्ञे गृहीतदीक्षोऽस्मि। स्वकाव्यमाधुर्या कोटिशो जना अनुरञ्जिताः लक्षमिता विद्यार्थिनोध्याप्य राष्ट्ररक्षणपराः सैनिकाः, न्यायमूर्तयोऽधिकारिणः दण्डाधिकारिणोऽधिवक्तारः शिक्षकाश्च विहिताः। किमतः परं भोः अद्यापि तावत् सा ज्ञानदानपरम्परा विविधैः प्रकारैः प्रवर्तत एव। अनेन ज्ञानयज्ञेन, यज्ञविग्रहो भगवान् विष्णुस्तु

---
१. स्वरचितपद्यम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सन्तोषित एव (अध्यात्मदृष्ट्या) देवाधिदेव–शिव–सरस्वती–गणपतिप्रभृतयो देवाश्चापि समर्चिताः (आधिदैविकदृष्ट्या) लोकोऽप्युपकृतः। यज्ञेनेयं त्रिविधा सन्तुष्टिर्जायत एव–

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम्।।

यस्य सर्वे समारम्भाः कायसङ्कल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः।।[1]

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।

इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः।।

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापाः ये पचन्त्यात्मकारणात्।।[2]

दैवीसम्पदिति पञ्चमी मुक्तिस्रोतस्विनी। भगवान् गीतायां सविस्तरं विवृणोति दैवीं सम्पदमासुरीञ्च सम्पदम्। अयं प्रसङ्गो गीताया विश्वसंस्कृतिनिर्णायकः। एतत्समक्षं सर्वेऽपि धर्माभिमानाः तृणकल्पाः परिलक्ष्यन्ते। नायं प्रसङ्गः परिशीलनमात्राय। वस्तुतः प्रसङ्गोऽय-मात्मसत्पात्रतानिर्णयाय। इमं प्रसङ्गं पठित्वा सर्वेऽपि धर्मसम्प्रदायाभिमानिनः फथवोदघोषकाः स्वभावभूमिमनुभवन्तु। दैवीसम्पत् प्रस्तूयते योगीश्वर-कृष्णेन–

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्।।

१. श्रीमद्भगवद्गीतायाम्, ६.१५ तथा ४.१६
२. तदेव ३.१२–१३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत।।

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम्।।

दैवी सम्पद् विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शत्रुः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव।।[1]

अद्य तावत् सम्पूर्णस्यापि विश्वस्य मानवानां सत्पात्रतानिर्णयाय सत्पुरुषता निर्णयाय श्रीमद्भगवदगीताया अस्मान्मानकात् (दैवीसम्पद्–आसुरीसम्पद्) परतरं किमपि प्रमाणं न संलक्ष्यते। मानकमिदं न हिन्दुधर्माश्रितमपितु विश्वमानवताश्रितम्। अनेनैवोद्घोष्यते यदातङ्कवाद–पक्षधरा आसुरीसम्पत्पोषकाः सन्ति। अद्यतना असुरा एते एव लादेनसद्दामगद्दाफीबगदादी–प्रभृतयः।

चीनपाकिस्तानोत्तरकोरियासदृशराष्ट्राणां प्रसङ्गे समायाते एव दम्भ–दर्पाभिमान–क्रोध–पारुष्याज्ञानादीनि तैः सार्धमिव तिष्ठन्ति संलक्ष्यन्ते।

भारतीयो भवत्येव निसर्गतो दैवीसम्पदामाश्रयभूतः। कस्मात्? कुलक्रमागतसंस्कारवशात्। प्रयत्ने कृते त्वसौ महापुरुषतामेवोपैति। यावन्तो महामहिमशालिनः शलाकापुरुषाः प्रजापालकाः सम्राजः लोकोपकारिणः त्यागिनस्तपस्विनस्सन्तः लोकनायकाः समाजसुधारकाः श्रेठाश्च कवयो विद्वांसो भारते आविर्वभूवुस्तद् वर्तत एव तदहङ्कारभञ्जकं तथ्यमन्येषां धर्मसंस्कृत्यवलम्बिनां कृते। तावन्त एव कूटाः नरपिशाचाः नृशंसाः पापिनस्तेषां समवायेषु समुत्पन्नाः। इतिहास एवाऽत्र प्रमाणम्।

वस्तुतः परमेश्वरं प्रत्यात्मसमर्पणमेव सर्वधर्मसर्वस्वम् इदमेव षष्ठस्रोतस्विनी मुक्तेः। आत्मसमर्पणं को धर्मो नाऽनुमोदते, न समर्थयते? परन्तु तत्समर्पणं केवलं वाचिकमेव परिलक्ष्यते। कीदृशं समर्पणं समुपदिशति अल्लाहनामा परमेश्वरः? छलेनच्छद्मना प्रवञ्चनेन हिन्दूकन्यायाः

---

१. तदेव, १६.१–५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शीलहरणम्? धर्मपरिवर्तनम्? इस्लाममतमनङ्गीकुर्वतां जनानां शीर्षच्छेदनम्? विश्वबन्धुत्वविध्वंसनम्? यः परमेश्वरः समुदायविशेषस्यैव योगं क्षेमञ्च निर्वहते तं प्रति कीदृशं समर्पणम्, कस्माद्वा समर्पणम्? समर्पणं तं प्रति युज्यते योऽस्ति जगदीश्वरः। यथाऽह नन्दनन्दनः यो मद्भक्तः स मे प्रियः। कीदृशः स्यादसौ?

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।

अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः।।[1]

विश्वस्य कोटिमिता जना ईदृशाः सन्ति ये खल्वस्याः परिभाषाया आलोके आत्मानमास्तिकमीश्वरवादिनं वा घोषयितुं न क्षमिष्यन्ते? परन्तु किं कोऽप्यातङ्कवादी (आई.एस.आई. समर्थकः क्रूरमुस्लिमः) अपि इमां परिभाषां चरितार्थयितुं शक्तो भविष्यति–

यस्माद्यो द्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।[2]

अध्यात्मदृष्टिस्तावदन्तिमा स्रोतस्विनी मुक्तिमहोदधेः। किमियमध्यात्मदृष्टिः? आलेखारम्भे एव मया ईशावास्योपनिषन्मन्त्रः समुद्धृतः। स मन्त्र एवाध्यात्मदृष्टिं परिभाषते। इदं चराचरात्मकं जगत् (अदृश्यमानञ्चापि जगत्) परमेश्वरस्य लीलाविलासभूतमेव, इति चिन्तनमेवाध्यात्मम्। ईश्वराद् बहिर्न

१. श्रीमद्भगवद्गीतायाम्, १२.१३–१७
२. तदेव, १२.१५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किञ्चिदपि। भगवान् स्वयं कथयति–

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।
मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय।।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।
मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।[१]

x x x x x

मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः।
गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।।

प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्।
तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च।।

अमृतञ्चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन।
तेऽपि मामेव कौन्तेय! यजन्त्यविधिपूर्वकम्।।[४]

x x x x x

समोऽ हं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते, तेषु चाप्यहम्।।

मन्मना भव मद्याजी मद्भक्तो मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः।।[३]

भगवतो नन्दनन्दनस्य पूर्णपरमेश्वरस्य इमा एव देशना अद्यावधि स्वकीये (मानसे, वाचिके, कर्मात्मके च) आचरणेऽवतारयितुं समर्थो न जातोऽस्मि। तथापि नितरां प्रयते। कोरोनामहामार्याः सङ्कटावधौ इमा देशना एव जिजीविषां अक्षतां विदधुरित्यनुभवामि।

***

१. तदेव, ७.६–७
२. तदेव, ९.१८–२०
३. श्रीमद्भगवद्गीतायाम् ९.२२, २९ तथा ३४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऋग्वेदे मानवाधिकाराणामवधारणा

प्रो० शशितिवारी
१०४–साक्षरा आपार्टमेण्ट्स
ए–३, पश्चिमविहारः, नईदिल्ली

विश्वस्तरे सर्वप्रथमं मानवाधिकारस्य 'सार्वभौमघोषणा' १९४८ तमे वर्षे दिसम्बरमासस्य दशमे दिनाङ्के संयुक्तराष्ट्रस्य महासभायामभवत्। तदनन्तरमेव विश्वस्य विभिन्नेषु भागेषु मानवाधिकारस्य स्वरूपं, महत्त्वमनिवार्यतां चाधिकृत्य विश्लेषणं चिन्तनञ्चाद्यावधि प्रचलति। परञ्च यदा वयं विश्वस्य प्राचीनतमे वाङ्मये दृष्टिपातं कुर्मस्तदा निर्भ्रान्तरूपेण तथ्यमिदं स्वीकृतं भवति यत् सर्वेषां मन्त्रब्राह्मणात्मकवेदानां सारसर्वस्वं विद्यते–मानवजीवनस्य सर्वविध–कल्याणम्। वेदेषु मानवजीवनविकासाय संरक्षणाय पोषणाय कल्याणाय च विविधा विषया वर्णिताः। अणुविज्ञानादारभ्य परब्रह्मपर्यन्तं विविधविषयबोधकं सत् एतत् विलसति। सामाजिकार्थिकमनोवैज्ञानिकशास्त्राणि यथा खगोल–पर्यावरण–गणित–भौतिक–भूगर्भ–वृक्ष–जल–जन्तु–सङ्गीत–भाषा–कृषि–आयुर्वेदादिविज्ञानानि अस्मिन्नेव सन्ति। निस्सन्देहं वेदो मानवस्य कृते तस्योत्कर्षाय देशकालस्थानापेक्षया विना आदिशति उपदिशति तस्मादेव कारणाद् भारतीया परम्परा 'वेदोऽस्ति परमं प्रमाणम्' इति मन्यते। 'सर्वं वेदात्प्रसिध्यति', 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' इत्यादय उक्तयोऽपि ज्ञानविज्ञानस्य सर्वविषयेषु वेदमूलकतां द्रढयति। अतो मानवजीवनेन सह सम्बद्धा अधिकारा अप्यत्रावश्यमेव विवेचनीया भविष्यन्ति इति मत्वा ऋग्वेदस्य समालोचनात्मकं विश्लेषणमत्र पत्रेऽस्मिन् क्रियते।

१. मानवाधिकारे वैदिकी दृष्टिः

यजुर्वेदस्यैकमन्त्रो निर्दिशति–**'पञ्चस्वन्तः पुरुषा आ विवेश'**[१] अर्थात् पुरुषः पञ्चसु स्वरूपेषु प्रविष्टोऽभवत्। व्यक्तिः परिवारः, समाजः, राष्ट्रं, विश्वं

१. यजुर्वेदे, २३.५२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चैते सन्ति पञ्चपक्षा येषु कोऽपि जन उत्तरोत्तरं विकसति सम्पर्कं च साधयति। मनुष्यः स्वाभाविकरूपेण एषु स्तेरषु स्वकीयं प्रभावम्मुञ्चति, स्वयञ्चैभिः प्रभावितो भवति। अधिकारस्तु कर्तव्येनोपजायते सिद्धान्तोऽयमपि वेदमन्त्रेषु परोक्षतया सूच्यते। मन्त्रेऽस्मिन् वधूं प्रति आशीर्वादोऽस्ति–

सम्राज्ञी श्वसुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रवां भव।

ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवेषु।।[1]

किन्तु अपर मन्त्रः तामुपदिशति गृहे सर्वेषां कृते सेवां विधातुम्–

स्योना भव श्वसुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः।

स्योना अस्यै सर्वस्यै विशेः स्योना पुष्टायैषां भव।।[2]

लक्ष्यप्राप्तये कर्तव्याकर्तव्यस्य निर्धारणं नीतिविश्लेषणस्य प्रधानतत्त्वं विद्यते वेदेषु यज्ञानुष्ठानं, प्रार्थना, प्रयत्नं, परिश्रमश्च कर्तव्यविधानान्तर्गतं भूरिशो निर्दिष्टाः सन्ति। मानवानां भर्द्रं कल्याणं कामयमाना ऋषयः पदे पदे देवानामुत्तमकर्मणां व्याख्यानं कुर्वन्ति, तान् स्तुवन्ति। यः प्रजाया हितकरः स मानुषः। यः प्रजाया अहितकरः सः अमानुषः इति मन्त्रोक्तिः–

अमानुषं यन्मानुषो निजूर्वात्।[3]

अतोहि सिद्धयति यद् ऋग्वेदेन मानवाधिकारनिर्धारणे कर्मणां महती भूमिका समुपदिश्यते। अस्मिन् सन्दर्भे ऋषिभिः साङ्केतिकरूपेण संसूचितस्तृतीयः पक्षोऽस्ति 'सांमनस्यम्'। अथर्ववेदीयः सांमनस्यसूक्तम् पारिवारिकस्तरे सामाजिकस्तरे च सममनभावस्याकांक्षां प्रस्तौति–

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।

सम्यञ्च सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।[4]

सांमनस्यस्य स्पृहा तु दिव्यशक्तयोऽपि कुर्वन्ति। अत एव वैदिकमते मानवाधिकारर्निधारणाय मनुष्याणां पारस्परिकः सम्बन्धः, तेषां कृते

---

१. ऋग्वेदे १४.१.४४
२. अथर्ववेदे १४.२.२७
३. ऋग्वेदे २.११.१०
४. अथर्ववेदे ३.३०.३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्तव्यविधानं, सांमनस्यञ्च सन्ति कतिपयानि मूलभूतानि सूत्राणि।

मानवाधिकारस्य एका सर्वमान्या परिभाषास्ति, 'मानवजीवनस्य एतादृश्यः परिस्थितयः याभिर्विना कोऽपि जनः स्वकीयव्यक्तित्वस्य पूर्णविकासं कर्तुं न शक्यते, ताः सन्ति मानवाधिकाराः।' परं सामान्यरूपेण मनुष्यस्य उत्कर्षहेतवः पदार्थाः ये सामान्यतया तस्य प्राप्तव्याः सन्ति अधिकाराणां क्षेत्रे आयन्ति। वेदे विश्वमानुषस्य चर्चापि तथ्यमिदं पुष्यति–सूर्यस्य प्रागाकाशे आगत्योषा 'विश्वं जीवं' सर्वत्र सम्प्रेरयति–

उषो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै।[1]

इन्द्रदेवः 'विश्वमानुषाय' धनं प्रयच्छति–

यस्य ते विश्वमानुषो भुरेर्दत्तस्य वेदति।[2]

विष्णुदेव एतां पृथिवीं मानुषे दशस्यन् विचक्रमे चेत्युपदिश्यते मन्त्रे–

विचक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्।[3]

अन्यच्चावधेयं यत् सर्वे देवा मानवविकासाय संरक्षणाय च यत्नशीलाः सन्ति, तथैव सर्वेषां समन्वितविकासः कर्तव्यः इति वैदिकस्याधिकार-सिद्धान्तस्याधारभूतं तथ्यमवगन्तव्यम्।

२. मानवाधिकारसिद्धान्तस्य प्रेरकानि तत्त्वानि

(१) वैश्विकी एकता

प्राक्तनैः साक्षात्कृत धर्मै ऋषिभिः श्रूयते समग्रस्य विश्वस्य वार्ताऽद्य पृथिवी अस्ति सर्वेषां गृहमिव। अत्र नैके जनाः समभावेन निवसन्ति। सर्वैरनुभूयते पृथिवीं प्रति मातृभावम्।

उपदिश्यतेऽथर्वश्रुतौ–

जन विभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।[4]

---

१. ऋग्वेदे ७.७७.१
२. तदेव ८.४५.४२
३. तदेव ७.१००.४
४. अथर्ववेदे १२.१.४५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यजुर्वेद उद्घोषयति–

यत्र विश्वं भवति एकनीडम्।[1]

वैदिकदेवतानां कार्यक्षेत्रमपि समस्तं विश्वं विद्यते।

(२) मानवीय–समानता

वैदिकः समाजः समत्वभावस्य पोषक आसीत्। जनानां सांस्कृतिकजीवने भेदभावस्यावकाशो नासीत्। यतो हि कमपि वर्गविशेषं समुदायं वाभिलक्ष्य नोपदिश्यते मन्त्रेषु। वस्तुतः सर्वासु राष्ट्रप्रजासु प्राणिषु च तेजः सम्पादनं सत्यव्यहृतिश्च भवेताम् इति सम्प्रार्थ्यते ऋग्वेदस्य सञ्ज्ञानसूक्तम्। अत्र उत्कृष्टसामाजिकभावस्य दर्शनं सञ्जायते–

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वां मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते।।[2]

ऋग्वेदीया श्रुतिरुपदिशति यन् मनुष्येषु न सन्ति ज्येष्ठाः कनिष्ठाः वा, सर्वे मर्याः सुजन्मसम्पन्नाः दिव्याः यथा **पृश्निमातरः मरुताः**[3] सर्वे जनाः वेदमते '**अमृतस्य पुत्राः**[4] अतो हि तत्त्वतः समरूपाः। ऋग्वेदे तु कर्मानुसारं गुणानुसारं वा वर्णव्यवस्था निर्दिष्टास्ति।[5]

(३) विश्वबन्धुत्व–भावना

विश्वबन्धुत्वभावनाया या चर्चा वेदमन्त्रेषु समुपलभ्यते सा तु विश्ववाङ्मस्याऽयानुपममुदाहरणमस्ति। मैत्री, सौहार्दम्, अनन्यता, सङ्गठनं, साहाय्यमित्येवादीनामुदात्तभावानां मानवोत्कर्षायोल्लेखोऽथर्ववेदे ऋग्वेदे च नैकेषु स्थानेषु प्राप्यते। मित्रस्य दृष्टिरस्ति परमप्रशंसनीया–

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।[6]

---

१. यजुर्वेदे ३२.८
२. ऋग्वेदे १०.१९१.२
३. ऋग्वेदे ५.५९.६
४. तदेव १०.१३.१
५. तदेव १०.९०.१२
६. यजुर्वेदे ३६.१८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निस्सन्देहं मैत्री भावना मानवाधिकारस्यावधारणायाः परमं प्रेरक–तत्त्वमिव प्रतीयते वैदिकवाङ्मये।

३. सामान्याः मानवाधिकाराः

ऋग्वेदस्यानुशीलनेन प्रतीयते यत् सर्वेषां जनानां कृते प्रधानतया निम्नलिखिताश्चत्वारोऽधिकारास्तत्र निर्दिष्टाः सन्ति।

(१) सामाजिकन्यायस्याधिकारः

यदा जनस्य कृते समताभावनाया निर्देश उदात्तगुणानामाचरणेन सह उपदिष्टो भवति, तदा अन्यकृतानाचार–अन्यायप्रतिकारस्याधिकारः स्वत एवोपजायते। सम्पूर्णव्यवस्थायाः मूलतत्त्वमस्ति ऋतमिति मन्त्रेषु सुष्ठुतया निर्दिश्यते। राष्ट्रे राजा न्यायकर्ता भवति, तं प्रति मन्त्रे प्रार्थ्यते–

ऋतेन राजन्ननृतं विविञ्चन् मम राष्ट्रस्याधिपत्यमेहि।[1]

सामाजिकन्यायार्थं राष्ट्रे अक्षय्यं क्षात्रबलमुद्भवतु तच्च कृत्स्नमपि सात्त्विकभावापन्नं प्रसरत्विति मन्त्रोक्तिः। 'राजानः सत्यं कृण्वानाः' भवन्तु। समुचितो न्यायोऽस्ति सर्वेषां जनानां सुनिश्चितोऽधिकारः। तथैव नियमानुपालने शैथिल्यं दण्डस्य कारणं भवत्येव येन प्रति प्रमादो न भवितुर्महति उत्तमे राष्ट्रे। अग्निदेवः तं जनं त्रिधा बध्नाति योऽनृतेन 'ऋतम्' विनश्यति–

त्रिर्यातुधानः प्रसितिं त एत्वृतं यो अग्ने अनृतेन हन्ति।[2]

नैतिकताया अधिष्ठाता वरुणदेवोऽपि सदैवापराधिजनं पाशैर्बद्ध्वा दण्डयति। अत्रोच्चतमानामादर्शानां स्थापनायै न्यायस्य महत्त्वं समुचितरूपेण दृग्गोचरी भवति।

(२) सुरक्षितशान्तिपूर्णसुखमयजीवनस्याधिकारः

वैदिक–ऋषीणां दृष्ट्या सर्वेषां मानवानां प्रधानोऽधिकारो विद्यते यत् ते सामान्यतया सुखिनः सुरक्षिताश्च भवन्तु। मानवजीवनस्य मुख्यलक्ष्यमस्ति 'शान्तिः'। वैदिकमन्त्रेषु भूरिशः सर्वकल्याणकामना, एतादृशा भावाः च अनेकशः

१. ऋग्वेदे १०.१२४.३

२. ऋग्वेदे १०.८७.११

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकटिताः दृश्यन्ते यथा–

अथाभयं कृणुहि विश्वतो नः
भद्रं कर्णेभिः श‍ृणुयाम देवा भद्द्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः।
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु।[1]

सत्यता–अनुशासनञ्च शान्तिस्तम्भे शान्तिस्थापनायै शासकवर्गः सदैव प्रयत्नशीलो भवेत् ऋषिभिः न केवलं मानवानां चिन्तनमुपस्थापितमपित्वस्मिन् जगति पशुपक्षिणामपि चिन्तनं कृतम्। भूतयज्ञे तु निखिलपशुपक्षीणामर्थमपि, बलिवैश्वदेवस्य' विधानमत्यावश्यकरूपेण विहितं सर्वेभ्यो गृहस्थेभ्यः।

(३) शिक्षायाः ज्ञार्नाजनस्य चाधिकारः

जन्मानन्तरमेव मनुष्यः स्वविकासाय प्रशिक्षणं प्रारभते। बाल्यकाले शिक्षाप्राप्तिः तस्यैव प्रमुखं सोपानमिवास्ति। मातास्ति प्रथमा गुरुः, पितास्ति श्रेष्ठः गुरुः परमाचार्योऽस्ति प्रधानोः गुरुः। एतेषां सान्निध्ये स्वकीय–शारीरिक–मानसिक–बौद्धिक–विकासस्य–अधिकारः प्रत्येकं जनस्यास्ति इति। निर्विवादरूपेण सर्वैः स्वीक्रियते। ज्ञानी आचार्योः जिज्ञासुं शिष्यमवश्यं शिक्षेत, ज्ञानार्जनाय सततं उद्यमः कर्तव्यः इति वेदस्योपदेशोऽस्ति। वेदस्योद्घोषः–विद्वानेवोत्तममार्गे नयति–

विद्वान् पथः पुर एत ऋजु नेषति।[2]

अद्य तु अनेकैः कारणैर्जनाः शिक्षाधिकारेण वञ्चिताः भवन्तिः परं वैदिककालेऽस्य अधिकारस्य बाधकः किमपि कारणं नासीत्। उत्तरोत्तरोत्कर्ष एव मानवजीवनस्य लक्ष्यं विद्यते, अतएव शिक्षाप्राप्तिः आवश्यकी मन्यते। मन्त्रेषु एतादृशं वर्णनमृषिभिः कृतम्, यथा–

---

१. तदेव क्रमशः ३.४७.२, १.८६.८, यजुर्वेदे ३६.८, ऋग्वेदे ७.३५.४, २ तथा १२
२. ऋग्वेदे ५.४६.१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निस्सन्देहं मैत्री भावना मानवाधिकारस्यावधारणायाः परमं प्रेरक–तत्त्वमिव प्रतीयते वैदिकवाङ्मये।

३. **सामान्याः मानवाधिकाराः**

ऋग्वेदस्यानुशीलनेन प्रतीयते यत् सर्वेषां जनानां कृते प्रधानतया निम्नलिखिताश्चत्वारोऽधिकारास्तत्र निर्दिष्टाः सन्ति।

(१) **सामाजिकन्यायस्याधिकारः**

यदा जनस्य कृते समताभावनाया निर्देश उदात्तगुणानामाचरणेन सह उपदिष्टो भवति, तदा अन्यकृतानाचार–अन्यायप्रतिकारस्याधिकारः स्वत एवोपजायते। सम्पूर्णव्यवस्थायाः मूलतत्त्वमस्ति ऋतमिति मन्त्रेषु सुष्ठुतया निर्दिश्यते। राष्ट्रे राजा न्यायकर्ता भवति, तं प्रति मन्त्रे प्रार्थ्यते–

ऋतेन राजन्ननृतं विविञ्चन् मम राष्ट्रस्याधिपत्यमेहि।[1]

सामाजिकन्यायार्थं राष्ट्रे अक्षय्यं क्षात्रबलमुद्भवतु तच्च कृत्स्नमपि सात्त्विकभावापन्नं प्रसरत्विति मन्त्रोक्तिः। 'राजानः सत्यं कृण्वानाः' भवन्तु। समुचितो न्यायोऽस्ति सर्वेषां जनानां सुनिश्चितोऽधिकारः। तथैव नियमानुपालने शैथिल्यं दण्डस्य कारणं भवत्येव येन प्रति प्रमादो न भवितुर्महति उत्तमे राष्ट्रे। अग्निदेवः तं जनं त्रिधा बध्नाति योऽनृतेन 'ऋतम्' विनश्यति–

त्रिर्यातुधानः प्रसितिं त एत्वृतं यो अग्ने अनृतेन हन्ति।[2]

नैतिकताया अधिष्ठाता वरुणदेवोऽपि सदैवापराधिजनं पाशैर्बद्ध्वा दण्डयति। अत्रोच्चतमानामादर्शानां स्थापनायै न्यायस्य महत्त्वं समुचितरूपेण दृग्गोचरी भवति।

(२) **सुरक्षितशान्तिपूर्णसुखमयजीवनस्याधिकारः**

वैदिक–ऋषीणां दृष्ट्या सर्वेषां मानवानां प्रधानोऽधिकारो विद्यते यत् ते सामान्यतया सुखिनः सुरक्षिताश्च भवन्तु। मानवजीवनस्य मुख्यलक्ष्यमस्ति 'शान्तिः'। वैदिकमन्त्रेषु भूरिशः सर्वकल्याणकामना, एतादृशा भावाः च अनेकशः

१. ऋग्वेदे १०.१२४.३

२. ऋग्वेदे १०.८७.११

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकटिताः दृश्यन्ते यथा–

अथाभयं कृणुहि विश्वतो नः
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्द्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः।
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु।[1]

सत्यता–अनुशासनञ्च शान्तिस्तम्भे शान्तिस्थापनायै शासकवर्गः सदैव प्रयत्नशीलो भवेत् ऋषिभिः न केवलं मानवानां चिन्तनमुपस्थापितमपित्वस्मिन् जगति पशुपक्षिणामपि चिन्तनं कृतम्। भूतयज्ञे तु निखिलपशुपक्षीणामर्थमपि, बलिवैश्वदेवस्य' विधानमत्यावश्यकरूपेण विहितं सर्वेभ्यो गृहस्थेभ्यः।

(३) शिक्षायाः ज्ञानार्जनस्य चाधिकारः

जन्मानन्तरमेव मनुष्यः स्वविकासाय प्रशिक्षणं प्रारभते। बाल्यकाले शिक्षाप्राप्तिः तस्यैव प्रमुखं सोपानमिवास्ति। मातास्ति प्रथमा गुरुः, पितास्ति श्रेष्ठः गुरुः परमाचार्योऽस्ति प्रधानोः गुरुः। एतेषां सान्निध्ये स्वकीय–शारीरिक–मानसिक–बौद्धिक–विकासस्य–अधिकारः प्रत्येकं जनस्यास्ति इति। निर्विवादरूपेण सर्वैः स्वीक्रियते। ज्ञानी आचार्योः जिज्ञासुं शिष्यमवश्यं शिक्षेत, ज्ञानार्जनाय सततं उद्यमः कर्तव्यः इति वेदस्योपदेशोऽस्ति। वेदस्योद्घोषः–विद्वानेवोत्तममार्गे नयति–

विद्वान् पथः पुर एत ऋजु नेषति।[2]

अद्य तु अनेकैः कारणैर्जनाः शिक्षाधिकारेण वञ्चिताः भवन्तिः परं वैदिककालेऽस्य अधिकारस्य बाधकः किमपि कारणं नासीत्। उत्तरोत्तरोत्कर्ष एव मानवजीवनस्य लक्ष्यं विद्यते, अतएव शिक्षाप्राप्तिः आवश्यकी मन्यते। मन्त्रेषु एतादृशं वर्णनमृषिभिः कृतम्, यथा–

---

१. तदेव क्रमशः ३.४७.२, १.८९.८, यजुर्वेदे ३६.८, ऋग्वेदे ७.३५.४, २ तथा १२
२. ऋग्वेदे ५.४६.१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उत्क्राम महते सौभगाय।
आरोहणं आक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम्।
अश्वासो न चङ्क्रमत।
कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।[1]

(४) स्वराज्यस्य स्वतन्त्रतायाश्चाधिकारः

निर्भयभावेन सुरक्षया च स्वतन्त्रता उपजायते, स्वतन्त्राऽस्ति मानवमात्रस्य एकोऽधिकारः। अभयमिति वेदस्य महत्तमः सन्देशः। सर्वे जनाः कर्मस्वातन्त्रयस्य, वाक्स्वातन्त्र्यस्य विचारस्वातन्त्र्यस्य चाधिकारिणः सन्ति, केवलं तु स्वतन्त्रतायाः देव–नियमा अनतिक्रमणीया भवेयुः। वेदस्याप्रतिमो विचारोऽस्ति स्वराज्यस्यावधारणा। स्वराज्यमिति विषयमधिकृत्य मन्त्रेषु प्रकाम सन्दर्भाः समुपलभ्यन्ते। स्थिरस्य स्वराज्यस्याकाङ्क्षा कर्तव्या, तस्य संरक्षणमपि कर्तव्यम्–

व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये।[2]

ऋषयो ध्रुवं सुप्रतिष्ठञ्च शासनमभिलषितवन्तः। तथा ह्यथर्ववेद उपदिशति–

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद् राष्ट्रमधिभ्रशत्।
इन्द्र इवेह ध्रुवस्तिष्ठेह राष्ट्रमु धारय।[3]

अत्र 'विशत्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु' इत्युक्त्वा निरङ्कुशत्वं शासकस्य ध्रुवस्यापि निर्वायते। अग्रतनसूक्तेऽपि 'ध्रुवो राजा विशामयम् इत्यादिरूपेण प्रजानां कृते स्थिरशासनं स्वराज्यं वा श्रेष्ठमङ्गीकृतम्। साम्प्रतिके काले बालगङ्गाधरतिलकेन 'स्वराज्यमस्ति अस्माकं जन्मसिद्धः अधिकारः 'इत्युद्घोषितः, परं वेदेषु तस्यावधारणा अस्य सिद्धान्तस्य प्राचीनतमसन्दर्भ इव प्रतीयते।

---

१. क्रमशः यजुर्वेदे ११.२२, अथर्ववेदे ५.३०.७ ऋग्वेदे ८.५५.४ तथा अथर्ववेदे ७.५०.८
२. ऋग्वेदे ५.६६.६
३. अथर्ववेदे ६.८७.१–२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वैदिकवाङ्मये सर्वेषां मानवानां कृते विश्वबन्धुत्वभावनायाः कल्याणभावनायाः, सुरक्षाभावनायाश्च चिन्तनं प्रचुरमात्रायां विद्यते। ऋषीणां हृदये सङ्कीर्णतायै लेशमात्रमपि स्थानं नास्ति। सर्वेषां चिन्तनेषु पूर्णतया औदार्यं दृश्यते। मानवसमुदाये परिव्याप्ता उदात्तभावनाः राष्ट्रं पुष्णाति। एतादृशानि राष्ट्राणि विश्वं पुष्यन्ति। मानवाधिकाराणां समुचितानुपालनं सर्वविधस्य विकासस्य मार्गं प्रथयति। कर्मशीलता सदाचरणम् उदात्तता च अस्य मूलभूत आधारोऽस्ति। वैदिकमन्त्राणामनुशीलनेनैवमेव ज्ञायते। कर्तव्यान् विहाय केवलं अधिकाराणां चर्चा एकपक्षीया, अतएव जीवने समग्रतायाः समादरं भवितव्यम्।

मानवाधिकारस्तु प्रकृतिप्रदत्तः, यतो हि तेन विना कोऽपि मानवो मानवजीवनं यापयितुमसमर्थो भवति। तस्य छत्रछायायामेव गुणाः विकसन्ति, प्रज्ञाश्च वर्धते। तेनैव तस्यावश्यकतानां पूर्तिः सन्तुष्टिश्च सम्पद्यते। अत एव नास्ति आश्चर्यविषयो यदि साक्षात्कृतधर्माणः ऋषयो मानवाधिकारस्य स्वरूपमवधारणाञ्च सविस्तरं सूत्ररूपेण वा भृशं प्रख्यापयन्ति।

उक्तविवेचनेनेदं सुव्यक्तं यद् ऋग्वेदे मानवाधिकारस्यावधारणा पर्याप्ततया दृढ़ास्ति, तत्र आधारभूताः ये सिद्धान्ताः प्रतिपादितास्तेऽद्याप्यस्माकं दिशानिर्देशका भवितुमर्हन्ति। सन्दर्भेऽस्मिन् वेदस्य सर्वोत्तमं व्याख्यानार्याणां जीवनमेवासीत्। अतो हि वैदिकी संस्कृतिरधुनापि विश्ववारा संस्कृतिरस्ति।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीवैष्णवसम्प्रदायस्य लोकोपयोगिता आवश्यकता च

डा.पि.टि.जि.वै. सम्पत्कुमाराचार्यः
प्रवाचकः, न्यायविभागः
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, तिरुपतिः

लक्ष्मीनाथसमारम्भां नाथयामुनमध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्।।

श्रीमन्नारायणेन भगवता अष्टाक्षराख्य–मूलमन्त्रस्योपदेशेन बदरिकाश्रमे समारब्धोऽयं श्रीवैष्णवसम्प्रदायः बोधायनटङ्कद्रमिडाचार्यादिभिः सूत्रवृत्तिव्याख्यानैः पल्लवितः, नाथयामुनादिभिः पोषितः, भगवद्रामानुजाचार्यैः भाष्यादिग्रन्थनप्रचारादिना पुष्पितो भूत्वा नितरां लोकोपकारकः मुमुक्षुजनसमुद्धारकश्च चकास्ते। वेदप्रतिपाद्यभगवत्स्वरूपनिरूपणे, वेदप्रामाण्यपरक्षणे च बद्धश्रद्धः अधुनापि श्रुतप्रकाशिकादिभिः व्याख्यागणैः वरवरमुनीन्द्र–वेदान्तदेशिकादिभिः महद्भिर्निर्मितग्रन्थैः परिरक्ष्यमाणो विराजते–

नाथोपज्ञं प्रवृत्तं बहुभिरुपचितं यामुनेयप्रबन्धैः।
त्रातं सम्यग्यतीन्द्राद्यखिलतमः कर्शनं दर्शनं नः।।

इति तत्त्वमुक्ताकलापे श्रीवेदान्तदेशिकाः विवृण्वन्ति।

अनादिकालात् स्वस्वकृतकर्मणः परिपाकरूपेण तत्तद्देहपरिग्रहणेन फलमनुभवन् जननमरणरूपसंसारचक्रे परिभ्रमतां बद्धचेतनानां समुद्धरणाय भगवताऽऽज्ञाप्तः आदिशेषः श्रीवैकुण्ठाद् भूमौ रामानुजाचार्यरूपेणावततारेति निश्चप्रचं श्रीवैष्णवलोके–

आदौ जगदाधारः शेषः तदनु सुमित्रानन्दनवेषः।
तदुपरि धृतहलमुसलविशेषः तदनन्तरमभवद्गुरुरेषः।।

इति भजयति राजस्तोत्रे।

भगवद्रामानुजाचार्यैः वेदप्रामाण्यानभ्युपगन्तारो जैनबौद्धसाङ्ख्यादयः, वेदैकदेशप्रामाण्याभ्युपगन्तारः कुदृष्टयश्च नितान्तं समाहिताः।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वेदार्थसङ्ग्रह–वेदान्तदीप–वेदान्तसार–श्रीभाष्य–गीताभाष्य–श्रीवैकुण्ठगद्य-श्रीरङ्गाद्य–नित्यग्रन्थरूपेण नवमग्रन्थरत्नैः वैदिकं विशिष्टाद्वैतं तत्त्वं सुष्ठु प्रतिष्ठापितम्। भगवद्रामानुजाचार्यैः मूलमन्त्रार्थोपदेशलाभाय महान् क्लेशोऽनुभूतः। अष्टादशपर्यायं तैः स्वाचार्याः श्रीशैलपूर्णाः सम्प्रार्थिताः मन्त्रार्थानुग्रहाय। तदात्वे आचार्याः पारम्परिकतया शिष्यं यावत्कालं बहुधा परीक्ष्यैव स्वजीवनकाले एकस्मै द्वाभ्यां वा मन्त्रार्थमुपदिशन्त आसन्। तेऽपि पुनरेकस्मै इत्येवंरीत्या शनैः शनैरेव सम्प्रदायोऽयं प्रवर्तते स्म। तत्र क्लेशं, हानिं च विचिन्त्य भगवद्रामानुजाचार्याः सम्प्रदायस्यास्य बहुलप्रसाराय परिरक्षणाय च बद्धश्रद्धा अभवन्। स्वयं बहून् शिष्याननुजग्रुहुः। ७२ पीठानि सिद्धान्तप्रचाराय समस्थापयन्। समर्थान् शिष्यान् तदधिपतीन् कृत्वा, तानादिदिशुः आश्रितजनसमुद्धरणाय योग्येभ्यः सर्वेभ्यः मन्त्रमन्त्रार्थोपदेशाय। परमकारुणिकानामेतेषां साहसेन मुमुक्षुलोकः सर्वोऽपि परमप्रयोजनं मुक्त्युपायं सुलभतयैव लब्ध्वा भगवच्चरणारविन्दमाश्रित्य सन्तारति संसारबन्धम् एतावन्तं कालम्। रामानुजाचार्याणामस्या उदारतायाः तत्फलस्य निरवधिकमुमुक्षु–जनोद्धरणस्य दर्शनेन सुप्रीतो भगवान् श्रीरङ्गनाथो विशिष्टाद्वैत–सिद्धान्तस्यास्य रामानुजदर्शनमित्येव नाम समस्थापयत्। अयमंशः रामानुजानामवतारभूतैः श्रीमद्भिः वरवरमुनिचरणैः अनुगृहीतायामुपदेश–रत्नमालायां स्पष्टमुल्लिखितम्–

'ओराण्–वजियाय्.... अरिवैक्काक इति।

इयमेव प्रक्रिया रामानुजार्यदिव्याज्ञा इति व्यवह्रियते। अस्य दिगन्तपर्यन्तप्रासरणमेव सर्वैः श्रीवैष्णवैः कर्तव्यम् इति, एषा सकललोकहितकारीति इति च तैराचार्यैः जोधुषितम्–

''रामानुजार्यदिव्याज्ञा वर्धतामभिवर्धतम् श्रीरामानुजार्यदिव्याज्ञा प्रतिवासरमुज्वला दिगन्तव्यापिनी भूयात् सा हि लोकहितैषिणी।।

इति तावत्कालपर्यन्तं मन्त्रो मन्त्रार्थश्च रहस्यातया एकैकस्मै एव उपादिश्यमानौ संस्थापितावास्ताम्। अश्रद्धानाय मन्त्रप्रकाशनेन गुरुः निरयं यातीति विश्वस्यते स्म। यतः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मन्त्रे तद्देवतायां च तथा मन्त्रप्रदे गुरौ।
त्रिषु भक्तिः सदा कार्या सैव सन्तारणक्षमा।।

इति मन्त्रस्य यावद्गौरवमस्ति तावत् मन्त्रप्रदातुराचार्यस्यापि परिगण्यत इति स्मृतिवचनाद्, गुरुवचनमुल्लङ्घ्य न केनापि अन्येभ्यो: मन्त्रो न प्रसारितः। परं तु भगवद्रामानुजाचार्याः मन्त्रस्य प्रयोजनं सर्वेभ्यः प्रकाशयितुं सकलमुमुक्षुसन्तरणोपायतया श्रीरङ्गगोपुरमधिरुह्य मन्त्रवैभवं प्रकाशयामासुः। तेन रामानुजाचार्याणामाचार्याः श्रीशैलपूर्णाः कृपित्वा भवते निरयो भविष्यतीति शेषः। तदा रामानुजार्याः एकस्य मम निरयगमनेऽपि मन्त्रप्रभावेण अनने बहवो जना समुत्तारिता भवेयुरिति लोकहितकामनया मया एवमनुष्ठितमिति स्वाचार्यान् विज्ञापयामासुः। एवंरीत्या स्वस्याहितमप्य– विगणय्य भगवद्रामानुजार्यैः लोकोद्धरणमकारि। एवं

'दैवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीनं तु दैवतम्।
तन्मन्त्रं देशिकाधीनं देशिको मम दैवतम्।।''

इति मन्त्रप्रदातुराचार्यस्य माहात्म्यं शास्त्रेषु जोघुष्यते। तादृश आचार्यः ज्ञानवैराग्यसम्पन्नः स्वयं आचरणपूर्वकं शिष्यमुपदिशति। एतावन्तमुपकारं कृतवते आचार्याय शिष्यस्य प्रतिकृतिः तच्छरीरसंसेवनमेव। ज्ञानवैराग्ययोः सम्पादनायैव स्वयमाचार्यस्य अर्धाधिकम् आयुः गच्छति। तादृशं भक्तिप्रपत्तिसम्पन्नमन्वेष्टुं शिष्यस्यापि अर्धायुर्गच्छति। तदात्वे सः आचार्यः प्रायेण वृद्धो भवति, सः ज्ञानोपदेशेन शिष्यस्य आत्मानं रक्षति। स च शिष्यः सकलविधसेवनेन आचार्यशरीरं यावज्जीवं रक्षति। एवं प्रपन्नौ शिष्याचार्यौ परस्परं शरीरात्मरक्षको भूत्वा वर्तमानौ इति विषयं यः शिष्योः गृह्णाति, सः स्वाचार्यं त्यक्त्वा देशान्तरे स्थातुं क्षणमपि नेच्छति। इत्यमुमपि रहस्यं वरवरमुनयः स्वकृतौ उपदेशरत्नमालायां विशदीचक्रुः।

अयमेव क्रमः सर्वैरपि अनुसर्तव्य इति स्वशिष्येभ्यश्च समादिदिशुः। अयमाशयो भगवता श्रीरङ्गनाथेनाप्यनुमतः। मुमुक्षुजनोद्धारकममुं मार्गं प्रशंस्य, अस्य श्रीवैष्णवसिद्धान्तस्य भगवद्रामानुजमुनिसंस्थापितस्य तेषामेव नाम्ना 'एम्बेरुमानार्दर्शनम्'' इति नाम श्रीरङ्गनाथः स्थिरीचकार। एम्बेरुमान् इति भगवत नारायणस्य नाम। पुरुषोत्तम इति तदर्थः। प्रपन्नानां तदपेक्षया

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चाधिकम् एम्बरुमानार् इति रामानुजाचार्याणां द्रविडनाम प्रसिद्धं जातम्। भगवन्मार्गदर्शकस्य भगवदपेक्षया वैशिष्टयं दर्शितमस्मिन्। यद्यपि लोकोपकारार्थं रामानुजाचार्यैः मन्त्रस्य प्रकाशनं कृतम्, तथापि गुरुनियमनोल्लङ्घनचिन्ता तु मनसि पीडयत्येव स्म।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वास्तुशास्त्रविमर्शः

प्रो० मदनमोहनपाठकः
निदेशकः
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वेदव्यासपरिसरः, बलाहरः हि.प्र.

अद्यत्वे भौतिकसंसाधनानां प्राचुर्ये सत्यपि दृश्यते गृहे–गृहे अशान्तिः, कलहः, असन्तोषः, रोगानामभिवृद्धिः, अगण्याः बह्व्यः समस्याः। एवं विधानां सर्वासां समस्यानां मुख्यभूतं कारणं वर्तते अस्माकं वास्तुशास्त्रीयं ज्ञानं विना गृहनिर्माणम्। अतः एवं विधानां समस्यानां समाधानार्थं वास्तुशास्त्रानुसारेण गृहनिर्माणमवश्यं कर्त्तव्यम्। वास्तुशास्त्रं त्रिस्कन्धज्यौतिषशास्त्रान्तर्गतस्य संहितास्कन्धस्य अन्यतमः प्रभागः। वेदाङ्गेषु चक्षुः स्थानीयमिदं ज्योतिषशास्त्रं त्रिषु स्कन्धेषु विभक्तमस्तीति सुधयः विदन्त्येव। यथोक्तं महर्षिनारदः–

सिद्धान्त–संहिता–होरारूपस्कन्धत्रयात्मकम्।
विनैतदखिलं कर्म श्रौतं स्मार्तं न सिद्ध्यति।।[1]

यतः समग्रं गणितीयं ज्ञानं सिद्धान्तस्कन्धे, व्यष्टिगतं शुभाशुभफलज्ञानं होरास्कन्धे, तथा अवशिष्टं कार्त्स्न्यं ज्ञानं संहिताशास्त्रे सम्यग् उपनिबद्धं वर्तते। तद्यथा–

ज्योतिःशास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्धत्रयाधिष्ठितं
तत्कात्स्न्योपनयस्य नाम मुनिभिः सङ्कीर्त्यते संहिता।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ
होरान्योऽङ्गविनिश्चयश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः।।[2]

अनेन संहितालक्षणवचनेन संहितास्कन्धन्तर्गतेषु समेषु ग्रन्थेषु वास्तुविवेचनं सुस्पष्ट–तया दृश्यते। अत्रेदं विचारणीयं यत् वास्तुशब्दार्थः कः?

---

१. नारदसंहितायाम्–१
२. बृहत्संहितायाम्–१/१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का वा आवश्यकता वास्तुशास्त्रस्य? अतः सर्वादौ इदमेव उच्यते।[३] वसेरगारे णिच्च इति उणादिसूत्रेण वस् (निवासे) धातोः तुण्प्रत्ययेन वास्तुशब्दः निष्पन्नो भवति। यस्यार्थो भवति गृहकरणयोग्या भूमिः। अत्रेदं नैवावगन्तव्यं यत् वास्तु नाम मानवानां निवासयोग्या भूमिः। वास्तु इति कथनेन समेषां जीवानां निवासयोग्याभूमिरपि ज्ञातव्या। यतः वस् धातुः निवासार्थे प्रयुज्यते। निवासस्थानन्तु समेषां जीवानां भवति।

तद्यथा–

देवतानां नराणाञ्च गजगोवाजिनामपि।
निवासभूमिशिल्पज्ञैः वास्तुसञ्ज्ञमुदीरितम्।।[४]

वास्तुशास्त्रस्य का आवश्यकता? इत्यस्मिन् विषये प्रायः समेषु वास्तुग्रन्थेषु प्रारम्भे एव इत्यस्य चर्चा मिलति। अखिलं स्त्रीपुत्रादिकभोगसौख्यजनितं सुखं गेहादेव समुत्पद्यते। पुरुषार्थचतुष्टयेषु पुरुषार्थत्रयाणामपि आधारः वास्तु एव। शीताम्बुघर्मादिभिः परिरक्षणं, जन्तूनामयनं, सुखास्पदं, वापी–देव–गृहादीनामखिलं पुण्यं सर्वमप्येतद् गृहादेव समुत्पद्यते। अतः विश्वकर्मादयः वास्तुशास्त्रस्य विपुलान् विचारान् कुर्वन्तः सन्ति। तद्यथा –

स्त्रीपुत्रादिकभोगसौख्यजननं धर्मार्थकामप्रदं
जन्तूनामयनं सुखास्पदमिदं शीताम्बुघर्मापहम्।
वापीदेवगृहादिपुण्यमखिलं गेहात्समुत्पद्यते
गेहं पूर्वमुशन्ति तेन विबुधाः श्रीविश्वकर्मादयः।।[५]

उपर्युक्तमखिलं सुखं गेहात्समुत्पद्यते एव। गृहनिर्माणस्य सम्बन्धः धर्मेण सह संस्थापितोऽपि दृश्यते। यथा तृणजं गृहनिर्माणं कोटिघ्नं फलं प्रददाति।

---

३. उणादिसूत्रे–१.७०
४. विश्वकर्मावास्तुशास्त्रे–७.१
५. बृहद्वास्तुमालायां गृहारम्भविधिः श्लो. सं. ४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मृण्मयगृहनिर्माणं दशगुणितं फलं, ऐष्टिकं गृहनिर्माणं शतकोटिघ्नम् अर्थात् अर्बुदगुणितं फलं तथा शैलनिर्मितं गृहम् अनन्तं पुण्यवर्धकं फलं प्रददाति। तद्यथा–

कोटिघ्नं तृणजे पुण्यं मृण्मये दशसङ्गुणम्।
ऐष्टिके शतकोटिघ्नं शैलेऽनन्तं फलं गृहे।।[६]

एवं विधस्य पुण्यवर्धकस्य गृहनिर्माणसम्बन्धितस्य कर्मणः साङ्गोपाङ्गचर्चा वास्तुग्रन्थेषु विस्तृतरूपेण सम्प्राप्यते। वास्तुविषयः सर्वथा स्थापत्यवेदेन सम्बन्धितो वर्तते। श्रीमद्भागवत–पुराणानुसारं स्थापत्यवेदः अथर्ववेदस्य उपवेदो वर्तते। यथा ऋग्वेदस्य–आयुर्वेदः, यजुर्वेदस्य–धनुर्वेदः, समावेदस्य–गान्धर्ववेदः, अथर्ववेदस्य–स्थापत्यवेदः वर्तते। परमन्येषाम् मतानुसारं यथा ऋग्वेदस्य–धनुर्वेदः, यजुर्वेदस्य–स्थापत्यवेदः, सामवेदस्य–गान्धर्ववेदः, अथर्ववेदस्य–आयुर्वेदः, इति मतान्तराणि अपि प्राप्यन्ते। वेदोपवेदानां यानि मतान्तराणि भवन्तु नाम परन्तु वास्तुशास्त्रस्य स्थापत्यसञ्ज्ञकोपवेदेन साक्षात् सम्बन्धो वर्तते इत्यत्र नास्ति काचित् संशीतिः।

अस्य वास्तुशास्त्रस्य अष्टादश आचार्याः व्यासेन प्रतिपादिता। तद्यथा-

भृगुरत्रिवशिष्ठश्च विश्वकर्मा यमस्तथा।
नारदो नग्नजिश्चैव विशालाक्षः पुरन्दरः।।

ब्रह्माकुमारो नन्दीशः शौनको गर्ग एव च।
वासुदेवोऽनुरुद्धश्च तथा शुक्रबृहस्पतिः।।

अष्टादशैते विख्याता वास्तुशास्त्रोपदेशकाः।।[७]

एभिरेव आचार्यैः अथर्ववेदात् यजुर्वेदाच्च वास्तुविषयकानि ज्ञानरत्नानि अन्विष्य पृथग् रूपेण वास्तुशास्त्रस्य रचना विहिता। परं दौर्भाग्यमस्माकं

६. बृहद्वास्तुमालायां गृहारम्भविधिः श्लो.सं.५
७. मत्स्यपुराणे २२६ अध्याये

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधुनातनीय–भारतीयानां यत् समेषां वास्तुशास्त्राचार्याणां पृथक्–पृथक् ग्रन्थरत्नानि नैव प्राप्यन्ते। भारतीयसंस्कृति–ध्वंसकैः आसुरिप्रकृतिकैः वैदेशिकैः सर्वाणि ग्रन्थरत्नानि अपहृतानि, कानिचित् नालन्दा–पुस्तकालयध्वंसकासुरैः अग्निं प्रज्ज्वाल्य विनाशितानि। कानिचित् कालेन कवलितानि च जातानि। अस्त्विदानीम् उपलब्धानां केषाञ्चन वास्तुग्रन्थानाम् उल्लेखः क्रियते। तद्यथा–

१. विश्वकर्मावास्तुशास्त्रम्	२. विश्वकर्माप्रकाशः	३. विश्वकर्मशिल्पम्
४. अपराजितपृच्छा	५. वास्तुराजवल्लभः	६. प्रासादमण्डनम्
७. सनत्कुमारवास्तुशास्त्रम्	८. समराङ्गणसूत्रधारः	९. युक्तिकल्पतरुः
१०. राजसिंहवास्तुशास्त्रम्	११. भुवनदीपः	१२. बृहत्शिल्पशास्त्रम्
१३. मानसोल्लासः	१४. मनुष्यालयचन्द्रिका	१५. रूपमण्डनम्
१६. वास्तुविद्या	१७. वास्तुरत्नावली	१८. पौराणिकवास्तुशान्तिप्रयोगः
१९. वास्तुमुक्तावली	२०. वास्तुसङ्ग्रहः	२१. वास्तुसारः
२२. बृहद्वास्तुमाला	२३. मानसारः	२४. मयमतम्

समेषां वास्तुग्रन्थानामयं निष्कर्षः वर्तते यद् गृहनिर्माणात् पूर्वं काकिणीविचारद्वारा आदौ अभीष्टनगरं वासकर्त्तुः कृते अनुकूलं वर्तते न वा इत्यस्य ज्ञानं कर्तव्यम्। सत्यनुकूले भूमिपरीक्षणं, भूमिशुद्धिं, शल्योद्धारं दिग्ज्ञानञ्च विधाय सविधिविघ्नेश–चण्डिका–क्षेत्राधिपति–दिक्पाल–वास्तुदेवाँश्च पुष्प–धूप–बलिभिः प्रपूज्य गृहारम्भः कर्तव्यः।

तद्यथा–

परीक्षितायां भुवि विघ्नराजं समर्चयेच्चण्डिकया समेतम्।
क्षेत्राधिपं चाष्टदिगीशदेवान्सुपुष्पधूपैर्बलिभिः सुखाय।।[८]

अत्र वास्तुपूजा गृहारम्भे गृहप्रवेशे च कर्तव्या। तत्र कः वास्तुपुरुषः यस्य

८. वास्तुरत्नावल्याम्–२९

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पूजायाः विधानं प्रायः समेषु वस्तुग्रन्थेषु वास्तुपूजनपद्धतिषु च प्राप्यते? वास्तुग्रन्थेषु पुराणेषु च एका कथा आयाति यद् अन्धकासुरस्य वधः शङ्करेण सञ्जातः। तस्मिन् महासङ्ग्रामे शङ्करस्य ललाटप्रदेशाद् भूमौ श्वेदो निपतितः। परिणामतः तस्मात् श्वेदाद् एको विकरालपुरुषः समुद्भूतः। ततः अन्धकासुरस्य क्षितौ पतितं सर्वमपि रुधिरम् अपिबत्। तथापि सः तृप्तः न सञ्जातः। ततः सः सर्वान् लोकान् भोक्तुं समुद्यतः सञ्जातः। तद् दृष्ट्वा सर्वे देवा सम्भूय तं विकरालपुरुषम् अधोमुखं कृत्वा भूमौ अपातयन्। तदा सः विकरालपुरुषः उक्तवान् अद्य प्रभृतिः मम आहारः किं भविष्यति? तदानी सर्वेऽपि ब्रह्मादयो देवाः उक्तवन्तः यत् वास्तुकर्मणि यः बलिः भविष्यति त्वं तस्य अधिकारी भोक्ता वा भविष्यसि। तस्मिन् क्रमे तस्य विकरालपुरुषस्य यदङ्गं येन देवेन धृतं तस्य पुरुषस्य अर्थात् वास्तु पुरुषस्य तस्मिन् अङ्गे तस्य देवस्य निवासं मत्वा तस्य देवस्यापि समर्चा क्रियते। अतः तदारभ्य गेहारम्भे वास्तुशान्तिकर्मणि च पुष्पाक्षत–दधिमाषबलिनैवेद्यादिभिः सः वास्तुपुरुषः पूज्यते। तेन तुष्टः सः वास्तुपुरुषः तथा तत्रस्था देवाः तुष्टाः सन्तः पुत्र–पौत्र–धन–धान्यादीनां समृद्धिं कुर्वन्ति। तद्यथा–

पुरान्धकवधे घोरे घोररूपस्य शूलिनः।
ललाटश्वेदसलिलमपतद्भुवि भीषणम्।।

करालवदनं तस्मात् समुद्भूतं समुल्बणम्।
असमानमिवाकाशं सप्तद्वीपां वसुन्धराम्।।

ततोऽन्धकानां रुधिरमपिवत् पतितं क्षितौ।
तेन तत्समरे सर्वं पतितं यन्महीतले।।

तथापि तृप्तिमगमत्तद्भूतं न तदा यदा।
तदा शिवस्य पुरतस्तपश्चक्रे सुदारुणम्।।

क्षुधाविष्टन्तु तद्भूतमाहर्त्तुं जगतां त्रयम्।
ततः कालेन सन्तुष्टो भैरवस्तस्य चादरात्।।

तमुवाच ततो भूतं त्रैलोक्यग्रसनं क्षमम्।
भवामि देवदेवेश तथेत्युक्तश्च शूलिना।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ततस्तत् त्रिदिवं सर्वं भूमण्डलमशेषतः।
स्वदेहेनान्तरीयञ्च बन्धनं प्राप तद्भुवि।।

भीतभीतस्ततो देवैर्ब्रह्मणावथ शूलिना।
दानवासुररक्षोभिरवष्टब्धं समन्ततः।।

येन तत्रैव चक्रान्तं स तत्रैवाभवत् पुनः।
निवासात् सर्वदेवानां वास्तुरित्यभिधीयते।।

अवष्टब्धेन तेनापि विज्ञप्ताः सर्वदेवताः।
प्रसीदध्वं सुरा सर्वे युष्माभिर्निश्चलीकृतः।।

स्थाष्यामि किं यदाहारमवष्टब्धमधोमुखम्।
ततो ब्रह्मादिभिःप्रोक्तं वास्तुमध्ये तु यो बलिः।।

आहारो वैश्वदेवान्ते न्यूनमस्मिन् भविष्यति।
वास्तूपशमनो यज्ञस्तवाहारो भविष्यति।।

एवमुक्तस्ततो हृष्टः स वास्तुरभवत्तदा।
वास्तुयज्ञः स्मृतस्तस्मात् ततः प्रभृतिशान्तये।।[९]

अयं प्रसङ्गो वास्तुपूजनविधानञ्च न केवलं मत्स्यपुराणे अपितु वास्तुग्रन्थेष्वपि उपलभ्यते। तद्यथा–

सङ्ग्रामेऽन्धकरुद्रयोश्च पतितः स्वेदो महेशात् शितो
तस्मात् भूतम्भूच्च भीतिजननं द्यावाष्टथिव्योर्महत्।
तद्देवैः सहसा निगृह्यनिहितं भूमावधो वक्त्रकम्
देवानां वचनाच्च वास्तुपुरुषस्तेनैव पूज्यो बुधैः।।[१०]

---

९. मत्स्यपुराणे वास्तुभूतोद्भवो नाम २२६ अध्यायः

१०. राजवल्लभमण्डने–२.१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपि च –

प्रसादे भवने तडागखनने कूपे च वाप्यं वने
जीर्णोद्धारपुरेषु यागभवनप्रारम्भनिर्वतने।
वास्तोः पूजनकं सुखाय कथितं पूजां विना हानये।[११]

इत्थमुपर्युक्तेन विधिना गृहारम्भः कर्तव्यः। तस्मात्पूर्वमिदमपि ज्ञातव्यं यत् यस्मिन् नगरे वासकर्ता वासकर्तुं वाञ्छति तन्नगरं वासकर्तुः कृते उपयुक्तं वर्तते न वा इत्यस्य ज्ञानं काकिणिविचारद्वारा कर्तव्यः। तद्यथा–

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत्।
अष्टभिस्तु हरेद् भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत्।।[१२]

गृहारम्भात्पूर्वं भूमिपरीक्षणं कृत्वा गृहारम्भः कर्तव्यः। गृहनिर्माणे गजपृष्ठ–कूर्मपृष्ठभूमिः सर्वश्रेयस्करी, दैत्य–नागपृष्ठभूमिः अशुभदायिनी भवतीति सुधयः विदन्त्येव ।

ब्रह्मणादीनां वर्णानामिव मृत्तिकायाश्चत्वारः वर्णाः प्रतिपादिताः सन्ति।

तद्यथा–

शुक्लमृत्स्ना च या भूमिब्राह्मणी सा प्रकीर्तिता।
क्षत्रिया रक्तमृत्स्ना च हरिद् वैश्या प्रकीर्तिता।।
कृष्णा भूमिर्भवेच्छूद्रा चतुर्धा प्रकीर्तिता।
एतासां फलान्यपि प्रतिपादितानि सन्ति।[१३]

तद्यथा–

ब्राह्मणी सर्वसुखदा क्षत्रिया राज्यदा भवेत्।
धन–धान्यकरी वैश्या शूद्रा तु निन्दिता बुधैः।।[१४]

---

११. राजवल्लभमण्डने, २.२
१२. बृहद्वास्तुमालायाम् श्लो.सं. १८
१३. वास्तुरत्नावल्याम्
१४. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपि च–

श्वेता शस्ता द्विजेन्द्राणां रक्ता भूमिर्महिभुजाम्।
विशां पीता च शूद्राणां कृष्णाऽन्येषां विमिश्रिता।।[१५]

इत्थं भूमेः वर्णज्ञानं विधाय भूमेः शुद्ध्यर्थं गृहनिर्माणात्प्राक् तस्यां भूमौ शल्योद्धारः परमावश्यको भवति। यथोक्तं–

स्मृत्वेष्टदेवतां प्रश्नवचनस्याद्यमक्षरम्।
गृहीत्वा तत्ततः शल्याशल्यं सम्यक् विचारयेत्।।[१६]

तदनन्तरं किं कर्त्तव्यमिति विषये वराहमिहिरेण सम्यक्तया प्रतिपादितमस्ति। तद्यथा–

कृष्टां प्ररुढ़बीजां गोध्युषितां ब्रह्मणैः प्रशस्ताञ्च।
गत्वा महीं गृहपतिः काले साम्वत्सरोद्दिष्टे।।[१७]

एतदनन्तरं द्वारविचारः कर्तव्यः। तद्यथा–

पूर्वे ब्रह्मणराशीनां वैश्यानां दक्षिणे शुभम्।
शूद्राणां पश्चिमे द्वारं नृपाणामुत्तरे मतम्।।[१८]

द्वारविचारानन्तरं मुहूर्तशोधनं विशेषरूपेण कर्तव्यम्। तद्यथा–

द्वारशुद्धिं निरीक्ष्यादौ भशुद्धिं वृषचक्रतः।
निष्पञ्चके स्थिरे लग्ने द्वयङ्गे वालयमारभेत्।।

त्यक्त्वा कुजार्कयोश्चांशं पृष्ठे चाग्रे स्थितं विधुम्।
बुधेज्यं शशिगं चार्वं कुर्योहं शुभाप्तये।।[१९]

अर्थात् गृहारम्भात् पूर्वं वृषचक्रानुसारं नक्षत्रशुद्धिः द्रष्टव्यः। पञ्चकं

१५. बृहद्वास्तुमालायाम्–श्लो.सं. १८
१६. राजवल्लभमण्डने, २.२
१७. मत्स्यपुराणे वास्तुभूतोद्भवो नाम २२६ अध्यायः
१८. वास्तुरत्नावल्याम्
१९. बृहद्वास्तुमालायाम्, १.८.६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवतीञ्च) विहाय स्थिरे द्विस्वभावलग्ने वा गृहारम्भं कारयेत्। लग्ने कुजार्कयोः नवांशं अग्रे–पृष्ठे स्थितं विधुञ्च विहाय गृहारम्भः करणीयः।

एतदनन्तरं गृहनिर्माणार्थं गृहमण्डपस्य स्वरूपं शास्त्रोक्तविधिना निर्मेयम्। तत्र कस्यां दिशि कस्य कार्यस्य कृते गृहं भवेत्? विषयेऽस्मिन्नपि सुविचार्य गृहनिर्माणं विधेयम्। तद्यथा– बृहद्वास्तुमालायाम्–

पूर्वस्यां श्रीगृहं प्रोक्तमाग्नेयां स्यान्महानसम्।
शयनं दक्षिणस्याञ्च नैर्ऋत्यामायुधाश्रयम्।।

भोजनं पश्चिमायाञ्च वायव्यां धनञ्चयम्।
उत्तरे द्रव्यसंस्थानमैशान्यां देवतागृहम्।।[२०]

अपि च –

स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजश्च
धान्यभाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः।
तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्या–
भ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम।।[२१]

अर्थाद् गृहस्य पूर्वभागे स्नानगृहम्, सर्ववस्तुगृहं स्थापनीयम्। आग्नेयां पाकशाला निर्मितव्या। दक्षिणस्यां दिशि शौचालयशयनकक्षौ करणीयौ। नैर्ऋत्यकोणे शस्त्रागारस्य निर्माणं करणीयम्। पश्चिमे भोजनकक्षं विद्याभ्यासकक्षञ्च निर्मितव्यम्। वायुकोणे कोषगृहं धान्यकक्षञ्च निर्मातव्यम्। उत्तरकोणे रतिगृहं भाण्डारगृहञ्च निर्मातव्यम्। अर्थाद् गृहस्य पूर्वभागे स्नानगृहम्, सर्ववस्तुगृहं स्थापनीयम्। आग्नेयां पाकशाला निर्मितव्या। दक्षिणस्यां दिशि शौचालयशयनकक्षौ करणीयौ। नैर्ऋत्यकोणे शस्त्रागारस्य

२०. बृहद्वास्तुमालायाम्–१५०–१५१
२१. मुहूर्तचिन्तामणौ, १२.२०.२१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निर्माणं करणीयम्। पश्चिमे भोजनकक्षं विद्याभ्यासकक्षञ्च निर्मितव्यम्। वायुकोणे कोषगृहं धान्यकक्षञ्च निर्मातव्यम्। उत्तरकोणे रतिगृहं भाण्डारगृहञ्च निर्मातव्यम्।

एवमेव गृहनिर्माणप्रसङ्गे केचन निर्देशाः अपि परिपालनीयाः भवन्ति। ते यथाक्रमेण अत्रोपस्थाप्यन्ते।

१. भवनं परितः प्रभूतां रिक्तां भूमिं परित्यजेत्।

२. उत्तरपूर्वदिशोः सर्वपेक्षया अधिकं रिक्तस्थानं भवेत्।

३. भवनस्य कोणाः आयताकाराः वर्गाकाराः वा भवेयुः।

४. पूजास्थलमीशानकोणे भवेत्।

भवनस्य छदेः निर्माणमेवं प्रकारेण विधेयं येन उपरितः जलपतनं उत्तरदिशि भवेत्। यद्येवं प्रकारेण गृहनिर्माणं भवेत्तदा गृहाणि सुदृढ़ानि, सुस्थिराणि, सुख–शान्ति–समृद्धिप्रदायकानि भवन्तीति दिक्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उद्यानस्य शिलापीठम्

डॉ० हर्षदेवमाधवः
८. राजतिलकबंगला
(ममताचिकित्सालयपुरतः) बोपल, अमदाबादम्

(इयं प्रयोगशीला लघुकथा वर्तते। तत्र न कानिचित् पात्राणि सन्ति अथ वा यानि पात्राणि सन्ति, तेषां प्राधान्यं नास्ति। इयं कथा उद्यानस्य एकस्य शिष्टशिलापीठस्य वर्तते। कविना सह सर्वमपि विश्वं वार्तालापं करोति। अत्र निर्जीवस्य सजीविकरणं कृतमस्ति। अतः अत्र उद्यानस्य एकं शिलापीठं मुख्यं पात्रं वर्तते। कदाचित् निर्जीविनामपि कथा वा व्यथा श्रूयते, श्रोतुं कर्णौ न आवश्यकौ। कदाचित् अन्येषां कथा, मनसा श्रूयते, हृदयेन श्रूयते, श्रूयते खलु अनुभूतीनां प्रदेशं प्रविश्य।)

अहं बोपलग्रामविस्तारे वसामि। बोपलग्रामो वस्तुतः ग्रामो नास्ति। अयं प्रदेशः अमदावादस्य एकस्मिन् पार्श्वे वर्तते। बोपलग्रामस्य एकस्मिन् कक्षे एकमुद्यानं वर्तते। उद्यानेऽपि एकस्मिन् कक्षे एकं शिलापीठं वर्तते। इदं शिलापीठं सदैव मां तस्य कथां कथयति। अहम् उद्यानस्य शिलापीठे उपविश्य धैर्येण तस्य कथां शृणोमि। इदं शिलापीठं विशिष्टं वर्तते। शिलापीठस्य पृष्ठे एकः चम्पकवृक्षोऽपि। चम्पकपुष्पाणां सौरभं मह्यम् अतीव रोचते। अतः अहं यदा कदापि मम वासरिकायां काव्यं रचयितुं तत्र उपविशामि। यद्यपि मम काव्यानि प्रकाशितानि न भवन्ति, तथैव उच्चपीठस्य वार्तालापोऽपि प्रकाशितो नैव भविष्यति। अहं शिलापीठस्य कथां श्रुत्वा मम टिप्पणीपुस्तके शब्देषु अवतारयामि। अत्र कोऽपि कालः अथवा कोऽपि दिवसो न लिखितोऽस्ति अद्यापि मम वासरिकायां दिनाङ्का लिखिताः सन्ति, किन्तु इयं कथा वर्तते। दिनाङ्कानाम् आवश्यकता तु इतिहासलेखने वर्तते। अतः अहं केवलं शिलापीठेन सह मम संवादं प्रस्तौमि। अहं प्रातःकाले योगासनानि कर्तुं मध्याह्ने विश्रामार्थं सायंकाले भ्रमणं कर्तुं रात्रिकाले तिमिरे पुष्पाणां सौरभं घ्रातुं गच्छामि। प्रातःकाले कदाचिद् बालकाः तत्र क्रीडन्ति। बालकानां हास्यैः शिलापीठं रोमाञ्चितं भवति। यदा कस्यापि बालकस्य कन्दुकः तस्य समीपम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आगच्छति तदा उच्चपीठं विचारयति यद् हस्तौ प्रसार्य अहं कन्दुकं गृहीत्वा बालकं प्रति क्षिपामीति, किन्तु उच्चपीठं कथं हस्तौ प्रसारयेत्? तस्य हस्तौ पादाभ्यां सह बद्धौ वर्तेते। सहसा कोऽपि बालको गूहगवेषां क्रीडति। असौ तस्य पृष्ठे निलीयते। उच्चपीठं तां गोपायितुं प्रयतते। बालकाः दुर्ललिता वर्तन्ते। ते क्रीडन्तः कर्दमयुक्तैश्चरणैः, आगत्य कर्दमेन तं लिम्पन्ति, किन्तु उच्चपीठं स्वात्मानं मलिनं न मन्यते। तद् रोमहर्षम् अनुभूय बालकानां चरणानां कोमलताम् अनुभवति। बालकाः श्रान्ता भूत्वा विश्राम्यन्ति। तेषां वस्त्रकोशेषु खाद्यवस्तूनि वर्तन्ते। कोऽपि चाकलेहं खादति, कोऽपि प्रातराशं खादति, अथ वा बिस्किटास्वादं करोति। बालकास्तु बालका एव। ते न्यूनं खादन्ति, अधिकं विकीरन्ति। ते तु गच्छन्ति, किन्तु तत्पश्चात् पिपीलिकाः शिलापीठस्य गात्रेषु दशन्ति। पिपीलिकानां सञ्चलनमनुभूय शिलापीठं व्याकुलं भवति। किन्तु तत् तु निरुपायमस्ति। तदैव उद्यानस्य मालाकार आगच्छति। स धारायन्त्रं चालयित्वा जलनलिकया शिलापीठस्य सर्वमपि मालिन्यं दूरीकरोति। हन्त! पुनरपि शिलापीठं स्वच्छं जातम्। अधुना किञ्चित् लिखितुं प्रयतिष्ये।

मध्याह्नकालोऽस्ति अन्यानि शिलापीठानि सूर्यातपेन उद्विग्नानि भवन्ति, किन्तु मम प्रियशिलापीठं चम्पकवृक्षेण रक्षितं वर्तते। चम्पकवृक्षस्य पर्णानि शिलापीठस्य शैत्यं रक्षितुं सहन्ते सूर्यसन्तापम्। तदैव एकः श्रमिकः कश्चित् कालं स्वकार्यं परित्यज्य आगत्य निषीदति। सोऽपि स्वोपाहारभाण्डं (Tiffin) उद्घाट्य मध्याह्नभोजनं करोति। रोटिकाभिः सह पलाण्डुसौरभं प्रसरति। शिलापीठस्य जिह्वा लालायुक्ता भवति। श्रमिकः शिलापीठे स्वोपवस्त्रं प्रसार्य श्वपिति। तस्य प्रस्वेदबिन्दवः उच्चपीठं स्नपयन्ति। पुनरपि मम शिलापीठस्य दुर्दशा जाता।

अद्य सायंकाले अहम् उद्याने भ्रमणार्थं निर्गतोऽस्मि। इदानीं शिलापीठे एकं प्रणयियुगलम् आसीनं वर्तते। अहं शिलापीठं भूत्वा तयोः संवादं श्रृणोमि।

'कथं त्वं विलम्बेन आगताऽसि?'

'अहं दीर्घकालात् ते प्रतीक्षां करोमि।'

'त्वं तु जानासि एव, मम पिता मां रुणद्धि, अहं केनापि मिषेण

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निर्गतास्मि। अद्य को व्याजोऽस्ति?

मम सखी रुग्णा वर्तते, अहं तस्याः कुशलं प्रष्टुं निर्गतास्मि।

'किम् अहमेव ते प्रियः?

'न हि न हि, त्वं तु मम प्रियसखा वर्तते।'

'इदं पाटलपुष्पं तव कृते मया आनीतम्।–

'पाटलपुष्पैः किम्? त्वं मया सह कदा विवाहं रचयिष्यसि?

'त्वं तु जानासि एव, मम पितरौ ज्ञातिं परित्यज्य परिणेतुं अनुज्ञां नैव दास्यतः।'

'हा धिक्, मया त्वयि प्रणयं कृत्वा न समीचीनं कृतम्। त्वं मां विस्मर। त्वं तु कापुरुषोऽसि।

'गृहाण, ते पाटलपुष्पम्। पुनरपि मां द्रष्टुं मा अभिलष।'

युवती सक्रोधं गच्छति। युवकोऽपि मन्दं मन्दं ताम् अनुसरति। पाटलपुष्पं तु शिलापीठ एव निक्षिप्तमस्ति, किन्तु अधुना तत्र सौरभं नास्ति। शिलापीठं दीर्घं निश्वसिति।

इदानीं सायंकाल एव वर्तते। अधुना तत्र तद् युगलं शिलापीठे नास्ति, तत्र केचिद् वृद्धपुरुषा उपविष्टाः सन्ति। तेऽपि शनैः शनैः वार्तालापं कुर्वन्ति। अहं पृष्ठभागे वर्ते। अतः अहं तेषां मुखानि न पश्यामि।

'मम स्नुषा क्रूरा वर्तते। सा मह्यं भोजनं यथाकालं न पर्यवेषयति। अहं प्रतिदिवसं क्षुधार्तो भूत्वा स्वपिमि।

'मम पुत्रः स्वार्थी वर्तते। स धनं तु गृह्णति, किन्तु ममेव गृहे मां एकस्मिन् कोणे स्वापयति। अहं रुग्णावस्थायाम् औषधानि कामये, तदा मम वचनानि श्रुत्वाऽपि अश्रुतानि करोति।'

'आवयोस्तु दुर्दशा वर्तते। आवयोः न कापि सन्ततिः, अतः आगामिनि मासे आवां वृद्धाश्रमं गमिष्यावः।'

'वृद्धाः स्वव्यथां परस्परं निवेद्य शनैः शनैः उत्थिता भवन्ति। ते शिलापीठं त्यजन्ति। अद्य अहमपि लेखनार्थं हतोत्साहः। अहं गन्तुं विचारयामि तदा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिलापीठस्य रोदनस्वरः श्रूयते।'

अधुना रात्रिकालो जातः। उद्याने गाढान्धकारोऽस्ति। द्वौ पुरुषौ तूष्णीमागत्य काष्ठफलके उपविशतः। तयोर्मुखे वस्त्रपटेन छादिते स्तः। तौ परस्परं कर्णयोर्जपतः।

'मित्र! त्वया कति द्रव्यकोषा जनानां वस्त्रकोषेभ्यो लब्धाः?'

'मया तु षड्जनाः लुण्ठिताः। मया पञ्चसहस्र रूप्यकाणि प्राप्तानि। त्वया किं लब्धम्?'

द्वितीयः (विहस्य) 'अहं द्वे नार्यौ प्राप्तवान्। अहं तयोः कण्ठाभ्यां सुवर्णहारौ आच्छिद्य अधाविषयम्। द्वौ रक्षकौ मम पृष्ठे आस्ताम्। दिष्ट्या अहं भाग्याद् रक्षितः। अधुना आवां द्रव्यं संविभक्तं कुर्वः।'

काष्ठफलकं सचेतनं भूत्वा तौ दण्डयितुम् इच्छति, किन्तु हन्त! तद् अचेतनमस्ति।

अद्य प्रातःकाले अहं मम वासरिकया सह बहिरागतोऽस्मि। अहं पश्यामि यद् उद्याने कोलाहलो भवतीति। तत्र बहूनि 'जे.सी.बी.' यन्त्राणि आगतानि सन्ति। एकं बृहद्कायं यन्त्रं वृक्षविदारणरतम् अस्ति। केषाञ्चित् भारवाहकवाहनेषु श्रमिकाः शिलापीठानि नयन्ति। नगरपालिका कस्मैश्चिद् गृहनिर्मात्रे उद्यानभूमिं विक्रीतवती। मम उद्यानभ्रमणस्य स्वप्नोः नष्टः खलु। न जाने मम प्रियः शिलापीठस्य किं भविष्यतीति। कदाचिद् शिलापीठम् अन्यत्र किञ्चिदपि उद्यानं गच्छेत्। अथ वा तदपि चूर्णं भवेत् इयमेवास्ति भवितव्यता सर्ववस्तूनां नगरजीवने।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविकुलगुरुकालिदासस्य रामः

डॉ० कामदेवझा
प्राचार्यः डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज
पिहोवा, कुरुक्षेत्रम्, हरियाणा

कविकुलगुरुकालिदास्य रामस्तु सर्वथा पाठकानां मनो हरति। रामस्य नाम श्रुत्वा जनानां पापजं फलं स्वत एव नश्यति। अयमेव महिमा रामचन्द्रस्य विद्यते। त्रिविधतापहारकं रामं द्रष्टुं कस्य मनो न समुत्कण्ठते, श्रीरामः शरणं समस्तजगताम्। वाल्मीकिरामायणस्य पश्चाद् बहवो ग्रन्थास्तत्र विलिखिताः। अतएव कथ्यते यद् रामं विना का गतिरिति।[1] रामाश्रयमधिकृत्य तु बहवः कवयः लेखकाश्चापि रामकथामृतं विलिख्य संसारे ख्यातिमधिगतवन्तः। रामचरितन्तु पुण्यदं पवित्रञ्चापि विद्यते। अतएव वाल्मीकिरामायणे निगदितं यद् रामायणं पापघ्नं खलु–

इदं पवित्रं पापघ्नं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम्।
यः पठेद् रामचरितं सर्व–पापैः प्रमुच्यते।।[2]

यथा रामस्तथा सीताऽप्यस्ति। सा तु देवमायेव विद्यते।[3] जनकस्य कुले जाता देवमायेव निर्मितेति। इयं नारीणामुत्तमा वधूरिति प्रोक्ता। यथोक्तमत्र–**सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधूरिति।**[4] कविकुलगुरु-कालिदासोऽपि, रघुवंशमहाकाव्ये राममाराध्यदेवत्वेन प्रतिपादयति। सर्वे देवास्तं सम्भूय समागत्य प्रार्थितवन्तः विष्णुदेवम्। कथितं देवैः यत् हे प्रभो! भवान् करिष्यति देवानां भयनाशनमिति। यथोक्तं तत्र रघुवंशे[5]–स्तुतिभ्यो व्यतिरिच्यन्ते दूराणि चरितानि ते। भवतां चरितमेव त्रिलोकेषु भिन्नम्। देवानां

---

१. वाल्मीकिरामायणमाहात्म्ये, १
२. वाल्मीकिरामायणे १.१.६८
३. तदेव १.१.२७
४. तदेव १.१.२७
५. रघुवंशे, १०.३०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सहयोगार्थमेव विष्णुना निगदितम्–

सोऽहं दाशरथिर्भूत्वा रणभूमेर्बलिक्षमम्।
करिष्यामि शरैस्तीक्ष्णैस्तच्छिरः कमलोचयम्।।[1]

तान् देवान् प्रति हरिणोक्तं यत् हे देवाः! भवतां यज्ञभागं न ते राक्षसाः लप्स्यन्त इति। यथोक्तम्–

अचिराद्यज्वभिर्भागं कल्पितं विधिवत्पुनः।
माया विभिरनालीढमातास्यध्वे निशाचरैः।।[2]

रावणस्य वधार्थं देवास्तत्र स्व स्व. अंशैरन्वगच्छन्। यथोक्तमत्र रघुवंशे–

पुरुहुतप्रभृतयः सुकार्योद्यतं सुराः।

अंशैरनुययुर्विष्णुं पुष्पैर्वायुमिव द्रुमाः।।[3]

पुत्रेष्टियज्ञस्य समापनकाले हेमपात्रस्थे पायसान्ने स्वयमेव विष्णुस्तत्र प्रविष्टः। इत्यनेन द्योत्यते यद् विष्णोरेव अंशरूपास्ते चत्वारो भ्रातरः आसन्। यथा महाकाव्येऽस्मिन् रघुवंशे निगदितम्–

हेमपात्रगतं दोर्म्यामादधानः पयश्चरुम्।
अनुप्रवेशादाद्यस्य पुंसस्तेनापि दुर्वहम्।।[4]

यो दिव्यपुरुषः स्वर्णपात्रं गृहीत्वा प्रकटितः तेन दशरथस्य गुणाः प्रशंसिताः। श्रुत्वा च सर्वं विष्णुरपि जन्मग्रहणाय स्वेच्छां निवेदितवान्। यथोक्तमत्र–

अनेन कथिता राज्ञो गुणास्तस्यान्यदुर्लभाः।
प्रसूतिं चकमे तस्मिस्त्रैलोक्यप्रभवोऽपि यत्।।[5]

---

१. तदेव १०.४४
२. तदेव १०.४५
३. तदेव १०.४६
४. तदेव, १०.५१
५. तदेव १०.५३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रात्रौ सर्वाः दशरथभार्याः स्वप्नेऽपश्यन् यत् शङ्खचक्रगदाभिः साकं कोऽपि वामनो रक्षत्यहो। तत्रैवानुभूतमपि ताभिस्तत्र यत् सुपर्णेन गरुत्मता लीलया नीयते नभसीति। यथोक्तं तत्र–

हेमपक्षप्रभाजालं गगने च वितन्वता।
उछयन्ते स्म सुपर्णेन वेगाकृष्टपयोमुचा।।[1]

दशरथो बालकस्य मनोहरं शरीरं वीक्ष्य मङ्गलकारकं नाम रामेति घोषितवान्। यः सदैवामङ्गालं हरति स एव राम इत्युच्यते। रमन्ते योगिनो यत्र राम इत्युच्यते। रघुवंशस्य मङ्गलकारकं रामं वीक्ष्य तुलसीदासस्य रामचरितमानसस्य मङ्गलभवन[2] अमंङ्गलहारीति स्मर्यते। वस्तुतो दाशरथिः रामः सर्वेषां हृदयेषु विराजत एव। सदा कल्याणकरं रूपमस्य साधकैस्तत्रानुभूयते। यथाऽत्र रघुवंशे राज्ञा मङ्गलकरं नाम समुद्घोषितमिति–

राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः।
नामधेयं गुरुश्चक्रे जगत्प्रथममङ्गलम्।।[3]

कैकेय्याः पुत्रो भरतेति नाम्ना समुद्घोषितः। सुमित्रायाः पुत्रद्वयं सञ्जातम् तयोरेको लक्ष्मणः द्वितीश्च शत्रुघ्न इति। यथोक्तं रघुवंशे–

कैकेय्यास्तनयो जज्ञे भरतो नामशीलवान्।
जनयित्रीमलञ्चक्रे यः प्रक्ष इव श्रियम्।।[4]

रामस्य मातृभिः स्वप्नेऽपि विष्णोः वामनरूपं दृष्टम् तद् वर्णनं कविकुलगुरुणा सम्यक् कृतमस्ति यथोक्तमत्र–

गुप्तं ददृशुरात्मानं सर्वाः स्वप्नेषु वामनैः।
जलजासिगदशङ्खं चक्रलाञ्छितमूर्तिभिः।।[5]

१. तदेव, १०.६१
२. रामचरितमानसे, १.१११.२
३. रघुवंशे, १०.६७
४. तदेव, १०.७०
५. तदेव, १०.६०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रघुवंशे रामजन्मनश्चित्रं रूपं वर्णितमस्ति। जन्मसमये रामस्य मुखे विशेषरूपेण तेजस्तत्रासीदिति। रामस्य तेजसा दीपस्य तेजः मन्दत्वं सम्प्राप्तं खलु। यथोक्तमत्र–

रघुवंशप्रदीपेन तेनाप्रतिमतेजसा।
रक्षागृहगता दीपाः प्रत्यादिष्टा इवाभवन्।।[1]

दशरथस्य पुत्रेषु भ्रातृप्रेमापूर्वमेवाऽसीदिति। सर्वत्र भुवि तेषां प्रशंसा भवति स्म। तेषामलौकिकं प्रेम द्रष्टुं देवा अपि समुत्कण्ठिता आसन्। देवानामेव तु प्रवलेच्छया तेषामागमनं भुवि सञ्जातम्। यद्यपि भ्रातृषु चतुर्षु परस्परं प्रेमातिशयमासीत् तदपि रामलक्ष्मणयोरथ च भरतशत्रुघ्नयोः युगलत्वं सर्वदा मनोहरमेव। यथोक्तं रघुवंशे–

समानेऽपि हि सौभ्रात्रे यथोभौ रामलक्ष्मणौ।
तथा भरतशत्रुघ्नौ प्रीत्या द्वन्द्वं बभूवतुः।।[2]

देवलोके रामजन्मोत्सवहर्षस्तु दशरथादपि द्विगुणात्मकत्वेन प्रतिभाति। यतोहि तेषामेव देवानां कारणेन रामावतरणमासीत्। यथोक्तं तत्र रघुवंशे–

पुत्रजन्म प्रवेश्यानां तूर्याणां तस्य पुत्रिणः।
आरम्भं प्रथमं चक्रुर्देवदुन्दुभयो दिवि।।[3]

दानवानां संहारो भवितेति प्रमोदो महान् तत्राऽसीदिति भावः। देवगणैराकाशात् पुष्पवृष्टिः कृता। तैरेव पुष्पैस्तत्र माङ्गलिकं कार्यं सम्पादितम्। यथा प्रोक्तं कालिदासेन–

सन्तानकमयी वृष्टिर्भवने चास्य पेतुषी।
सन्मङ्गलोपचाराणां सैवादिरचनाऽभवत्।।[4]

यथा चन्द्रसमुद्रयोरथ चानिलानलयोः युगलत्वं प्रथितं तद्वदेव रामलक्ष्मणयोरथ च भरतशत्रुघ्नयोः युगलत्वं प्रथितं त्रिलोकेषु खल्वासीदिति।

१. तदेव, १०.६८
२. तदेव, १०.८१
३. तदेव, १०.७६
४. तदेव, १०.७७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यथोक्तमत्र–

तेषां द्वयोर्द्वयोरैक्यं विभिदे न कदाचन।
यथा वायुविभावस्वोर्यथा चन्द्रसमुद्रयोः।।[1]

उपयुक्तं कथनं वीक्ष्यानुभूयते यत् सुमित्रायै पायसान्नस्यार्धभागं कैकेयी दत्तवती। तथैवात्र कौशल्याऽपि चार्धभागं खलु तस्यै दत्तवतीति। इदमेन कारणमभविष्यद् यत् तस्याः सुमित्रायाः एकः पुत्रः कौशल्यापुत्रेण सहान्यश्च शत्रुघ्नः भरतेन सह जीवनं युगलरूपेण नीतवन्ताविति।

दशरथस्य सर्वे पुत्रास्तत्र धर्मार्थकाममोक्षसदृशाः शोभन्ते स्म। ते इत्थमनुभूतिं कारयन्ति स्म यथा धर्मार्थकाममोक्षा एव रामादिभ्रातृरूपेण भुवि समागताः स्युरिति भावः। यथा प्रतिपादयत्यत्र रघुवंश महाकाव्यमिति–

स चतुर्धा बभौ व्यस्तः प्रसवः प्रथिवीपतेः।
धर्मार्थकाममोक्षाणामवतार इवाङ्गवान्।।[2]

कौशिकमुनिस्तत्रागत्य दशरथं याचितवान् यत् हे राजन्! स्व पुत्रं मह्यं दीयताम्। यतोहि ऋषीणां यज्ञकार्ये दानवाः उपद्रवं रचयन्ति। एतदर्थं राममहं नेष्यामि। दानवानां विनाशाय रामस्यावतारः सञ्जातोऽस्ति। यथोक्तं तत्र काव्येऽस्मिन्–

कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वरविधनशान्तये।
काकपक्षधरमेत्य याचितस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते।।[3]

वस्तुतो रामस्तु तेजस्वी पुरुष आसीत्। बालकालादेव पराक्रमी खल्वासीत्। एतदर्थं कथ्यते यत् तेजस्विनां वयः न समीक्ष्यत इति। वाक्यमिदं वीक्ष्य कुमारसम्भवस्योक्तिः **न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यत** इति स्मृतिपटले समायाति।[4] रामः कौशिकमुनेः आज्ञया ताडकां हतवान्। रामस्य तीक्ष्णबाणेन निशाचरी सा यमलोकं प्राप्ता। यथोक्तमत्र–

---

१. तदेव, १०.८२
२. तदेव, १०.८४
३. तदेव, ११.१
४. कुमारसम्भवे, ५.१६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राममन्मथशरेण ताडिता दुःसहेव हृदये निशाचरी।
गन्धवद्रुधिरचन्दनोक्षिता जीवितेशवसतिं जगाम सा।।[1]

रामबाणैः राक्षसी ताडका भूमौ तथैव पपात यथा वृक्षः सशब्दं पतति वने। तस्याः मृतशरीरपतनशब्दैर्न केवलं भूमिरेव प्रकम्पिताऽपितु त्रिलोक विजेतुः रावणस्य राज्यलक्ष्मीरपि प्रकम्पिता–

बाणभिन्नहृदयापि पेतुषी सा स्व काननभुवं न केवलम्।
विष्टपत्रयपराजयस्थिरां रावणश्रियमपि व्यकम्पयत्।।[2]

कालिदासेनात्र सङ्केकेतितं यद् रावणस्य स्थितिस्तथैव भवितेति भावः। यतोहि देवानामेवाग्रहेण रामाऽतारोऽभवत्। वस्तुतो राम रावणयोर्मध्ये युद्ध मदासीत् तत्र तु धर्मस्यैव विजयः सञ्जात इति। मिथिलायाः यात्रासमये भर्तृशापाच्छिलात्वं प्राप्ता गौतमऋषिभार्या रामचरणरजसा शापमुक्ता जाता। रामेण कथमहल्योद्धारः कृत इत्यत्र कविकुलगुरुणा सम्यग् किल रघुवंशे प्रतिपादितम्!–

प्रत्यपद्यत चिराय यत्पुनश्चारु गौतमवधूः शिलामयी।
स्वं वपुः स किल किल्विषच्छिदां रामपादरजसामनुग्रहः।[3]

वस्तुतो माताऽहल्या सती नारी आसीत् तस्या नाम पञ्चपवित्रकन्यासमवाये स्मर्यते। कथ्यते यत् मे स्मरन्ति पञ्चकन्याः नित्यं तेषां पापक्षयो भवति। यथोक्तं तत्र–

अहल्याद्रोपदीसीतातारामन्दोदरी तथा।
पञ्चकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशिनीः।।[4]

एवमपि कथ्यते यत् सती अहल्या ब्रह्मणः प्रथमस्त्रीरचना आसीदिति। सृष्टिराद्या सती अहल्या खलु। रामेण प्रसुप्तभुजगेन्द्रसमं धनुरुद्धाप्य खण्डद्वयं कृतम्। शिवस्य तदेव धनुरासीत् यस्य प्रयोगो दशप्रजापतेः यज्ञसमये

---

१. रघुवंशे, ११.२०
२. तदेव, ११.१९
३. तदेव, ११.३४
४. द्रष्टव्यम्, कोशे वामन–शिवराम आप्टे कृते पृ.१३४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मृगरूपधारकं यज्ञं हन्तुं कृतः। यथोक्तमत्र–

तत्सुप्तभुजगेन्द्रभीषणं वीक्ष्य दाशरथिराददे धनुः।
विद्रुतक्रतुमृगानुसारिणं येन बाणमसृजद्वृषध्वजः।।[१]

प्रसङ्गमिमं वीक्ष्याभिज्ञानशाकुन्तलस्योद्धरणं स्मर्यते, यत्र मृगानुसारिणं राजानं वीक्ष्य कथयत्यत्र सूतः–

कृष्णसारे ददच्चक्षुस्त्वयि चाधिज्यकार्मुके।
मृगानुसारिणं साक्षात्पश्यामीव पिनाकिनम्।।[२]

दशरथस्य सर्वे चत्वारो पुत्रास्तत्र स्व–स्व भार्याभिः सह तथैव शोभन्ते स्म यथा भूपतेर्दशरथस्य सामदानविधिभेदनिग्रहाः सिद्धिभिर्युताः भवेयुरिति। यथोक्तमत्र–

ते चतुर्थसंहितास्त्रयो बभुः सूनवो नववधूपरिग्रहाः।
सामदानविधिभेदनिग्रहाः सिद्धिमन्तः इव तस्य भूपतेः।।[३]

जनकसुताः दशरथपुत्रान् सम्प्राप्य कृतार्थत्वं प्राप्ताः। तद्वच्चाप्यत्र दशरथपुत्रा अपि जनकसुताः सम्प्राप्य कृतार्थाः सञ्जाता इति भावः। वैयाकरणस्य भाषया कविकुलगुरुस्तत्र वर्णयति यद् यथा प्रकृतिं विना प्रत्ययः खलु शब्दार्थं नैव कर्तुं समर्थस्तथैव प्रकृतिरपि नैव समर्थेति। यथोक्तं तत्र–

ता नराधिपसुता नृपात्मजैस्ते च ताभिरगमन्कृतार्थताम्।
सोऽभवत्तद्वरवधूसमागमः प्रत्यय–प्रकृतिसन्निभम्।।[४]

वस्तुतो वैयाकरणाः निगदन्ति यत् प्रकृतिस्तु पार्वती प्रोक्ता प्रत्ययस्तु महेश्वरः। इदमेव मतं व्याकरणदर्शन[५] भूमिका नामके पुस्तके पं रामाज्ञापाण्डेये नोक्तं तत्र अत्र प्रकृतिपदेन माता, प्रत्ययपदेन पिता गृह्यते इति प्रतिपा

---

१. रघुवंशे, ११.४४
२. अभिज्ञानशाकुन्तले, १.६
३. रघुवंशे
४. तदेव, ११.५६
५. व्याकरणदर्शन भूमिका (पं० रामाज्ञा पाण्डेयकृता) पृ० ५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इतिमिति। महाभाष्ये तु कथितमेव न केवला प्रकृतिः प्रोक्तव्या[1] न केवलं प्रत्यय इति। अयमेव विचारः काव्येऽस्मिन् रघुवंशेऽपि मातृपितृरूपेण प्रतिपादितः–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।[2]

धनुषयज्ञस्य पश्चात् परशुरामः तत्रागत्य रामं जगाद। हे राम! धनुरिदं यन्न केनापि राज्ञा उत्थापितं, तद्धनुस्त्वया खण्डितमहो। कार्येणानेन त्वया मम पराक्रमो विनष्टोऽपि कृतः। यथोक्तं तत्र–

मैथिलस्य धुनरन्यपार्थिवैस्त्वं किलानमितपूर्वमक्षणोः।
तन्निशम्य भवता समर्थये वीर्यशृङ्गमिव भग्नमात्मनः।।[3]

वस्तुतो रामस्यैव पराक्रमत्वात् परशुरामस्याहङ्कारो विनष्टः। भगवता परशुरामेण याचितं यद् हे राम! स्वर्गस्य नास्ति मेऽभिलाषः। भवान् पुण्यतीर्थगमनाय गतिं मे रक्षतु। इयमेव मदीया कामना भगवन्। यथा याचितं तत्र–

तद्गतिमतिमतां वरेप्सितां पुण्यतीर्थगमनाय रक्ष मे।
पीडयिष्यति न मां खिलीकृता स्वर्गपद्धतिरभोगलोलुपम्।।[4]

वस्तुतस्तु परशुरामस्तत्र विष्णोः रामावतारस्य प्रतीक्षारत एवाऽसीत् शिवस्य धनुः रामाय समर्पितं वीक्ष्य वीतरागोऽभवत्। ब्राह्मणस्य कर्म सम्यक् कृतं तैस्तत्र। सर्वं ब्राह्मणाय दत्वा निवृत्तो जातः। सर्वं पौरुषबलेन विजितं यशः स्वच्छेच्छया परित्यक्तमिति। रामोऽपि परशुरामं प्रति श्रद्धाभावः प्रकटितवान्। यतोहि सोऽपि विनम्रभावस्तत्र कीर्तये भवतीति। यथोक्तं कविकुलगुरुणा तत्र रघुवंशमहाकाव्ये–

---

१. महाभाष्ये १.२.६४
२. रघुवंशे १.१
३. तदेव ११.७२
४. तदेव, ११.८७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राघवोऽपि चरणौ तपोनिधेः क्षम्यतामिति वदन्संस्पृशत्।
निर्जितेषु तरसा तरस्विनां शत्रुषु प्रणतिरेव कीर्तये।।[1]

इत्यनेन रामस्य कीर्तिः दिक्षु प्रसृतेति। एकस्मिन् दिने दशरथेन चिन्तितं यद् वृद्धोऽहं जातः। एतदर्थं रामाय राज्यलक्ष्मीं समर्प्य सुखेन निवत्स्यामि। कालिदासोऽपि निगदत्यत्र–

तं कर्णमूलमागत्य रामे श्रीर्न्यस्यतामिति।
कैकेयीशङ्क्येवाह पलितच्छद्मना जरा।।[2]

श्लोकेऽस्मिन् साहित्यिकभाषयाः प्रयोगः कृत इति। दशरथः रामाय राज्यभारं समर्पणाय सङ्कल्पः कृत इति द्योत्यते। श्रुत्वा दशरथस्य वचः अयोध्यायां हर्षध्वनिर्जातः।

रघुवंशे रामस्य वैशिष्ट्यं प्रतिपादितमस्ति। यदा दशरथस्य रामाय राज्यं दत्तवान् तदा रुदन्नेवाङ्गीकृतवान्। यदा वनाय रामो दशरथेनादिष्टः तदा मुदा स्वीकृतं सर्वमिति। यथोक्तं तत्र रघुवंशे–

पित्रा दत्तां रुदन्रामः वाङ्मही प्रत्यपद्यत।
पश्चाद्वनाय गच्छेति तदाज्ञां मुदितोऽग्रहीत्।[3]

उपर्युक्तं श्लोकं वीक्ष्य सुस्पष्टं भवति यद् रामावतारो राज्यभोगाय नाऽसीदपितु योगेश्वरो भूत्वा दानवानां संहाराय किलाऽसीदिति। श्रुत्वा वनगमनसमाचारं भरतस्तु न केवलं मातरमपितु राज्यलक्ष्मीमपि त्यक्तवान्। यथा विर्णितं रघुवंशे–

श्रुत्वा तथा विधं मृत्युं कैकेयीतनयः पितुः।
मातुर्न केवलं स्वस्याः श्रियोऽप्यासीत्पराङ्मुखः।।[4]

---

१. तदेव, ११.८६
२. तदेव, १२.२
३. तदेव, १२.७
४. तदेव, १२.१३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रामस्तत्रेन्द्रपुत्रजयन्तस्यापराधात् निजतीक्ष्णबाणेन तस्यै नेत्रं विनष्टवान्। यथोक्तं रघुवंशे–

तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रं रामो रामावबोधितः।
आत्मानं मुमुचे तस्मादेकनेत्रव्ययेन सः।।[1]

वस्तुतो रामस्य बाणः कार्यसिद्धिं कृत्वैव निवर्तते। कालिदासस्य चिन्तनमपि विलक्षणमद्वितीयञ्च विद्यते। सीता राममनुगच्छन्ती तथैव प्रतिभाति यथा कैकेय्याः निषिद्धापि राज्यश्रीरनुगच्छेत् राममिति भावः। यथा प्रोक्तं कालिदासेनात्र रघुवंशे–

बभौ तमनुगच्छन्ती विदेहाधिपतेः सुता।
प्रतिसिद्धाऽपि कैकेय्या लक्ष्मीरिव गुणोन्मुखी।।[2]

अनसूया सतीरूपेण भुवि प्रथितैव किल। तथैव सीता विशिष्टाङ्गरागः प्रदत्तः। यथोक्तं तत्र–

अनुसूयातिसृष्टेन पुण्यगन्धेन काननम्।
सा चकाराङ्गरागेण पुष्पोच्चालितषट्पदम्।।[3]

शुर्पणखा निजापमानकरणेन खरदूषणौ सूचितवती। तत्र खरदूषणौ श्रीरामेण हतौ। यथोक्तं तत्र

तैस्त्रयाणां शिवैर्बाणैर्यथा पूर्वविशुद्धिभिः।
आयुर्देहातिगैः पीतं रुधिरं तु पतत्त्रिभिः।।[4]

ततः परं शुर्पणखा निजाग्रजं रावणं निवेदिवती। श्रुत्वा च रावणः क्रोधान्धो भूत्वा रामप्रियां सीतां जहार। अस्य कार्ये रावणो मारीचं स्वर्णरूपधारिणं प्रयुक्तवान्। यथोक्तं तत्र–

---

१. तदेव, १२.२३
२. तदेव, १२.२६
३. तदेव, १२.२७
४. तदेव, १२.४८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रक्षसा मृगरूपेण वञ्चयित्वा स राघवौ।

जहार सीतां पक्षीन्द्रप्रयात्यक्षणविघ्नितः।।[1]

सीताहरणविषयकसूचना पक्षीन्द्रेण रामलक्ष्मणौ निविदितौ। रावणेन हृता सीतेति सूचना खगेन काले प्रदत्ता। अस्मिन्नेव सीतासंरक्षणे स्वजीवनमपि परोपकाराय प्रदत्तम्। वर्तमानपरिस्थितौ प्रकरणमिदं शिक्षाप्रदं वर्तते। यथोक्तम्–

स रावणहृतां ताभ्यां वचसाऽऽचष्ट मैथिलीम्।

आत्मनः सुमहत्कर्म व्रणैरावेद्य सं स्थितः।।[2]

यत्राद्य मानवानां सदाचारो रसातलं गच्छति तत्रैव खगस्योज्ज्वलचरित्रं शिक्षयति कृत्स्नं विश्वमिति। खगे मृते सति रामस्तत्र विधिवद् दाहसंस्कारमकरोत्। दशरथस्य मित्रत्वात्त् रामेणापि पितृवत् श्राद्धक्रिया सम्पादितेति वीक्ष्याश्चर्यं जातम्। यथोक्तमत्र–

तयोस्तस्मिन्नवीभूतपितृव्यापत्तिशोकयोः।

पितरीवाग्निसंस्कारात्पराव वृतिरे क्रियाः।।[3]

मार्गे कबन्धस्यापि दर्शनं सञ्जातम्। यः ऋषिशपाद् राक्षसयोनिं प्राप्तः। तस्यापि कृतः समुद्धारो भगवता रामेण। वस्तुतो रामस्य जीवनमेवाऽसीद दैत्यानां संहारायेति। तेनैव सुग्रीवस्य परिचयः प्रदत्तः खलु। यथोक्तमत्र–

वधनिर्धूतशापस्य कबन्धस्योपदेशतः।

मुमूर्च्छ सख्यं रामस्य समानव्यसने हरौ।।[4]

ततः परं वालिनं हत्वा स रामेण सुग्रीवो नृपपदे स्थापितः। अस्य वर्णनं कविकुलगुरुणा व्याकरणस्योद हरणेनसम्यक् कृतम्। कथितं यद् यथा **अस्तेर्भूः**[5] इति सूत्रेण अस् इत्यस्य स्थाने भूरिति भवत्यादेशः तथैव बालिस्थाने

१. तदेव, १२.५३
२. तदेव, १२.५५
३. तदेव, १२.५६
४. तदेव, १२.५७
५. अष्टाध्याय्याम्, २.४.५२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुग्रीवस्य आदेशे जात इति। आदेशस्तु भवत्येव शत्रुवत्। यथोक्तं रघुवंशे—

स हत्वा बालिने वीरस्तत्पदे चिरकाङ्क्षिते।
धातोः स्थानं इवादेशं सुग्रीवं संन्यवेशयत्।।[1]

रामेण सह विभीषणोऽपि सम्भूय रामरावणयोः युद्धे सहायतामकरोदिति। रामोऽपि विभीषणाय वचनं दतवान्। कथितं यद् रावणान्ते त्वमेव भविष्यसि लङ्कापतिरिति। यथोक्तं तत्र—

तस्मै निशाचरैश्वर्यं प्रति शुश्रावराघवः।
काले खलु समारम्भाः फलं बध्नन्ति नीतयः।।[2]

रामेण साकं सर्वे वानराः सेतुमाध्यमेन लङ्कायां प्रविष्टाः। लङ्कां परितः वानरा नूतनस्वर्णलङ्केव शोभन्ते स्म। यथोक्तमत्र—

तेनोत्तीर्य पथा लङ्कां रोधरायामास पिङ्गलैः।
द्वितीयं हेमप्राकारं कुर्वद्भिरिव वानरैः।।[3]

मेघनादस्य नागपाशेन पाशितौ रामलक्ष्मणौ। तत्र गरुडः समागत्य नागपाशात् मुक्तिं दत्तवान्। यथोक्तमत्र—

गरुडापातविश्लिष्टमेघनादास्त्रबन्धनः।
दशरथ्योः क्षणक्लेशः स्वप्नवृत्त इवाभवत्।।[4]

एवमपि निगद्यते यत् नागपाशे रामं वीक्ष्य वैनतेयः शङ्कायुतो सञ्जातः। तेन चिन्तितं यद् अयमेव विष्णोः किलावतारः? यस्य नामस्मणेन बन्धनं स्वत एव नश्यति कथमद्य बन्धने दृश्यत इति। कुम्भकर्णोऽपि रामस्य मार्गावरोधं कृतवान् एतदर्थं रामस्तत्र बाणैः चिरनिद्रायां प्रेषितवानिति। यथोक्तं तत्र रघुवंशमहाकाव्ये तत्र—

१. रघुवंशे, १२.५०
२. तदेव, १२.६९
३. तदेव, १२.७१
४. तदेव, १२.७६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अकाले बोधितो भ्रात्रा प्रियस्वप्नो वृथा भवान्।
रामेषुभिरितीवासौ दीर्घनिद्रां प्रवेशितः।।[1]

रामस्तत्र ब्रह्मास्त्रेण रावणस्य शिरांसि भूमावपातयन्। छिन्नानि शिरांसि वीक्ष्यापि देवास्तत्र न विश्वासयुताः जाता। स शङ्कितास्तत्र ते आसन् कदाचित् पुनश्च जीवितोऽयं न भवेदिति। यथोक्तं तत्र–

मरुतां पश्यतां तस्य शिरांसि पतितान्यपि।
मनो नाति विशश्वास पुनः संधानशङ्किनाम्।।[2]

रामः पञ्चवटीं वीक्ष्य स्मरति विगतकालं तत्र। कथयति सीतां प्रति यत् हे सीते! अत्रैव त्वया घटाम्बुना पालिताः वृक्षाः। मृगा अपि शिररुत्थाय्य पश्यन्ति विमानमिति। यथोक्तं तत्र–

एषा त्वया पेशलमध्ययाऽपि घटाम्बुसंवर्धितबालचूता।
आनन्दयत्युन्मुखकृष्णसारा द्रष्टा चिरात्पञ्चवटी मनो मे।।[3]

मार्गे सीतां दर्शयन् कथयति रामो यद् हे प्रिये अत्र गङ्गायमुनयोः सङ्गमे ये कुर्वन्ति स्नानं, तेषां भवबन्धनानि स्वत एव भिद्यन्ते। तेषान्तु विना तत्त्वावबोधं भवति कल्याणमिति। सङ्गमस्नानस्य महत्त्वं प्रतिपादयत्यत्र–

समुद्रपत्न्योर्जलसंनिपाते पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात्।
तत्त्वावबोधेन विनाऽपि भूयस्तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः।।[4]

निषादाधिपतेः नगरमप्यत्र स्मर्यते यत्र मुकुट मणिमतवार्य जटाधरोऽहं जातः। वीक्ष्य सर्वं सुमन्त्रस्तत्राश्रुपातं चकार। तैरेवमपि निगदितं यत् हे कैकेयि! मनोरथस्ते साफल्यं जातः। यथोक्तं तत्र–

१. तदेव, १२.८१
२. तदेव, १२.१०१
३. तदेव, १३.३४
४. तदेव, १३.५८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुरं निषादाधिपतेरिदं तद्यस्मिन्मया मौलिमणिं विहाय।

जटासु बद्धास्वरुदत्सुमन्त्रः कैकेयि कामाः फलितास्तवेति।[1]

रामभरतमिलनमपि पृथगेवासीत्। रघुवंशे निगदितं यद् भरतः स्व शिरः रामस्याङ्के निधायाथ च रामोऽपि तमाश्लिष्य बहुकालं यावत् क्रन्दितवन्तौ। तत्रेत्थं प्रतीयते स्म यथा परस्परं पवित्रं कुरुतः। यथोक्तं तत्र रघुवंशे–

ज्येष्ठानुवृत्तिजटिलं शिरोऽस्य साधो–

रन्योऽन्यपावनमभूदुभयं समेत्य।।[2]

सीतायाः पावित्र्यं तत्र रामस्य मातृभिः प्रतिपादितं किल मातृद्वयं कथयति यत् हे सीते तव पावित्र्येणैव पुत्रौ सङ्कटेभ्यः प्रतिष्टवृत्तौ। यथोक्तं तत्र महाकाव्ये–

उत्तिष्ठ वत्से! ननु सानुजोऽसौ वृत्तेन भर्ता शुचिना तवैव।

कृच्छ्रं महत्तीर्ण इति प्रियार्हां तामूचतुस्ते प्रियमप्य मिथ्या।।[3]

सीतायाः पातिव्रत्यधर्मस्तत्र त्रिभुवनेषु रुढ़ इति। तदेवात्र व्याकृतं रघुवंशे। पतिव्रता सीताऽङ्गरागेन द्योततेऽधिकम्। बिभ्रती सा सीता भर्त्रा विशुद्धेवाग्नौ किलायोध्याजनदर्शनाय प्रतीयते स्म। यथोक्तं तत्र कविकुलगुरुणा कालिदासेन रघुवंशे–

रराज शुद्धेति पुनः स्वपुर्यै संदर्शिता वाह्निगतेव भर्त्रा।[4]

रामवन– गमनकारणेन लज्जितां कैकेयीं प्रति कथयत्यत्र रामः यत् हे मातः! तवैव कारणात् पितृपादाः वरदानं दत्वा स्वर्गमारुढ़ाः एतदर्थमेव त्वमेव पूज्या सदा किल संसारे। यथोक्तमत्र–

कृताञ्जलिस्तत्र यदम्ब सत्यान्नाभ्रश्यत स्वर्गफलाद् गुरुर्नः।

तच्चिन्त्यमानं सुकृतं भवेदिति जहार लज्जां भरतस्य मातुः।।[5]

---

१. तदेव, १२.५६
२. तदेव, १३.७८
३. तदेव, १४.६
४. तदेव, १४.१४
५. तदेव, १४.१६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धर्मार्थकामवत् सम्बन्धः रामस्य भ्रातृष्वपि चाऽसीदिति। रामस्य व्यवहारो भ्रातृभिः सह तथैव यथाधर्मार्थपुरुषार्थैः सहाऽसीदि। यथोक्तमत्र–

पितुर्नियोगाद्वनवासमेवं निस्तीर्य रामः प्रतिपन्नराज्यः।
धर्मार्थकामेषु समां प्रपेदे यथा तथैवावरजेषु वृत्तिम्।।[1]

यदा रामेणावगतं सीता गर्भवती विद्यते तदा तां मनोवाञ्छितं पप्रच्छ। प्रश्नस्योत्तरे सीतयेत्थं निवेदितम्–

सा द्रष्टनीवारबलीनि हिंस्त्रैः सम्बद्धवैखानसकन्यानि।
इयेष भूयः कुशवन्ति गन्तुं भागीरथीतीरतपोवनानि।।[2]

सीतायाः प्रश्नोत्तरे कथयत्यत्र रामो यत् करिष्यामि वचनं तवेति। यथोक्तं रघुवंशे–

तस्यै प्रतिश्रुत्य रघुवीरस्तदीप्सितं पार्श्वचरानुयातः।
आलोकयिष्वन्मुदितामयोध्यां प्रासादमभ्रंलिहमारुरोह।।[3]

ततः परं रामस्तत्र निजगुप्तचरं भद्रमुखं प्रपच्छ निजविषये। किं कथयति प्रजा मे राज्ये? यथा पृष्टमत्र–

सर्पाधराजोरुभुजोऽपसर्प प्रपच्छ भद्रं विजितारिभद्रः।[4]

पूर्वन्तु तूष्णींभूय स्थितो जातः। विशेषाऽग्रहेण जगाद् गुप्तचरः। हे राजन् जनाः सीतायाः विषये कथयन्ति यद् रावणगृहादागतां सीतां स्वीकृतवान् राम इति। एतदर्थं भवन्तं कथयामि। यथोक्तमत्र–

निर्वन्धपृष्टः स जगाद सर्वं स्तुवन्ति पौराश्चरितं त्वदीयम्।
अन्यत्र रक्षोभवनोषितायाः परिग्रहान्मानवदेवदेव्याः।।[5]

---

१. तदेव, १४.२१
२. तदेव, १४.२८
३. तदेव, १४.२६
४. तदेव, १४.३१
५. तदेव, १४.३२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रुत्वा तु रामो गुप्तचरस्य वचः किङ्कर्त्तव्यविमूढो जातस्तत्र परिहरामि सीतामथवा नैव श्रोतव्यः जनापवाद इति। रामसदृशोऽपि राजाऽद्य विचलिताऽस्ति यथोक्तमत्र–

किमात्मनिर्वादकथामुपेक्षे जायामदोषामुत संत्यजामि।
इत्येकपक्षाश्रयविक्लिवत्वादासीत्स दोलचलाचित्त वृत्तिः।।[1]

राजधर्मनिर्वोढुं रामस्तु जानकीमेव परित्यक्तावानिति। यथोक्तमत्र–

निश्चित्य चानन्यनिवृत्तिवाच्यं त्यागेन पत्न्याः परिमार्ष्टुमैच्छत्।
अपि स्वदेहात्किमुतेन्द्रियार्थाद्शोऽधुनानां यहि यशो गरीयः।।[2]

प्रसङ्गमिमं वीक्ष्य भवभूतेः पद्यं स्मर्यतेऽत्र[3] अतिकठोरयशः किल ते प्रियम्। वस्तुतः रामस्तु विलक्षणस्वभावोपेत एव आसीत्, यथोक्तमुत्तररामचरिते–

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि[4]

इदमत्र ध्यातव्यमस्तियद् रामस्तु तदेवाऽकरोत् यत् सीतायाः कामनाऽसीदिति। रघुवंशस्य रामस्तु सीतावचनं मनुते। सीता तु स्वयं लक्ष्मीरूपैव किल। तया रामस्य मनसः पूर्वमेव सर्वमनुभूतं खलु। एतदर्थं तपस्विनां दर्शनमैच्छत्। रामेण लक्ष्मणस्तत्राऽदिष्टः तपोवने प्रेषणायेति। स्पष्टरूपेण रामेण न किमपि सीता निगदिता। लक्ष्मणोऽपि नोद्घाटितवानिति यथोक्तमत्र–

जुगूड तस्याः पथि लक्ष्मणो यत्सत्येतरेया स्फुरता तदक्षणा।
आख्याततमस्यै गुरु भावि दुःखमत्यन्तलुप्तप्रियदर्शनेन।।[5]

---

१. तदेव, १४.३४
२. तदेव, १४.३५
३. उत्तररामचरिते, ३.२७
४. तदेव, २.७
५. रघुवंशे, १४.४६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लक्ष्मणः अश्रुपातं नियम्य कठोरं वचोऽवदत्। हे मातः भ्रार्तृपादेन निर्वासनादेशः कृत इति। यथोक्तं तत्र–[1]

औत्पातिकं मेघ इवाश्मवर्षं महीपतेः शासनमुज्जगार।[2]

वज्रोपमं वचनं निशम्य सीता भूमौ पपात। यथा पुष्पमुष्णं प्राप्य पतति भूमौ। यथोक्तं तत्र–

स्वमूर्तिलाभप्रकृतिं धरित्रीं लतेव सीता सहसा जगाम।

भ्रातुराज्ञापालकः लक्ष्मणः सीतामकथत् यद् अहन्तु आदेशपालको मातः। यथोक्तं तत्र–

देवि क्षमस्वेति बभूव नम्रः इति। सीता लक्ष्मणं तत्राऽशीर्वादं दत्वा तमादिदेश–

सीता तमुत्थाय जगाद वाक्यं
प्रीताऽस्मि ते सौम्य चिराय जीव।
विडौजसा विष्णुरिवाग्रजेन
भ्राता यदित्थं परवान सि त्वम्।।[3]

पुनश्च सा निगदति हे लक्ष्मण! कथ्यतां मद्वचनात् स राजा। अग्निपरीक्षां वीक्ष्यापि मनसि तोषः नैव जातः? किमेतद् रघुकुलस्य योग्यमस्ति। यथोक्तमत्र–

वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स स राजा
बन्हौ विशुद्धामपि यत् समक्षम्।
मां लोकवादश्रवणादहासीः
श्रुतस्य कि तत्सदृशं कुलस्य।।[4]

१. तदेव, १४.५३
२. तदेव, १४.५४
३. तदेव, १४.५८
४. तदेव, १४.५६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वस्तुतो रघुवंशस्य सीता भिन्नैव प्रतिभाति। भारतीया नारी सर्वान् दोषान् स्वमेव स्वीकरोति। कथयति चाऽहं पुनः भीषणंतपः करिष्ये कृत्वा च पुनः लप्स्ये। किन्तु वियोगो नैव भवेदिति। यथोक्तमत्र–

साऽहं तपः सूर्यनिविष्ट दृष्टिरूर्ध्वं प्रसूतेश्चरितुं यतिष्ये।
भूयो यथा मे जननान्तरेऽपि त्वमेव भर्ता न च विप्रयोगः।।[1]

रामस्तु राम एव। वैदेह्याः स्वर्णमूर्तिमेव संस्थाप्य यज्ञकार्यं सम्पादितं रामेण। एतदर्थं रामस्य सीतैव भार्या न काप्यन्या। यथोक्तमत्र–

अनन्यजानेः सैवासीद्यस्माज्जाया हिरण्यमयी।[2]

रामेण साकं लवकुशयोः परिचयं कारयति महर्षिः वाल्मीकिः। कथयत्यत्रमहाकाव्ये–

स तातारख्यायरामाय मैथिलेयौ तदात्मजौ।
कविः कारुणिको वव्रे सीतायाः सम्परिग्रहम्।।[3]

सीतायाः स्वीकारविषये रामस्तत्रकथयति यत् हे मुने! सीता सदैव शुद्धैवा जातवेदस्यपि कृता परीक्षा परन्तु प्रजानामविश्वासाद् भवत्यसौ कर्यमिति। यथोक्तं तत्र रघुवंशे–

तात शुद्धा समक्षं नः स्नुषा ते जातवेदसि।
दौरात्म्याद्रक्षसस्तां तु नात्रस्याः श्रद्दधुः प्रजाः।।[4]

सीता सर्वेषां समक्षेऽवदत् हे मातः वसुन्धरे! यदि मनसा वाचा कर्मणाऽहं पातिव्रत्यं पालितवती तद् देहि विवरमिति–

वाङ्मनः कर्मभिः पत्यौ व्यभिचारो यथा न मे।
तथा विश्वम्भरे देवि मामन्तर्धातुमर्हसि।।[5]

---

१. तदेव, १४.६१
२. तदेव, १४.६६
३. तदेव, १५.६१
४. तदेव, १५.७१
५. तदेव, १५.७२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सर्वं वीक्ष्य रामस्तु क्रुद्धो जातः परन्तु मुनिद्वयस्य कारणेन शान्तो जातस्तत्र। पुत्रौ द्वावपि मातृवत् स्नेहः पितुः पार्श्वेऽपि अधिगतवन्तौ।[1]

रामः सीतागतं स्नेहं बिदधे तदपत्ययोः।[2]

वस्तुतो रामस्य चरितमनन्तमिति। कथं रामः सीतां त्यक्तवान् सर्वमेतद् रामाधीनमेव। मायापतेः लीलान्तु मायापतिरेव विजानाति सीता तु स्वयमुद्भवस्थितिसंहारकारिणी वर्तते। एतदर्थं कथ्यते यत्–

लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति।[3]

***

१. तदेव, १५.८१
२. तदेव, १५.८६
३. उत्तरामचरिते, २०७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्मणः शिक्षा एव ग्रहणीया
(श्रीमद्भगवद्गीतायाः विशेषसन्दर्भे)

आचार्यो डा० रामेश्वरप्रसादगुप्तः
सेवानिवृत्तः संस्कृतप्राध्यापकः, दतिया, म.प्र.

अथर्ववेदीयो मन्त्रोऽस्ति यत् '**कृतं मे दक्षिणे हस्ते, जयो मे सव्य आहितः**'[1] एवमपि कथ्यते, यत् 'कर्मकुर्वन्तौ हस्तौ श्रेयस्करौ, न तु मन्त्रोच्चारणे संलग्नौ ओष्ठौ। कथनं स्पष्टमस्ति यत् कर्म एव जयते। वस्तुतः कर्म एव पूजा अस्ति। ज्ञानेन तपसा वा कर्म एव वरेण्यम्।

पौराणिककथा एकास्ति, यत् नद्याः तीरे एको ज्ञानी पण्डितः तपः तपति स्म। स तु हरिनामस्मरणमकरोत्। तस्मिन् समय एव अकस्मादेको बालको नद्याः जले स्नानार्थमागतः। दौर्भाग्यवशात् स बालको यदा जले अवतरति स्म तदैव निमज्जनेन तेन चीत्कारः कृतः। तपस्विपण्डितेन तस्य बालकस्य चीत्कारशब्दः श्रुतः, किन्तु तस्य रक्षणाय समुद्यतो नाऽभवत। तदैव तत्र उपस्थितेनैकेन गोपालकेन स बालको रक्षितः। अधुना तु, प्रश्नः समुद्भवति, यत् सः ज्ञानी तपस्विपण्डितः शिक्षित आसीत् अथवा निरक्षरः गोपालकः शिक्षितः तु आसीत्? उत्तरं स्पष्टमस्ति यत् परोपकारी गोपालकः एव श्रेष्ठः शिक्षितः पण्डितश्चासीत्। वस्तुतः कार्यकर्मरतो जनो ननु शिक्षितः कथ्यते। विषयेस्मिन् शास्त्रप्रमाणमस्ति, यत्–

शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खाः।
यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्।।[2]

सत्क्रियया बिना ज्ञानं तपो वा निरर्थकमेवास्ति। यथा उल्लेखो वर्तते, यत्–

ज्ञानं भारः क्रियां बिना।[3]

---

१. अथर्ववेदे ७.५४.८
२. हितोपदेशे, १.१७१
३. तदेव (मित्रलाभे) – १८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अकर्मा तु दस्युर्भवति। ऋग्वेदे कथितं, यत्–

अकर्मा दस्युः।[४]

ऐतरेयब्रह्मणे निगदितं यत् परिश्रमीजनस्तु श्रियं लभते। यथोल्लेखः यत्–

नानाश्रान्ताय श्रीरस्ति इन्द्र इच्चरतः सखा।
चरैवेति, चरैवेति।।[५]

परमात्मा परमेश्वरो नन्वपि सततमेव अनासक्तिभावेन कर्मण्यनुरतो भवति। अतन्द्रितः स नित्यं कर्ममार्गमनुसरति।

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन्।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।।
यदि ह्यहं न वर्तेयं, जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।[६]

कर्तव्यहीनता अकर्मण्यता वा मनुष्यं नष्टं मुष्टं च करोति। नित्यं अनासक्तिभावेनैव कार्यं कर्म वा करणीयं वर्तते। तत् एव श्रेयसो भवति। कर्मफलं प्रति अनासक्तो जनो नूनं सच्चिदानन्दस्वरूपम् आत्मतत्त्वं जानाति। स एव परमात्मतत्त्वं प्राप्नोति। यथोक्तम्–

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।[७]

कर्मणः समुपादेयता तस्य महत्त्वञ्च श्रीमद्भगवद्गीतायां समुल्लिखितं वर्तते। तत्र कथितं यद् ज्ञानीजनाः जनकादयश्च कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिताः। अत एव स्वकल्याणहेतवे लोककल्याणार्थाय च कर्म एव करणीयमस्ति। उल्लेखो वर्तते, यत्–

---

४. ऋग्वेदे, १०/२२/८
५. ऐतरेयब्राह्मणे, ७/३
६. श्रीमद्भगवद्गीतायाम्, ३/२२–२३
७. तदेव, ३/१९

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि।।[८]

ज्ञानेन सदृशं पवित्रम् अस्मिन् संसारे किञ्चिदपि नास्ति। ज्ञानं लब्ध्वा जनः परां शान्तिमपि अचिरेण प्राप्नोति। उल्लेखो वर्तते, यत्–

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति।।[९]

श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।।[१०]

किन्तु 'कर्म' अपरिहार्यमावश्यकञ्चास्ति। यतः कर्मणैव संसिद्धिः भवति। कर्मणयेव च मानवस्याधिकारो वर्तते। यथा–

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुभूर्मा तेसङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।[११]

गीतायां निर्देशो वर्तते, यद् योगस्थ एव भूत्वा सङ्गं त्यक्त्वा च कर्माणि करणीयानि। सा एव स्थितिः 'योग' इति उच्यते। यथा कथितं, यत्–

'योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।[१२]

कर्मणि समबुद्धियुक्तो जनः समत्वयोगी भवति। अयमेव योगः 'कर्मसु कौशलम्' इति कथ्यते। यथोक्तम्–

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदृष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।।[१३]

'कर्मणा' सिद्धिः क्षिप्रमेव भवति। ये जना देवान् पूजयन्ति यजन्ति वा, ते

८. तदेव, ३/२०
९. तदेव, ४/३८
१०. तदेव, ४/३६
११. तदेव, २/४७
१२. तदेव, २/४८
१३. तदेव, २/५०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Ch...

शीघ्रमेव सिद्धिं प्राप्नुवन्ति। यथोक्तम्–

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा।।[१४]

कर्मफले स्पृहा न भवितव्या। निष्कामभावेन यो जनः कर्म करोति, सः कर्मभिर्न बध्यते। यथोल्लेखो वर्तते, यत्–

न मां कर्माणि लिम्पन्ति, न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति, कर्मभिर्न स बध्यते।।[१५]

भगवता श्रीकृष्णेन कर्म–विकर्म–अकर्मादिविषयेषु विवेचना कृता। यथोल्लिखितम्–

कर्मणो ह्यपि बोधव्यं, बोधव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोधव्यं, गहना कर्मणो गतिः।।

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्।।[१६]

गीताकारेण कर्मणो महत्त्वं प्रतिपादितम्। भगवता श्रीकृष्णेन स्पष्टं कृतं, यत् कर्मफलस्येच्छां त्यक्त्वा यो जनो निस्पृहतया कर्म प्रति सुष्ठु संलग्नो भवति, स नूनमेव संन्यासी योगी वा कथ्यते। यथोल्लिखितम्, यत्–

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।।[१७]

अधुना प्रायः पण्डितम्मन्यो ये सन्ति, ते ज्ञानबलेन केवलं स्वदम्भं प्रकटयन्ति। तेषां रुचिः कर्तव्यं प्रति न भवति। किञ्चिद् ज्ञानेन वाक्–चातुर्येण वा ये जनाः लोकान् मोहयन्ति, तेषां ज्ञानं सार्थकं न भवति। सदाचारः कर्तव्यं प्रति निष्ठा वा धर्मः कथ्यते। यथोक्तम्–

---

१४. तदेव, ४/२२
१५. तदेव, ४/१४
१६. तदेव, ४/१७–१८
१७. तदेव, ६/१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आचारः परमो धर्मः ।[१८]

कर्म बिना ज्ञानं भाररूपमेव भवति। वस्तुतो ज्ञानस्य फलं तद्वद् आचरणेनैव फलीभूतं भवति। महाकविना श्रीहर्षेण ज्ञानग्रहणस्य सोपानानि निगदितानि। यथा–

अधीतबोधाचरणप्रचारणैः ।[१९]

अथ 'आचरणं' कर्म प्रति प्रेरयति। ज्ञानस्य प्राप्त्यनन्तरम् आचरणस्य महती उपयोगिता महत्त्वञ्च निर्दिष्टमस्ति। नैष्कर्म्यभावः सिद्धिं न लभते। यथोक्तम्–

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति।।[२०]

कर्मनिष्ठां प्रति प्रेरणा गीतायां सुष्ठुरूपेण प्रदत्ता। यथा–

नियतं कुरु कर्म त्वं, कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः।।[२१]

श्रीमद्भगवद्गीता स्पष्टं करोति, यत् कर्मसन्न्यसनात् कर्मयोगो विशिष्यते। यथोल्लेखो वर्तते, यत्–

सन्न्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्कर्म योगो विशिष्यते।।[२२]

भारतीयसंस्कृतिः कर्मप्रधानसंस्कृतिर्वर्तते। वेदाः भारतीयसंस्कृतेः प्राचीनग्रन्थाः सन्ति। ऋग्वेदे ननु उल्लिखिता कर्मशिक्षा सर्वान् जनान् कर्म प्रति प्रबोधयति। उल्लेखो वर्तते, यत्–

---

१८. मनुस्मृतौ, १/१०८
१९. नैषधीयचरिते, १/१४
२०. श्रीमद्भगवद्गीतायाम्, ३/४
२१. तदेव, ३/८
२२. तदेव, ५/२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कृषिमित्कृषस्व।[२३]

कर्मणः तु अयं भाव ईशावास्योपनिषदि महता प्रमाणेन वर्णितम्। यथा–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।[२४]

अत्र स्पष्टमुक्तं यल् लोकेस्मिन् कर्माणि कुर्वन मनुष्यः शतं समाः जिजीविषेत्।

परमश्रेष्ठो वेदज्ञो महर्षिः आरुणिः नन्वासीत्। तस्य कर्मकथा ननु प्रसिद्धा एवास्ति। आरुणिः धौम्यमहर्षेः शिष्यो नन्वासीत्। वेदवेदाङ्गविद् आरुणिः गुरोराज्ञां प्राप्य कृषिकार्ये संलग्नः तु आसीत् एव। वेदवेदाङ्गपारङ्गतेन आरुणिना कृषिकार्येऽपि प्रवीण्यं प्रदर्शितम्।

"कर्म एव सर्वेश्वरः" तथा **"कर्म एव श्रेष्ठम्"** इति विद्वद्भि र्निगदितम्। एवमेव सर्वप्राणिनां सर्वदेवानाञ्च नियन्तारूपेण कर्म एव वर्णितम्। महाकविभर्तृहरिणा नीतिशतके लिखितम्, यत्–

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डोदरे।
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासङ्कटे।।

रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं सेवते।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे।।[२५]

अतः स्पष्टमस्ति यत् कर्मवशादेव ब्रह्मा कुलालवत् विश्वं निर्माति। कर्मणा एव विष्णुर्दशावतारेषु कष्टं सहते। महादेवस्तु कर्मणैव भिक्षायै भ्रमणं करोति। तथा च कर्मणैव प्रकटितः सूर्यो गगने भ्रमति। अतो निष्कर्षरूपेण वक्तुमिदं शक्यते यद् ज्ञानेन सह कर्मणः शिक्षा नूनं सग्राहया भवतीत्यस्ति श्रीमद् भगवद्गीताया विशिष्टसन्देशः।

***

२३. ऋग्वेदे, १०/३४/१३
२४. ईशावास्योपनिषदि – २
२५. नीतिशतके, ६३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हारीतराशिचरितम्

डॉ० राजेन्द्रप्रसादमिश्रः
प्राप्तावकाशसङ्कायाध्यक्षः
जगद्‌गुरुरामानन्दाचार्यराजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयः, जयपुरम्

श्रियं कटाक्षाश्चिरमम्बिकायास्तरङ्गयन्नूत्पलदामदीर्घाः।
द्रुमेऽपि सद्यस्तिलकाभिधाने प्रणीयते यैः प्रसवाङ्कुरश्रीः।।१।।

भद्राणि पुष्णातु स रामभद्रो भद्राकृतिः स्वीकृतभद्रपीठः।
कल्पद्रुमो यस्य करादुदारा दौदार्यमध्येतुमिवान्वगास्ते।।२।।

यस्यात्मनीनस्तनयोब्जयोनेः पुरोहितोऽभूद् भगवान् वशिष्ठः।
अरुन्धतीनाम्नि यदीयमास्ते पतिव्रताज्योतिषि भागधेयम्।।३।।

गाधेयगर्वोदधिकुम्भयोनिर्यद्ब्रह्मदण्डो यमिताखिलास्त्रः।
ब्राह्मे बले क्षात्रबले च सारं निरीक्षितॄणां निकषोत्पलोऽभूत्।।४।।

गाधेःसुतः क्रूरतपोमहिम्ना प्रसेदुषि ब्रह्मणि भाषमाणे।
अपि द्विजोऽसीत्यवृणीत यस्य तथाप्यनुज्ञां द्विजभावपूर्त्यै।।५।।

यस्यान्वये योगिवरस्य शक्तिपराशरव्यासशुकप्रधानाः।
सञ्जज्ञिरे सर्वजगत्प्रसिद्धा महर्षयोऽब्धौ मणयो यथाच्छाः।।६।।

तस्यान्ववाये द्विजराज एकः क्षीरोदधौ चन्द्र इवाधिकश्रीः।
सौम्यः सतां वर्त्मनि संप्रवृत्तो हारीतनामाजनि पण्डितेन्द्रः।।७।।

अजायतास्मादरणेरिवाग्निर्बापाजिनामा तनयोऽग्र्यतेजाः।
विरोधिनोऽभ्येत्य विलोलहेतिं चापल्यतो यं शलभी बभूव।।८।।

उमाम्बिका नाम हुताशनस्य स्वाहेव तस्याजनि धर्मपत्नी।
अजीजनद्धर्ममिवात्तदेहं श्रीपालनामानमसौ कुमारम्।।९।।

उमाकुमारोऽयमुदग्रशक्तिर्बाल्यात्प्रतिक्ष्मा भृदुरोविभेत्ता।
बापाजिनेतुस्तनयो महात्मा बालेन्दुमौलेरिव बाहुलेयः।।१०।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीपालभूपालवरस्य तस्य गुणौघमाणिक्यखनिः कनीयान्।
रामस्य सौमित्रिरिवातिमात्र—प्रेमाश्रयो विठ्ठलपण्डितोऽभूत्।। ११।।

धर्मप्रतिष्ठापनतत्परस्य तथा विधोऽक्रूरहितस्य तस्य।
सखानघः शङ्करपण्डितोऽभूद्गाण्डीवधन्वेव गदाग्रजस्य।। १२।।

देवो द्विबाहुर्द्विजराजवंशे श्रीपाल एवाजनि गोप्तुमाप्तान्।
चापासिहस्तः स्वयमेष तस्मादास्ते विमुक्तारिररोगदश्च।। १३।।

पुरा गृहीत्त्वा पृथुकात्सुशैलं श्रीपाल एकं कृतवान्धनाढ्यम्।
अद्य प्रवादच्युतयेऽनुपाधि सुशैल संधान्कुरुते कुवेरान्।। १४।।

शापे च चापे च स रैणुकेयः शान्तौ च कान्तौ च स शारदेन्दुः।
योगे च भोगे च स हैहयेन्द्रो ज्ञाने च दाने च स चेद्धधीचिः।। १५।।

प्रत्यग्रकर्णः प्रतिपादनेऽसौ सत्ये हरिश्चन्द्रनृपो नवीनः।
वीरायते नूतनविक्रमार्को बोधे कलावान्नवभोजराजः।। १६।।

विरोधिसेनातृणवीति होत्रः कवीश्वरस्तोमकलापिमेघः।
समाश्रितव्रात—चकोरचन्द्रः स राजते सज्जनपद्मभानुः।। १७।।

स सञ्चरिष्णुर्भुवि चापवेदो दृशाधिगम्यो द्विजभाग्ययोगः।
दयारसः स्वीकृतदेहबन्धः सचेतनः साम्बशिवप्रसादः।। १८।।

प्रसिद्ध—हारीत—कृपा—प्रसादात्प्राज्ञस्तदीयामवलम्ब्य शक्तिम्।
विजित्य मेवाड़ – भुवं चिराय गोपायति ब्रह्मकुलानुकूलः।। १६।।

बिभ्रद्धरित्रीभरमेष शेषं भुजेन बुद्ध्याप्यधरी करोति।
सरोजलक्ष्मी च सतामलक्ष्मीं निजेक्षणेनैव निराकरोति।। २०।।

नीलालकश्चन्द्रमुखोब्जनेत्रो बिम्बाधराः कम्बुगलो द्विबाहुः।
कवाटवक्षाः स गभीरनाभिर्महोरुजङ्घो मदनो नु मूर्त्तः।। २१।।

कान्त्या त्वदास्येन जितः क्रशीयानिन्दुर्भवत्यन्वदृमित्युडु द्वे।
कर्णान्तिके कीर्तयतो धृतान्तोश्छिद्रे तु मुक्ताच्छलतो मुदेऽस्य।।२२।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हयाधिरोहोचितवेषभूषे हसन्मुखेऽस्मिन् सममश्ववारैः।
हयेन खेलत्यधिराजमार्गं दृष्ट्वा विमुह्यन्त्यबला द्विषश्च।।२३।।

विहारधाटी वितातोरुघोटी खुराग्रधूलीकुहनाम्रपालिः।
विरोधिबालाविपुलाश्रुमाला नदीषु हेतुर्ननु तस्य नेतुः।।२४।।

दुरासदोन्यैर्धृतमण्डलाग्रः सोऽयं प्रतापेऽपरसूर्य एव।
खमुत्पतन् खड्गहतोऽस्य शत्रुर्भिन्ते पदं तद्भ्रमतेऽर्कबिम्बम्।।२५।।

कराग्रखेलत्करवालमाया काला हि लीला कवलीकृतेषु।
प्राणानिलेषु प्रतिपक्षयूनामास्ते नरेन्द्रोऽयममोघमन्त्रम्।।२६।।

अनेककाष्ठाक्रमणादजस्रं जाज्वल्यमानाज्जयशालिनोऽस्य।
प्रतापवह्नेर्भृशमुत्थिताभिर्नीलं नभोऽभून्नियतं मषीभिः।।२७।।

विसृत्वरैरस्य यशोवितानैराच्छादिते सन्ततमिन्दुबिम्बे।
चन्द्रोपलैर्ज्यौतिषिकाः कथञ्चिज्जानन्ति पक्षौ निशि शुक्लकृष्णौ।।२८।।

स्वमन्दिराभ्यन्तरचत्वरेऽस्य वदान्यभावे वितते विचित्रम्।
कवीन्द्रबाहीकगृहाङ्गणानि भवन्ति दानोदकपङ्किलानि।।२९।।

अनर्घकर्णाभरणाङ्गुलीय चित्राम्बरोष्णीषसुकञ्चुकाद्यैः।
अलङ्कृता यस्य सभान्तराले दीव्यन्ति कल्पद्रुमवद्बुधेन्द्राः।।३०।।

यदीयविद्वज्जनयज्ञवाटीमाटीकमानेष्वमरेष्वजस्रम्।
वियोगखिन्ना विबुधायताक्ष्यो हन्तायनं दक्षिणमर्थयन्ते।।३१।।

विद्वज्जनो यस्य विभोः सकाशादासाद्य वर्षाशनमात्तहर्षः।
आविष्करोत्यात्मनि चातकत्वं दातुर्घनत्वं च दिगन्तरेषु।।३२।।

वदान्यतामस्य कथं बदामः कर्णाय दानुर्मणिकुण्डलस्य।
कल्पद्रुमेऽपि स्ववशे वलारिः कर्णं ययाचे मणिकुण्डलं यत्।।३३।।

ख्यातिं गतो यः किल कुण्डलेन बुधेन्द्रमेकं परितोष्यकर्णः।
कथं न जिह्वेति स कुण्डलानि दत्त्वामुना तोषयता बुधेन्द्रान्।।३४।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स कौशिकोऽजायत शक्तिहीनः कर्णात्स्वयं कुण्डलमाददानः।
वासिष्ठ एषोऽजनि वृद्धशक्तिः कर्णेऽर्पयन्कुण्डलमाददानः।।३५।।

देहीति दीनध्वनिकन्धराय दत्तामुना ग्रामशतं द्विजाय।
प्राज्ञेन कार्तस्वरकण्ठभूषा प्रश्नोत्तरात्मा प्रथिता तदादि।।३६।।

विद्वन्मणिश्रेणिविराजयानैर्मही परिष्कृत्य महाग्रहारैः।
ननु स्वयं नायकरत्नभूतो विद्योतते नासविवर्जितोऽसौ।।३७।।

जिष्णुः शुचिर्दण्डधरः स पुण्यजनः प्रचेताः शुभगम्यवाहः।
धनाधिनाथो नरराजमौलिराविष्करोत्यात्मनि दिक्पतित्त्वम्।।३८।।

कैलाशपुर्यां शिवगङ्ग्यादिभर्यया जनानां ह्रियतेऽत्र पङ्कः।
हन्तास्य तस्या अपि पङ्कहर्त्तुर्वयं कथं पावनतां बदामः।।३९।।

कान्तेन साकं कलधौतशैले विहारवार्ता हृदि विश्वमातुः।
व्यावर्तितानेन विहारहेतोरान्दोलिकामर्पयताभिरूपाम्।।४०।।

सभेशसेवासमयानुशंसिन्यनेन दत्ते निनदत्यमन्दम्।
घण्टामणौ मूर्ध्नि कृताञ्जलिः स्वे लोके वसिष्ठं हि विलोकतेऽजः।।४१।।

तस्यानुकूलाजनि धर्मपत्नी सखाम्बिका नाम सतीमणिर्वा।
खनीवरत्नं कुलदीपमेनं श्रीवीरनामानमसूत सूनुम्।।४२।।

स्वप्ने तमेनं शिवकामसुन्दर्यासाद्य दिव्याभरणोज्ज्वलाङ्गी।
दिगम्बरेशार्पित चित्तवृत्तिं कदाचिदूचे करुणानुरूपम्।।४३।।

वत्स प्रसन्नस्त्वयि विश्वनाथः सुखी चिरञ्जीव श्रृणूदितं मे।
सरस्वती श्रीरिव भूरिव त्वां स्वयं शिवानुग्रहतो वृणीते।।४४।।

सारस्वतं सारमिह प्रयङ्क्ते क्षुद्रेषु देवेष्विरिणेष्विवैकः।
स्वातीघनः शुक्तिपुटेष्विवान्यो धन्यो महत्स्वेव तु दैवतेषु।।४५।।

हारीतराशेश्चरितानुरूपं प्रणीय काव्यं पुरुषार्थहेतुम्।
रामस्य वाल्मीकिरिव त्रिलोक्यामाचन्द्रतारं यश आप्नुहीति।।४६।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तत्रान्तरे तालमृदङ्गतूर्य–वीणारवैर्मागधरागभेदैः।
प्रबोधितोऽसौ परदेवतायै कृताञ्जलिः काल्यविधिं व्यतानीत्।।४७।।

शिवार्चनानन्तरमेव सभ्यास्वप्नानुवादेन सभाजयित्त्वा।
तेषामनुज्ञामधिगम्य धीमान्काव्यं क्रमादारभतैषकर्त्तुम्।। ४८।।

श्रीकश्यपेन्द्रस्य कुलाब्धिचन्द्रो विद्वन्मणिर्विप्रकुलावतंसः।
राजेन्द्रमिश्रः कवने विनेता वेदैकनिष्ठो भुवि पण्डितोऽभूत्। ४९।।

महाकवेर्वीक्ष्य कृतिं मनोज्ञां पर्युत्सुकाः स्युः कवने परेऽपि।
महेश्वरे नृत्यति मोदमानाः पार्श्वे नटन्ति प्रमथा न किं वा।। ५०।।

ख्यातिं किलैकेन गुणेन लोके भजेत वस्तु प्रबलेऽपि दोषे।
किं कालकूटे सति कौस्तुभेन रत्नाकराख्यां लभते न सिन्धुः।। ५१।।

दृष्टेऽपि दोषे तदिह प्रबन्धे गुणं बुधाः केवलमाद्रियध्वम्।
दोषज्ञताया भवतां न हानिर्दोषैकदृक्त्वं परधा भवेद्वः।। ५२।।

कृतावज्ञापि गुणः शुचीनां कलङ्किनामादृतिरप्यवद्यम्।
त्रयीतनोः पादहतापि पद्मिन्यामोदते नेन्दुकरादृतापि।। ५३।।

कृतमतिरिति सोऽयं काव्यनिर्माणवीजं
सुकृतिसुलभयन्तश्चिन्तयन्नेव तत्त्वम्।
व्यरचयदनवद्यं पद्यवर्गैः प्रबन्धं
बहिरपि पटुयोगीवाकरोल्लोकतन्त्रम्।।५४।।

श्रीमद्वैदिकमार्गखेलनकलाशुद्धान्तरङ्गसुधी
मींमांसाऽमृतलाभनिर्भरनिजानन्दानुभूतिः सताम्।
रेवा–तीर–निवासिविप्रतिलको राजेन्द्रमिश्रोऽभिधः
काव्ये श्रीहारीतराशिचरिते सर्गं मुदाद्यं व्यधात्।।५५।।

इति प्रथमः सर्गः

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राचीनराजसभासु राजलेखकाः तेषां लेखनञ्च

डॉ० अमलशिवपाठकः
बी. १७०२, एवरशाइन एम्बेसी
वीरादेसाई मार्ग, अन्धेरी (प.) मुम्बई

राजलेखकः

देवद्युतिर्दयितमर्मज्ञो राजधर्मवित्
एवमादिगुणैर्युक्तः स एव राजलेखकः।

नृपानुवर्ती सततं नृपविश्वासरक्षकः
भूपतेर्छत्रमन्वेषी स एव राजलेखकः।।

अथ पत्रस्य रचनाक्रमः

राजलेखकमाहूय नृपो ब्रूयात् प्रयत्नतः।
पत्रं कुरु यथायोग्यं गद्यपद्यादिसंयुतम्।।

पण्डितद्वयमानीय लेखको रहसि स्थितः।
यथायोग्यानुसारेण पत्रं कुर्यात् मनोरमम्।।

दिनद्वयं त्रयं वापि विचार्य पण्डितेन वै।
सर्वनिर्दुषणं ज्ञात्वा विलिखेत् पत्रपृष्टके।।

सामान्यपत्रे संलिख्य रहसि श्रावयेन्नृपम्।
नृपाज्ञया शुभपत्रे विलिखेद्राजलेखकः।।

अथ लिखनप्रकारः

अङ्कुशं प्रथमं दद्यात् मङ्गलार्थं विचक्षणः।
मध्ये विन्दुसमायुक्तमधः सप्ताङ्क–संयुतम्।।

तदधः स्वस्ति विन्यस्य ततो गद्यं सुशोभनम्।
ततः श्रीशब्दरूपाणि पदन्यासं क्रमं लिखेत्।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भाषया संह्रते नैव कुशलं विलिखेत् सुधीः।
ततः शुभाशुभं वार्त्ता संह्रतैः प्राकृतैस्तथा।।

पत्रप्रमाणसन्देशं ततो वार्ता नियोजयेत्।
कीर्तिप्रीतियुतं पद्यं ततः किमधिकाधिकम्।।

पत्रप्रेषणश्लोकञ्च अङ्कमासादिसंयुतम्।
सर्वेषामेव पत्रेषु लिखनं पत्रमीरितम्।।

सर्वेषामेव पत्राणि विधि ज्ञात्वा लिखेत्तु यः।
स्वदेशे कीर्त्तिमाप्नोति तथा देशान्तरेष्वपि।।

एवं शास्त्रक्रमं ज्ञात्वा यो लिखेत् राजपत्रकम्।
स राभमन्त्रिभिः साकं दुर्यशो महदाप्नुयेत।।

अथ पत्र नयनप्रकारः

राजपत्रं नयेत् मूर्ध्नि ललाटे पात्रमन्त्रिणाम्।
गुरुपत्रं नयेत् मूर्ध्नि ब्राह्मणानां तथैव च।।

यतिसन्यासिनाञ्चैव स्वामिनश्च तथैव च।
सादरेणैव यत्नेन तथा मूर्ध्नि धारयेत्।।

भार्यापुत्रस्य मित्रस्य ह्रदयेश्वराय सुधीः।
अरीणां कण्ठदेशे तु पत्रधारणमीरितम्।।

एतेषाञ्चैव पत्राणां उक्तं धारणलक्षणम्।
अन्येषामपि पत्राणां नियमो नात्र दर्शितः।।

अथ पठनप्रकारः

पत्रं धृत्वा नभस्थलपूर्वाग्रेणैव स्थापयेत्।
दक्षिणाग्रेन सदसि नृपाग्रे राजलेखकः।।

पत्रं सदसि द्विवारं मनसा पठेत्।
स्फुटं पश्चात् (पठेत्तत्र सोऽयं) राजलेखकः।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रहस्यं श्रावयेत् पत्रं शुभं वा यदि वाशुभम्।
पत्रं श्रुत्वा विदित्वार्थं सभायां श्रावयेत्ततः।।

रहस्यपत्रं रहसि नृपाग्रे श्रावयेद् द्विजः।
अशुभं नैव सदसि शुभं नृपः ततः।।

एवं क्रमेण पत्रार्थं श्रावयित्वा द्विजोत्तमः।
नृपतेः सन्निधौ स्थित्वा नृपाज्ञामनुवर्त्तते।।

अथ चिह्नानि

ऊर्द्ध्वेव..............................वर्त्तनं चन्द्रबिम्बवत्।
कस्तुरीकुङ्कुमैः कुर्यात् राजपत्रं सुचिह्नितम्।।

मन्त्रीणां कुङ्कुमेनैव पण्डितस्यैव चन्दनैः।
गुरुणां चन्दनैश्चैव सिन्दूरेणैव स्वामिनः।।

भार्यायाञ्चाप्यलक्तेन चन्दनैः पितृपुत्रयोः।
सन्यासिनां चन्दनेन यतीनां कुङ्कुमेन च।।

रक्तचन्दनपङ्क्तेन..............................समुदीरितम्।
शोणितेनैव शत्रूणां पत्रचिह्नं प्रकल्पयेत्।।

एतेषां चैव सर्वेषां यथायोग्यानुसारतः।
पत्रस्योदर्ध्वे तु मतिमान् कुर्यात् चिह्नं सुवर्त्तनम्।।

अथ पत्रस्यच्छेदप्रकारः

दक्षिणे पत्रकोणस्य अधस्ताच्छेदयेत् सुधीः।
एकाङ्गुलप्रमाणेन राजपत्रस्य चैव हि।।

अथ राजपत्रादेः पदन्यासः

महाराजाधिराजञ्च दानशौण्डं तथैव च।
तथा सच्चरित्रं योज्यं कल्पवृक्षादिकं न्यसेत्।।

यथायोग्यानुसारेण तथैव गुणभेदतः।
राजपत्रेषु सर्वेषु पदन्यासक्रमाद्विदुः।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रवरं गुणभेदेन तथा सच्चरित्रादिकं।
विन्यस्य विलिखेत् प्राज्ञो मन्त्रिपत्रे पदक्रमम्।।

सङ्ख्यावद् वन्दितं पदं शास्त्रार्थनिपुणादिकम्।
पण्डितानाञ्च पत्रेषु विलिखेद् वै पदक्रमम्।।

सङ्ख्ये सिद्धान्तनिपुणं नमस्कारादिकं पदम्।
विन्यस्य विलिखेत् प्राज्ञो गुरुपत्रे पदक्रमम्।।

प्रत्यवर्ष्यं नमस्कारं प्राणप्रायादिकं तथा।
(पदं) एतेषामेव पत्रेषु यथायोग्यानुसारतः।।

प्राणप्रियापदं साध्वी तथा सच्चरित्रादिकम्।
भार्यापत्रे लिखेद् विद्वान् पदक्रममनुत्तमम्।।

प्राणपुत्रपदं तद्वत् तथा सच्चरित्रादिकम्।
आशीर्वचनसंयुक्तं पुत्रपत्रे पदक्रमम्।।

प्रत्यवर्ष्यं नमस्कारं तथा सच्चरित्रादिकम्।
विन्यस्य विलिखेत् पुत्रः पितृपत्रपदक्रमम्।।

सर्ववाञ्छाविनिर्मुक्तं सर्वशास्त्रार्थपारगम्।
सन्यासीयतिपत्रेषु विलिखेद् वै पदक्रमम्।।

सामान्य......................शत्रूणां विनियोज्यामुकम् प्रति।
शास्त्रावशेषितपदं ....दिकं तथा।।

एतेषामेव पत्रेषु यथायोग्यानुसारतः।
विन्यस्य विलिखेत् प्राज्ञैः पदक्रममनुत्तमम्।।

षड् गुरोः स्वामिनः पञ्च........ चतुरो रिपौ।
श्री शब्दानां त्रयं मित्रे स्तोकैकं पुत्रभार्ययोः।।

अथ राजप्रशस्तिः

स्वस्ति गीर्वाणचयचूडारत्नराजि रोचिश्चुम्बितरत्नचन्द्रचूडचरणन-खेन्दुविन्दुचन्द्रिकासन्दोहास्वादुचतुरचेतश्चकोरवरविषमसमरसञ्चरत्प्रवण-तरनुरगखुरपुटपटनदलितक्षिति पृष्टोत्तिष्ठत् भूयिष्ठधूलिधाराधूसरितसकल–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारादन्तरप्रचण्ड..............जभ्राजमानखरतरवाणवित्रासितप्रत्यर्थिपृथ्वीपति–सार्थप्रार्थितानुकम्पासुधासम्पादितनवरतविम्बदारिद्रविद्रावणद्रविणराशि–विप्राननसमुपार्जितयशामराराविणिककवलितदधीचिसञ्चितयशोमृणालभूपा–कुलतिलक श्रीयुतमहाराजाधिराजेषु।

स्वस्ति भगवच्चरणारविन्दमकरन्दसन्दोहास्वादनन्दितमनोमैनन्दावलिगीर्वाणगण दारिद्रयविद्रावणद्रविणराशिविप्राननोपार्जितयशः सुधाधामधारालङ्कृतधरामण्डलप्रवणप्रतापवीतस्रोतज्ञानाकलापकवलीहृत–पत्रेवपलव्रातेषु।

स्वस्ति सुचिराराधितविश्वेश्वरचरणसरोरुहानुग्रहसमासादित तिवितताानवधवविद्याविलासपीयूषपरम्परा............भावु.................कानृपममाधुरीधुरीणविविधालङ्कृतदोषाशङ्कालङ्कास्पृष्टभूयिष्ठ सन्दर्भचातुरी–समुपचितानुपयशः शारदसुधाधामधामधारा भूषितभूमण्डलागण्डनाखण्डन–सम्मानितभूमण्डलमण्डलायितश्रीयुत महाराजाधिराजेषु।

स्वस्तिबलिकर्णादिवदान्यगणसञ्चितयशस्तारापटलभाराभावुकानवरत–वितरणविहितातिनिर्माणयशः सुधाधामधाराध्वसितविद्वद् दारिद्रयवान्त–सन्तानहेतोद्वेगभवपरामार्जनप्रवणो जीवाद्ववीतहोत्र विहिताहितगणखर्वगर्व–कृपारवीचिविनासवासवावासमुखारोहण साधनसोपानायितभूदेव–कुलपावनोचितपुण्यपरम्परापवित्रीकृतधरित्रीतलश्रीमहामहिमसु।

ॐ स्वस्ति श्रीमन्मु रपदपाथोकः निःसरन्नभूरन्मकरन्दसन्दोह तुनिलमनोमैनन्दभूवृन्दारकवृन्दावनसञ्चित सुहतराशिनाशिताशेषप्रत्यूहन–वरतविश्राननोपार्जितदिगन्तविसञ्चारिमलयशोमरालावनिकवलीहृतवलिद–धीचि प्रभृतिवदान्य वहुसञ्चितयशोऽनानजानप्रवणतरतापं व्यवाह ज्वासाजनजडीकृतप्रत्यर्थिपतङ्गसार्थेषु।

ॐ स्वस्ति श्रीमद्दोर्दण्डसंलग्नकोदण्डाभिघातभ्रमतागविप्राव विद्रापिताशेषशत्रुजालविपक्षदावानलाननागजघण्टावनतकारनिर्जितसकल–भूपालसौन्दर्यनिर्जितयशः पूरकपुरासरपूरितसंसारसमस्तप्रक्रियाविराजमान–प्रबलप्रतापमहाराजाधिराजसच्चरित्रेषु।

ॐ स्वस्ति श्रीमदत्रिचण्डनिजभुदण्डसंलग्नकोदण्डशरकाण्डताण्डव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खण्डिताारिमण्डलनिखिलभुवन–भूपालमौलिमुकुटमणिमयूखमालाविलसित चरणपङ्कजेषु समस्तानन्दमन्दिरयोमानपरिचर्यापरायनान्तस्करणावाप्तसमस्त–भुवनिजयशपूरकर्पूरपूरितछविदन्तरालेषु। नानाविधभारतीसम्भारसम्भा–वितातिनववदनारविन्दगुणिजनविश्रामधाम त्रिभुवनविख्यातनामपूरितया सकामसकलगुणगणानां कृतिस्वाश्रितजनकल्पवृक्षेषु।

ॐ स्वस्ति परितः प्रतपत्प्रतापतपनोत्सारितप्रखरतरदोषानुगतप्रत्यर्थि पार्थिवान्धकारसमराजिरोदित्वरासृगपगापतिप्रभूतयशश्चन्द्रचन्द्रिकोद्योतित–सकलसंसारबद्धतरक...........

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छन्दोबद्धगज़लकाव्यस्तबकः

डॉ० हर्षदेवमाधवः
८, राजतिलकबंगला, बोपल, अमदाबादम्

(१) नास्ति (बसन्ततिलका)

देहस्तु रिक्तसदने, सदने हि नास्ति।
रात्रिर्बहिस्तु, प्रसृता, शयने हि नास्ति।।

वक्त्रं विलोक्य मुकुरे करवाणि किं भोः।
रागस्य दिव्यसुषमा वदने हि नास्ति।।

नो साहसं हि मनसो भवनाच्च गन्तुम्।
श्रद्धा प्रयाणसमये चरणे हि नास्ति।।

भित्त्वा तमो प्रविशति परमः प्रकाशः।
चन्द्रो द्युतिविरहिते गगने हि नास्ति।।

छन्दोऽक्षराणि गणितुं विफलः श्रमस्स्यात्।
यत्र ध्वनेर्मधुरता कवने हि नास्ति।।

गत्वापि किं नु करवाणि तदीयवीथीम्।
नाम्नो निजस्य स्मरणं वचने हि नास्ति।।

(२) सर्वे (उपजातिः)

कामं कदम्बेषु वसन्ति सर्वे।
एकाकिनः किन्तु भवन्ति सर्वे।।

प्रतिक्षणं प्रज्ज्वलति श्मशानम्।
वह्नौ क्षणानां निवसन्ति सर्वे।।

कथं वनं स्यान्मृतचेतनाभिः।
छिन्दन्ति शाखाश्च रुदन्ति सर्वे।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सत्यस्य मार्गे न जना द्विजिह्वाः।
सहस्त्रजिह्वा विचलन्ति सर्वे।।

मा गच्छ श्रोतुं वचनस्य सत्यम्।
विषं स्वकण्ठस्य वमन्ति सर्वे।।

शुभं मुहूर्तं तु गतं गृहात् ते।
याता हि याता न मिलन्ति सर्वे।।

ज्ञातं न मूल्यं निजजीवनस्य।
भारं शरीरस्य वहन्ति सर्वे।।

(३) शववाहकाः (अनुष्टुप्)

रिक्तं कृत्वा गृहं सर्वं गच्छन्ति शववाहकाः।
रामनाम्नः कदम्बेन चलन्ति शववाहकाः।।

गृहस्वामी गतो दूरं विहाय धनसम्पदः।
मृत्तिकां तु शरीरस्य वहन्ति शववाहकाः।।

सन्तोषं जीर्णनाशस्य निगूह्य दम्भपूर्वकम्।
प्रदर्श्य बाह्यसन्तापं रुदन्ति शववाहकाः।।

'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।'
न ज्ञात्वा केवलं मिथ्या वदन्ति शववाहकाः।।

अवतीर्णो भविष्यामि शब्दे शब्दे पुनः पुनः।
शब्दगर्भेऽक्षरं मां किं दहन्ति शववाहकाः।।

दृष्ट्वा तु नश्वरं विश्वं नष्टं वह्नौ धगद्धगत्।
मूका भूत्वा महामौने मज्जन्ति शववाहकाः।।

ज्ञानाग्नौ भस्मसात् कृत्वा जीविते सर्ववासनाः।
श्मशाने खलु संसारे नृत्यन्ति शववाहकाः।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(४) स्त्रीपुरुषोक्तिगज़लकाव्यम्

(परिवर्तनशीलरदीफ–काफियाप्रयोगः–भुजङ्गप्रयातप्रयोगः)

मृजामो वयं किं लिखन्तः लिखन्त्यः।
सदा विस्मरामस्स्मरन्तः स्मरन्त्यः।।

रुदन्तो रुदन्त्यः स्मरामः सदैवम्।
गता ये गता या हसन्तः हसन्त्यः।।

वदिष्यन्ति शब्दा अपूर्णा कथां नः।
वयं मूकभावा लिखन्तः लिखन्त्यः।।

गृहं नास्ति, गन्तव्यस्थानं सुदूरे।
स्वयात्रां त्यजामश्चलन्तः चलन्त्यः।।

छलान्येव धर्मस्य तीर्थेषु दृष्ट्वा।
गता नास्तिकत्वं नमन्तः नमन्त्यः।।

प्रवत्स्याम एवं कथञ्चिद् विनोक्त्या।
वयं साधयामो वसन्तः वसन्त्यः।।

स्ववैरेण गात्राणि काष्ठानि कृत्वा।
ज्वलन्त्येव नु ते ता दहन्तः दहन्त्यः।।

न पुंस्त्वं न स्त्रीत्वं न हर्षस्स्वजातेः।
वसन्ते न सन्ति श्वसन्तः श्वसन्त्यः।।

जले सङ्गमः काष्ठयोर्वा वियोगः।
वियुक्ता भवामो मिलन्तः मिलन्त्यः।।

(५) चुम्बनम् (छन्दोद्वये काफियाद्वयेन गज़लप्रयोगः)

मनोजरम्यकिङ्करं चुम्बनं ते भजाम्यहम्।
दिने दिने गुणाकरं चुम्बनं ते स्मराम्यहम्।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यत्र यत्र पुण्यप्रेम तत्र तत्र महेश्वरः।
स्नेहभक्तिशङ्करं चुम्बनं ते नमाम्यहम्।।

मनोजरम्यमन्दिरे श्रीगणेशायते शुभम्।
रतीशदीपभास्करं चुम्बनं कलयाम्यहम्।।

स्पर्शमातृकामयं मौनलिपौ त्वदोष्ठयोः।
चित्तरञ्जकं परं चुम्बनं मे लिखाम्यहम्।।

अनन्यप्रेमपुष्पितं हृत्पात्रेण विवर्धितम्।
यौवने मनोहरं चुम्बनं धारयाम्यहम्।।

प्रियाधरे समागमें मधुरात्र्यां समर्पितम्।
मुदाकरं सुखाकरं चुम्बनं प्रणमाम्यहम्।।

दिने दिने विवर्धते दम्पत्योः प्रेमसञ्चयः।
मनोभवस्य निर्झरं चुम्बनं ते ददाम्यहम्।।

अनङ्गतीर्थयात्रिकं कृत्वौष्ठेषु प्रदक्षिणम्।
सौख्यदं परस्परं चुम्बनं स्वीकरोम्यहम्।।

विकम्पितैर्विभूषणैः प्रारब्धे रतिविग्रहे।
सकौतुकं पुरःसरं चुम्बनं प्रेषयाम्यहम्।।

अपूर्व—मद्यपानकं निषेधाक्षरमण्डितम्।
कृपाकरं सुधाकरं चुम्बनं ते नयाम्यहम्।।

(६) तमः (वियोगिनी)

शिवमूर्धनि चन्द्रलेखया द्युतिक्रोडे ननु रक्ष्यते तमः।
गिरिशेन च कण्ठलाञ्छने रहसि पश्य विभूष्यते तमः।।

मलिनञ्च दरिद्रतां गतं नितरां क्षाममुखं दिगम्बरम्।
कुटिरात् कुटिरं प्रयाति किं द्युतिरेखां निशि याचते तमः।।

प्रलये गहने पारत्परे शशिसूर्यौ न नभो न तारकाः।
निरवद्यं ननु शिष्यते तदा प्रभविष्णु नितरां तमः।।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शशिना धवले चराचरे द्युतिदीव्ये धरणौ पलायितम्।
तरुभिस्स्वतलेषु चौरवन् निजक्रोडेषु निगूह्यते तमः।।

वचनेषु प्रसन्नमुद्रया शुचिता सज्जनता च दक्षता।
खलदुष्टजनस्य मानसैः सदयैरेव सुगोप्यते तमः।।

दुरितैर्निशिचारिणां गणै रहसि भ्रातृजनैर्विवर्धितम्।
तमसो बलवत्तरं मुदा ह्यशुभं हन्त वितन्यते तमः।।

अस्ति गज़लस्तोत्रम्

सदा सृष्टिप्रपञ्चे जायमानं लीलया 'अस्ति'।
पुनर्जातं प्रनष्टं स्पन्दमानं स्वेच्छया 'अस्ति'।।

परात्परदेवतास्तित्वस्य बोधे राजते 'अस्ति'।
'अमीबा' जीवकोषे जीवितांशे वर्तते 'अस्ति'।।

गिरौ नद्यां समुद्रे व्योम्नि पृथ्व्यां विस्तृतम् 'अस्ति'।
सदा देवालयेषु प्रार्थनायां संस्तुतम् 'अस्ति'।।

रहस्यान्नासदीयात्केन सृष्टं चञ्चलम् 'अस्ति'।
न लब्धं मायया हीनं कदाचिदच्छलम् 'अस्ति'।।

सुषुप्तं मृत्तिकागर्भे भुवौ बीजाङ्कुरे 'अस्ति'।
क्वचित् पीताम्बरे वा राजते चर्माम्बरे 'अस्ति'।।

समाधौ निर्विकल्पे ध्यानगर्भे रिक्तता 'अस्ति'।
महाशून्ये स्वक्रोडेऽव्याहता सा पूर्णता 'अस्ति'।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पञ्चमहाकाव्येषु पाककलायाः अवधारणा

प्रो० रामसुमेरयादवः
संस्कृतविभागाध्यक्षचरः
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

मनुष्याणां कृते मूलभूतावश्यकतासु वासवस्त्राणां मध्ये भोजनस्य महन्महत्त्वं भजतेतराम्। संस्कृतवाङ्मये वेदादारभ्य अद्यावधि यत् कलायाः वर्णनं विद्यते तेष्वखिलेषु वर्णनविषयेषु पाककलायाः विशिष्टं सारगर्भितं ज्ञानमस्माकं कृते मार्गदर्शनाय जीवनपोषकाय विलसति। भारतीयऋषयः अध्यात्मिकविकासेन सह जीवनं कथं परिपुष्टं मनोरञ्जकञ्च भवितुं शक्नोति एतत्कृते शोधपूर्वकं जीवनं यापयामासुः। पूर्वं हि पाकस्यार्थोऽवबोध्यः। पच्यते इति पाको धान्यम्। विविधार्थेषु कविगणाः मन्यन्ते परन्त्वत्र पाकस्याशयो भोजननिर्माणकला वर्तते। वैदिककाले पाककलायाः अत्यधिकं महत्त्वमासीत्। सम्प्रत्यपि पाककलायाः दिनानुदिनं विकासो दृष्टुं शक्यते। वैदिकयुगे स्वास्थ्यं प्रति ऋषिजना जागरुका आसन्। अस्माद् भोज्यपेयपदार्थानां निर्माणं वैज्ञानिकरीत्याऽभवत्। तस्मिन् समये येषां व्यञ्जनानां प्रयोगोऽभवत् तत्र हि पुरोडाश–सूपायनादीनां वर्णनं बहुत्रोपलभ्यते। अन्नं वै प्राणाः इति प्रसिद्धिः। ऋग्वैदिककाले पाककलायाः विकासोऽजायत्। पाकक्रियायां विभिन्नानां पात्राणामुपकरणविशेषानामपि वर्णनं प्राप्यते। भोजनं पाचयितुं मृत्पात्राणां तथा च विभिन्नधातुनिर्मितानां पात्राणां दिग्दर्शनं भवति। स्वर्णरजतविनिर्मितानां पात्राणां प्रयोगोऽभवत्। **सक्तुमिव तितउना पुनन्तो।**[1] ऋग्वेदीयमन्त्रेण पुष्टं प्रमाणं प्राप्यते। अन्नं विशुद्धीकृत्य प्रयोगे स्वीकरणमासीत्। हविष्याय यज्ञकर्मणे ऊखलमूसलादीनामपि नामग्रहणं तत्र विद्यते। तस्मिन् समयेऽतिथीनां कृते सुस्वादु भोजनं सोमलतादीनां सुसज्जितं सुगन्धितं पेयं निर्माय दीयते स्म। अतिथीनां भोजनान्तरं गृहस्यान्ये सदस्याः भोजनग्रहणमकुर्वन्। भोजनान्तरं तेषां कृते विश्रामव्यवस्थाया ध्यानमपि विधीयते स्म। वेदेषु विभिन्नानामन्नानां वर्णनं प्राप्यते। तेषु

---

१. ऋग्वेदे – १०.७१.२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ओदन–क्षीरपाक–गोधूम–तण्डुल–श्यामाक–यव–तिल–माष–ब्रीहिमसूरादीनां नामोल्लेखः प्राप्यते। **ब्रीह्यश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवाश्च मे चणकश्च मे श्यामाकाश्च में नीवाराश्च गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।** दुग्धान्ननिर्मितपाकानां वर्णनं वैदिकवाङ्मये यथा विद्यते तथैव महाकाव्येष्वपि पाककलायः वर्णनं प्राप्यते।

अत्र रघुवंश–कुमारसम्भव–किरातार्जुनीय–शिशुपालवध–नैषधीयचरितादिषु पञ्चमहाकाब्येषु पाककलाविषये संक्षिप्ता शोधसरणिः प्रस्तूयते। पूर्वं हि रघुवंशमहाकाव्यमनुशीलनीयम्। तत्र इक्ष्वाकुवंशीय–दिलीपादारभ्याग्निवर्णं यावत् सप्तविंशतिभूपतीनामादर्शमयं वर्णनं वरीवर्ति। महाकाव्येऽस्मिन् अतिथिसत्कारो महत्त्वपूर्णतां याति। भोजनपानस्यातिथिसत्कृत्या सह वर्तते किञ्चित् सम्बन्धः। प्रथमसर्गे राजा दिलीपः सुदक्षिणया साकं पुत्रेच्छया कुलगुरुमहर्षिं वशिष्ठाश्रममुपजगाम। तदाश्रमेऽग्निहोत्रस्य धूमः परितः अतिथीनां कृते पूतभोजनं वितरति–

अभ्युत्थिताग्निमिथुनैरतिथीनामाश्रमोन्मुखान्।
पुमानं पवनोद्धूतैर्धूमैराहुतिगन्धिभिः।।[२]

जितेन्द्रियैः सभ्यैः मुनिभिः नीतिविशारदो सपत्नीको दिलीपः सत्कृतः

तस्मै सभ्याः सभार्याय गोप्त्रे गुप्ततमेन्द्रियाः।
अर्हणामर्हते चक्रुर्मुनयो नयचक्षुषे।।[३]

अगस्त्यरामयोः मिथः सत्कृतिप्रसङ्गे रघुवंशे वर्णनं प्राप्यते यथा–

"सीता स्वहस्तोपहृताग्रयपूजान्
रक्षाः कपीन्द्रान्विससर्ज रामः।[४]

अतिथिसत्कारस्याऽद्वितीयं चित्रणं महाकाव्येस्मिन् प्राप्यते–राजर्षिसाधुसन्यासिभिश्च सामर्थ्यानुसारमवसरानुकूलं सफलखाद्यपदार्थैः

२. रघुवंशे – १.५३
३. रघुवंशे – १.५५
४. रघुवंशे – १४.१६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वागतसत्कारो विहितः। कन्दमूलफलैस्सह पक्वान्नैरप्यतिथिसत्कारः तत्रास्माभिरवलोक्यते। इक्षुछायायां शालिसंरक्षणे स्थितानां नारीणां रघोर्यशोगानं भवति–

इक्षुच्छायनिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम्।
आकुमारकथोद्धातं शालिगोप्यो जगुर्यशः।।[५]

रघोरुपरि लाजैर्वर्षणं कुर्वतीनां स्त्रीणां वर्णनं प्राप्यते–

अवाकिरन्वयोवृद्धास्ते लाजैः परिपोषितः।
पृषतैर्मन्दरोद्धूतैस्तर्जयन्निव केतुभिः।।[६]

अस्मात् प्रतीयते शालिनां महदुत्पादनमभवत्।

विश्वजितयज्ञस्य दक्षिणायां सर्वस्वं समर्प्य महर्षिणा वरतन्तोः शिष्यः कौत्सः ऋषिः गुरुदक्षिणेच्छया यदा रघुमुपगच्छति। रघुः कौत्सस्य कुशलतां पृच्छति। सहैव नीवारधान्यविषयेऽपि सञ्ज्ञानं गृह्णाति।

नीवारपाकादि कडंगगरीयैरामृश्यते जानपदैर्न कच्चित्।
कालोपपन्नातिथिकप्यभागं वन्यं शरीरस्थितिसाधनं वः।।[७]

रघुवंशस्य नवमसर्गे यवाङ्कुराणां प्रसङ्गे स्वादिष्टमसालानां वर्णनं प्राप्यते। इन्दुमतीस्वयंवरे विभिन्नानां व्यञ्जनसामग्रीनां वर्णनं प्राप्यते। सुनन्दा इन्दुमत्याः परिचयं राजकुमारेण सह कुर्वती कथयति–

ताम्बूलवल्लीपरिणद्धपूगास्वेलालतालिङ्गितचन्दनासु।
तमालपत्रास्तरणासु रन्तुं प्रसीद शश्वन्मलयस्थलीषु।।[८]

कृषिकार्ये एलालताचन्दनादीनां वर्णनं बहुत्र प्राप्यते–

ससज्जुरश्वक्षुण्णानामेलानामुत्पत्तिष्णवः।
तुल्यगन्धिषु मत्तकटेषु फलरेणवः।।[९]

५. रघुवंशे – ४.२०
६. तदेव– ४.२७
७. तदेव– ५.९
८. तदेव– ६.६४
९. तदेव– ४.४७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एलायाः महान्तो हि केदाराः विद्यन्ते पूगीफलादिकं विस्तरेणोपवर्णितम्।

एते वयं सैकतभिन्नशक्तिपर्यस्तमुक्तापटलपयोधैः।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात् कूलं कलावर्जितपूगमालम्।।[१०]

अक्षोटवृक्षाणामपि वर्णनं चतुर्थे सर्गे विद्यते–

काम्बोजाः समरे सोढुं तस्य तीर्थमनीश्वराः।
गजालानपरिक्लिष्टैरक्षोटैः सार्धमानताः।।[११]

सिन्धोस्तटे मार्गश्रमं दूरीकर्तुं केसरवर्णनं मनो हरति–

विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः
दुधुवुर्वाजिनः स्कन्धॉल्लग्नकुङ्कुमकेसरान्।।[१२]

एतदतिरिक्तं खाद्यपदार्थेषु मरिचस्य, हरिद्रायाश्च प्रयोगो दरीदृश्यते। अन्नादतिरिक्तं कन्दमूलैरपि जीवनयापनमभवत्। स्पष्टतः तत्काले विभिन्नकन्दमूलफलान्यप्यासन्। सुदक्षिणासहितेन राज्ञा दिलीपेन वसिष्ठस्याश्रमे गोसेवाकर्मप्रवृत्ते विविधविधकन्दमूलफलानि खादितानि–

वन्यवृत्तिरिमां शश्वदात्मानुगमनेन गाम्।
विद्यामभ्यसनेनैव प्रसादयितुमर्हसि।।[१३]

कन्दमूलफलानि वनवासकाले रामसीतालक्ष्मणैः युवावस्थायामेव व्रतसेवायां गृहीतानि। ऋत्वनुसारमेव अन्नादिकं पचित्वा सर्वे वनवासकाले अखादन्–

तत्राभिषेकप्रयता वसन्ती प्रयुक्तपूजाविधिनातिथिभ्यः।
वन्येन सा वल्कलिनी शरीरं पत्युः प्रजासन्ततये वभार।।[१४]

मरणानन्तरं श्राद्धतर्पणादिषु क्रियासु ब्राह्मणानां कृते सुस्वादु भोजनस्य

---

१०. रघुवंशे– १३.१७
११. तदेव– ४.६६
१२. तदेव– ४.६७
१३. तदेव– १.८८
१४. तदेव– १४.८२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पाचनं विहितम्–

नूनं मत्तः परं वश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः।
न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासङ्ग्रहतत्पराः।।[15]

एतदतिरिक्तमजस्य भोजमाध्ययेन सत्कारकर्मणि मधुपर्क समन्विताधर्यप्रदानस्य वर्णनं प्राप्यते–

महार्हसिंहासनसंस्थितोऽसौ सरत्नमर्घ्यं मधुपर्कमिश्रम्।
भोजोपनीतं च दुकूलयुग्मं जग्राह सार्धं वनिताकटाक्षैः।।[16]

सहैवदुग्धनिर्मितपदार्थानां विवेचनं प्राप्यते। राजा दिलीपो गवां हैयङ्गवीनं नीत्वा गोपालान् घोषवृद्धान् अपश्यत्–

हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।
नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम्।।[17]

राज्ञे दशरथाय पुत्रेष्टियज्ञसमये सुस्वाद्वग्निना क्षीरपरिपूरिता स्थाली प्रत्ता। तत्तु संसारस्य पाककलायाः चमत्कृतिरेवासीत्–

हेमपात्रगतं दोर्भ्यामादधानः पयश्चरुम्।
अनुप्रवेशादाद्यस्य पुंसस्तेनापि दुर्वहम्।।[18]

तच्क्षीरं कौशाल्यादिषु दशरथेन वितरितम्।

पेयपदार्थेषु नारिकेलमद्यस्य ताम्बूलपत्रेषु स्थाप्य पानस्य वर्णनं प्राप्यते। अस्य पानेन शत्रूणामुपरि आधिपत्यं जातम्।

कुमारसम्भवे विभिन्नेषु उत्सवेषु विविधानां खाद्यपदाथार्नां पाकानां वर्णनमवाप्यते। यवानां विशेषपाकानां तथा शालीनां विविधव्यञ्जनानां वर्णनं

---

१५. रघुवंशे– १.६६
१६. तदेव– ७.१८
१७. तदेव– १.४५
१८. तदेव– १०.५१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राप्यते।

इत्योषधिप्रस्थविलासिनीनां, शृण्वन्कथा श्रोत्रसुखास्त्रिनेत्रः।
केयूरचूर्णीकृतलाजमुष्टिं हिमालयस्यालयमाससाद।।[१९]

शालीनां यवाङ्कुराणां विभिन्नानि व्यञ्जनानि निर्मीय खाद्यन्ते स्म–

शक्यमोषधिपतेर्नवोदयाः कर्णपूररचनाकृते तव।
अप्रगल्भयवसूचिकोमलाश्छेत्तुमग्रनखसम्पुटैःकराः।।[२०]

क्वापि सर्षपैः भोज्यं सुस्वादु क्रियते स्म–

सा गौरसिद्धार्थनिवेशवद्भिर्दूर्वाप्रवालैः प्रतिभिन्नशोभम्।
निर्नाभि कौशेयमुपात्तवाणमभ्यङ्गनेपथ्यमलङ्कार।।[२१]

मधुनो दध्नश्च प्रयोगो भोजनं सुस्वादु एव क्रियते स्म–

तत्रेश्वरो विष्टरभाग्यथावत्सरत्नमर्घ्यं मधुमच्च गव्यम्।
नवे दुकूले च नगोपनीतं प्रत्यगृहीत्सर्वममन्त्रवर्जम्।।[२२]

पेयपदार्थेषु मदिरासेवनमपि अभवत्। सूर्यकान्तमणिनिर्मिते चषके कल्पवृक्षस्य मदिरा पानवर्णनं कुमारसम्भवे प्राप्यते–

लोहितार्कमणिभाजनार्पितं कल्पवृक्षमधु बिभ्रति स्वयम्।
त्वामिमं स्थितिमतीमुपागता गन्धमादनवनाधिदेवता।।[२३]

महाकविभारवेः किरातार्जुनीयमितिमहाकाव्येऽसङ्ख्याः सन्दर्भाः उपलभ्यन्ते।

काव्यमिदमष्टादशसर्गेषूपात्तम्। अत्र कविनाधिकं पाककलाविशिष्टं विरचनं न कृतम्। परन्तु पक्वं शालिनं वर्णितम् तस्य व्यञ्जनमपि निर्मीयते –

१९. कुमारसम्भवे – ५.६६
२०. तदेव– ८.६२
२१. तदेव– ७.७
२२. तदेव– ७.७२
२३. तदेव– ८.७५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गोदुग्धनिर्मितं भोजनमपि तत्रोपवर्णितम्–

ततः स कूजत्कसहंसमेखलां
सपाकसस्याहितपाण्डुतागुणाम्।
उपाससादोपजनं जनप्रियः
प्रियामिवासादितयौवनाभुवम्।।[२४]

मनोरयं प्रापितमन्तरं भ्रुवो–
रलङ्कृतंकेसररेणुरेणुना।
अलक्तताम्राधरपल्लवश्रिया
समानयन्तीमिव बन्धुजीवकम्।।[२५]

महाकविमाघप्रणीते विंशतिसर्गात्मके शिशुपालवधमहाकाव्ये खाद्यपेयपदार्थानां वर्णनं प्राप्यते। पाककलायां तत्कालीनाः जनाः प्रावीण्यमलभन्। विभिन्नप्रकारकानि व्यञ्जनानि हिङ्गुमरिचवितन्तु–कजीरादिभिः सुसज्जितानिन्यासन्।

तत्रेदमपि वर्णितमस्ति एकस्मिन् पात्रे एकमेव भोज्यं गृहीत्वा खाद्यते स्म। भावशुद्धिना स्वच्छतया प्रसन्नचित्ततया षड्रसयुतानि भोजनानि क्रियन्ते स्म–

स्वादयन् रसमनेकसंस्कृत–प्राकृतैरकृतात्रसङ्करैः।
भावशुद्धिसहितैर्मुदं जनो नाटकैरिव बभार भोजनैः।।[२६]

अर्थात् बहूनि संस्कृतानि शाकादीनि स्वादयुतान्याम्रफलादीनि तथा पवित्रेषु पात्रेषु भोजनं जनैः विहितम्। एकस्मिन् पात्रे एक एव जनो भोजनमकरोत् एतेनोच्छिष्टभोजनस्यापि अपरिहार्यता सिद्धयति। अथ चाग्रे शिशुपालवध एवावलोकनीयम्

२४. किरातार्जुनीये – ४.१
२५. तदेव– ४.७
२६. शिशुपालवधे – १४.५०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दितामपनशब्दमुच्चकैर्वाक्यलक्षणविदोनुऽवाक्यया।
याज्यया यजनकर्मिणोऽत्यजद्रव्यजातमपदिश्य देवताम्।।[२७]

मीमांसाशास्त्रस्य यजनव्यापारवन्तो ऋत्विजः अनुवाक्यैः यतोहि अनूच्यया याज्यया जुहोति इति श्रुतेः उच्चस्वरोच्चारणपूर्वकं प्रकाशितं घृतं पायसं हवनीयञ्चेति पदार्थाः अग्नये समर्प्यन्ते स्म। एवं कृते हवनीये पदार्थे प्रज्ज्वलिते उत्पन्नं गन्धं प्राणिनः जिघ्रातवन्तः आसन्। अनेन तेषां पापराहित्यमुपजायते। यथा

"स्पर्शमुष्णमुचितं दधच्छिखी यद्दाह हविरद्भुतं न तत्।
गन्धतोऽपि हुतहव्यसम्भवाद् देहिनामदहदोधमंहसाम्।।[२८]

देवताभिः हवनीयममृतमयं घृतसमन्वितहविष्यं भोजनं गृहीतम्। अनेन देवाः उत्सुकपराः आसन्

निर्मिताखिलमहार्णवौषधिस्यन्दसारममृतं ववल्गिरे।
नाकिनः कथमपि प्रतीक्षितुं हूयमानमनले विषेहिरे।।[२९]

एतदिरिक्तं घृतसिक्तमोदनं प्राचुर्येणोपवर्णितिम्–

"दुःखेन भाजयितुमाशयिता शशाक,
तुङ्गाग्रकाममनमन्तमनादरेण।
उत्क्षिप्त हस्ततलदत्तविधानपिण्ड,
स्नेहस्रुतिस्नपित बाहुरिभाधिराजम्।।[३०]

दलितमौक्तिकचूर्णमिव श्वेतवर्णात्मकं स्फुरितं दधिभोजनमुपवर्णितम्–

दलितमौक्तिक–चूर्णविपाण्डवः स्फुरितनिर्झरशीकरचारवः।
कुटजपुष्पपरागकणाः स्फुटं, विदधिरे दधिरेणुविम्बनाम्।।[३१]

---

२७. तदेव– १४.२०
२८. तदेव– १४.२७
२९. तदेव– १४.२९
३०. तदेव– ५.५०
३१. तदेव– ६.३५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एलाप्रयोगत्वाद् भोजनस्य सुस्वादुवर्णनं दरीदृश्यते–

उत्सङ्गितताम्भःकणको नभस्वानुदन्वतः स्वेदलवान् ममार्ज।
तस्यानुवेलं व्रजतोधिवेलमेलालता स्फालनलब्धगन्धः।।[32]

इक्षुनिर्मितविविधव्यञ्जनानां पेयमद्यानामपि वर्णनं तत्र प्राप्यते।

सस्नुः पयः पपुरमेविजुरम्बराणि,
जक्षुर्विसघृतविकासिविसप्रसूनाः।
सैन्याः श्रियामनुपभोगनिरर्थकत्व,
दोषप्रवादमयजन्नगनिम्नगानाम्।।[33]

गोवर्धनपर्वतोत्सवे निर्मितान्नेन स्वादिष्टत्वाद् भोजनेन भगवान् कृष्णः पेटू इति शब्देनोच्चरितः–

किमिवात्र चित्रमयमन्नमचलमहकल्पितं यदि प्राश।
निखिलमखिलेऽपि जगत्युदरं गते बहुभुजोऽस्य न व्यथा।।[34]

श्रीहर्षप्रणीते नैषधीयचरितेऽपि पक्वान्न–मत्स्य–रसादिपदार्थाः अमृतोपमां धारयन्ति–

अस्तु त्वया साधितमन्नमीन–
रसादिपीयूषरसातिशामि।
यद्भूपविद्यस्तवसूपकारः
क्रियासु कौतूहल शालिशीलम्।।[35]

राजा नलः पाकशास्त्री आसीत्। दमयन्ती बाहुकरूपधारिणं नलं पूर्णरूपेण जानाति। व्यञ्जनम् आस्वाद्य ज्ञानं करोति। यदिदं नलेन निर्मितमस्ति। अन्यो जनः एतादृशं सुस्वादभोजनं निर्मितुं नैव क्षमः। नलो विना अग्निना जलेन च भोजनं निर्मितुं समर्थ आसीत्।

३२. तदेव– ३.७६
३३. तदेव– ५.२५
३४. तदेव–५.२६
३५. नैषधीयचरिते– ४.७८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मिताञ्चितां वाचमवोचदेनं प्रसन्नचेता नृपति प्रचेताः।
प्रदाय भैमीमधुना वरौ तु ददामि तद्यौतककौतुकेन।[३६]

स्वच्छतापूर्वकं भोजनाय निर्देशः प्राप्यते। पादप्रक्षालनपूर्वकं भोजनग्राह्यतायाः विषये निर्देषो वाप्यते। भोजने वरयात्रिणां कृते सुस्वादु भोजने तुमुलचर्चा चर्चिता–

अमी लसद्वाष्पमखण्डिताखिलं
वियुक्तमन्योऽन्यममुक्तमार्दवम्।
रसोत्तरं गौरमपीवरं रसाद–
भुञ्जता मोदनमोदनं जनाः।।[३७]

तण्डुलं दुग्धदधिभ्यां संमेल्य भोजग्रहणं क्रियते स्म। नैषधीयचरिते उत्तमप्रकारकं दधिप्रयोगः स्वीक्रियते स्म–

अमीभिराकण्ठमभोजि तद् गृहे
तुषारधारा मृढितेवशर्करा।
हयद्धिवद्धष्कयणी पयः सुतं
सुधाहुदात्पङ्कमिवोद्धतं दधि।।[३८]

नैषधकारेण रायतेति वर्णनं विहितम्।[३९] खाद्यपदार्थैस्सह द्वतीये सर्गे सक्तुवर्णनं विहितम्–

प्रतिहट्टे पथे धरट्टजातपथिकाह्वानदसक्तु सौरभैः।
कलहान्यघनाद्यदुत्थितादधुनाप्युज्झति घर्घरस्वरः।।[४०]

---

३६. नैषधीयचरिते– १४.७६
३७. नैषधीयचरिते– १६.६८
३८. तदेव– १६.६३
३९. तदेव– १६.७३
४०. तदेव– २८५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तत्रपर्पट[४१]–मधु[४२]–द्राक्षारस[४३]–मदिरापान[४४]–गुडपाकादीनां[४५] वर्णनं प्यते। अपूपनिर्माणं क्रियते स्म–

अलम्भितुङ्गासनसंनिवेशनादपूप– निर्माण विदग्धमादरः।[४६]

शर्कराचक्रिकायाः (जलेबी) प्रयोगः पाककलाया कुशाग्रतां प्रदर्शयति।[४७] ांसभोजनमपि प्रचलन आसीत्। मृगमांसमुपभुज्य तस्य स्वादेन वरयात्रिणः ाश्चर्यचकिताः जाताः।

मत्स्य मृग–अजादीनाम् सुगन्धितं स्वादिष्टञ्च मांसं जनाः रुचिपूर्वकमखादन्–

व्यधुतमां ते मृगमांससाधितं रसादशित्वा मृदुते मनं मनः।
निशाधवोत्सङ्गकुरङ्गजैरदः पलैः पीयूषरसैः किमश्रपि।।[४८]

नैषधीयचरिते जनाः अववोद्धुं समर्थाः आसन् यत्र भोजनं सामिषं निरामिषं वा–

यथामिषे जग्मुरनामिषभ्रमं
निरामिषे चामिषमोहमूहिरे।
तथाविदग्धैः परिकर्म निर्मितं
विचित्रमेते परिहस्य भोजिताः।।[४९]

---

४१. तदेव– २२०
४२. तदेव– ३.१३०
४३. तदेव– २१.१५२
४४. तदेव– २१.१४७
४५. तदेव– २१.१५३
४६. तदेव– १५.१२
४७. तदेव– २२.१५५
४८. नैषधीयचरिते– १६.७६
४९. तदेव– १६.८१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनेकसंयोजनया तथाकृते
निकृत्य निष्पिस्य च तादुगर्जनात्।
अमीकृता कालिकावस्तु विस्मयं,
जना बहु व्यञ्जनमभ्यवाहान्।[५०]

तण्डुलानां चूर्णके शर्करया सह सुगन्धिभि एलाकर्पूरौ मिश्रीकृत्य मोदकनिर्माणमभवत्–

अवर्षिवर्षोपलगोलकावली।[५१]

मालपूपेन सह मधुराम्ललवणेत्यादिभिः षड्व्यञ्जनानां वर्णनं प्राप्यते।

तत्कालीनयुगे पाककला विकसितासीत्। सूपकाराः प्रवीणा आसन्। भोजनं शीतमुष्णञ्च द्वावपि आस्ताम् दधिवटादिकमपि वर्णितम्–

समाप्तिलिप्येव भुजिक्रियाविधेर्दलोदरं वर्तुलमालयीकृतम्
अलङ्कृतं क्षीरवटैस्तदश्नतां रराज पाकार्पितगैरिकश्रिया।।[५२]

मोदकनिर्माणं सुष्ठु आसीत्–

घनैरमीषां परिवेशकैर्जनैरवर्शि वर्षोपलगोलकावली
चलद्भुज्यभूषणरत्नरोचिषा घृतेन्द्रचापैः श्रितचान्द्रसौरभा।।[५३]

शर्कली (इमरती जलेबी) निर्माणमपि प्राचुर्येणाभवत्।[५४] एवं पञ्चमहाकाव्येषु पाककलायाः दर्शनं सर्वत्र दृश्यते।

***

---

५०. तदेव– १६.८३
५१. तदेव– १६.१००
५२. तदेव – १६.६८
५३. तदेव– १६.१००
५४. तदेव– १६.१०४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संवर्गविद्यायाः स्वरूपम् महत्त्वञ्च

डॉ० सत्यकेतुः
असि. प्रोफेसर, संस्कृतविभागः
लखनऊविश्वविद्यालयः, लखनऊ

अध्यात्मविद्यामधिजिगांसमानाः समुपासकाः सोल्लासमुररीकुर्वन्ति यत्– **तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये।**[1] मुक्तिप्रद्विद्यया विद्योतितान्तः करणैर्निष्कलुषैः सच्चिदानन्दात्मैकरागविभूषितमनीषिभिः ऋषिभिः औपनिषदिकवाङ्मये विविधविद्यानां प्रतिपादनच्छलेन ब्रह्मविद्या एव प्रत्यपादि। व्याख्यापद्धतीनाम्भिन्नत्वात् साभिप्रायविशिष्टप्रकारक–प्रतिपादनभेदात् परम्परावैविध्याच्चैकान्ततो ब्रह्ममात्रपर्यवसिता विद्यापि विविधाभिर्विद्याभिरभिव्याह्रियतेऽत्रभवद्भिर्जनमङ्गलकाङ्क्षिभिर्महर्षिभिः। प्राधान्येन व्यपदेशा भवन्ति शास्त्रेषु। अत आसु विद्यासु छान्दोग्योपनिषदि प्राधान्यमभिभजताम् ब्रह्मविद्यानान्नामसङ्कीर्तनमत्र विधीयता तद्विषय–विवेचनापि सङ्क्षेपेणोल्लिख्यते–

सद्विद्या–परब्रह्मणः स्वसङ्कल्पसामर्थ्यशालित्वाच्चराचरप्रत्यक्ष–परोक्षादिसमस्तकारणानामपि कारणरूपेण वर्णनमत्र विषयत्वेनाङ्गीकृम्।

अन्तरादित्यविद्या–अत्र परब्रह्मणो दिव्यतेजशालिस्वरूपमुपवर्णितम्। आकाशविद्या[2]–निरुपाधिः सन् तद् ब्रह्म सूर्यादिप्रकाशकानामपि प्रकाशकोऽस्तीति प्रतिपादितम्।

प्राणविद्या[3]–चराचराखिलब्रह्माण्डप्राणभूतत्वाद् ब्रह्म प्राणेति उदीर्यते। एवमेव गायत्रीज्योतिर्विद्या, इन्द्रप्राणविद्या, शाण्डिल्यविद्या, उपकोसलविद्या,

---

१. विष्णुपुराणे–१/१६/४१।
२. सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्याकाशदेव समुत्पद्यन्त आकाशं प्रत्यस्तं यन्त्याकाशो ह्येवैभ्यो ज्यायानाकाशः परायणम् (तदेव १/६ १–२), आकाशो वै नामरूपयोर्निर्वहिता ते यदन्तरा तद् ब्रह्म (तदेव ८/१४/१)।
३. सर्वाणि वा इमानि भूतानि प्राणमेवाभिसंविशन्ति प्राणमभ्युज्जिहन्ते (तदेव १/११/५).

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वैश्वानरविद्या, भूमविद्या, दहरविद्या, मधुविद्या, संवर्गविद्या, पञ्चाग्निविद्या, पुरुषविद्यादिरूपेण ब्रह्म एव अवीवृधनृषयः। एतासु संवर्गविद्यायाः यत्किञ्चित् स्वरूपमत्र छान्दोग्योपनिषत्कारदिशा प्रस्तूयते।[४]

ये छन्दांसि गायन्ति ते छन्दोगाः, छन्दोगानां धर्म आम्नायो वा छान्दोग्यमिति पाणिनितन्त्रम्।[५] सामवेदस्य ताण्ड्यमहाब्राह्मणादस्याश्छान्दोग्योपनिषदः उत्पत्तिरिति श्रूयते तथा तु सामवेदस्य षोडशसङ्ख्याकाः उपनिषदः सन्ति तासु पञ्चैव प्रकाशिताः समुपलभ्यन्ते। अकारादिक्रममारोप्येतासान्नामानि–अभ्यक्त–आरुणी–कुण्डिका–केन–छान्दोग्य–जाबालदर्शन–जाबाली–महत्–मैत्रायणी–मैत्रेयी–योगचूडामणि–रुद्राक्ष–वज्रसूचिक–वासुदेव–संन्यास–सावित्र्यादीनि सन्ति।

संवर्गविद्यायाः प्रवचनं छान्दोग्योपनिषदश्चतुर्थप्रपाठकस्यारम्भेऽकारि ऋषिणा। संवरणात्सङ्ग्रहणात्सङ्ग्रसनाद्वा तद्ब्रह्म संवर्ग इत्युच्यते। तद्ब्रह्म अखिलब्रह्माण्डस्यास्य स्थावरजङ्गमात्मकरूपस्य प्रलयकाले स्वयमेवात्मनि संवरणं सङ्ग्रसनं करोति लयञ्च करोति अतो हेतोः संवर्ग इत्युच्यते। तत्राख्यापयत्येकयाख्यायिकया–कश्चिज्जानश्रुति पौत्रायणनामाख्यातः श्रद्धासमन्वितो बहुदाता आसीत्। तस्य गृहे दिने दिने बहुविधाः पाकाः समजायन्त अत एवायं राजा ऐतिहासिकैः बहुपाक्यः विशेषणेन विभूषितः।[७] धर्मशीलः स राजा स्वराज्ये सर्वत्र विविधदेशागतानाम्पथिकानामाश्रयविहीनानाञ्च कृते आश्रयगृहाणाम् (धर्मशाला इत्यद्यतनीनभाषायां) निर्माणं कारयामास। को हेतुरिति चेद्विविधदेशागताः पान्थः समेऽपि तस्य राज्ञो

---

४. कठोपनिषद्यपीत्याशयकं प्रमाणं दृग्गोचरीभवति यदिदं जगत् सर्वं प्राण एजति निः सृतम् (कठोपनिषदि, ६/२)।

५. छन्दोगौक्थिकयाज्ञिकबह्वृच्नटाञ्ञ्यः (अष्टाध्याप्याम् ४/३/१२६) इतिसूत्रेण छन्दोगा शब्देनञ्यः प्रत्यये कृते सति आदिवृद्धो रूपमिदं सिद्ध्यति।

६. जनैः श्रुतो जनेषु विश्रुतः जनश्रुतिः तस्य जनश्रुतेरपत्यम्पुमानिति जानश्रुतिः (अत इञ् अष्टाध्य्याम् ४/१/१५)। पौत्रस्यापत्यं पुमान्पौत्रायणः (यञिञोश्च इति फक्, अष्टाध्य्याम् ४/१/१०१), अस्यायमर्थः यज्जानश्रुतेः पितामहोऽपि जीवति स्म।

७. जानश्रुतिर्हं पौत्रायणः श्रद्धादेयो बहुदायी बहुपाक्य आस। (छान्दोग्योपनिषदि ४/१/१)

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

...जानश्रुतेः गृहनिर्मितमन्नत्स्यन्तीत्याकाङ्क्षायान्निर्माणञ्चचकार।।

एकदा रात्रौ सः स्वप्नमेकमद्राक्षीत्। तत्र स्वप्नसंसारे द्वौ हंसौ मिथः ...ललपतुः। एकोऽन्येनैवमुवाच भो भल्लाक्ष "जानश्रुतेः पौत्रायणस्य ...ज्योतिरन्नदानादिजनितप्रभासम्पन्नो प्रतापोऽयमन्तरिक्षेण सममत्राततं विस्तृतं ...र्ततेऽतस्तेन प्रतापेन सह सम्बन्धम्मा कुरु, कदाचिदेवम्मा भूया यत्तदुल्लङ्घ्य ...मिष्यन्तं त्वां तस्य प्रतापज्योतिः प्रतापवह्निः भस्मीसात् करोतु दहतु इति"।[९] ...स्तुतः केवलं सदाधीनाभ्यः प्रजाभ्यो धनमाहृत्य स्वकीर्त्त्यर्थम्बहु– ...यच्छन्नप्यात्यन्तिकङ्कल्याणमार्गन्न प्रशस्तम्भवति कस्यापि राज्ञः। जानश्रुतिरपि केवलम्प्रजाभ्यः करादिसङ्ग्रहणेन प्राप्तधनस्य ...दानमहिम्नात्मकल्याणकामः। तत्कारणादन्यैः कल्याणमङ्गलोपक्रमैर्विरराम। ...दा स्वप्नजालमाध्यमेनास्यात्मैव हंसव्याजेन प्रबोधयामास इत्यर्थः। निरुक्ते कठोपनिषदि च जीवात्मनः पर्यायेषु हंस इति पदम् वर्णितम्।[१०]

अनन्तरं स हंसो भल्लाक्षः उवाच भो त्वं कस्य राज्ञः प्रशंसनङ्करोषि। किं त्वं सयुग्वारैक्वमिव एनम्मन्यसे यदेवमात्थ। कुत्र सः रैक्व कुत्र चायञ्जानश्रुतिः द्वयोरपि भूयान् भेद इति। रैक्वम्प्रशंसन् सः भल्लाक्षोऽवदद्यथा द्यूतक्रीडायां कृतो नाम प्रसिद्धश्चतुरङ्गः तद्विजितायाधरेयाः द्वित्र्यङ्काः स्वयमेवान्तर्भवन्ति न तेन किमप्यायासः क्रियते तदर्थमेवमेव सयुग्वारैक्वे तत्सर्वमन्तर्भवति यत्किमपि प्रजासु सर्वे मनुष्याः साधूनि कर्माणि कुर्वन्तीति। सर्वासाम्प्रजानां साधूनि कर्माण्येकस्य रैक्वस्य कर्मणि अन्तर्भवन्तीत्यर्थः। तादृग्प्रभाप्रभावकर्म– सम्पत्तिवान् रैक्व इति। अपरमपि तत्प्रभावम्प्रदर्शयति यल्लोके यः कश्चित् यत्किमपि वेद्यं वेत्ति जानाति तत्सर्वमपि सयुग्वारैक्वः जानात्येव। रैक्वमतिरिच्य

---

८. स ह सर्वत आवसथान् मापयाञ्चक्रे सर्वत एव मेऽत्स्यन्तीति।। (छान्दोग्योपनिषदि ४/१/१)

९. भो भो भल्लाक्ष! जानश्रुतेः पौत्रायणस्य समं दिवा ज्योतिराततं तन्माप्रसाङ्क्षीस्तत्त्वा मा प्रधाक्षीरिति। (तदेव ४/१/२).

१०. हंसो हन्तेर्घ्नन्त्यध्वानमिति। निरुक्ते– पृ० १७४ श्रीमुकुन्दशर्मा स. भगवद्दुर्गवृत्तिसमेतनिरुक्ते), हंसः शुचिषवसु (कठोपनिषदि २/२/२), एको हंसो भुवनस्यास्य मध्ये (श्वेताश्वतरोपनिषदि ६/१५).

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न कोपि वेदनीयज्ञानस्य वेत्ता अस्तीति तादृग्गुणाधिष्ठितः रैक्व इति।[११]

एतत्सर्वमात्मापवादजनकं स्वप्नं श्रुत्वा (दृष्ट्वा) प्रातःकाले शयनादुत्थाय स जानश्रुतिः स्वसारथिमखिलं वृत्तान्तमश्रावयत्। सयुग्वारैक्वः क इत्यन्वेषणाय गतः सः सूतः सारथिः तन्नाविन्दत्। तदा स राजा जानश्रुतिः तमुवाच यद्यत्र ब्रह्मवेत्तुरन्वेषणा विधेया स्यात्तत्रान्वेषय इति।[१२] तदा सः सूतः तं सयुग्वारैक्वं शकटस्याधस्तात् पामानं कण्डूयमानमुविष्टमपश्यत्। सः ऋषिः सूतेन पृष्टे सति प्रत्युवाच यदहमेव सयुग्वारैक्वोऽस्मीति। इत्यमुं वृत्तान्तं विज्ञाय सः राजा जानश्रुतिः षट्शतानि गावः, निष्का[१३]—भूषणान्युत् मुद्रादीनश्वतरीरथमादिकं विभवमादाय रैक्वमुपजगाम। साभिवादन–पुरस्सरमुवाच भो रैक्व एतत्सर्वं विभवं यन्मयानीतन्तद्गृहाण। यस्याः देवताया उपासनाङ्करोषि तामेतां देवताम्मामुपदिश इति। तदा रैक्वः तं राजानम्प्रत्युवाच भो शूद्र[१४] (अशूद्रोपि राजा शूद्रवद्व्यवहारत्वाच्छूद्र इत्युच्यते। शूश्रूषयाचार्यः तोषयितव्यः न तु धनैरतएव शूद्रपदवाच्यत्वम् गतः राजा) विभवोऽयं त्वमेव स्थापय मे रुचिः नास्तीत्युत्तरं श्रुत्वैव सः राजा जानश्रुतिः पुनरपि सहस्रङ्गावः निष्काश्वतरीरथन्दुहितञ्चादाय रैक्वमुपजगाम। उवाच चैनं

---

११. यथा कृताय विजितायाधरेयाः संयन्त्येव मेंन सर्वं तदभिसमेति यत्किञ्च प्रजाः साधु कुर्वन्ति। यस्तद्वेद यत्सवेद स मयैतदुक्त इति। (छान्दोग्योपनिषदि ४/१/४).

१२. स हि क्षत्ताऽन्विष्य नाविदमिति प्रत्येयाय। तं होवाच यत्रारे ब्राह्मणस्यान्वेषणातदेनमर्च्छेति। (तदेव ४/१/७).

१३. साष्टे शते सुवर्णाना हेम्न्युरो भूषणे दले। दीनारेऽपि च निष्कोऽस्त्री (अमरकोषे ३/३/१४/१/१)

१४. वेदान्तसूत्रेऽपि परामृश्यते विषयोऽयं शुगस्यतदनादरश्रवणात्तदाद्रवणत् सूच्यते हि (वेदान्त सूत्रे १/३/३४) अर्थात् जानश्रुतिनामकस्य शूद्रस्य ब्रह्मविद्यायामनादरश्रवणात् शोकोऽभवत्। तदा सः ब्रह्मविद्याया उपदेष्टाररैक्वमुपजगाम। अनेन ब्रह्मविद्यायां शूद्रस्यापि अधिकारः इति सूच्यते। क्षत्रियत्वगतेश्चोत्तरत्र चैत्ररथेन लिङ्गात् (वेदान्तसूत्रे १/३/३५) जानश्रुतिपौत्रायणः पूर्वं शूद्र आसीत्। उत्तरत्र गुणकर्मणां विपाकेन तस्य क्षत्रियत्वप्राप्तिः सूच्यते। चित्ररथङ्गात् यतोहि सः अश्वतरीरथवान्नस्ति अतो हेतोः तस्य पश्चाद्भावी क्षत्रियत्वं सूच्यते।

१५. छान्दोग्योपनिषदि ४/२/१–५

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भो रैक्व इदं सर्वमपि विभवमिमाम्मम दुहितरञ्जजायात्वेन गृहाण। यत्र त्वं निवससि ग्राममिदमपि गृहाण। केवलं मां शिक्षस्व त्वं कस्याः देवतायाः उपासनां करोषीति। तदा स रैक्वः तस्याः राजदुहितुः मुखं स्पृहयन् राजानमवदत् यत्तुभ्यं विद्यादानाय तव दुहितुर्मुखमेव द्वारं यदिदं विभवं तन्न। यत्र सः रैक्वोऽवसत्ते ग्रामाः रैक्वपर्णनामानो बभूवुः।

अनन्तरं छान्दोग्योपनिषदि चतुर्थप्रपाठके तृतीयखण्डे संवर्गविद्यायाः प्रवचनं सयुग्वारैक्व मुखेन प्रतिपाद्यते। वायुर्वाव संवर्गः इति। सर्वेषाङ्गतिप्रदं वायुर्ब्रह्म। सैष संवर्गः सङ्हकृद् ग्रासयिता भक्षयिता। कथमिदं संवर्गत्वं सम्पद्यते इति चेत्। यस्मिन् समये अग्निः ज्योतिज्वालातापदाहादिशक्तिविशेषः उपशाम्यति तदा तस्मिन् काले वायुरूपब्रह्मण्येवव लयमेति। सृष्ट्यवसानकाले परमविकरालज्वालासम्पन्नोऽयमग्निः सर्वाणि भूतानि भस्मसात्कृत्वा स्वयमेवोपशाम्यति तद्विषयाभावात्। अत्र जिज्ञास्यमस्ति यदाधारीभूतपदार्थाभावादुपशान्तोऽयमग्निः क्व विलीयते। स्वकारणे इति चेत्। किन्तस्य कारणमिति चेत्। सर्वत्रगे वियदवलम्बिनि बाह्ये नित्ये वायाविति चेत् वायोराधारः कः। सर्वेषामेक एव आधारोस्ति स ईश्वरः तद्ब्रह्म। पर्यवसानकाले अखिलमपि दृश्यादृश्यञ्जजगत्तस्मिन्नेव लीयते। वेदान्तसूत्रमपि विषयममुम्पुष्णाति–स्वाप्ययात्।[१६] तद्ब्रह्मकारणानामपि कारणमस्ति अतः सिध्यति यद्वायुशब्देनात्रर्षिर्ब्रह्मणः एवावगतिङ्कारयिष्णुरिति।

अग्रे संवर्गविद्यामुपदिशन्नाह रैक्वो जानश्रुतिम्पौत्रायणं–यदा सूर्योस्तमेति वायुमेवाप्येति यदा चन्द्रोस्तमेति वायु[१७] मेवाप्येति।[१८] यदा सूर्यश्चन्द्रश्चास्तङ्गच्छतः लयङ्गच्छतः तदा सर्वेषामपि प्राणिनां वायोश्चापि

---

१६. वेदान्तसूत्रे १/१/६

१७. बृहदारण्यकोपनिषदि अपि वायोः आधिदैवत्यप्रतिपादकं विवेचनं द्रष्टव्यमस्ति। तत्र प्रथमाध्याये पञ्चमब्राह्मणे एकविंशतितम प्रवाकादासमाप्तिं प्रकरणमपि विषयस्यास्य पोषकम् विद्यते। तत्र अध्यात्मोपासनायां वायों प्राणस्य च श्रेष्ठत्वप्रतिपादनमसकृद दरीदृश्यते। स यथैषां प्राणानां मध्यमं प्राणः। एवमेतासां देवतानां वायुः। (बृहदारण्यकोपनिषदि १/५/२१)

१८. छान्दोग्योपनिषदि ४/३/१.

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Ch

पञ्चभूतेष्वन्यतमस्य गतिप्रद्धेतुभूतत्वाद्धायावर्थाद्ब्रह्मण्येव लयङ्गच्छतः। अपरतो यदि वायोरर्थो मरुदिति क्रियते चेत्। सर्वे हि पदार्था जन्तवश्च वायुं समाश्रित्यैव तिष्ठन्ति। तत्र स्मृतिप्रामाण्यमपि विद्यतैव– **यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।**[१९] यत्र वायुर्न भवति तत्राग्निलेशोपि न ज्वलयितुं शक्यते। अतोग्निर्वा सूर्यो वा चन्द्रो वा यदास्तङ्गच्छन्ति तदा वायावेव प्रविलीयन्ते। प्रदीपज्योतिर्क्षणे क्षणे उपशाम्यन् वायावेव प्रविलीयमाना दृश्यत इति निश्चप्रचम्।

यदाऽऽप उच्छुष्यन्ति वायुमेव प्रविशन्ति। वायुर्ह्येवैतान्सर्वान्संवृङ्क्त इत्यधिदैवतम्।[२०] जलानि यस्मिन् काले शुष्काणि भवन्ति तदा वायुमीश्वरमथवा वायुभूतमेव प्रविशन्ति। निश्चयेन वायुरेव ब्रह्म। यतो हि तदेतानग्निसूर्यचन्द्रजलप्रभृतीन् सर्वान् संगृह्णाति संहरति स्वस्मिन्निति।

अधिदैवतं संवर्गोपासनाप्रकरणमुच्चार्यानन्तरमध्यात्मक्षेत्रे उत्तरत्र वर्ण्यते यदथाध्यात्मम्– प्राणो वाव संवर्गः स यदा स्वपिति प्राणमेव वागप्येति प्राणं चक्षुः प्राण श्रोत्रं प्राणम्मनः प्राणो ह्येवैतान्सर्वान् संवृङ्क्त इति।[२१] अस्मिन्शरीरे मुख्यत्वेन प्राणः एव संवर्गः सर्वेषां सङ्ग्रहीता संहर्त्ता ग्रसयिता। यथा च यस्मिन् समये सः पुरुषः शयानो भवति सुषुप्तावस्थायाङ्गच्छति तदा तस्मिन् समये वाग्चक्षुश्रोत्रमनसादीन्द्रियव्यवहाराः विषयाः प्राणे एव लीना भवन्तीति यतोहि प्राण एव एतान् सर्वान् वागादीन् विषयान् स्वस्मिन् सन्निवेशयति। अस्य प्राणशब्दस्यापि द्वयोरर्थयोः संगतिः कारयितुं शक्या। प्रथम ईश्वरः अपरः शरीरान्तः सञ्चारी वायुश्च। यथास्मिन् शरीरे तदाश्रिताः सर्वे इन्द्रियव्यापाराः समासते तथैव ब्रह्माण्डशरीरे स्थिते प्राणवाच्ये ब्रह्मण्यवसाने जगद्व्यापाराः संविशन्ति। अतोऽनेन ज्ञायते यत् प्राणात्मकम्ब्रह्म उपासीत।

---

१९. मनुस्मृतौ ५/२१.
२०. छान्दोग्योपनिषदि ४/३/२.
२१. तदेव ४/३/३.

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तौ वा एतौ द्वौ संवर्गौ वायुरेव देवेषु प्राणश्च प्राणेषु।[22] इत्युपसङ्हरन्नाह एतौ द्वौ वायुः प्राणश्च संवर्गावित्यधिदैवताध्यात्मभेदाद्। वस्तुतो ब्रह्म एक एव। उपासनाभेदमाह मनुजरुचिवैचित्र्यान्न तु परमार्थतः। परमार्थतस्तु नृणामेकोगम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।[23] अत्र प्रकरणे अनन्तरमस्य–संवर्गस्यमहत्वमितोपि प्रकाशयन्नेकाख्यायिका विद्यते। एकदा शौनकाय कापेयाय अभिप्रतारीकाक्षसेनिने[24] च भोजनं परिवेषयन्नासन् भृत्याः तदा कश्चिद् ब्रह्मचारी भिक्षामयाचत। तैः भृत्यैः ब्रह्मचारिणे भिक्षा न दत्ता। तदा स अवोचद्धो कापेय भो अभिप्रतारिन् युस्मादृक्षाः तं कं (प्रजापतिं) नामानं भुवनस्य गोप्तारं सर्वव्यापकं ये न पश्यन्ति। अत एव युष्माभिः तद्ब्रह्म अजानन् ब्रह्मार्थमन्नं तस्मै न दत्तमिति। तदा सः कापेयः तस्य ब्रह्मचारिणः वचांसि मनसि विचारयन्नुपसन्नः तम्प्राह यत् "स परमात्मा एव देवानां जनितास्ति। सैव प्रजानामभग्नदन्तः भक्षकः इति। तस्य महान्तं विभूतिम्ब्रह्मविदो जनाः कथयन्ति। यतोहि सोऽनद्यमानः स्वयमन्यैरभक्ष्यमाणः सन्ननन्नमत्तुमयोग्यमप्यग्निवागादि–देवतारूपमन्नमत्ति भुङ्क्ते। ईदृशम्ब्रह्मास्तीति वयं जानीमः।" अनन्तरन्तस्मै ब्रह्मचारिणे तेन भिक्षा दापिता।[25] अत्रास्याशय अयमेव यद् ब्रह्मचारी वेदस्योपासनं अध्ययनं करोति। वेदस्य ब्रह्मात्मकत्वं विदितमेव।[26] स केवलमात्मनः भरणपोषणाय एवान्नं नायाचत। स तु साक्षाद् ब्रह्मणः अध्ययनाय एव अन्नं बिभिक्ष। तस्मै ब्रह्मचारिणे अन्नस्य भिक्षायाः न दानं साक्षाद्ब्रह्मणः एव हननमस्ति। अतः शौनककापेयेन तस्मै ब्रह्मचारिणे सद्य एव भिक्षा दापिता।

अन्ते उपसंहरन् कृतनामकप्राचीनक्रीडयोपमीय कथयति यत् प्राचीनकाले कृतनाम्नि क्रीडायां दश पात्राणि भवन्ति स्म। तत्र चत्वारि पात्राणि चतुर्संख्ययाभिधेयानि कृतनामकानि भवन्ति स्म। त्रीणि पात्राणि

२२. छान्दोगयोपनिषदि ४/३/४.
२३. श्रीशिवमहिम्नस्तोत्रे ०७.
२४. कापेयशौनकनामा ऋषिः अभिप्रतारी काक्षसेनी नामा इतिहास प्रसिद्धः कश्चिद्राजा।
२५. छान्दोग्योपनिषदि ४/३/५–८.
२६. अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतदृग्वेदः (बृहदारण्यकोपनिषदि २/४/१०).

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chennai

त्रिसङ्ख्ययाभिधेयानि त्रेतानामकानि भवन्ति स्म। द्वे पात्रे द्विसङ्ख्ययाभिधेये द्वापरनामके अभवताम्। पात्रमेकञ्च एकसङ्ख्ययाभिधेयः कलिनामकः भवति स्म। एवमिदं कृतं ४+३+२+१=१० दश सङ्ख्याकं भवति स्म।[२७] तथैवाग्निसूर्य्यचन्द्रापो भोज्याश्चत्वारो वायुश्च भक्षकः पञ्चम इत्यधिदैवतमेवमेव वाग्चक्षुःश्रोत्रम्मनश्चत्वारो भक्ष्याः प्राणो भक्षकः पञ्चम इत्यध्यात्ममेते मिलित्वा दश भवन्ति तत्कृतं सम्पद्यते। दिशोऽपि दश एव सन्ति। तासु दिक्षु तदन्नमपि दशकृतम्भवति। सा महाशक्तिः विराट् इतीर्यते। सा अन्नादी भवति। तयान्नाद्यशनेन सर्वं दृष्टम्भवति। अर्थादन्नं विना किमपि न दृश्यत इति। यो ब्रह्मविद् य उपासक एवमस्या शक्त्याः स्वरूपं वेत्ति सोऽन्नस्य भोक्ता भवति। अनेन प्रकारेण संवर्गविद्यया ज्ञायते यद्यत्र अनेकाः सत्ता एकस्मिल्लीयन्ते तद्ब्रह्म। इन्द्रियाणां सत्ताः प्राणे लीयन्ते इत्यध्यात्मम्। भूतानाञ्च सत्तायाः वायौ लयो भवत्यधिदैवतम्। संवर्गविद्याप्रवचनेनर्षिर्ब्रह्मोपासनस्यैव मार्गमादिशति।

***

२७. छान्दाग्योपनिषदि (शिवशंकरशर्मा काव्यतीर्थभाष्ये) पृ० ५२१.

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दविद्यावतां शक्त्यादिवृत्तिविचारः

लोकेशकुमारः
शोधच्छात्रः, व्याकरणविभागः
सोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वेरावलम्

तत्तद्भषाविदैः प्रत्यहं तत्तद्भषाणामनेके शब्दाः श्रुतिपथमानीयन्ते; किन्तु तथाविधा अपि ते सर्वे शब्दाः सर्वमर्थं न प्रत्याययन्ति, किञ्च तेषु केचिदेव कांश्चिदेव कदाचिदेव। तद्यथा साधु श्रुतिविषयतां गतमपि गङ्गापदं प्रवाहमेवार्थं बोधयति, न तत्तीरे चरतो गवादीन्, नापि तत्तटरुहान् वृक्षादीन् वा। अतस्तत्र केनापि महता कारणेन वर्तितव्यमेव। अन्विष्यमाणे कारणे अन्वयव्यतिरेकाभ्यामयमेव हेतुरधिगतो भवति यद्यमर्थं यत्पदमवभासयति, तेनार्थेन तस्य पदस्य केनचित्सम्बयन्धेनावश्यं भाव्यकमेव। इतरथा तमेवार्थं कथमवगमयति, अर्थान्तरमप्यवगमयेत्? लोके दृष्टचरमप्येतद् यच्चक्षुरादीनि प्रमाणानि सम्बद्धमेवार्थं घटपटादिकं प्रकाशयन्ति, नासम्बद्धम्। शब्दोऽपि अन्यतमत्प्रमाणमिति सम्बद्धमेवार्थमवभासयेत्। अत एव ते ते शब्दा घटादयस्तान् तान् कम्बुग्रीवादिमदर्थानिव प्रबोधयन्ति सम्बद्धत्वात्, असम्बद्धत्वात् पटादीन् नेति शब्दार्थयोः कश्चन सम्बन्धः कल्पनीय एव। अयमेव च सम्बन्धो वृत्तिपदेन शब्दव्यापारादिपदेन चोच्यत इत्यादिवृत्तिविचारः शब्दथशास्त्रवतां सरण्या तत्तन्मततमुपन्यस्य सारतया शोधलेख इहातन्यते।

उपोद्घातः –

"अर्थगत्यर्थः शब्दप्रयोगः। अर्थं सम्प्रत्याययिष्यामीति शब्दः प्रयुज्यते"।[1] इति भगवद्भाष्यकृद्भणित्या शब्दानां व्यावहारिकत्वतमुपादेयित्वं च लोकेषु नितरां स्फुटी बोभूवीति। तन्त्रवार्तिककृता कुमारिलेनापि शब्दोपयोगित्वमिदमेवाक्षिलक्ष्यीकृत्य सुतरां प्रमाणयाञ्चक्रे–

"सर्वो हि शब्दोऽर्थप्रत्यायनार्थं प्रयुज्यते।"[2] इति

१. न वेति विभाषा, पातञ्जलमहाभाष्ये, १.१.४४

२. मीमांसासूत्रे, १.३.८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Ch...

स चायं शब्दो यद्यर्थबोधनसाधकत्वेनोपयुक्तः, तत्कथममुष्मातत्प्रयुज्य–मानादर्थज्ञानं सम्बोभवीति, कानि वास्य साधनभूतानि भवन्तीति विजिज्ञासा समुज्जृम्भते। भगवतात्र पाणिनिना **''प्रधानप्रत्ययार्थवचन–मर्थस्यान्यप्रमाणत्वात्''**[3] इति प्रब्रुवता लोकव्यवहार एवार्थज्ञाने साधनत्वेन प्रमाण्यते। तथा ह्यस्य पाणिनीयसूत्रस्य व्याख्यानप्रसङ्गे काशिकाकृतो वचनम्–

> **''लोकत एवार्थगतेः। यश्च लोकतोऽर्थः सिद्धः किं तत्र यत्नेन''**[4] इति

भगवान् भाष्यकारश्च प्रकृतमाचार्याभिप्रायमिममेवं निरूपयामास–

''यदि तर्हि लोक एषु प्रमाणम्, किं शास्त्रेण क्रियते? लोकतोऽर्थप्रयुक्ते शब्दप्रयोगे शास्त्रेण धर्मनियमः''[5] इति

अथेहान्ये नागेशादयस्तु शाब्दिका वृत्तिज्ञानमप्यर्थज्ञानस्य प्रमुखसाधनत्वेन बहुतरं मन्वते। नहि वृत्तिज्ञानाद्विना शाब्दबोधः सम्भावतीति प्रतिष्ठापयता यथा नागेशेनेदमभ्यधायि :–

> **''तत्रागृहीतवृत्तिकस्य शाब्दीबोधादर्शनात्''**[6] **इति**

शाब्दबोधाभिप्रायमुद्दिश्य अस्माच्छब्दायमर्थो बुध्यत इति ज्ञानं पुरस्तादेव सुतरामभीष्यते। इदमेव वृत्तिज्ञानं शक्तिज्ञानत्वेन वा शक्तिग्रहत्वेन वापि सम्बोध्यते तद्बुधैः। तत्राष्टौ साधनान्यप्यस्य तत्परिगणितान्यु– पलभ्यन्ते। तदुक्तं शब्दशक्तिप्रकाशिका कृता :–

> **शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोषाप्तवाक्याद् व्यवहारतश्च।**
> **वाक्यस्य शेषाद्विवृतेर्वदन्ति सान्निध्यतः शेषपदस्य वृद्धाः।**[7] **इति**

---

३. पाणिनीयाष्टाध्यायाम्, १.२.५६
४. काशिकावृत्तौ, १.२.५६
५. पातञ्जलमहाभाष्ये, पस्प.शाह्निके
६. वैयाकरणसिद्धान्तलघुमञ्जूषयान्, वृत्त्यर्थविचारः
७. शब्दशक्तिप्रकाशिकायाम्, श्लो. ८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तत्र शाब्दिकानां वृत्तिज्ञानविषयमिममेवोपलक्ष्य किञ्चिदद्यथाबोधमिह तत्प्रमाणतया वितन्यते।

शब्दस्य प्रमाजनकत्वे सर्वैः शब्दैः सर्वेषां श्रोतॄणां श्रवणमात्रेण बोधः स्यादिति शाब्दबोधं प्रति वृत्तिप्रयोज्योपस्थितेरन्वयव्यतिरेकाभ्यां कारणत्वमभ्युपपद्यते। शब्दतत्त्वविदां शब्दस्य तस्मिन् सामर्थ्यरूपे व्यापारे वृत्तिशब्दस्य प्रयोगोऽभिमतः, येन विज्ञातेन तदर्था झटिति बुद्धिपथमारोहन्तीति। किञ्चायं व्यापारः सम्बन्धत्वेन विगण्यते बुधैः। एवं हि शब्दार्थयोरयं शाब्दबोधौपयिकः सम्बन्धः, अर्थप्रतियोगिकः पदानुयोगिकः पदप्रतियोगिकोऽनुयोगिको वा सम्बन्धो वृत्तिरिति सम्प्रोच्यते। तस्माद्वृत्तेर्लक्षणं वृत्तिपदव्यवहार्यत्वम्, अर्थपदोभयनिरूपितसम्बन्धत्वं वेति वेदितव्म्। इयं वृत्तिस्त्रेधा परिगण्यते। तथा हि नागेशो व्याजहार–

"सा च वृत्तिस्त्रिधा, शक्तिर्लक्षणा व्यञ्जना च"[८] इति

यद्यपि लक्षणाव्यञ्जने वैयाकरणैर्न स्वीक्रियेते; तथापि लक्षणाव्यञ्जनाविषयको व्यवहारस्तेषामप्रसिद्धशक्तिपदपर्यायभ्रान्त्या तत्र तत्र भवतीति तदभिलक्ष्य वृत्तिभेदत्वेनात्र लक्षणाव्यञ्जने समुपादीयेते एव।

शक्तिविचारः –

शक्तिश्चेयमभिधात्वेनापि तदपरपर्यायपरतया भण्यते तद्विदैः। मञ्जूषाकारस्तु शक्तिस्वरूपनिरूपणावसरे स्फुटमिदमाह :–

"तस्मात्पदपदार्थयोः सम्बन्धान्तरमेव शक्तिः, वाच्यवाचकभावा–परपर्याया। तद्ग्राहकञ्चेतरेतराध्यासमूलकं तादात्म्यम्, तदेव सम्बन्धः। शक्तेरपि उभयनिरूपित तादात्म्यवानुभय इत्यर्थपदयोर्व्यवहारात्। दीपादिगत–कार्यजनकत्वे सम्बन्धस्यैव नियामकत्वात्। प्रकाशकत्वशक्तावपि आलोकविषयसम्बन्धे सत्येव वस्तुप्रकाशकत्वं नान्यथेतिष्टत्वात्।[९] इति

इयं शक्तिस्तावन्न ईश्वरेच्छारूपा इच्छारूपा वा व्यवहारात्तस्या

८. तत्रैव
९. परमलघुमञ्जूषायाम्, शक्तिनिरूपणे

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandi

ज्ञानस्यासम्भवात्। तथाहि वृत्तिज्ञानं व्यवहाराज्जायते। यथा केनचित्प्रयोजकवृद्धेन **'घटमानय'** इत्युक्ते घटमानयन्तं कञ्चन प्रयोज्यवृद्धं पश्यता बालेनानुमीयते यथा **'घटानयनं मत्कायर्यम्' इति ज्ञानवानयं 'प्रयोज्यवृद्धः' घटानयनविषयकचेष्टावत्त्वात्ः ततो 'घटमानय' इति वाक्यजन्यं 'प्रयोज्यवृद्धज्ञानम्' तद्वाक्यश्रवणाव्यवहितोत्तरमेव तत्प्रवृत्तेः'** इति। ततोऽनुमानेन ज्ञानजनकत्वं वाक्ये विनिश्चीयते। तत आवापोद्वापाभ्यामन्वयव्यतिरेकेण पदादिष्वपि पदार्थविषयकबोधजनकत्वं निर्धार्यते। तच्च पदे वाक्ये वा बोधजनकत्वं बोधकारणीभूतपदवाक्ययोरर्थेन सह सम्बन्धाभावे नोपपद्यते, विषयेण सह सम्बद्धानामेव प्रमाणानां चक्षुरादीनां ज्ञानोत्पादकत्वदर्शनात्। नहि घटेन सह सम्बन्धेन विनैव चक्षुरादि ज्ञानं विजनयति।

एवञ्च कारणत्वान्यथानुपपत्त्या कल्प्यमानः शक्तिरूपः कारणसम्बन्धो ज्ञानरूपकार्योत्पत्तेः प्रागेवापेक्ष्यते। तदानीं नैयायिकाभिमतस्य ईश्वरेच्छारूपस्य इच्छारूपस्य वा सम्बन्धस्यासिद्धत्वेन ज्ञाताया एव शक्तेर्बोधकत्वेन शक्तिग्रहासम्भवः स्यात्। इदमत्राभिप्रेतम्– शाब्दबोधात्प्राक्तत्कारणीभूतं शक्तिज्ञानमपेक्षितम्। बोधजननात्प्राग् बोधजनकत्वाभाववदिदं पदम् इति निश्चयसत्त्वेन तद्वत्ताज्ञानं प्रति तद्भाववत्ताविनिश्चयस्य प्रतिबन्धकत्वे इदं पदमेतदर्थविषयकबोधजनकतावद् इत्यादिस्वरूपस्य बोधजनकत्वघटितेच्छात्मकस्य शक्तिपदार्थस्य ज्ञानमसम्भाव्यमेवेति तत्त्वम्। किञ्च ईश्वरेच्छाया ईश्वरज्ञानस्य वा शक्तित्वामित्यत्र एकतरपक्षपातियुक्तेरभावाद् उभयस्वीकारे तार्किका गौरवपराहता भवेयुः। जानाति, इच्छति, ततो यतते इति क्रमदर्शने तु प्रत्युत ज्ञानस्य शक्तित्वे प्राथम्यमेव विनिगमकम्।

अथ च **'दण्डाद्घटो जायताम्'** इत्यादीच्छाविषयत्वमेव दण्डादौ घटादिकारणत्वं स्यात्। तथा चेच्छातिरिक्तिलोकप्रसिद्धस्य कारणत्वरूपधर्मस्य विलयः स्यात्। यदि तु दण्डादौ स्वरूपसती शक्तिः कार्योत्पादिका, शब्दनिष्ठा तु ज्ञातैवेति वैलक्षण्यदर्शनात् तत्रातिरिक्तशक्तिस्वीकारे न किञ्चिद्बाधकमित्युच्यते। तदा तु यथा प्रत्यक्षस्थले संयोगसमवायादि–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सन्निकर्षणघटादिना सम्बद्धानामेव चक्षुरादीनां प्रत्यक्षप्रमाजनकत्वम्, न तु जनकत्वघटितेच्छारूपसम्बन्धेन; तथा शब्दस्यापि प्रमाणत्वेन तदतिरिक्तसम्बन्धेनार्थेन सह सम्बद्धस्यैव शाब्दज्ञानजनकत्वमुचितम्। अन्यथा पर्वतो **वह्निमान् धूमात्'** इत्याद्यनुमितिस्थलेऽपि हेतुसाध्ययोः धूमज्ञानजन्यज्ञानविषयो वह्निर्भवतु' इतीच्छाविषयत्वेन वह्निविषयकबोधजन-कत्वरूपेण वा सम्बन्धेन निर्वाहे हेतुसाध्ययोर्नैयायिकाभिमतव्याप्तिरूप-सम्बन्धोच्छेदापत्तिः।[१०]

तस्मात्पदपदार्थयोर्बोधजनकत्वं तद्घटितेच्छादिरूपश्च सम्बन्धो नोचितः। किन्तु वाच्यवाचकपदव्यवहार्यं निरुक्तेच्छादिभिन्नं पदपदार्थयोः सम्बन्धान्तरमेव शक्तिः। तत्र वाचकत्वं वाच्यत्वं च न क्रमेण बोधजनकत्वरूपं बोधविषयरूपञ्च, किन्त्वखण्डोपाधिरूपं पदार्थान्तरम्।[११] अन्यथा पूर्वोक्तदोषापत्तिः नोपशममियात्। स च वाच्यवाचकभावः शब्दार्थोभयनिष्ठ एव। तथाविधशक्तिज्ञापकम् **'योऽयं शब्दः सोऽर्थः, योऽर्थः स शब्दः'** इत्याकारकमितरेतराध्यासमूलं तादात्म्यम्।[१२] तदेव संकेतः। तस्यापि पदवृत्तिशक्तिज्ञापकत्वाच्छक्तिरिति व्यवहारः। पाणिन्यादिस्मार्तसंकेतस्यैव वाचकतानियामकत्वं न त्वाधुनिकस्य।

प्राचीनवैयाकरणास्तु बोधजनकतां शक्तिमाहुः। यथा च निगदितं भूषणसारे :–

"इन्द्रियाणां स्वविषयेष्वनादिर्योग्यता यथा।
अनादिरर्थैः शब्दानां सम्बन्धो योग्यता तथा।।"[१३]

इन्द्रियाणां चक्षुरादीनाम्, स्वविषयेषु चाक्षुषेषु घटादिषु, यथा अनादिर्योग्यता तदीयचाक्षुषादिकारणता, तथा शब्दानामपि अर्थैः सह तद्बोधकारणतैव योग्यता, सैव शक्तिरित्यर्थः इति। इयञ्च योग्यतारूपा शक्तिः

---

१०. तत्रैव
११. तत्रैव
१२. तत्रैव
१३. वैयाकरणभूषणसारे, शक्तिनिर्णये, कारिका – ३७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पदार्थान्तरम् इति।

आलङ्कारिकास्तु सङ्केतसहकारिणी शक्तिः। सङ्केतस्तु शब्दार्थयोः प्रतिपाद्यप्रतिपादकलक्षणः सम्बन्धः, 'अस्माच्छब्दांदयमर्थो बोद्धव्यः' इति प्रवर्तकोपदेशो वा। स च शब्दे स्थितो ज्ञातः सन्नर्थं विषयी करोति। अयं संकेतोऽर्थस्थितं पुरुषाज्ञानमुत्सार्य ज्ञातृत्वं जनयति। तत्र शब्दवत्तत्र गता क्रियापि करणम्, प्रदीपस्य कारणत्वे सति तत्प्रभावत्। सैव शक्तिरित्याचक्षते।

लक्षणाविचारः –

तार्किकमतमुपन्यषस्यता मञ्जूषाकारेण **'स्वशक्त्यथसम्बन्धो लक्षणा'**[१४] इत्यभिहितम्। शाब्दिकाः शक्यकतावच्छेदकारोप एव लक्षणा इति मत्वा लक्षणा एका अप्रसिद्धा शक्तिरेवेति समामनन्ति। तस्मात्तन्मते लक्षणाया अतिरिक्तवृत्तिरूपता व्यतिरिच्यते। शक्तिविषयत्वेन ज्ञातो योऽर्थः भगीरथरथखातावच्छिन्नजलप्रवाहादिः, यश्च सम्बन्धः सामीप्यादिः, तयोः यज्ज्ञानं स्मरणात्मकं तेनोद्बद्धो यः शक्तिविषयकसंस्कारः, तज्जन्यबोधस्थले लक्षणा। एवं च शक्यसम्बन्धज्ञानेनोद्बुद्धसंस्कार एव लक्षणेति भावः। केचितु शक्यसम्बन्धस्मरणरूपो व्यापारो लक्षणा। स्मरणञ्च ज्ञानरूपमिति लक्षणापि ज्ञानरूपाऽत्र। केचित्तु शक्यादशक्योपस्थितिर्लक्षणा। तथाहि गङ्गापदेन प्रथमतः प्रवाहस्योपस्थितिः, ततः एकसम्बन्धिज्ञानमपरसम्बन्धि स्मारकमिति रीत्या पूर्वं प्रवाहतीरयोः सामीप्यरूपसम्बन्धस्य गृहीतत्वात्तीरस्य स्मृतिर्भवति। इयं तीरस्मृतिः पदजन्या शक्तिज्ञानजन्यप्रवाहोपस्थितिजन्यत्वात् शक्तिप्रयोज्या शक्यप्रवाहविषयकज्ञानजन्या शक्यतानवच्छेदकतीरत्वावच्छिन्नविषयिणी चेति सा लक्षणा स्वरूपसती तीरबोधहेतुः। शक्यसम्बन्धो लक्षणेति केचित्। स चाविनाभावरूप एवेति। यष्टीः प्रवेशय, मञ्चाः क्रोशन्ति इत्यत्रापि प्रवेशनकोशनसमये यष्टिधरमञ्चस्थपुरुषयोः यष्टिमञ्चाभ्यामविनाभावोऽस्त्येवेति यष्टिमञ्चपदयोः यष्टिधरे मञ्चस्थपुरुषे चाविनाभावरूपा लक्षणा। न च प्रवाहाविनाभावस्य तीरे इव मत्स्येऽपि सत्त्वात् मत्स्येऽपि गङ्गापदस्य लक्षणा स्यादिति वाच्यम्, तात्पर्यवशात् तीरेणैवान्वयबोध इति स्वीकारात्। अन्ये च तद्धर्माभाववति तद्धर्मारोपेण मुख्यार्थादन्यः अर्थोऽवबुध्यते

१४. परमलघुमञ्जूषायाम्, लक्षणानिरूपणम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तत्र तत्र लक्षणेति वदन्ति। व्यवहारे निमित्तं च तद्धर्मारोप इति शक्यतावच्छेदकारोप एव लक्षणेति। अत्र मते तीरे गङ्गात्वारोपः, दध्युपघातकमात्रे च काकत्वारोपः।

एवञ्च लक्षणा एका अप्रसिद्धा शक्तिः। प्रवाहे गङ्गाशब्दसङ्केतः अनादिकालतः, परन्तु तीरे प्रयोजनवशात् प्रवाहसामीप्याद् गङ्गात्वारोपः क्रियते। अतः आरोपकारणादियमप्रसिद्धा शक्तिः। एवञ्च संस्काररूपा, शक्यसम्बन्धज्ञानरूपा, उपस्थितिरूपा, सम्बन्धरूपा, शक्यतावच्छेदकारोपरूपा चेति पञ्चविधासु लक्षणासु लक्षणायाः न संस्काररूपत्वम्, शक्तिवत्सम्बन्धस्यैव तत्त्वौचित्यात्। न च ज्ञानरूपत्वं तस्याः, पूर्ववत् सम्बन्धत्वस्यैवौचित्यात्। न चोपस्थितिरूपा लक्षणा, तथा सति घटपदजन्यघटोपस्थितौ घटपदस्य शक्तित्वापत्तेः। न चापि सम्बन्धरूपा, लक्षणायाः सम्बन्धहेतुत्वात्। एकस्यैव कार्यत्वकारणत्वयोरनुपयुक्तत्वात्। तस्मात् शक्यतावच्छेदकारोपरूपैव लक्षणा वैयाकरणैः स्वीक्रियते। शक्यतावच्छेदकारोपेण च तीराद्यर्थनिरूपिता अप्रसिद्धा शक्तिः गङ्गादिशब्दे समायाति।

लक्षणाङ्गीकारे वृत्तिद्वयमवच्छेदकद्वयञ्च कल्पनीयं भवति। शाब्दबोधे लक्षणाजन्योपस्थितेः पृथक्कारणत्वं वक्तव्यम्। एवं पदार्थोपस्थितावपि तज्ज्ञानस्य हेतुत्वं स्वीकार्यम्। परस्परजन्यबोधे परस्पराभावमादाय व्यभिचारवारणाय अव्यवहितोत्तरत्वनिवेशे महद् गौरवम्। अतो गङ्गापदात् तीरप्रत्ययार्थं गङ्गापद एव शक्तिद्वयं स्वीकार्यम्। एका प्रसिद्धा, अपरा अप्रसिद्धा। भगीरथरथखातावच्छिन्नपयः प्रवाहनिरूपिता प्रथमा शक्तिः; सामीप्यसम्बशन्धावच्छिन्नतीरत्वावच्छिन्न–विषयकत्वावच्छिन्नार्थनिरूपिता शक्तिर्द्वितीया। एवञ्च लक्षणया प्रतिपिपादयिषितस्य अर्थस्याप्रसिद्धशक्त्यैव बोधनिर्वाहे कोऽभिनिवेशो लक्षणायां प्रेक्षावताम्।

व्यञ्जनाविचारः –

शाब्दिका व्यञ्जनामप्येकां तृतीयां वृत्तिमभ्युपपद्यन्तेव। तथा चाभ्यधायि नागेशपादेन :–

"मुख्यार्थबाधग्रहनिरपेक्षबोधजनको मुख्यार्थसम्बद्धासम्बद्ध–साधारणप्रसिद्धाप्रसिद्धार्थविषयको वक्त्रादिवैशिष्ट्यज्ञानप्रतिभाद्युद्बुद्धः

Sanskrit Digital Preservation F

संस्कारविशेषो व्यञ्जना। अत एव निपातानां द्योतकत्वं स्फोटस्य व्यङ्ग्यता च हर्यादिभिरुक्ता। द्योतकत्वं च स्वसमभिव्याहृतपद-निष्ठशक्तिव्यञ्जकत्वमिति। वैयाकरणानामप्येतत्स्वीकार आवश्यकः।" एषा च शब्दतदर्थपदपदैकदेशवर्णरचनाचेष्टादिषु सर्वत्र, तथैवानुभवात्। वक्त्रादिवैशिष्ट्यादिज्ञानं व्यङ्ग्यविशेषबोधे सहकारीति न सर्वत्र तदपेक्षेत्यन्यत्र विस्तरः।"[१५]

अथेतरैः :–

"शाब्दिकैः सा स्मृतैकैव त्रिविधापि स्वरादिवत्।
अभिधा लक्षणा व्यक्तिरित्याख्यात्रितयं मतम्।।"[१६]

"विविधा वृत्तिरेकैव वैलक्षण्येऽपि वस्तुतः।
इत्याहुः शाब्दिकास्तेषां भिन्नत्वे गौरवाद्भयम्।।"[१७]

यथैक एव स्वरो ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदेन त्रिविधो भवति तथा शक्तिरेव शब्दवृत्तिरभिधालक्षणाव्यञ्जनाभेदेन त्रिविधा भवति। वृत्तीनां भेदे गौरवमस्ति।

अत्र वैयाकरणाः– **शक्तिरेव शब्दवृत्तिः, तस्याश्च प्रसिद्ध्यप्रसिद्धिभ्यां शक्तिलक्षणाव्यपदेशः, व्यञ्जना तु तत्रान्तर्भवति दीर्घव्यापारादिति**"[१८] इति

एवं च शाब्दिका व्यञ्जनावृत्तिं नाभ्युपगच्छन्तीति वैयाकरणामतमभ्यूह्य प्रत्याख्यातमाशाधरभट्टेन कोविदानन्दे त्रिवेणिकायां च। तस्यायं भावः स्याद्यद्भाष्यादिप्राचीनतमेष्वाकरग्रन्थेषु क्वचिदपि व्यञ्जनाविषयको विशिष्टविचारो नोपलभ्यते। टीकादिग्रन्थेषु च **'वृत्तिश्च शक्तिलक्षणाऽन्यतररूपा'** इत्येव लिखितम्, न तु व्यञ्जनाभिप्रायेण **'अन्यतमरूपा'** इति। लक्ष्यार्थस्यथ माणवकादेर्नियतोपस्थितिकत्वाभावेन सिंहादिपदरूपप्रातिपदिकार्थत्वापशङ्कां मनसि निधाय **'अन्वयानुपपत्ति-**

१५. वैयाकरणसिद्धान्तलघुमञ्जूषायाम्
१६. कोविदानन्दे, श्लोक. ४२
१७. तत्रैव, श्लो,. १६
१८. त्रिवेणिकायाम्, पृ. ३७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पूर्विका लक्षणा पदे एव' इत्येव शेखरकारेणोक्तम्, न तु व्यञ्जनास्थलेऽपि शङ्कासमाधाने समुद्भाविते। व्यञ्जनास्वीकारे तु तत्रापि नियतोपस्थितिकत्वाभावे तयोरुद्भावनमवश्यं कर्तव्यमासीत्।

यद्यपि स्फोटवादे ये श्रद्दधते, तैरवश्यं व्यञ्जनाङ्गीकर्तव्या। अन्यथा सकलशाब्दिकाभिमता तस्य व्यङ्ग्यता नैव सिद्धा भवेत्। अत एव नागेशभट्टेन व्यञ्जनास्वरूपं प्रदर्श्योक्तम् **''अत एव निपातानां द्योतकत्वं स्फोटस्य व्यङ्ग्यता च हर्यादिभिरुक्ता। द्योतकत्वं च स्वतसमभिव्याहृतपदनि–ष्ठशक्तिव्यञ्जकत्वमिति। वैयाकरणानामप्येतत्स्वीकार आवश्यकः''**[२०] इति। तथापि तार्किकेषु शाश्वतिकविरोधानां शाब्दिकानां तार्किकमत–प्रत्याख्यानमात्रफलको व्यञ्जनासमर्थनप्रयासो भवेत्। अन्यथा लक्षणायाः प्रत्याख्याने **''सति तात्पर्ये 'सर्वे सर्वार्थवाचकाः' इति भाष्याल्लक्षणाया अभावात्, वृत्तिद्वयावच्छेदकद्वयकल्पने गौरवात्, जघन्यवृत्तिकल्पनाया अन्याय्यत्वाच्चैव''**[२१] इत्यादयो यावन्तो हेतवो नागेशेन प्रदर्शितास्ते सर्वेऽपि व्यञ्जनां कथं न विरुन्ध्युः।

व्यञ्जनाया यावानर्थो व्यङ्ग्यो भवति, तावान् सर्वोऽप्यप्रसिद्धशक्त्या व्यक्तो भविष्यति। व्यञ्जनावृत्तौ श्रद्धामावहतामालङ्कारिकाणां मते सहृदयैरेव व्यङ्ग्यार्थोऽवगम्यते, तादृशार्थोऽप्रसिद्धशक्त्या वैयाकरणैर्भोत्स्यते, किं व्यञ्जनया? तथाहि प्रोक्तं नागेशेन :–

''शक्तिर्द्विविधा प्रसिद्धाऽप्रसिद्धा च। आमन्दबुद्धिवेद्यात्वं प्रसिद्धात्वम्, सहृदयहृदयमात्रवेद्यात्वमप्रसिद्धात्वम्। तत्र गङ्गादिपदानां प्रवाहादौ प्रसिद्धा शक्तिः, तीरादौ चाप्रसिद्धेति किमनुपपन्नम्। ननु 'सर्वे सर्वार्थवाचका' इति चेद् ब्रूषे, तर्हि घटपदात्घटप्रत्ययः किन्न स्यादिति चेन्न; सति तात्पर्ये इत्युक्तत्वात् तात्पर्याभावादिति गृहाण। तात्पर्यञ्चात्रैश्वरं

---

१९. लघुशब्देन्दुशेखरे, पृ. ५१९

२०. वैयाकरणसिद्धान्तदलघुमञ्जूषायाम्

२१. परमलघुमञ्जूषायाम्, लक्षणानिरूपणे

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देवतामहर्षिलोकवृद्धपरम्परातोऽस्मदादिभिर्लब्धमिति सर्वं सुरूढम्।"[२२] इति

एवं च यथा लक्षणास्थले तात्पर्यवशादप्रसिद्धया शक्त्यैवेष्टार्थस्य लाभस्तथा व्यञ्जनास्थलेऽपि वक्त्रादिवैशिष्ट्यसहकारेणाप्रसिद्ध-शक्त्यैतवेष्टार्थलाभो भविष्यति, किं व्यञ्जनया? यदि हर्यादिभिर्निपातानां द्योतकत्वस्वीकारात् स्फोटस्य व्यङ्ग्यत्वस्वीकाराच्च शाब्दिकैर्द्योतकतारूपा व्यञ्जना स्वीक्रियते, तर्हि प्रादीनां द्योतकत्वाङ्गीकारान्नैयायिकैरपि सा स्वीकर्तव्या भवेत्, न च तैः स्वीक्रियते। यद्यन्यदेव व्यञ्जकत्वं तेषां तर्हि शाब्दिकानामपि तदन्यदेवास्तादम्, किं लक्षणाभेदेनाधिकतास्वीकारगौरवेण। एवञ्च शाब्दिकानां व्यञ्जनायामनास्थैव प्रत्याय्यत इत्येवमुपसंह्रियते।

***

२२. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संस्कृताभ्युदयोपायाः

डॉ० शेषमणिशुक्लः
गोविन्दपुरम्, हरदोई

कस्याः अपि भाषायाः अभ्युदयः कथं स्यात् इति प्रश्नस्य समाधानार्थम् सर्वप्रथमम् इदम् विचारणीयं भवति यद् भाषायाः अभ्युदयस्य किम् स्वरूपं भवति। भाषाया अभ्युदयेन कोऽभिप्रायो वा। एवं लक्ष्यस्य स्वरूपे निर्धारिते सति तत्प्राप्तिसाधनानां विचारस्य अवसरः प्राप्यते एतेन सहैव भाषाया अभ्युदयः कथं सौविध्येन कर्तुं शक्यते।

कस्या अपि भाषायाः अभ्युदस्य पूर्णरूपस्य विविधानि अवान्तराणि रूपाणि भवन्ति, यैः तस्य पूर्णं स्वरूपं संघटितं भवति। एषु अभ्युदयस्वरू सङ्घटकेषु अवान्तररूपेषु प्रथमं रूपं स्वयं भाषास्वरूपनिष्ठं भवति अर्थात् सा भाषा स्वयम् एतादृशीसम्पन्ना स्यात् यत् तस्यां सर्वविधविषयप्रतिपादनक्षमता स्यात्। अस्मिन् रूपे भाषायाः शब्दकोशः व्याकरणम् च तदङ्गतां सहकारितां वा भजते। भाषाभ्युदयस्य द्वितीयं स्वरूपं वर्तते यत् सा केनापि कारणेन लोकप्रिया सती लोके अधिकाधिकजनैः अध्ययनीया व्यवहरणीया च स्यात्। तृतीयं रूपं वर्तते यत् तस्याः वाङ्मयम् सर्व विधैः अपेक्षितैः विषयैः पूर्णं स्यात् एतेन सहैव च लोके जनानां स्वत एव एतादृशी रुचिः स्यात् यत् ते तस्यां नवनवानां ग्रन्थानां रचनां कर्युः, येन तस्याः वाङ्मयं अभिनवानाम् अपि विषयाणां समावेशेन उत्तरोत्तरं सम्पन्नं स्यात्।

संस्कृते भाषास्वरूपनिष्ठोऽभ्युदयः

संस्कृते भाषाभ्युदयस्य स्वयं भाषास्वरूपनिष्ठस्य रूपस्यसम्बन्धः अस्ति। इदम् निस्सन्देहरूपेण कथयितुं शक्यते यद् अभ्युदयस्येदं रूपम् संस्कृते पूर्वत एव प्राप्तं वर्तते, अतः तस्य प्राप्त्यै कस्य अपि विशिष्ट प्रयासस्यावश्यकता नास्ति। संस्कृतभाषा पूर्वत एव एतावतीसम्पन्ना वर्तते यत् तस्याम् सर्वविधविषयाणां प्रतिपादनाय क्षमता अस्ति। तस्याः शब्दकोशः एतावद्विपुलं वर्तते यत् कस्यापि विषयस्य प्रतिपादनावसरे कस्यचिदपि विशिष्टस्य अर्थस्य द्योतनाय शब्दकोशः स्वापरिमितभाण्डागारेण सह

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समुपस्थितः सन् स्वस्माद् यथेष्टशब्दग्रहणाय पोषणां करोति। यदि कदाचित् शब्दकोशसाहाय्ये प्राप्तेऽपि काचिन् न्यूनता अनुभूयेत चेद् व्याकरणं तस्याः पूर्तये सदैव प्रवर्तितं वर्तते। संस्कृतव्याकरणं तु शब्दानामेतादृशी शक्तिपूर्णा कर्मशाला एव वर्तते यत् तस्याः आधारेण यथेष्टाः शब्दा निर्मातुं शक्यन्ते। यदि पुनरपि आवश्यकता चेत् अन्याभ्यः भाषाभ्योऽपि शब्दाः ग्रहीतुं शक्यन्ते, ये च मूलरूपे संस्कृतरूपे ना परिणताः सन्तः उपयोक्तुं शक्यन्ते।

संस्कृते व्यावहारिकोऽभ्युदयः

भाषाभ्युदयस्य द्वितीयं रूपं संस्कृते अवश्यमेव इदानीम् नास्ति, सा इदानीं लोकप्रिया अथ च अधिकाधिकजनैः अध्ययनार्हा व्यवहरयोग्या च न वर्तते। भाषायाः अभ्युदयस्य इदं रूपं तदा प्राप्तं भवति यदा सा जनानाम् मातृभाषा स्यात् अथवा तस्याम् ताम् प्रति वा तेषां हृदये ममता स्यात् अथवा सा राष्ट्रभाषा राजभाषा वा स्यात् अथवा तस्याः वाङ्मयम् एतादृशम् स्यात् यत् तस्य अध्ययनं तेषां पुरुषार्थसाधनाय विशेषतोऽर्थसाधनाय अनिवार्यरूपेण आवश्यकं स्यात्। फलतः संस्कृते अभ्युदयस्य इदं रूपं सम्पादयितुं तत्सम्बन्धिन्यः उक्ताः स्थितयः परिस्थितयो वा उत्पादनीयत्वेन् आवश्यकाः सन्ति।

अ. मातृभाषारूपा परिस्थितिः

एतासु परिस्थितिषु मातृभाषात्व परिस्थितिः प्राथमिकरूपेण असम्भवा एव वर्तते अतस्तस्याः उत्पादनाय तु कस्यापि उपायस्य वार्ता एव न विचारणीया यतो हि वर्तमानानां बालकानां सा मातृभाषा अतएव न भवितुं शक्नोति यतः सा तेषां जननी नास्ति।

आ. ममत्वपरिस्थितिः राष्ट्रभाषापरिस्थितिश्च

भारते संस्कृतं प्रति ममत्वपरिस्थितिः उत्पादयितुं शक्यते, किन्तु इदं कार्यं तदैव वर्तते, यदा जनानां उद्‌बोधनं स्याद् यदिमेव तेषां वास्तविकी भाषा वर्तते, तेषां पूर्वजाः इमाम् एव भाषां प्रयुक्तवन्तः एवञ्च कस्याः अपि भाषायाः सम्पन्नता सहस्रेषु शतेषु वर्षेषु सम्पद्यते, पुनः एव सम्पन्ना जाता च भाषा एकम् निधानम् नष्टम् भविष्यति, येन ते सम्पन्न भाषादरिद्राः भविष्यन्ति, अतः संस्कृतसमाना स्वकीया समृद्धा भाषा तैः न उपेक्षणीया, अपि तु अध्ययनाध्यापनेन तस्यां विविधव्यवहारेण च संरक्षणीया वस्तुतः एतादृशम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उद्बोधनं विबुद्धानां भारतीयानां जनानां हृदये वर्तते अपि किन्तु तेषाम् एतादृशी नैतिकी शक्तिः नास्ति यथा ते स्वयम् एव स्वकीयाम् संस्कृतभाषां स्वीकृत्य तस्याः अध्ययनम् तस्याम् व्यवहारम् च सम्पादयेयुः, तत्फलस्वरूपेण राष्ट्रे वास्तविकतं तिरोहितम् ऐक्यम् पुनः स्थापयेयुः। अतः एतत्परिस्थितिसमुत्पादनप्रयासः अकिंचित्कारः एव भविष्यति। फलतो राष्ट्रभाषात्वपरिस्थितितिसमुत्पादनप्रयासः अपि विफल एव भविष्यति। यतो हि यदि ममत्वपरिस्थितिः स्यात् चेत् राष्ट्रभाषात्वपरिस्थितिः एव नास्ति, तदा राष्ट्रभाषात्वपरिस्थितिः केवलं बलेन उत्पादयितुं न शक्यते, अतएव संस्कृतस्य राष्ट्रभाषात्वप्रस्तावः बहुजनसमर्थितः सन् अल्पजनसमर्थिमतः एव वर्तते।

इ. राजभाषात्वतपरिस्थितिः

राजभाषात्वपरिस्थितिसमुत्पादनं सुकरं वर्तते, एतेन च संस्कृतस्य प्रचारः सौकर्येण भवितुं शक्नोति। यथा आङ्लभाषायाः राजभाषात्वे जाते जनाः ताम् भाषाम् अधीतवन्तः, तथैव ते संस्कृतम् अपि पठिष्यन्ति तत्र किञ्चिदपि काठिन्यं न भविष्यति। किन्तु शासनम् एतदर्थम् प्रस्तुतम् नास्ति, जनतायाः अपि विरोधः संभाव्यते, अत एतदर्थम् अपि प्रयासः व्यर्थः एव भविष्यति।

ई. पुरुषार्थसाधनत्वपरिस्थितिः

संस्कृतवाङ्मयाध्ययनम् यावत् पुरुषार्थसाधनभूतं वर्तते तावत्तत् तत् पुरुषार्थाभीप्सुभिः अधीयते स्म। प्राचीनकाले तदध्ययनं सर्वपुरुषार्थ साधनभूतमासीत्, अतः तदा तत् प्रायः सर्वैः अपि क्रियमाणम् आसीत्। इदानीं तदध्ययने अर्थव्यतिरिक्तं पुरुषार्थस्य साधनता तु विपुलरूपेण वर्तते, किन्तु अर्थसाधनता तत्र तादृशी नास्ति। फलतः धर्मकायमोक्षाभीप्सवो जनास्तु तत् कुर्वन्ति, किन्तु केवलम् अर्थस्य उपासकाः तत्र प्रायेण न प्रवर्तन्ते। इदानीं तत्र अर्थसाधनतायास्तु इयता एव वर्तते यत् कर्मकाण्डिनः पण्डिताः तदाधारेण कर्मकाण्डं सम्पादयित्वा अर्थम् उपार्जयन्ति, ज्योतिर्विदश्च, वैद्याः, शिक्षकाः, वेतनभोगिनः सन्तः जीवनं पापयन्ति। कर्मकाण्डवृत्रिस्तु नष्टप्राया एवास्ति। अस्मिन विषये इदम आवश्यकम् वर्तते यत् प्रथमं तु भारतीयज्योतिविज्ञानाय चिकित्सा विज्ञानाय च शासनेन साहाय्यं देयम येन तयोः विकासः स्यात्। जनतायाः तत्र अभिरुचिः अपि अस्ति अतः तदध्ययनाय जनाः प्रोत्साहिताः भविष्यन्ति, तदुद्देश्येन च संस्कृताध्ययनं स्वत एव भविष्यति। एवमेव शासनेन

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विद्यालयाद् आरभ्य विश्वविद्यालयपर्यन्तं पाठ्यक्रमे संस्कृतम् अनिवार्यम् कृतं स्यात।

ये विद्यार्थिनः संस्कृते एव नवीनविषयान् नवीनान् ग्रन्थान् लिखेयुः एतदर्थं शासनेन पुरस्कारयोजनां अपि प्रवर्तनीयां। इदम् सुनिश्चितमस्ति यद् यावत्कालपर्यन्तं संस्कृते अर्थसाधनता न समायास्यति, तावत् सा लोकप्रिया अथ च बहुजनानां अध्ययनीया व्यवहरणीया च न भविष्यति। अर्थसाधनता तावान्न समायास्यति यावत् वर्तमानकालानुसारेण अर्थसाधनभूतस्य विषयज्ञानस्य समावेशः तत्र न भविष्यति। इयं स्थितिः संस्कृताभ्युदयाय अवश्यमेव दूरीकरणीया।

संस्कृते सम्पन्नवाङ्मयनिष्ठः अभ्युदयः

उक्तेन प्रकारेण भाषाभ्युदयस्य तृतीयं रूपं अपि संस्कृते सम्पद्यमानम् भविष्यति, अतः तत्र विषये अधिककथनस्य आवश्यकता नास्ति। संस्कृतवाङ्मयं धर्मकाममोक्षादिविषयैः पूर्वत एव पूर्णतो वर्तते अर्थविषयेण अपि तत् पूर्वोक्तप्रकारेण सम्पन्नं कर्तव्यम्। एतेन जनानां तदध्ययनाय रुचिः भविष्यति एतादृश्याम् च जनरुचौ सम्पन्नायाम् लेखकानाम् स्वत एव एतादृशी रुचिः भविष्यति यत् ते संस्कृते नवविषयाणां समावेशेन उत्तरोत्तरं सम्पन्नम् भविष्यति।

५. संक्षेपतः संस्कृताभ्युदयोपायाः

पूर्वोक्तप्रकारेण संस्कृतसंरक्षणार्थं संस्कृताभ्युदयस्य उक्त विविधरूपसम्पादनार्थं वा शासनस्य, संस्कृतज्ञानम्, जनतायाश्च करणीयाः विभिन्नाः उपायाः इमे वर्तन्ते–

१. शासनेन संस्कृताध्ययनम् अनिवार्यं करणीयम्। अस्मिन् विषये भारतीयायाः जनतायाः कोऽपि विरोधो न भविष्यति इति निश्चितं वर्तते।

२. शासनेन संस्कृतग्रन्थलेखकेभ्यः पुरस्कारयोजना प्रवर्तनीया। संस्कृते लिखितानाम् अभिनवविषयकाणाम् ग्रन्थानाम् प्रकाशनम् अपि शासनेन कार्यम् तदर्थं साहाय्यम् वा हेयम।

३. ये संस्कृतज्ञाः अभिनवविषयाणां ज्ञानमुपार्जयितुं वाच्छन्ति,

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अथवा ये अभिनवविषयज्ञाः संस्कृतज्ञानम अभीप्सन्ति, ये च अग्रे अनुसन्धानकर्तुं वाञ्छति तेभ्यः शासनेन पूर्णं सर्वविधम् साहाय्यं देयम्।

४. संस्कृतज्ञाः संस्कृतभाषां सरलां कुर्युः तद्व्याकरणं च सरलं कुर्युः सरलायां संस्कृतभाषायां ग्रन्थान् लिखेयुः सरलाञ्च संस्कृताध्ययनशैलीं विकासयेयुः तस्यामेव च संस्कृताध्यापनं कुर्युः।

५. जनता संस्कृते अभिरुचि दधती सती तदध्ययनं कुर्यात्। संस्कृताध्ययनसंवर्धनाय पूर्ववर्तुं आर्थिकं साहरय्यं दद्यात्। अनेन सहैव इदं कर्तुं समर्था असमर्था वा स्यात् शासनः कदापि विरोधो न व्याहरतु संस्कृताध्ययनम् अनिवार्यं कर्तव्यम् अथ च संस्कृत–संरक्षण–हेतवे प्रयास–करणीयो यतोहि संस्कृतमेव यथार्थं वाग्भूषणमङ्गीकृतम्–

केयूराणि न भूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वलाः।
न स्नानं न विलेपनं कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजाः।।

वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते।
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्।।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जातकर्मसंस्कारस्य वैज्ञानिकपक्षः

डॉ० नवलता
संस्कृतविभागाध्यक्षचरा
वी.एस.एस.डी. महाविद्यालयः, कर्णपुरम्

संस्कारः भारतीयसंस्कृतेः प्राणतत्त्वम्, यतोहि जीवनं गतिशीलं वर्तते, सा च गतिः निरन्तरमभ्युदयमूला एव शंसिता। यथा काप्युद्दामवेगा नदी मार्गे क्वचिन्नानापदार्थानाहृत्य प्रवहन्ती दूषितजला भवति, क्वचित्सद्धर्मशीलै-र्मानवैरपसारितमला निर्मला भवति, क्वचिदायतकूला क्वचिच्चक्षीणकूला भवति, तथैव जीवोऽपि अनन्तजन्ममरणयात्रायां नानाकर्मफलजन्यमलैः युक्तः सन् तत्तत्कर्मजन्यादृष्टं वासनारूपसंस्कार–तयाऽऽहृत्य नवीनं शरीरं दधाति। वासनारूपसंस्कारोऽयं प्रकृतिं स्वभावं वा मानवस्य निर्णेति। वस्तुतोऽस्मिन्नर्थे संस्कार इति पदस्यार्थः पारिभाषिक औपाधिको वा भवति। व्युत्पत्तिलभ्येऽर्थे संस्कारः प्राकृतवस्तुनः परिष्कारविधिः कश्चन इति वक्तुं शक्यते। आसमन्तात् करोति परिष्करोति इति परिष्क्रियतेऽनेन वेति संस्कारः। अनया दृशा संस्कारः सप्रयोजनं साऽऽयासं च कर्म इति मन्तव्यम्। उभयथापि संस्कारस्य सम्बन्धो जीवनस्य मूलोद्देश्येन पुरुषार्थेन भवति ।

जीवनं प्रति भारतीया दृष्टिरत्यन्तं व्यापकस्वरूपं दधाति। जन्मतः मृत्युपर्यन्तमेव जीवनस्य सीमा नापितु जीवस्यानन्तजन्ममरणयात्रा अनन्तचक्राण्यासृष्टिप्रलयं यावज्जीवनमिति यतोहि प्राणधारणात्मकस्वभावो जीवोऽधिष्ठानभूतानि नानाशरीराणि बिभ्रत् देशकालापेक्षया जन्मनि जन्मनि पूर्वजन्मकृतकर्मफलादृष्टजन्यसंस्कारवशान्नानायोनिषु भ्रमत्तत्ज्जन्मसु संक्रान्तसंस्कारजन्यशुभाशुभं स्वभावरूपप्रकृतिं चाहृत्य मातापित्रोः वीर्यरजः संयोगेन गर्भगतो भवति। एवं तस्य निर्माणे घटकत्रयमुत्तरदायि भवति गर्भसम्भवपर्यन्तमदृष्टजन्यसंस्कारः पितुर्वीर्यगता गुणधर्माः मातृजा रजोगतगुणधर्माश्चेति। पित्रोरपि तत्र वैयक्तिकस्वभावगुणप्रकृत्यादीनां समाहारः सम्भाव्यो भवत्येव यतोह्याङ्गिगरसरूपवीर्यरजसी पित्रोः पञ्चकोशानामप्यंशत्वेन सन्ततौ सङ्क्रमेते। अस्तु। उक्तत्रयाणामपि घटकानां संयोगेन यदा शरीरस्य

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संरचना भवति तदा जायमाने शिशौ त्रिष्वपि सम्भाव्यदोषाणामाहृतिः सम्भाव्यत एव। अतस्तेषां दोषाणां परिहारो गुणाधानञ्च पित्रोर्दायित्वं भवति। अस्माकं पूर्वमनीषिणां महर्षीणाञ्च दृष्टिः सर्वमपि जीवतन्त्रं समाजतन्त्रं च श्रेष्ठसमाजविरचनार्थं कथं सूत्रबद्धं कर्तुमासीदित्यस्य वैज्ञानिकः पक्षोऽस्मिन्सन्दर्भेऽवश्यं द्रष्टव्यः।

भारतीयसंस्कृतौ सन्तानोत्पत्तिः काचित्प्राकृतप्रक्रियामात्रं नापितु पुरुषार्थसाधनं पितृ–ऋणादानृण्यस्य हेतुश्चोक्ता। व्यष्टेः स्तरे मोक्षावाप्तिः समष्टिस्तरे च श्रेष्ठमानवानां निर्माणेनाभ्युदयशीलश्रेष्ठविश्वस्य संरचना मानवजीवनस्य लक्ष्यं खलु। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यमिति' वैदिक उद्घोषे आर्यविश्वस्य निर्माणे संस्कारयुक्त–मानवसन्ततिपरम्परयाः निर्माणं प्रथमसोपानतया भवितुमर्हतीत्यत्र न संशयः।

मानवः किंवा प्राणिमात्रं वस्तुत आधिभौतिकाध्यात्मिकाधिदैविकतत्त्वानां पुञ्जः। तत्र पाञ्चभौतिकं शरीरं त्रिगुणात्मकं त्रिदोषात्मकं चाधिभौतिकसङ्घटनतया वरीवर्ति, आत्मगतेच्छाद्वेषप्रयत्नसंस्कारादयो धर्मा आध्यात्मिकस्तरमभिव्यञ्जन्ति बाह्यप्राकृतिकदिव्यशक्तीनां प्रभाव आधिदैविकसङ्घटनं निर्धारयति। शुद्धबुद्धमुक्तस्वभावो निरवयव आत्मा यदा जीवभावमाप्नोति तदा स्वपूर्वजन्मगतादृष्टवशान्नानादोषैर्लिप्यते। पित्रोर्वीर्यरजोगतदोषवशाद्गर्भगतदोषवशाद्वा जीवात्मनस्तच्छरीरस्य च दुष्टत्वसम्भाव्यत्वात् तत्संस्कारोऽपेक्ष्यते। एवमेव देशकालगतप्रतिकूल–सम्भावनावशात् प्रतिकूलकालनक्षत्रादिषु शारीरोद्भवे सति आधिदैविकदोषाणां निराकरणार्थमपि संस्कारस्यावश्यकता भवति। अथ च पित्रोरिच्छाऽपेक्षा–वशाच्च तत्तद्गुणानामाधानार्थं तदनुकूलसंस्कारा अपेक्ष्यन्ते शिशोः काले–काले। एवं संस्काराणां पृष्ठभूमिः विवाहकाले आरभते।

भारतीयसंस्कृतौ वैदिककालादेव संस्काराणां स्वरूपं निर्धारितम्। संहितोक्तपद्धतीनां व्याख्यारूपेण वेदाङ्गेषु कल्पसूत्रान्तर्गतं गृह्यसूत्रेषु विवाहतारभ्य गर्भाधानादिसंस्काराणां स्वरूपं विधानं च निर्दिष्टं वर्तते। यद्यपि परवर्तिधर्मशास्त्रेषु मन्वादयः षोडशसंस्काराणां विधानं कृत्वा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समन्त्रकामन्त्रकभेदेन विभागं चक्रुः किन्तु गृह्यसूत्रेषु क्वचिच्चतुर्विंशति पञ्चविंशति वाऽन्यत्राष्टचत्वारिंशत् संस्कारा उक्ताः। तेषु विवाह–संस्कारः चत्वारो विवाहोत्तरसंस्काराः (चतुर्थीकर्म त्रिरात्रव्रतं वा) गर्भाधानं, पुंसवनं सीमन्तोन्नयनं चेति जातकर्मतः समावर्तनपर्यन्तं च षोडश संस्कारा उक्ताः। गौतमसूत्रेऽष्टचत्वारिंशत् संस्कारैः संस्कृत इति वचनेनाष्टचत्वारिंशत्संख्योक्ता संस्काराणाम्। एतेषु केचिद्दोषमार्जनं केचिदतिशयाधानं केचिच्च हीनाङ्गपूर्तिं कुर्वन्ति। एवं संस्कारैः पूर्णमानवनिर्माणस्योपक्रमस्तत्र प्रयोजनं भवति। यथोक्तं स्मृतिकारैः–

वैजिकं गार्भिकं चैव द्विजानामपि मृज्यते। *मनुस्मृतिः*

एवमेव शमं याति बीजगर्भसमुद्भवम्। –*याज्ञवल्क्यस्मृतिः*

नामकरणतः समावर्तनपर्यन्तं प्रायोऽतिशयाधानात्मकाः संस्काराः भवन्ति येषामुद्देश्यं गुणाधानं भवति। एतदतिरिच्य गृहस्थानां कृते पञ्चमहायज्ञाः,सप्तपाकयज्ञाः सप्तहविर्यज्ञाः दयाक्षमादिमानवीयगुणानां विकासः शौचादयश्चापि अष्टचत्वारिंशत्संस्कारेषु गण्यन्ते येषां प्रयोजनम् इतरजीवानां प्राकृतिकजगतश्च पोषणं संरक्षणं संवर्धनं चास्ति इति प्रतीयते, यतो हि, सर्वमेतद् मानवाश्रितमेव तिष्ठति। अथ च मानवः प्राणिमात्रं प्रति दैवतभावनया युक्तः स्यादित्यपि उक्तकर्मणामुद्देश्यम्। एवं संस्काराणां क्षेत्रमतीव व्यापकमिति वक्तुं शक्यते। विशेषवक्तव्यमत्रास्ति यत्तत्तत्संस्कारेषु यत्कर्मकाण्डविधानं प्रचलितमासीत् तस्य मनोवैज्ञानिकं शरीरवैज्ञानिकं च महत्त्वमासीत्। एतद्दृशा यद्यपि विभिन्नेषु गृह्यसूत्रेषु मनुस्मृतिषु अन्यत्र च देशकालवैशिष्ट्यात् द्रव्यविधिविषयको भेदो दृश्यते किन्तु मूलं प्रयोजनं मनःशारीरिकशोधनपूर्वकं पूर्णमानवस्य श्रेष्ठमानवस्य वा निर्माणमित्येवेति वक्तव्यम्। उक्तसन्दर्भे सर्वेषां संस्काराणां विश्लेषणं संस्कारविधीनामाङ्गिकसंस्काराणाञ्च यथोक्तविधिसम्पादनं विशेषफलप्रदमित्यत्र न सन्देहः।

निदर्शनार्थमत्र गृह्यसूत्रोक्तजातकर्मसंस्कारस्य चर्चा क्रियते। शिशोः जन्मकाले सम्पाद्यमानः संस्कारः जातकर्म इत्युच्यते। जाताय जातस्य जायमानाय वा कर्मैतत्शंसितम्।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जातकर्मसंस्कारस्यावश्यकता

जातकर्म वस्तुतः सर्वाधिकमहत्त्वपूर्णः संस्कार इति वक्तुं शक्यते। केनचिदुक्तं यद् 'जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्द्विज उच्यते' इति। षूङ्प्राणिगर्भविमोचने इति धातोः व्युत्पन्नस्य शूद्र इति पदस्यार्थो वस्तुतः गर्भान्निः सृतः जीव (जैवप्राणी) इति। वस्तुतः यथाकालं गर्भे स्थितः जीवः रयिप्राणरूपरजः वीर्यसंयोगेन भ्रूणभावं प्राप्यानुदिनं मात्रा भुक्तपीतादन्न–जलादिकादाहारमाहृत्य पूर्वं मांसापिण्डमात्रं भवति। गर्भस्थजरायौ नानाविधैरमेध्यपदार्थैः लिप्तं तत्पिण्डं भूम्यन्तः स्थितं बीजमिव मृज्जन्मदोषैरसंस्कृतत्वादग्राह्यमस्पृश्यं वा भवति। यदा नानायोनिषु भ्रमञ्जीव इच्छाऽष्टादिवशात्पूर्वजन्मसंस्काराच्च प्रेर्यमाणस्तत्पिण्डं प्रविशति तदा जीवपिण्डसंयोगेनाध्यात्मिकाः (मनः शारीरिकाः) विकाराः सम्भाव्यन्ते। जीवपिण्डयोः तादात्म्यार्थं विकारापनोदनार्थञ्च गर्भविमोकात्पूर्वं गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तोन्नयनं चेति संस्काराः प्रसिद्धाः। किन्तु जन्मकाले गर्भान्निष्क्रमणे जनन्याः शिशोश्चाप्यत्यधिकं दुःसहं च कष्टं भवति। तन्निवारणार्थं तदनुकूलोपचार आवश्यको भवति यः संस्काररूपो भवति।

जातकर्मसंस्कारस्याङ्गभूतानि कर्माणि

प्रथमं तावत्क्षिप्रप्रसवनाख्यः संस्कारः प्रचलित आसीत्, यस्मिन् सोष्यन्ती होम नाम कर्म विहितमासीत्। एतत्कर्म जनन्या अरिष्टागारे प्रवेशानन्तरं तस्य चारिष्टागरस्य शुद्ध्यनन्तरं क्रियते स्म। अस्मिन् कर्मणि पतिः पत्न्याः आर्द्रहस्तस्तस्या एव शिरसि संस्पृश्य स्वार्द्रहस्तेन तस्याः शरीरमाशिरसो हृदयं यावत्स्पृशति स्म येन शिशुः शीघ्रमेव गर्भान्निष्क्रमेत्। अस्मिन्नवसरे प्रवाहदिशा नदीजलमाहृत्य तूर्यन्ती नामौषधिं पत्न्या अधः सोष्यन्ती नामौषधिञ्च तस्याः शिरसिसंस्थाप्य पतिः हस्ताभ्यां स्पर्शपूर्वकं नदीजलेन पत्न्याः मार्जनं कुर्यादिति भारद्वाज आपस्तम्बादयः सूत्रकाराः स्वीकुर्वन्ति। वाजसनेयसंहितानुसारेण यदि जरायुनिः सरणे विलम्बो भवति तर्हि पतिः पत्न्याः शिरसि द्विधा मन्त्रोच्चारणपूर्वकं जलप्रोक्षणं कुर्यात्। गोभिलगृह्यसूत्रानुसारेण अग्निं दर्भैः परिस्तीर्य आज्याहुतिद्वयं विधीयताम्। होमकर्मात्मकत्वादेतत्सोष्यन्तीहोमेति नाम्नोक्तम्।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जातकर्मसंस्कारस्य द्वितीयं कर्म आयुष्यकर्मेत्युक्तम्। जन्मानन्तरं मथिताग्नौ पित्रा एकविंशति आज्याहुतयो दातव्याः शेषाज्ये दधिमधुजलानां मिश्रणं कृत्वा त्रिवारं शिशुं पाययेत्। एतानि द्रव्याणि शोधकान्युक्तानि। एवं गर्भस्थशिशोः उदरे यन्मलादिकं विषाक्तं च वस्तु भवति तद्वमनद्वारा मलद्वारा च निःसरति। स्वास्थ्यकरत्वादेतद्विधानमायुष्यकर्मेत्युक्तमिति प्रतीयते।

अस्य संस्कारस्यापरं कर्म कुमाराभिमन्त्रणमित्युच्यते। कर्मण्यस्मिन् शिशोः कर्णे पिता पलाशपर्णसाहाय्येन अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भवेत्यादिमन्त्रोच्चारणं कृत्वा तमभिमन्त्रयति।

अन्यत्कर्म प्राशनमिति। आश्वलायनगृह्यसूत्रानुसारेण स्वर्णचमसेन दधिघृतमधुसम्मिश्रणं शिशुं लेहयेत्। अस्य कर्मण उद्देश्यमपि उदरशुद्धिः मुखशुद्धिश्चास्ति। अन्येषु गृह्यसूत्रेषू नालच्छेदनात् स्तन्यपानाच्च पूर्वं पित्रा यवतण्डुलयोः चूर्णप्राशनस्य विधानमुक्तम्।

जातकर्मसंस्कारस्यान्यत्कर्म मेधाजननमित्युक्तम्। अस्मिन् कर्मण्यपि घृतमधुप्राशनस्य विधानमुक्तम्। अन्येषु गृह्यसूत्रेषु किञ्चित्पृथग्विधानमस्ति। आश्वलायनगृह्यसूत्रानुसारेण शिशोः कर्णे 'मेधां ते देवः सविता मेधां देवी सरस्वती' इत्यादि मन्त्रोच्चारणं विधीयते। घृतमायुष्यं बलवर्धकं तैजसद्रव्यं भवति यदग्निरूपमग्निश्चवाक् इत्युक्तम् अतः मेधावृद्ध्यर्थं घृतस्योपयोगिता वर्तते। जातकर्म संस्कार एव स्तन्यपानं प्राशनकर्मानन्तरं विहितम्। काठकगृह्यसूत्रानुसारेण प्रथमवारं स्तन्यपानात्पूर्वं 'मधुवाता ऋतायते' इत्यादि तैत्तिरीयसंहिताप्रोक्तमन्त्रमुच्चार्य स्तनं मार्जयित्वा हविः शेषं मधुमिश्रितं हविशेषं वा सुवर्णेन आलोड्य शिशोर्मुखे दत्त्वा पिता स्तन्यपानार्थं शिशोर्मुखे मातुः स्तनं दद्यात्। तत्र दक्षिणस्तनप्रदानार्थं वामस्तनप्रदानार्थञ्च पृथक् पृथक् मन्त्राणा–मुच्चारणं कुर्यात्। एवं पञ्चसंस्काराः जातकर्मसंस्कारे भवन्तिगृह्यसूत्रानुसारेण।

जातकर्मसंस्कारे प्रयुक्ता ओषधयः

जातकर्मसंस्कारस्य विविधकर्मसु यासामोषधीनां प्रयोगो विहितः ताः काकातनी, मचकचातनी, कोषातकी, बृहती, कालकलीतकं, वृषभसर्षपतिलाः सोष्यन्ती, तूर्यन्ती, विशल्या, सुवर्चला, पिण्डीतकः, सर्पत्वक्, हिरण्यपुष्पी इति

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

घृतं मधुदधि चेति द्रव्याणि भवन्ति। तत्र काकातनी मचकचातनी कोषातकी बृहतीकालकलीतकमित्येतासामोषधीनां सूतिकागृहे विलेपनेन कृमिनाशो भवति। वृषभनामौषधिं ज्वालयित्वा सर्षपतिलानां धूपनेन वातावरणं शुद्धं भवति। प्रसूतिकायाः प्रसूतस्य च स्वास्थ्यरक्षणदृशा एतासां प्रयोगः क्रियते स्म। सोष्यन्ती होमावसरे होमधूमेन गन्धेन च वातावरणं शुद्धं स्वास्थ्यकरञ्च भवति। अथ च विशल्यासुवर्चलाचेत्योषध्योः योनौ निष्ठ्यवनेन गर्भद्वारावरोधो नश्यति शीघ्रं सुखप्रसूतिश्च जायते।

उल्लेखनीयमस्ति यज्जातकर्मसंस्कारे घृतमधुदध्नां नैकवारं शिशोः मुखे दानं क्रियते। एतज्जठरगतोदरमलापसारणाय क्रियते। एवं जातकर्मसंस्कारः शिशोः शरीरसंस्काराय तु भवत्येव पित्रा सह किञ्चिन्मनोवैज्ञानिकं सम्बन्धमपि साधयति। वर्तमानकाले संस्कारस्यैतस्याडम्बरपूर्णं स्वरूपं दृश्यते। अथवा प्रायः प्रसूतिः गृहस्थेषु सूतिकागृहेषु न प्रचलितापितु महिलाचिकित्सालये भवति। तत्र च कृत्रिमौषधीनां प्रयोगः व्यावसायिकचिकित्सिकाभिः क्रियत इति दृश्यते। सोष्यन्तीहोमप्रयोजनवदेवैष उपचारः। किन्तु कुमाराभिमन्त्रणादि–कर्मणां यथाविधानं सम्पादनीयमेव। पारस्कराश्वलायनशांख्याय–नगोभिलापस्तम्बमाण्डूक्यकाठकप्रभृतयः गृह्यसूत्रकाराः किञ्चिद्विधिभेदेन जातकर्मसंस्कारस्योपदेशविधानं कृतवन्तः।

एवमस्माकं गृह्यसूत्रपरम्परायां विहितः संस्कारविधिरद्यापि संशोधनीयः स्वीकरणीयश्चेति वक्तव्यम्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

महाकविकालिदासस्य रचनासु शिवतत्त्वविमर्शः

डॉ० रीता तिवारी
संस्कृतविभागाध्यक्षा
नवयुगकन्यामहाविद्यालयः, लखनऊ

सर्वैः स्वीक्रियते यद् भगवतः शिवस्य महिमा गरीयसी। भगवान् शिवो लोककल्याणाय अहर्निशं तत्परो दृश्यते। शिवभक्ता अपि शिवकृपया सदैव कृताथाः सन्ति। भगवतः शिवस्याराधना सहजसरलपद्धत्या दरीदृश्यते। पार्थिवलिङ्गस्य निर्माणं कृत्वा सर्वे भक्तजनाः शिवमर्चयन्ति। भक्ताः बिल्वपत्रादिभिः शिवं पूजयन्ति। भगवतः पञ्चाक्षरो मन्त्रः सर्वजनग्राह्योऽस्ति, येन–ऊँ नमः शिवायेति मन्त्रेण ग्राम्यजना अपि भगवन्तं पूजयन्ति। स्वयं तु भगवान् शिवः दिगम्बरेति स्वीक्रियते भक्तानां कृते। सः केवलं चर्मधारणं करोति, सः तु परिग्रहेऽनासक्तोऽस्ति। कालिदासेन कृता शिवस्तुतिः सर्वविदितास्ति–

वागर्थाविव सम्पृक्तो वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ।।[1]

भगवतः परिवारे नन्दी (वृषभः) तस्य वाहनमस्ति। सोऽपि भक्तानां मनोकामनायाः पूर्ति करोति। सः तु पृथव्याः कृषिव्यवस्थास्याः मूलाधरोऽस्ति। नन्दीवाहनस्यावहेलना भगवतः शिवस्योपेक्षा भवति। सम्प्रति कृषिकार्ये अस्योपयोगः न दृश्यते, कदाचिदनेन कारणेन मानवाः सङ्कटग्रस्ताः सन्ति। नन्दी भगवतो द्वारि विराजते, तस्याज्ञां विना कोऽपि भगवतो दर्शनं कर्तुं समर्थो न भवति कृपां चापि प्राप्तुं शक्यो न भवति।

ऋग्वेदे शब्दरूपी वृषभः महादेवेति नाम्ना सम्बोध्यते–

चत्वारि श्रृङ्गास्त्रयोऽस्य पादाः द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो यस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश।।[2]

---

१. रघुवंशे १/१
२. ऋग्वेदे ४/५८/३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

परम्परेयं दृश्यते यत् शिवमन्दिरे बहिः स्थितस्य वृषभस्य शिववाहनस्य कर्णे सङ्कटग्रस्ताः प्राणिनः स्वं स्वं सङ्कटं सूचयन्ति तस्य समाधानं प्राप्तुञ्च वाञ्छन्ति। ते सफलताञ्च प्राप्नुवन्ति।

भगवान् शिवः त्रिशूलं धारयति। 'त्रि' शब्दस्यार्थोऽस्ति 'त्रयः' तथा च शूलस्यार्थोऽस्ति 'पीडा'। संसारेऽस्मिन् त्रयाणां दुःखानां परिकल्पना कृता शास्त्रविद्भिः। ते सन्ति आधिभौतिकम्, आधिदैविकम् आध्यात्मिकञ्चेति। एवं मन्यते यद् भगवतः शिवस्याराधनया ऐतेषां त्रयाणां दुःखानां निवृत्तिः जायते। कतिपयैः विद्वद्भिः मन्यते यत् त्रिशूलो भगवतः शिवस्य सृष्टिकर्तृक–पालनकर्तृक–संहारकर्तृकस्वरूपं दर्शयति।

भगवतः शिवस्य पार्श्वेऽस्त्येकं वाद्यं 'डमरू' (ढक्वं) एवं श्रूयते यत् ढक्वस्यास्य भगवता चतुर्दशबारवादनेन निनादेन वा माहेश्वरसूत्राण्यावि–र्भूतास्सन्ति। एतान्येव माहेश्वरसूत्राणि व्याकरणशास्त्रस्य–अक्षरसमाम्नायस्य–प्रत्याहारसूत्राणाञ्चोद्भावकाः सन्ति। महर्षिपाणिनना एतेन्येव सूत्राणाधिकृत्य स्व अष्टाध्यायिनः रचना कृता। व्याकरणशास्त्रस्य ग्रन्थेनानेनेयं संस्कृतभाषा शुद्धरूपेण सुरक्षिता संरक्षिता चाऽस्ति। अस्मिन् विषये प्रसिद्धोऽयं श्लोकः –

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्वं नवपञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्।।[1]

गङ्गायाः महत्त्वं सर्वविदितमस्ति। पृथिव्यां गङ्गाया अवतरणं भौतिकाध्यात्मिकसमृद्धेः मूलकारणमस्ति। गङ्गा मानवान् स्वास्थ्यं–समृद्धिम् आध्यात्मिकं ज्ञानञ्च प्रयच्छन्ती सदाचारणस्य शिक्षां प्रददाति। सर्वकल्याणमयीमिमां गङ्गां भगवान् शिवः स्वशिरसि धारयित्वा तस्या वेगञ्च सन्तुलितं कृत्वा यथोचितं प्रवाहं पृथिव्यामुत्सृजत्। भर्तृहरिः कथयति–

शिरः शार्वं स्वर्गात्पशुपतिशिरस्कः क्षितिधरं
महीध्राद् उत्तुङ्गाद् अविनयवनेश्चापि जलधिम्।

---

१. नन्दिकेश्वरकाशिकायाम्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधोऽधो गङ्गेयं पदमुपगता स्तोकमथवा
विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः ।।[1]

प्रतीकात्मकरूपेण गङ्गामाध्यमेन दम्भिजनाः तथा च अविवेकिपुरुषाः शिक्ष्यन्ते यत् तेषाम् पतनमेवमेव भवति। भगवती गङ्गा प्रथमं तावद् गोमुखाद् भगवतः शिवस्योपरि शिरसि पतति, ततः हिमालयात् पृथिव्योपरि दृश्यते, तत्पश्चात् समुद्रे लयं गच्छति।

भगवतः शिवस्य मस्तके शुक्लपक्षस्य द्वितीयेव चन्द्रमा शोभते। चन्द्रमा शीतलतां प्रददाति तथा च तस्य किरणेषु अमृतस्रोतः प्रवहति एवं मन्यते।

भगवान् शिवः स्वकण्ठे सर्पान् धारयति अनेनेदं सूच्यते यत् यः पुरुषः स्वजीवने ईदृशः विरोधो धारयति सामञ्जस्यञ्च वितरति स एव महान् भवति।

एवं मन्यते यत् समुद्रमथनाद् विषाऽमृतयोः द्वयोरपि प्राप्तिरभवतम्। सर्वे खलु विषवर्जनपूर्वकममृतपानाय समुत्सुकाः आसन्। कोऽपि विषग्रहणाय तत्परो न बभूव। तदा भगवान् शिव एव विषपानं चकार। अनेन प्रसङ्गेन सिद्धयते अयम् यत् शिवो वस्तुतः ईदृशस्य आदर्शस्य प्रतीको यः सर्वान् द्वन्द्वान् स्वीकृत्य सर्वत्र सामरस्यं जनयति। भगवता शिवेन लोकमङ्गलकामनया सर्वाणि कार्याणि सम्पादितानि। तेन स्वार्थसिद्धिकामना किञ्चिदपि न कृता। नानाद्वन्द्वैः आवृतोऽपि भगवान् शिवः द्वन्द्वातीतोऽस्ति।

दाम्पत्यजीवनक्षेत्रे पार्वत्याः व्यवहारेण प्रसन्नो भूत्वा आशुतोषेन पार्वतीं प्रति स्वार्द्धाङ्गं समर्पितम्। अनेन प्रसङ्गेन परिवारे समाजे सम्पूर्णसृष्टौ च स्त्रीपुरुषयोः ऐक्यस्य चित्रणं प्राप्यते। एवमुदाहरणं न कुत्रापि देवगणे परिदृश्यते। एवं दाम्पत्यजीवनस्य सुखसमृद्धिप्राप्त्यर्थं भगवतः शिवस्याराधना विहिता दृश्यते।

भगवतः शिवस्य नेत्रत्रयं वर्तमान–भूत–भविष्यत् कालं संसूचयति। ज्योतिषशास्त्रविशारदभिः एवं मन्यते यद् भगवतः मस्तके विराजमानाश्च चन्द्रमा मासगणनायाः सङ्केतकोऽस्ति।

महादेवस्य परिवारः सृष्टिज्ञानं कारयति तस्याः रहस्यं च प्रकटयति।

---

१. नीतिशतके १०

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तस्य पुत्रस्य गणेशस्य हस्तीमुखम् ओङ्कारस्य प्रतीकोऽस्ति। तस्य गणेशस्य बृहत्कर्णौ सर्वाः वार्ताः गोप्याः कुरुतः। शूर्पाकारौ कर्णौ विवेकसूचकौ स्तः। यौऽसारतत्त्वत्यागपूवकं सारतत्त्वं सूचयतः।

स्वामिकार्तिकेयोऽपरो पुत्रोऽस्ति भगवतः शिवस्य, शिवस्य कण्ठे सर्पः, कार्तिकेयस्य वाहनः मयूरः तथा च गणेशस्य वाहनः मूषकः–एतेषां परस्परं विरोधिभावाः सन्ति किन्तु तेषां किल तत्र मैत्रीभावः दृश्यते नास्ति कश्चिद् विरोधलेशावसरः तस्य परिवारे। एतदरिक्तं भगवत्या उमाया वाहनः सिंहोऽपि तत्रैवास्ति तथापि तत्र परिवारे पूर्णसामञ्जस्योऽभिलक्ष्यते।

अत एव शिव एव ईदृशोः देवोऽस्ति यो भारतीय–सनातन–संस्कृतेः उच्चादर्शस्य प्रतिनिधित्वं करोति। अत एव सम्पूर्णे भारतेऽस्मिन् शिवशक्त्ययोः पूर्णप्रभावो दृश्यते। द्वादशज्योतिर्लिङ्गानां स्थापना शक्तिपीठानां स्थापना च अस्यविषयोपरि ध्यानं केन्द्रितं करोति मानवानाम्। शुक्लयजुर्वेदे भगवतः रूपद्वयस्योल्लेखः प्राप्यते – उग्रो मङ्गलमयश्च–

नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः।
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी।
तथा नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्तामिचकाशीहि।[1]

अर्थात् हे रुद्र! भवतः शरीरं घोरं नास्ति, अपितु कल्याणकारी अस्ति, पुण्यफलप्रदायकं सौम्यं चास्ति। कैलाशे निवसन् मङ्लकारकात् शरीरात् ममोपरि कृपादृष्टिं प्रयच्छतु, स्वरूपं प्रकाशयतु, आत्मानं ज्ञानञ्च ददातु।

ब्रह्मा प्रथमं तावत् शिवस्य दशसहस्रात्मकं नाम स्तोत्रं रचयामास। महाभारतस्य अनुशासनपर्वणि तस्य साररूपं सहस्रात्मकं नामस्तोत्रं प्राप्यते–

दशनामसहस्राणि यान्याह प्रपितामहः।
तानि निर्मथ्य मनसा दध्नो घृतमिवोद्धृतम्।।[2]

महर्षिपतञ्जलिना स्वकीये महाभाष्ये शिवाय 'शिव भागवतेति'

१. शुक्लयजुर्वेदे १६/१–२
२. महाभारतेऽनुशासनपर्वणि १७/३

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दव्यवहारः कृतः–

किं योऽयं शूलेनान्विच्छति स आपः शूलिकः।
किं चातः? शिवभागवते प्राप्नोति।।[१]

महाकविकालिदासस्य कालः समाजे अभिजात्वर्गस्य तथा च सामरस्यस्य मणिकाञ्चनसंयोगकाल आसीत्। कालिदासः पर्वतशिखरेषु नदीलहरीसु च स्वलेखननीं चालयित्वा सहृदयजनान् काव्यसुधारसं पानयामास। सः कविः स्वकीयकाव्यप्रतिभया प्राकृतिसौन्दर्योपादानं परीक्ष्य स्वपरिकल्पनाभिः प्रकृतिम् अलङ्कृतञ्चकार–

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरीतोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।[२]

अनेन श्लोकमाध्यमेन कविः भारतस्य भौगोलिकसीमायाः निर्धारणं करोति।

'मेघदूत'–माध्यमेन मनुष्यस्य चिरन्तनाभिलाषाः अभिव्यक्ताः भवन्ति। प्राकृतिकसौन्दर्यस्य मानवसौन्दर्यस्य च मञ्जुलसाम्येन सहैव आध्यात्मिकपथि अग्रेसराय अत्र साधनायाः सुदृढा पृष्ठभूमिर्दृश्यते। प्रायः काव्येषु शैवीभावना कवेः यत्र तत्र सर्वत्र परिलक्ष्यते। मेघदूतस्य प्रथमपद्ये 'स्वाधिकारात्प्रमत्तः' इत्यादिना आध्यात्मिकः परिवेशः प्रस्तुतः। कवेः कवित्वशक्तिः शाश्वतसत्यस्यापि परा एव आसीत्।

रघुवंशस्यापि प्रथमे श्लोके 'जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ' उक्त्वा कविः स्वीकीयां शैवीभावनां निदर्शयति। दार्शनिकानुभवैः सह कविकुलगुरुः सङ्गीत–नाट्य–चित्रमूर्तिकलानां स्वाभिज्ञानं प्रमाणयति।

विश्वकविकालिदासस्यानुत्तरा कृतिः अभिज्ञानशाकुन्तलमस्ति। इयं कृतिः विश्वस्य सहस्रासु भाषासु अनूदिता दृश्यते। जन–जन–प्रियतायाः प्रामाण्यमिदमेव दृश्यते। अस्य नाटकस्य मङ्गलाचरणे भगवतः शिवस्याष्टमूर्तिनामुल्लेखः प्राप्यते। याः मूर्तयः साक्षात्दृश्यमाणाः सन्ति। अत

१. महाभाष्ये ५/२/७६
२. कुमारसम्भवे १/१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एव भगवान् शिवः प्रत्यक्षदेवतेति मन्यते। पद्योऽयं द्रष्टव्यः–

या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।[1]

अस्मिन् पद्ये निगदिता यत् प्रथमा मूर्तिमयी सृष्टिः जलमस्ति, द्वितीया मूर्तिमयी सृष्टिः अग्निरस्ति, तृतीया यजमानमयी मूर्तिरस्ति, चतुर्थी सूर्य–चन्द्रमयी सृष्टिरस्ति, पञ्चममूर्तिः सृष्टिस्वरूपा आकाशोऽस्ति, षष्ठीमूर्तिः सृष्टिमयी वायुरस्ति, सप्तमी तु सृष्टिः पृथिवीरूपास्ति अन्तिमा मूर्तिः तस्य भगवतः स्वमूलस्वरूपा एवास्ति। एवं परमेष्ठिनः शिवस्य मूर्तिः अष्टाभी रूपैः शिवः युष्मान् सर्वान् अवतु युष्मभ्यः कल्याणं करोतु– इत्यभिप्रायोऽत्रास्ति।

***

---

१. अभिज्ञानशाकुन्तले १/१

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतीया ज्ञानपरम्परा पाण्डुलिपिविज्ञानञ्च

प्रो० दीप्तिशर्मात्रिपाठी
पूर्व–संस्कृतविभागाध्यक्षा
दिल्लीविश्वविद्यालयः, दिल्ली

भारतीया ज्ञानपरम्परा वर्त्तते दशसहस्रवर्षादपि प्राचीनतरा किन्तु अस्माकं दौर्भाग्येण इदानीं विस्मृतिपथं गता उपेक्षां भजते। अस्ति अधुना आवश्यकता अस्माकं ज्ञानपरम्परां प्रति सजगताप्रेरणायाः। बहुकालं यावत् वैदेशिकैः शासिता वयं विस्मृतवन्तः अस्माकमैतिह्यम्। अपि च नास्ति कापि ज्ञानपरम्परा अस्माकं देशे इति वैदेशिक्यां शिक्षाप्रणाल्यां श्रावं श्रावं वयं तमेव प्रमाणवाक्यमिति कृत्वा न केवलं स्वीकृतवन्तः अपितु स्वयमपि सघोषं प्रचारयितुम् आरब्धवन्तः। ईदृशी शिक्षाप्रणाली दुष्प्रचारश्च देशस्य विकासाय आत्मसम्मानभावाय च न। अत एव वयमद्य सर्वेषु विषयेषु पश्चिमाभिमुखं भूत्वा चातकायामहे। स्मरणीयमेतद् यद् अनुकरणं कदापि विकासाय न अपितु यस्मिन्देशे स्वतन्त्रं चिन्तनं नूतनः शोधश्च भवति स एव सर्वत्र सर्वानतिशेते। अत एव आवश्यकताऽस्ति अस्माकं ज्ञानपरम्परायाः प्रेरणां प्राप्य नूतनं ज्ञानं विकासयितुम्। अनेनैव वयं ज्ञानक्षेत्रे विश्वं जेतुं समर्थाः भवेम।

सुविदितमेव यद् भारतीयानां पाण्डुलिपीनामितिहासः सुप्राचीनः सुविस्तृतश्च। ग्रन्थप्रेम प्रतिपादयन् एष श्लोकः शिष्टसमाजे तेषां माहात्म्यमपि रेखाङ्कितं करोति।

ग्रन्थाः ममाग्रतः सन्तु ग्रन्थाः मे सन्तु पृष्ठतः।
ग्रन्थाः मे सर्वतः सन्तु ग्रन्थेष्वेव वसाम्यहम्।।[1]

मृच्छकटिकनाटकस्य तृतीयेऽङ्के वर्णिता चारुदत्तस्य वसन्तसेनायाश्च गृहे ग्रन्थशोभा। पुनश्च कादम्बर्यां वृद्धद्रविडस्य सामग्रीषु आसीत्

१. मृच्छकटिके, तृतीयोऽङ्कः, अष्ढादशश्लोकस्य परस्तात्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'धूमरक्तालक्तकाक्षरतालपत्रकुहकतन्त्रमन्त्रपुस्तिका, हरितपत्ररसाङ्गारमषी–मलिनशम्बूकवाहिना।' लिखनविरागः पुस्तिकाशोधने उपेक्षाभावश्च मूर्खतापादकेषु अष्टसु कारणेषु कारणरूपेण परिगणितौ। कलौ युगे विष्णुः लेख्याक्षराणां देवतात्वेन सुपूजितः 'कलौ लिप्यक्षरे हरिः'। अन्येषु युगेषु अन्ये देवताः इति निष्कर्षः। एकस्मिन् स्थाने नारदेन बृहस्पतिना च उक्तं षट्सु मासेषु उच्चरिताः शब्दाः विस्मर्यन्ते। तेषां नाशः न स्यादिति लेखनाय ब्रह्मणा अक्षराणामाविष्कारः कृतः। अस्याः लिपेर्नाम ब्राह्मी इत्यासीत्। जैनपरम्परायां मन्यते प्रथमेन तीर्थंकरेण ऋषभदेवेन लोकानां हिताय अक्षराणमाविष्कारः कृतः। लिपेर्नाम च निजकन्यायाः नामसाम्येन ब्राह्मी इति कृतम्। एतेषु सर्वेषु प्रसङ्गेषु प्रतीयते यद् भारतवर्षे लेखनपरम्परा अतीव प्राचीना। यद्यपि कालस्य प्रभावेण अतिप्राचीनानि पुस्तकानि अद्य नोपलभ्यन्ते किन्तु अत्र अनुपलब्धिः अभावस्य प्रमाणं न। यतो हि अन्यानि बहूनि प्रमाणानि सन्ति यैः सम्यक् प्रतीयते यद् भारतवर्षे लेखनकर्म वैदिककालादेव आरब्धम्। पण्डितक्षेत्रेश चन्द्रचट्टोपाध्यायः 'References to writing in Rgveda'[2] शीर्षके निबन्धे स्वमतमुपस्थापयति यदृग्वेदस्य दशममण्डलस्य द्विसप्ततितमे सूक्ते चतुर्थे मन्त्रे यदुक्तं–

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचं उत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विसस्रे जायेव पत्ये उषती सुवासाः।।

तत्र 'वाचः दर्शनम्' इत्युक्तिः लेखनक्रियां सङ्केतयति। आचार्यो ब्रजबिहारीचौबे 'Manuscriptology: Past and Present' शीर्षके निबन्धे स्थापयति सिन्धुसभ्यतायाः प्राप्तेषु वस्तुषु प्रमाणीभवति यत् तस्मिन् काले लेखनकला सुप्रचलिता आसीत्। ततः पूर्वं वैदिककालेऽपि कापि लिपिः प्रचलिता भवेदिति नास्त्यत्र सन्देहस्य अवकाशः।[3] आचार्यः के०वी०शर्मा[4] अपि

2. References to writing in Rigveda, K.C. Chattopadhyaya, Poona Orientalia, Vol. V. p.49
3. Manuscriptology : Past and Present, B.B. Chaubey, Lecures on Manuscriptology, 2004, p.7
4. Manuscripts of India, K.V. Sarma, New Lights on Mauscriptology, 2007, p. 2&4

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'Manuscripts of India' निबन्धे वैदिककाले लेखनकला प्रचलिता आसीदिति प्रतिपादयति।

यास्काचार्यः निरुक्ते प्रस्तौति यद् वेदज्ञानस्य त्रिप्रकारकी व्यवस्था भवति स्म। प्रथमं तावत् साक्षात् मन्त्रद्रष्टारः ऋषयो बभूवुः, ते अवरेभ्यः मन्त्रोपदेशं चक्रुः। तदनन्तरं अन्येऽपि आसन् ये केवलम् उपदेशेन ग्रहणेऽसमर्थाः, तेषां कृते ग्रन्थरचना भवति स्म। तन्निरुक्ते उक्तमाचार्यपादैः 'साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। तेऽवरेभ्योऽसाक्षाकृतधर्मेभ्यः उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः। उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे बिल्मग्रहणायेमं ग्रन्थं समाम्नासिषुः। वेदं च वेदाङ्गानि च'।[5]

परवर्तिनि काले अनेकेषु काव्येषु पुस्तकानाम् उल्लेखो वर्तते। यथा हर्षचरिते बाणभट्टस्य मित्रेषु पुस्तकवाचकः सुदृष्टिः, लेखको गोविन्दकः, पुस्तकृत् कुमारदत्तश्च परिगणिताः। तत्रैव राज्ञः हर्षस्य कृते अन्येषां सर्वेषां वस्तूनां सह साधुः कुमारभास्करवर्मणा प्रेषितं 'स्थूलसूत्रनियन्त्रितपुस्तिका–पुलकमपि' नयति। पुनश्च तत्रैव 'अगरुचल्कलकल्पितसञ्चयानि सुभाषितभाञ्जिपुस्तकानि' अपि वर्णितानि। लोके प्रसिद्धानि वचनान्यपि मातृकाणां महत्त्वं सङ्केतयितुमलम्। यथा

सम्भूष्यं सदपत्यवत् परकराद्रक्ष्यं च सुक्षेत्रवत्
संशोध्यं व्रणिताङ्गवत् प्रतिदिनं वीक्ष्यं च सन्मित्रवत्।

बध्यं वध्यवदश्लथं दृढगुणैः स्मर्यं हरेर्नामवत्
नैवं सीदति पुस्तकं खलु कदाप्येतद्गुरूणां वचः।।

अपि च पुस्तकानां रक्षणं कथं कार्यमिति अग्रिमे श्लोके सुष्ठु वर्णितम्

तैलाद्रक्षेज्जलाद्रक्षेद्रक्षेच्छिथिलबन्धनात् ।
मूर्खहस्ते न दातव्यमित्थं वदति पुस्तकम्।।

ये ग्रन्थानां महत्त्वं नावगच्छन्ति तेषां हस्ते ग्रन्थः नैव दातव्यः यतो हि तेषां हस्ते ग्रन्थस्य नाशः अवश्यम्भावी।

---

५. निरुक्ते; १.२० पृ० ४२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुस्तकशब्दस्य प्रयोगः स्वकीये अर्थशास्त्रे चाणक्येन मातृकायै कृतः। परवर्तीयुगे अनेकेषु ग्रन्थेषु मातृकामधिकृत्य सूचना उपलभ्यते। यथा योगिनीतन्त्रे नानाविधा लेखनसामग्री वर्णिता। तत्र लेखनोपयोगिनां पत्राणां सूची परिगणिता, तद्यथा

भूर्जे वा तेजपत्रे वा ताले वा ताडिपत्रके।
अगुरुणापि देवेशि पुस्तकं कारयत् प्रिये।।

सम्भवे स्वर्णपत्रे च ताम्रपत्रे च शंकरि।
अन्य वृक्षत्व चिदेवि तथा केतकि–पत्रके।।

मार्तण्डपत्रे रौप्ये वा वटपत्रे वरानने।।

लेखनी वंशताम्रसुवर्णादि निर्मिता स्यादिति वल्लालसेनः दानसागर–नामके ग्रन्थे प्रतिपादयति। योगिनीतन्त्रेऽपि तृतीयभागे सप्तमे पटले नैकाः लेखन्यः वर्णिताः। वाराही तन्त्रे पञ्चप्रकारकाः लिपयः परिगणिताः

मुद्रालिपिः शिल्पलिपिर्लिपिर्लेखनीसम्भवा।
गुण्डिकाघूणसम्भूता लिपयः पञ्चधा मताः।।

खड्गमालातन्त्रेऽपि एतासु तिसृणामुल्लेखो वर्तते

लेखन्या लिखितं विप्रैर्मुद्राभिरङ्कितं च यत्।
शिल्पादिनिर्मितं यच्च पाठ्यं धार्यं च सर्वदा।।

न केवलं लेखनीगुणं, लेख्यपत्रगुणं, लिपिभेदाश्च वर्णिताः विविधेषु ग्रन्थेषु, अपितु लेखकः कीदृशो भवेदित्यपि विस्तरेण स्थापितं प्राचीनेषु ग्रन्थेषु। काव्यमीमांसायां राजशेखरः लेखकगुणान् विवृणोति 'संस्कारविशुद्धयर्थं सर्वभाषाकुशलः, शीघ्रवाक्, चार्वक्षर, इंङ्गिताकारवेदी, नानालिपिज्ञः कविर्लाक्षणिकश्च लेखकः स्यात्'।[६] उक्तं च चाणक्यनीतिशास्त्रे–

सकृदुक्तगृहीतार्थो लघुहस्तो जिताक्षरः।
सर्वशास्त्रसमालोकी प्रकृष्टो नाम लेखकः।।[७]

६. काव्यमीमांसायाम्, दशमेऽध्याये, पृ० ११०
७. चाणक्यनीतिशास्त्रे, १०२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अत्र ध्यातव्यं यत् लेखकशब्दस्य प्रयोगो आधुनिके काले भिन्ने अर्थे भवति संस्कृते तु लेखनकर्मणि प्रवृत्तः लेखक इत्यभिधीयते स्म। तत्रैव काव्यमीमांसायां प्रस्तावितं यन्नूतनायाः कृते अनेकाः प्रतिलिपयः कारयितव्याः येन कृतेर्लोपो न स्यात्। श्रूयते नैषधीयचरितस्य प्रतिलिपिः परीक्षणार्थं काश्मीरं प्रेषिता। राजशेखरेण ग्रन्थोच्छेदस्य कारणान्यपि परिगणितानि तद्यथा

निक्षेपो विक्रयो दानं देशत्यागोऽल्पजीविता।
त्रुटिका वह्निरम्भश्च प्रबन्धोच्छेदहेतवः।।

दारिद्रा व्यसनासक्तिरवज्ञा मन्दभाग्यता।
दुष्टे द्विष्टे च विश्वासः पञ्च काव्यमहापदः।।[८]

कविना लेखनसामग्री सदा निजपार्श्वे रक्षणीया यतो लेखने कापि असुकरता न स्यात्। अत एव कवेः पार्श्वे 'संहटिका, सफलकखटिका समुद्गकः, सलेखनीमसीभाजनानि, ताडिपत्राणि, भूर्जत्वचो वा सलोहकण्टकानि तालदलानि, सुसम्मृष्टाभित्तयः सतत्सन्निहिताः स्युः। तद्धि काव्यविद्यायाः परिकरः इति आचार्याः' ।[९]

ललितविस्तरनामकस्य बौद्धग्रन्थस्य दशमे अध्याये चतुषष्टिलिपीनां परिगणनं कृतम्। अस्य ग्रन्थस्य सम्पादकः संशोधकश्च वैद्योपाह्वः परशुरामशर्मा (P-L-Vaidya) मनुते यद् अस्य ग्रन्थस्य कालः ईस्वीयायाः प्रथमशताब्द्या आरभ्य तृतीयशताब्द्या मध्ये भवितुमर्हति। उत्तरवर्तिनीं कालसीमामपि यदि वयं मन्यामहे तर्हि स्वीकरणीयं यत्तस्मिन् काले एताः लिपयः लोके प्रचलिताः आसन्। उक्तं च ललितविस्तरे 'अथ बोधिसत्त्वः विश्वामित्रमाचार्यमेवमाह कतमां मे भो उपाध्याय लिपिं शिक्षापयसि ब्राह्मी–खरोष्ठीपुष्करसारिं अङ्गलिपिं बङ्गलिपिं मगधलिपिं मङ्गल्यलिपिम् अंगुलीयलिपिं शकारिलिपिं ब्रह्मवलिलिपिं पारुष्यलिपिं द्राविडलिपिं किरातलिपिं दाक्षिण्यलिपिम् उग्रलिपिं संख्यालिपिम् अनुलोमलिपिम्

८. काव्यमीमांसायाम्, दशमेऽध्याये, पृ० ११८–१७
९. तत्रैव, पृ० १११

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अवमूर्धलिपिं दरदलिपिं खाष्यलिपिं चीनलिपिं लूनलिपिं हूणलिपिं मध्याक्षरविस्तरलिपिं पुष्पलिपिं देवलिपिं नागलिपिं यक्षलिपिं गन्धर्वलिपिं किन्नरलिपिं महोरगलिपिम् असुरलिपिं गरुडलिपिं मृगचक्रलिपिं वायसरुतलिपिं भीमदेवलिपिम् अन्तरीक्ष देवलिपिम् उत्तरकुरुद्वीपलिपिम् अपरगोडानीलिपिं पूर्वविदेहलिपिम् उत्क्षेपलिपिं निक्षेपलिपिं विक्षेपलिपिं प्रक्षेपलिपिं सागरलिपिं वज्रलिपिं लेखप्रतिलेखलिपिम् अनुद्रुतलिपिं शास्त्रावर्त्ता गणनावर्त्तलिपिम् उत्क्षेपावर्त्तलिपिं निक्षेपावर्त्तलिपिं पादलिखितलिपिं द्विरुत्तरपदसंधिलिपिं यावद्दशोत्तरपदसंधिलिपिं मध्याहारिणीलिपिं सर्वरुतसंग्रहणीलिपिं विद्यानुलोमाविमिश्रितलिपिम् ऋषितपस्तप्ता रोचमाना धरणीप्रेक्षिणीलिपिं गगनप्रेक्षिणीलिपिं सर्वौषधिनिष्यन्दा सर्वसारसंग्रहणीं सर्वभूततरुतग्रहणीम्। आसां भो उपाध्याय चतुषष्टीलिपीनां कतमां त्वं शिष्यापयिष्यसि?'[१०]

भारतेवर्षे पाण्डुलिपीनां बाहुल्यस्य अन्यतमं कारणं विद्यादानस्य माहात्म्यस्वीकरणम् उक्तं च हयशीर्षपाञ्चरात्रे–

आकाशस्य यथा नान्तं सिद्धेरप्युपलक्ष्यते।
एवं विद्याप्रदानस्य नान्तं सर्वगुणात्मकम्।।

दानमयूखे[११] नीलकण्ठेन उक्तं,

कपिलादानसहस्रेण सम्यग्दत्तेन यत्फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति पुस्तकैकप्रदानतः।।

एवं त्रिविधं विद्यादानम्, पुस्तकदानम्, प्रतिमादानम् अध्यापनञ्चेति। लेखकस्य कार्यं कीदृशं कष्टकरमासीदिति श्लोकेनामुना सुस्पष्टं व्यक्तम्–

भुग्नपृष्ठकटिग्रीवः तुल्यदृष्टिरधोमुखः।
कष्टेन लिखितं ग्रन्थं यत्नतः परिपालयेत्।।

---

१०. ललितविस्तरे, लिपिशालासंदर्शनपरिवर्तो दशमः, पृ० ८८
११. दानमयूखे, नीलकण्ठभट्ट, बॉम्बे १९२४, पृ० २७८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लेखनकार्ये एकाग्रभावेन बहुकालं यावत् शारीरिकं कष्टं सोढ्वा ये अलिखन्त ते सर्वत्र आदरं लभन्ते स्म। नन्दीपुराणे वर्णितं यत् लेखकस्य लेखः शुभः, श्लक्षणः, रम्यश्च भवितुमर्हति। हयशीर्षपाञ्चरात्रे निगदितं लेखकस्य लेखः संशीर्षैः सुमांसलैश्च भवितव्यम्।[१२] पुनश्च तत्रैव प्रतिपादितं

नातिकृशैर्नातिदीर्घैर्ह्रस्वदीर्घादिलक्षितैः।
सम्पूर्णावयवैर्मात्राबिन्दुसंयोगलक्षितैः।।[१३]

शोभनः लेखः कीदृशो भवेदत्र विषये मत्स्यपुराणे वर्णितम्

शीर्षोपेतान् ससम्पूर्णान् शुभश्रेणीगतान् समान्।
अक्षरान् वै लिखेद्यस्तु लेखकः स वरः स्मृतः।।[१४]

अत्र भारतीयपरम्परायां पुस्तकानां महत्त्वं, तेषां संरक्षणं, लेखनसामग्री, लिपिबाहुल्यादि विषयान् अधिकृत्य दिङ्मात्रनिदर्शनं कृतम्। अतः परं पुस्तक विषये किमपि ध्यातव्यं, महत्त्वावहं च लेखनीयमवशिष्यते।

सन्ति केचन पाण्डुलिपिसम्बद्धाः शब्दाः आङ्ग्लभाषायां येषां प्रयोगः गतानुगतिकत्वाद् भारतीयास्वपि भाषासु वयं कर्तुं प्रवृत्ता भवामः। ईदृशा प्रयोगाः प्रायः अज्ञानात्, आलस्यात्, प्रमादाद्वा सम्भवन्ति। यथा पूर्वमेव संकेतितं लेखनकला भारते वर्षे वैदिककालादेव प्रचलिता आसीत्, अत एव पारिभाषिकाः शब्दा अपि संस्कृतभाषायां अतीवप्राचीनकालात् प्रयुक्ताः प्रसिद्धाश्च, यथा Manuscript इति शब्दस्य कृते पुस्तकम्, पुस्तिका, पुस्तम्, पुस्ती, मातृका इति अनेके शब्दाः सन्ति। लिखितं वस्तु (text) ग्रन्थ इति कथ्यते, अत एव ग्रन्थस्य रचयिता ग्रन्थकार इति। यदि ग्रन्थे ग्रन्थकारस्य हस्ताक्षरः वर्तते अथवा ग्रन्थः ग्रन्थकारेण स्वयं लिखितः तदा ग्रन्थकारस्य स्वाक्षर इति कथ्यते। लिपिकारः लेखको वा ग्रन्थस्य अनुकर्त्ता इति। आधुनिके युगे तु लेखकशब्दः ग्रन्थस्य रचयित्रे प्रयुज्यते किन्तु प्राचीने काले लेखकशब्दः लिपिकाराय प्रयुज्यते स्म। इत्थमेव ग्रन्थस्य आदिरूपः आङ्ग्लभाषायां

१२. हयशीर्षपाञ्चरात्रे २.३१.१०
१३. तदेव २.३१.११
१४. उद्धृतः वीरमित्रोदयराजनीतिप्रकाशे, १६१६, पृ० १८२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Archtype संस्कृते प्रत्नरूपः, आदर्शप्रतिः आङ्ग्लभाषायां Exemplar संस्कृते प्रतिरूप इति, मध्यवर्ती प्रतिः आङ्ग्लभाषायां Hyparchtype संस्कृते मध्यवर्ती आदर्शप्रतिः, अन्तर्वर्तिप्रत्नरूपः, मध्यवर्तिप्रत्नरूपो वाभिधीयते। Copies प्रतिलिपिः, Manuscript in hand उपलब्धपुस्तकम् मातृका वा। यस्याः मातृकायाः एका एव प्रतिर्वर्तते सा एकलमातृका, एकमात्रोपलब्धमातृका वा कथ्यते। आङ्ग्लभाषायां Folio संस्कृते पत्र इति, Front side of a folio सम्मुखभाग इति, Reverse side of a folio पृष्ठभाग इति, Colophon पुष्पिका इति Transcription प्रतिवर्णीकरणम्, Collation (यत्र अनेकासु मातृकासु पाठस्य तुलनां कृत्वा आदर्शपाठस्य निर्धारणं भवति तत्) पाठसन्तुलनमिति। Critical apparatus पाठविमर्शः, पाठसमीक्षा, पाठटिप्पणी वा, Critical edition समीक्षात्मकं संस्करणम्, Vulgate edition साधारणं संस्करणम्, Popular edition प्रचलितं संस्करणम्। अत्र Critical edition] Vulgate edition, Popular edition इति शब्दाः मुद्रितपुस्तकानां भेदान् सङ्केतयन्ति किन्तु तेषामपि कृते संस्कृतभाषायाः शब्दाः अतिसरलतया प्रयोगपथमायान्ति।

पाण्डुलिपिः कथं लिख्यते इति जिज्ञासिते चेत् द्विप्रकारक उत्तरो भवति। प्रथमं तावत्, तालपत्रे लौहलेखिन्या, भूर्जपत्रे लेखिन्या अन्येषु च हस्तनिर्मितेषु पत्रेषु मसिलेखिन्या च। द्वितीयं च लेखनशैलीमधिकृत्य किञ्चित् ज्ञातव्यं ध्यातव्यं च भवति। तद्यथा प्रत्येके पृष्ठे उभयेषु पार्श्वेषु समानं स्थानं रिक्तं तिष्ठति। पृष्ठस्य उपरि नीचैश्च समानं स्थानं रिक्तं रक्ष्यते। अनेन शोभनं स्वरूपं तु भवत्येव यदि दुर्घटनावशात् प्रमादाद्वा पृष्ठो भग्नश्चेत् तथापि न भविष्यति लेखस्य कापि हानिः। अपि च लेखनानन्तरं यदि कापि त्रुटिः संशोधनीया भवेत् तस्याः कृते अपि स्थानं स्यात्। पश्यामो वयं यत् लेखकेन यदि कोऽपि शब्दः लेखने विस्मृतः तर्हि स मूलग्रन्थे एकं चिह्न दत्त्वा पृष्ठस्य रिक्तस्थाने तं पूरयति इति। अपि च अनेकेषु ग्रन्थेषु पार्श्वरिक्तस्थाने चित्राङ्कनमपि क्रियते। एतैः चित्रैः ग्रन्थः दर्शनीयतां याति। ईदृशाः ग्रन्थाः इदानीं Illuminated manuscript इति निगदिताः। ईदृशाः ग्रन्थाः बहुमूल्याः भवन्ति विषयेन सहितं कलायै अपि। ईदृश एव सचित्रः 'पार्श्वनाथचरितम्'

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नामकः ग्रन्थः UNESCO नाम्न्या संस्थया World Heritage सम्मानेन सम्मानितः।

एतदपि स्मरणीयं यत् पाण्डुलिपिषु शब्दयोर्मध्ये अवकाशः न भवति। शब्दाः क्रमेण स्थानमपरित्यज्यैव लिख्यन्ते। अत एव पठनसमये द्विप्रकारकी कुशलता अपेक्ष्यते। भाषायाः विषयस्य च ज्ञानेन सह लेखनशैल्याः परिचयोऽपि। उभयोर्विना कोऽपि ग्रन्थं पठितुं समर्थः न स्यात्। पठेश्चेत् अर्थस्य अनर्थो भवेत्। स्मराम्यत्र हिन्दीभाषायाः एकमुदाहरणम्। एकस्मिन् सूचनापट्टे लिखितमासीत् 'सोमवार को दफ्तर बन्दर खा जाता है'। सर्वे जनाः भावयन्ति कथं सोमवासरे वानरः कार्यालयमुदरस्थं करोतीति। ततः केनापि बुद्धिमता उक्तं यत् नास्त्यत्र वानरस्य कोऽपि दोषः अपितु लेखकेन 'बन्द रखा जाता है स्थाने बन्दर खा जाता है' इति लिखितम्। इत्थमेव यदि पाण्डुलिपिं पठतः कस्यापि भाषाज्ञानं सम्यक् न स्यात् तर्हि महाननर्थः भवेत्। ईदृशं लेखनं कथं भवति इति जिज्ञासा चेत् अस्ति तत्र कारणम्। पृष्ठं पूर्णकुम्भवत् पूर्णं स्यादिति मङ्गलाय भवति, आसीद् विश्वासः। अत एव शब्दयोर्मध्ये स्थानं न रक्षितम्। यदि लेखः पृष्ठमध्ये समाप्तः तर्हि पुष्पैः अन्यैर्वा माङ्गलिक–सङ्केतैः रिक्तस्थानं पूर्यते स्म। यदि तालपत्रं भूर्जपत्रं वा कदाचिद् एकस्मिन्नंशे लेखनाय उपयुक्तः न भवति तत्रापि ईदृशमेव अङ्कनं भवति। अनेन प्रकारेण पूर्णकुम्भस्य अवधारणा सर्वत्र अङ्किता भवति। अत्र स्मरणीयं यत् मातृकाणां केवलं पृष्ठस्य गणना संख्या च भवति। अद्यत्वे यथा पृष्ठस्य सम्मुखभागः पृष्ठभागश्च पृथक् गण्यते तथा गणना संख्या वा न भवति।

प्रायः पाण्डुलिपिषु विरामचिह्ननानामपि अभावो दृश्यते। अत एव लोके प्रचलितं यद् भारतवर्षे विरामचिह्ननानि पाश्चात्यदेशेभ्यो आयातितानि। किन्तु भारतीयेषु हस्तलेखेषु कदाचिद् द्विप्रकारकानि विरामचिह्ननानि उपलभ्यन्ते। अर्धविरामाय एकः दण्डः प्रसङ्गसमाप्तौ च द्विदण्डौ। यदा कदा हलन्तचिह्ननवत् विरामचिह्ननमपि पुस्तकेषु दृश्यते। अपि च पङ्क्तिसमाप्तौ यदि शब्दः असमाप्तश्चेत् तर्हि समरेखायां त्रयः बिन्दवः दीयन्ते येन सङ्केतितो भवति यद अपूर्णः शब्दः अग्रिमायां पङ्क्त्यां लिख्यते। अथ पृष्ठस्य मध्ये एकः छिद्रोऽपि

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रायः दृश्यते यस्मात् सूत्रेण पृष्ठाः नियन्त्रिताः क्रियन्ते यथा पूर्वमेव उक्तं 'बध्यं वध्यवदश्लथमिति'।

इदानीं मातृकायाः तिथिः कथं निर्धार्यते इत्यपि विचारणीयम्। प्रायः पुष्पिकायां लेखस्य तिथिः उल्लिखिता भवति। किन्तु एष उल्लेखः सदा सर्वजनबोध्यो न भवति यतो हि तत्र कूटभाषायाः प्रयोगोऽपि दृश्यते। यथा

१. शाके भुजङ्गभुवनाश्वसुधांशुमाने

भुजङ्ग–भुवन–अश्व–सुधांशु = 8771 > 1778 शकसंवत्

२. शाके व्योमबाणोस्त (>०श्व) शुभ्रांशुमाने

व्योम–बाण–अश्व–शुभ्रांशु = 0571 > 1750 शकसंवत्

३. यमबाणाश्वचान्द्रे शाके

यम–बाण–अश्व–चन्द्र = 2571 > 1752 शकसंवत्

४. शसिवसौ ऋतौ चन्द्रे शाके च

शशि–वसु–ऋतु–चन्द्र = 1861 > 1681 शकसंवत्

५. शके वेदविपक्षसिन्धुरजनीनाथाङ्किते

वेद–विपक्ष–सिन्धु–रजनीनाथ = 4671 > 1764 शकसंवत्[13]

कूटभाषां विवृतीकृत्य 'अङ्कस्य वामा गतिः' इति सिद्धान्तस्य प्रयोगो विधेयः। अनेन कालस्य ज्ञानं भवति। अनेकासु मातृकासु कापि सूचना न लिखिता भवति तर्हि अन्यैः अन्तः–साक्ष्यैः बाह्यसाक्ष्यैश्च तस्याः कालं निश्चेतुं यत्नो विधेयः। मातृकासम्बन्धी अन्याः अनेकाः सूचनाः पुष्पिकायामुपलभ्यन्ते यथा ग्रन्थस्य कर्त्ता कः, कः तस्य स्वामी, कुत्र रचितः, कुत्र लिखितः, केन लिखितः, लेखस्य तिथिरित्यादि। किन्तु सर्वत्र सर्वाः सूचना स्युरिति नास्ति नियमः। तस्याभावे पाठकेन शोधकर्त्रा वा यत्नपूर्वकं सूचना प्रापणीया। सन्ति अस्याप्युपायाः किन्तु विस्तरभयात् तेषां चर्चा अत्र न क्रियते।

13. Ratna Basu, Methodology and Sanskritic Researches, p.6

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इदानीं किञ्चित् पाण्डुलिपीनां संरक्षणविषये वक्तुकामास्मि। पाण्डुलिपिविज्ञाने द्विप्रकारकस्य संरक्षणस्य विधानं वर्तते निरोधकं / रोधात्मकं वा संरक्षणं यत् आंग्लभाषायां Preventive Conservation इति कथ्यते, संशोधनात्मकं संरक्षणं Curative Conservation इति च। प्रथमे तावत् मातृकाणां क्षरणं न स्यात् इति यत्नो विधेयः। यथा सम्यक् सम्मार्जनं, सम्यक् बन्धनं, सम्यक् वस्त्रे पुटकीकृत्य स्थापनं च। स्थापनस्यापि सन्ति नियमाः यथा काष्ठपेटिकायां मातृका रक्षणीया नतु लौहपेटिकायां यतो हि लौहपेटिकासु क्षरणस्य अधिकोऽवकाशः वर्त्तते। पुनश्च लघ्वी मातृका उपरि रक्षणीया तस्या अधः ततो वृहती तस्या अधः ततोऽपि वृहती इति। इत्थं क्रमेण रक्षितं चेत् न सीदति पुस्तकम्। संशोधनात्मकाय संरक्षणाय विशेषज्ञानामावश्यकता वर्तते। एतत् संरक्षणं स्वयं न कर्तव्यम्। अप्रशिक्षितेन कृते एतत् पाण्डुलिपीनां विनाशाय भवति।

मुद्राराक्षसे नाटके चाणक्येन उक्तं 'न हि प्रयोजनमनुद्दिश्य मन्दोऽपि प्रवर्तते'। अत एव प्रत्येकस्य कार्यस्य किमपि प्रयोजनमवश्यमेव भाव्यम्। अत्र जिज्ञासा चेत् पाण्डुलिपिविज्ञानस्य उपयोगिता विषये, स्मरणीयमेतद् यत् सन्ति अनेकानि प्रयोजनानि। भारतीया ज्ञानपरम्परा पञ्चसहस्रवर्षेभ्योऽप्यधिका प्राचीना। तत् सर्वं ज्ञानं ग्रन्थेषु लिखितम्। साधारण्येनानुमीयते यद् भारतेवर्षे कोटि संख्यातोऽप्यधिकाः ग्रन्थाः वर्तन्ते। अस्यां, भारतस्य बहिः विदेशेषु वर्त्तमानानां ग्रन्थानां संख्या न गणिता। अनुमीयते यत् तत्रापि षष्टिसहस्रादपि अधिकाः ग्रन्थाः सन्ति। एषा संख्या बहु कालं यावत् ग्रन्थविनाशानन्तरं वर्त्तते। अस्माकमैतिह्यस्य अधिकाधिकं तु नष्टमेव। सन्ति बहूनि कारणान्यस्य।

प्रथमं तावद् अस्माकं देशस्य भौगोलिकी स्थितिः ग्रन्थरक्षणाय अननुकूला वर्त्तते। पाण्डुलिपीनां बहुलांशः ग्रीष्माधिक्येन, शैत्याधिक्येन, वर्षाधिक्येन च विनष्टः। ततः परं सन्ति ऐतिहासिकानि कारणानि। वयं सर्वे जानीमः यत् नालन्दा विश्वविद्यालयस्य पुस्तकालयः षण्मासान् यावत् प्राज्वलत्। नास्त्यत्र अनुमाने कोऽपि कष्टः कीदृशः संग्रहः आसीत् तत्र इति। नालन्दा सदृशाः अनेके अन्ये ग्रन्थागाराः आसन् ये ऐतिहासिकैः कारणैः धूलिसाकृताः। आधुनिके काले अपि ग्रन्थानां प्रायः दुरवस्था एव दरीदृश्यते।

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतस्य स्वाधीनतायाः पूर्वं राजानः राजवंशीयाश्च ग्रन्थसंरक्षणे सन्नद्धाः भवन्ति स्म। एतत् कार्यं पुण्याय मानवर्धनाय चासीत्। अत एव तैः महता यत्नेन ग्रन्थानां संरक्षणं कृतम्। किन्तु स्वतन्त्रतायाः परं राजतन्त्रे समाप्ते लोकतन्त्रे च समागते ग्रन्थानां दुरवस्था जाता। संग्रहालयेषु महान् धनाभावः, प्रशिक्षितानां कार्यकर्तृणामपि अभावः, प्रशासनः एतान् प्रति उपेक्षाभावं भजते। अत एव यथामति यथाशक्ति च ग्रन्थानां रक्षणाय अस्माभिः प्रयतनीयम्।

भारतवर्षस्य परम्परायां ज्ञानस्य सर्वाणि क्षेत्राणि विषयानि च समाविष्टानि। नास्ति लोके कोऽपि विषयः यमाधृत्य अत्रत्याः आचार्याः ग्रन्थरचनां न कृतवन्तः। अस्माकं दौर्भाग्येण बहुलांशः तस्य नष्टः लुप्तो वा। किन्तु यद्वर्त्तते तदपि उपेक्षाकारणाद् विनाशोन्मुखं लक्ष्यते। अधुना अस्ति आवश्यकता अविलम्बेन पाण्डुलिपीनां सम्यक् संरक्षणस्य व्यवस्था भवेद् येन यदवशिष्यते तस्य प्रयोगेण वयं विविधेषु विषयेषु नूतनं किञ्चित् आविष्कर्त्तुं स्थापयितुं समर्थाः भवेम। पाण्डुलिपीनां संरक्षणेन तेषु निहितविषयानां प्रकाशनेन अनेकाः समस्याः समाधानतां यास्यन्ति यथा भारतस्य पूर्वोत्तरप्रान्तस्य सामाजिकी राजनीतिकी च समस्या, भारतस्य जलसंसाधनसमस्या, प्राकृतिकसंसाधनानां संरक्षणस्य तेषां संवर्धनस्य च समस्या इति दिङ्मात्रनिदर्शनम्। पाण्डुलिपीनां संरक्षणाय किं कर्त्तव्यमिति कथं वा कर्त्तव्यमिति इति स्वतन्त्रं निबन्धमपेक्षते। अलमतिविस्तरेण, वर्धतु भारतस्य ज्ञानपरम्परा वयं ज्ञानेन पुनरपि लोके लुप्तं सम्मानं लभामहे इति कामयेऽहम्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नव्यन्यायानुगमशैल्या अनुमानाऽलङ्कारमीमांसा

डॉ. उदयनाथझा 'अशोकः'
वरीयाचार्यः, साहित्यविभागाध्यक्षचरश्च
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, सदाशिवपरिसरः, पुरी

संस्कृतवाङ्मयेऽस्मिन्विराजमानान्निखिलनिगमागमविषयान् सारल्येनान्यूनानतिरिक्ततयोपवर्णयितुं सर्वेषामेव विद्वन्मूर्धन्यानामवच्छेदकावच्छेदेन साहित्यज्ञानमेव मौलिकं भवतीति विदन्त्येव विज्ञाः। साहित्यमिदं संस्कृतवाङ्मये काव्यनाटकछन्दोऽलङ्कारभेदेन प्रायश्चतुर्विधं भवति। तत्रापि गद्यपद्यचम्पूभेदेन काव्यसाहित्यं पुनस्त्रिविधं वर्तते। अलङ्कार–साहित्यन्तावल्लक्षणसाहित्यमिति नाम्ना तत्राऽभिधीयते। लक्षणसाहित्ये तावदुपमाद्यलङ्काराणां तथा ध्वनिरीतिवक्रोक्तिरसादि–सम्प्रदायसिद्धान्तानां विवेचनं तत्तद्ग्रन्थप्रणेतृभिस्साङ्गोपाङ्गं प्रादर्शि। एतादृशलक्षण–साहित्यमधिकृत्यैव महिमभट्टानन्दवर्धनाऽभिनवगुप्ताप्पयदीक्षित–जगन्नाथादिभिः पुम्भावसरस्वतीभिर्विद्वन्मूर्धन्यैः व्यक्तिविवेकध्वन्या–लोकलोचनचित्रमीमांसारसगङ्गाधरादयस्सर्वेऽपि लक्षणग्रन्थाः नव्यन्याय–शास्त्रीयाऽनुगमपद्धत्या एव व्यरचिषत। इदानीन्तनेऽपि काले कृष्णमाधवझा–विरचितेऽलङ्कारविद्योतनाभिधे ग्रन्थे इयमेव सरणिरनुपालि–तेति। न केवलं तावत्। एतेषु लक्षणग्रन्थेषु तत्तदग्रन्थकारैस्तत्तद ग्रन्थस्थविषयाणां प्रतिपादनमपि नव्यन्यायशैल्यैव व्यधायि। जयदेवप्रणीते चन्द्रालोके ग्रन्थकारेणोपमोत्प्रेक्षानन्वयानुमाना–दीनामलङ्काराणां लक्षणानि सामान्यतः प्रत्यपादिषत। विद्यानाथप्रणीते प्रतापरुद्रीयेऽपि शब्दालङ्कारार्था–लङ्कारप्रकरणयोः प्रतापरुद्राख्यं धीरोदात्तमहाराजमुपवर्ण्य तत्सन्दर्भे उपमोत्प्रेक्षारूपककाव्यलिङ्गार्थान्तरन्यासानुमानाद्यलङ्काराणां लक्षणानि सोदाहरणं सरलया शैल्या तेन प्रादर्शिषत।

गच्छतिकाले चन्द्रालोकप्रतापरुद्रीयादिग्रन्थेष्वभिवर्णितानामुपमाद्यलङ्काराणां बहुदोषग्रस्तत्वात्तानि प्रत्याख्याय व्यक्तिविवेकचित्रमीमांसारसगङ्गाधरादिग्रन्थेषु तत्तदग्रन्थकारैरुपमाद्यलङ्कारान्निर्दुष्टलक्षणानि

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नव्यन्यायशास्त्रीयानुगमशैल्या साङ्गोपाङ्गमुपवर्णितानि। तद्यथा–एकोनविंशतिख्रष्टाब्दे लब्धजन्मानो नैकशास्त्रनदीष्णाः महामहिमोपाध्यायाः कृष्णमाधव–झाशर्माणः स्वप्रणीतेऽलङ्कारविद्योतनाख्ये ग्रन्थेऽलङ्कारलक्षण–मुपमाद्यलङ्कारेषु तत्समन्वयञ्च नव्यन्यायशास्त्रीयानुगमशैल्यैव प्रणिन्युः। अयमत्र तेषामाशयः यत्किन्नामालङ्कारत्वमित्याशङ्क्य तैर्ग्रन्थप्रणेतृभिः रसादिव्यंग्यभिन्नत्वे सति समवायसम्बन्धावच्छिन्नचमत्कृतित्वा–वच्छिन्नजन्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नजन्यतावच्छेदकावच्छिन्नजन्यता–निरूपितसमवायसम्बन्धावच्छिन्नज्ञानत्वावच्छिन्नज्ञाननिष्ठजनकतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नजनकतावच्छेदकावच्छिन्नजनकतानिरूपितविषयत्वसम्बन्धावच् छन्नावच्छेदकतानिरूपितावच्छेदकताश्रयत्वमलङ्कारत्वमित्यलङ्कारलक्षणम् प्रकृतस्यालङ्कारलक्षणस्योपमालङ्कारे इत्थं लक्षणसमन्वयः– अत्रोपमालङ्कारे उपमानोपमेयसादृश्यसाधारणवाचकेवशब्दाख्याश्चत्वारो विषया राजन्ते। अत्रोपमालङ्कारे रसरीतिध्वनिवक्रोक्त्यादिसम्प्रदायानां, तथा गुणदोषादीनाञ्चालङ्कारत्ववारणायात्र लक्षणे रसादिव्यंग्यभिन्नत्वे सतीति विशेषणमुपात्तम्। अस्योपमालङ्कारस्य हंसीव कृष्ण ते कीर्तिस्स्वर्गङ्गाम–वगाहते इत्युदाहरणम्। उक्तञ्च चन्द्रालोके–

'उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः।
हंसीव कृष्ण ते कीर्तिस्स्वर्गङ्गामवगाहते।।' इति।

पद्येऽत्र हंसः उपमा, कीर्तिरुपमेयपदार्थः, सादृश्यं तावद्धवलिमा, इवेति वाचकश्शब्दः। अत्रोपमालक्षणे रसव्यंग्यरीतिध्वनिवक्रोक्त्यादि सम्प्रदायानामभावात् समवायसम्बन्धावच्छिन्नचमत्कृतित्वावच्छिन्नचमत्कार–निष्ठजन्यतानिरूपितजनकतावत्त्वस्योपमानोपमेयभावादिविषयत्वावच्छिन्न अवच्छेदकतानिरूपितावच्छेदकत्वस्य च सत्त्वादस्य उपमालक्षणस्य समन्वयस्सुसङ्गच्छते। स्पष्टञ्चेदमलङ्कारविद्योतने।

एतावता प्रबन्धेनालङ्कारशास्त्रे रसगङ्गाधरादिग्रन्थचयसहित–लक्षणग्रन्थानाम्महत्त्वं, तद्ग्रन्थेषु नव्यन्यायशास्त्रीयानुगमशैल्याऽलङ्कार–लक्षणं, तथोपमाद्यलङ्कारेषु तत्समन्वयप्रकारञ्च स्थालीपुलाकन्यायेन दिङ्मात्रमत्र मयान्यूनातिरिक्ततया प्रास्तावि। तत्क्रमे रसगङ्गाधरस्थम–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नुमानालङ्कारसिद्धान्तमहं नव्यन्यायशास्त्रीयानुगमशैल्या यथामति साङ्गोपाङ्गमत्र निबध्नामि। तथा हि रसगङ्गाधरस्थ द्वितीयानने पण्डितराजेनाऽनुमानालङ्कारसिद्धान्तो नव्यन्यायशैल्येत्थमुपवर्णितः– 'अनुमानालङ्कार–निरूपणारम्भं प्रतिजानीते–अनुमितिकरणमनुमानम्। अनुमितिश्चानुमितित्ववती। अनुमितित्वञ्चानुमिनोमीति मानससाक्षा–त्कारसाक्षिको जातिविशेषः। व्याप्तिप्रकारकपक्षधर्मतानिश्चयजन्यज्ञानं वानुमितिः। तस्याश्च करणं व्याप्तिप्रकारकलिङ्गनिश्चय इत्येके। व्याप्यत्वेन निश्चीयमानं लिङ्गमित्यपरे। इदञ्च साधारणमनुमानम्। अस्य च कविप्रतिभोल्लिखितत्वेन चमत्कारित्वे काव्यालङ्कारता' इति।

उक्तानुमानालङ्कारघटकानुमाननिष्ठानुमित्युत्पत्तौ प्रथमं व्याप्तिज्ञानं, ततः पक्षधर्मताज्ञानं, ततः परामर्शस्ततोऽनुमितिश्च क्रमेण जायन्ते। तत्र साध्यव्याप्यो हेतुरिति व्याप्तिज्ञानं भवति। ततो हेतुमान् पक्ष इति पक्षधर्मताज्ञानं भवति। साध्यव्याप्य–हेतुमान् पक्षः इति परामर्शज्ञानम्। पक्षस्साध्यवान्निति अनुमितिरुत्पद्यते। तत्र पक्षस्साध्यवान् इत्याकारकानुमित्युत्पत्तौ परामर्शपक्षधर्मताव्याप्तिज्ञानानि व्युत्क्रमेण कारणानि भवन्ति। यथा पर्वतो वह्निमान् धूमाद्यथा महानसः इत्यादौ प्रथमतो 'वह्निव्याप्यो धूमः' इति व्याप्तिज्ञानं, ततो 'धूमवान् पर्वतः' इत्याकारकपक्षधर्मताज्ञानं, ततो 'वह्निव्याप्य धूमवानयं पर्वतः' इति परामर्शज्ञानं, ततः 'पर्वतो वह्निमान्' इत्याकारिकानुमितिश्चोत्पद्यते। अत्रापि पर्वतो वह्निमान्धूमात् इत्याकार–कानुमितिरूपकार्यं प्रति पूर्वोक्तपरामर्शपक्षधर्मताव्याप्तिज्ञानानि व्युत्क्रमेण कारणानि भवन्ति। रसगङ्गाधरस्थानुमानालङ्कार–घटकानुमानलक्षणस्य 'पर्वतो वह्निमान्धूमात्' इत्यत्र लक्षणसमन्वयश्चेत्थम्–अनुमितेः करणमनुमितिकरणम्। अनुमितेरित्यत्रानुमितिपदोत्तरनिष्ठषष्ठ्याः जनकत्वमर्थः। जनकत्वञ्च जन्यतानिरूपितजनकताश्रयत्वम्। अनुमितेर्जन्यतायां निष्ठत्व–सम्बन्धेनान्वयः। अनुमितिनिष्ठजन्यतायाः निरूपितत्वसम्बन्धेन जनकतायामन्वयः। तादृश जनकतायाः आश्रयत्वसम्बन्धेन जनकताश्रयेऽन्वयः। तथा चानुमितिनिष्ठजन्यतानिरूपित–जनकताश्रयत्वमित्यर्थो लभ्यते। करणत्वञ्चाऽसाधारणकारणत्वम्। तत्रादौ कारणं द्विविधम्साधारणमसाधारणञ्चेति। कार्यत्वावच्छिन्नकार्यता–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निरूपितकारणताश्रयत्वं साधारणकारणस्य लक्षणम्। कार्यत्वातिरिक्तधर्मावच्छिन्नकार्यतानिरूपितकारणताश्रयत्वमसाधारणकारणस्य लक्षणम्। तथा चात्र अनुमितित्वावच्छिन्नकार्यतानिरूपितकारणताश्रयत्वमनुमानलक्षणं फलति। प्रकृतानुमानलक्षणस्य 'पर्वतो वह्निमान्धूमात्' इत्यत्रेत्थं लक्षणसमन्वयः– अनुमितिः पर्वतो वह्निमान् इत्याकारिकानुमितिः। तादृशानुमितित्वावच्छिन्ना या कार्यतेत्युक्ते 'पर्वतो वह्निमान्' इत्याकारकानुमितिनिष्ठा कार्यता। तादृशानुमितिनिष्ठकार्यता– निरूपिता या कारणता। पर्वतो वह्निमान्धूमाद्यथा महानसः इत्याकारकानुमाननिष्ठा कारणता। तदाश्रयत्वं 'पर्वतो वह्निमान्धूमाद्यथा महानसः' इत्याकारकानुमाने वर्तत इति। स्पष्टञ्चैतद् अन्नम्भट्टगोवर्धन–पण्डिताभ्यामनुमानपरिच्छेदे तर्कसंग्रहन्यायबोधनीग्रन्थयोः।

एतावता प्रबन्धेन रसगङ्गाधरस्थानुमानालङ्कारलक्षणं तत्समन्वयञ्च नव्यन्यायशास्त्रीयानुगमशैल्या पर्यशोधयम्। अत्रानुमानालङ्कारघटकव्याप्तिस्वरूपज्ञानमन्तरानुमानलक्षणसिद्धान्तस्य लेशतोऽपि ज्ञातुमशक्यत्वेन प्रकृतानुमानलक्षणघटकव्याप्तिस्वरूपस्याप्यवश्यं ज्ञातव्यत्वेन व्याप्तिस्वरूप–प्रबोधकं पूर्वपक्षव्याप्तिसिद्धान्तव्याप्तिलक्षणद्वयमप्यन्यूनानतिरिक्ततया यथाशक्ति साङ्गोपाङ्गमत्र निबध्नामि। तथा हि– 'अनुमानमप्रमाणं प्रमाणान्तराभावादित्याकारकचार्वाकमतखण्डनायानुमानं प्रमाणम्, प्रमितिकरणतावच्छेदकधमत्त्वात्' इत्यनुमानेन प्रत्यक्षादीनामिवानुमानस्यापि प्रामाण्यं साधितमाचार्यगङ्गेशोपाध्यायेन। तत्प्रसङ्गे अनुमितिहेतुभूतव्याप्ति–पदार्थज्ञानस्याऽप्यत्यावश्यकत्वेन व्याप्तिपदार्थनिरूपणाङ्गभूततया पूर्वपक्षसिद्धान्तभेदेन व्याप्तिद्वयं तेन प्रास्तावि। तत्रादौ पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षण–प्रणयनावसरे गङ्गेशेन पूर्वपक्षव्याप्तेः पञ्चलक्षणानि जाग्रन्थि। इदं हि तत्रत्यः मणिग्रन्थः– 'नन्वनुमितिहेतुभूतव्याप्तिज्ञाने का व्याप्तिः? न तावदव्यभिचरितत्वम्। तद्धि न साध्याभाववदवृत्तित्वमथवा न साध्यविदिभन्न–साध्याभाववदवृत्तित्वमथवा न साध्यवत्प्रतियोगिकान्योन्याभावासा–मानाधिकरण्यमथवा सकलसाध्याभाववन्निष्ठाभावप्रतियोगित्वमथवा साध्यवदन्यावृत्तित्वं वा यन्न भवति तदेवाव्यभिचरितत्वरूपा व्याप्तिः' इति। अत्र पञ्चानां पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणनिरूपणे तत्समन्वये चाऽत्र

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विस्तरभयात्प्रथमपूर्वपक्ष व्याप्तिलक्षणमेवाऽन्यूनातिरिक्ततया निबध्नामि। तथा हि मणिग्रन्थेसाध्याभाववदवृत्तित्वमिति प्रथमं पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणम्। 'पर्वतो वह्निमान्धूमात्' इत्यत्राऽस्य लक्षणस्येत्थं लक्षणसमन्वयः–प्रकृतानुमाने पक्षः पर्वतः, साध्यो वह्निः, धूमश्च हेतुः। अत्र साध्यो वह्निः, क्रमशस्साध्याभावो वह्न्यभावः। तदधिकरणं जलह्रदादिः। तद्वृत्तित्वं मीनशैवालादावृत्तित्वं धूमे वर्तत इति।

धूमवान् वह्नेरित्यत्र साध्यो धूमः। तदभावो धूमाभावस्तदधिकरणमग्नौ तप्तमयः पिण्डम्। तद्वृत्तित्वमेव वह्नौ वर्तते। वृत्तित्वाभावस्य वह्नौ नास्ति। एवञ्च प्रकृतानुमानस्थले धूमसमानाधिकरणात्यन्ताभावनिष्ठाधेयता–निरूपिताधिकरणताश्रयवृत्तित्वस्यैव वह्नौ सत्त्वेन, वृत्तित्वाभावस्य चाभावेनैतादृशपूर्वपक्षव्याप्तिप्रथमलक्षणस्य धूमवान् वह्नेरित्यत्र नातिव्याप्तिः।

साध्याभाववदवृत्तित्वमित्याकारकलक्षणस्य साध्याभावाधिकरण–निरूपितवृत्तित्वाभाव इति फलितोऽर्थः। तल्लक्षणे साध्याभाव इत्यस्य साध्यस्याभावस्साध्याभाव इति षष्ठीतत्पुरुषः। तत्र साध्यपदस्य साध्यमर्थः। तत्पदोत्तरषष्ठ्याः प्रतियोगित्वमर्थः। साध्यस्य प्रतियोगितायान्निष्ठत्व–सम्बन्धेनान्वयः। तादृशप्रतियोगितायाः निरूपकत्वसम्बन्धेनात्यन्ता–भावेऽन्वयः। तादृशात्यन्ताभावस्य निष्ठत्वसम्बन्धेनाधेयतायामन्वयः। तादृशात्यन्ताभावनिष्ठाधेयतायाः निरूपितत्व–सम्बन्धेनाधिकरणतायामन्वयः। तादृशाधिकरणतायाः आश्रयत्वसम्बन्धेन वृत्तित्वेऽन्वयः। तादृशवृत्तित्वस्य वृत्तित्वावच्छिन्नत्वसम्बन्धेन वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितायामन्वयः। तादृश वृत्तित्वावच्छिन्नवृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितायाः निरूपकत्वसम्बन्धेना–त्यन्ताभावेऽन्वयः। तथा च साध्याभाववदवृत्तित्वमित्याकारकवाक्यात् साध्यनिष्ठप्रतियोगितानिरूपकात्यन्ताभावनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरण ताश्रयवृत्तिनिष्ठत्वसम्बन्धावच्छिन्न वृत्तित्वावच्छिन्न वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगिता निरूपकात्यन्ताभाव इति प्रथमपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणं फलति। पूर्वोक्तलक्षणे वृत्तित्वाभाव इति पदस्य वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितानिरूपकोऽभाव इत्यर्थः। वृत्तित्वसामान्याभावस्य वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितायामग्रहणे धूमवान् वह्नेरित्यत्र धूमाभावाधिकरणनिरूपित जलह्रदादि निरूपितवृत्तित्वस्य तथा तादृशधूमसमानाधिकरणात्यन्ताभावाधिकरणनिरूपितवृत्तित्वजलत्वैतदुभयधर्मा

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वच्छिन्नप्रतियोगिताकाभावस्य वह्नावपि सत्त्वेनाव्याप्तिः प्रसज्यते। अतो 'धूमवान् वह्नेः' इत्यत्र पूर्वोक्तप्रकारद्वयेन प्रसक्ताव्याप्तिवारणाय पूर्वोक्तपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणघटक वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितायां वृत्तित्वसामान्या भावो निवेशनीयः। तन्निवेशे तु धूमवान् वह्नेरित्यत्र धूमाभाववज्जलह्रदादि निरूपितवृत्तित्वाभावमादाय, धूमसमानाधिकरणात्यन्ता भाववदवृत्तित्वजलत्वैत दुभयधर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभावमादाय वा प्रसक्ताव्याप्तिर्वार्यते। यतो हि धूमवान् वह्नेरित्यत्र धूमसमानाधिकरणात्यन्ताभावनिष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणतावन्निरूपितवृत्तित्वस्यैव वह्नौ सत्त्वेन निरुक्तवृत्तित्व-सामान्याभावस्य चासत्वात्पूर्वोक्तस्थले नाव्याप्तिः। एवञ्च धूमवान् वह्नेरित्यत्र पूर्वोक्तप्रकारद्वयेन प्रसक्ताव्याप्तिवारणाय वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगिता यां वृत्तित्वसामान्याभाव निवेशात्साध्यनिष्ठप्रतियोगिता निरूपकात्यन्ताभाव-निष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणताश्रयवृत्तित्वेतरधर्मावच्छिन्न वृत्तित्वा-वच्छिन्नप्रतियोगितानिरूपकात्यन्ताभावो व्याप्तिरिति प्रथम पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणं फलति ।

नन्वेवमेतल्लक्षणस्यापि वह्निसामानाधिकरणात्यन्ताभावाधिकरण वृत्तिसमवायसम्बन्धावच्छिन्नधूमावयवनिरूपित वृत्तित्वमादाय तथा कालिकसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकवह्न्यभावाधिकरणनिरूपितवृत्तित्वमादा यपर्वतोवह्निमान् धूमादित्यत्र प्रसक्ताव्याप्तिवारणाय पूर्वोक्तपूर्वपक्ष व्याप्तिलक्षणघटकसाध्याभावाधिकरणनिरूपितवृत्तितायां हेतुतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नत्वमिति विशेषणं निवेशनीयम्। तन्निवेशे तु साध्याभावाधिकरणनिरूपितहेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नवृत्तित्वावच्छिन्न-प्रतियोगितानिरूपकवृत्तित्वसामान्याभावो व्याप्तिरिति पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणं फलति। एतल्लक्षणस्वीकारे तु संयोगसम्बन्धा वच्छिन्नधूमावयव-निरूपितवृत्तित्वस्यैव तथा जलह्रदादिनिरूपितसंयोग सम्बन्धावच्छिन्नवृत्ति-त्वावच्छिन्नाभावीयप्रतियोगितावन्निरूपितवृत्तित्वस्यैव च धूमे सत्त्वेन, वृत्तित्वसामान्याभावस्य चाभावेन 'पर्वतो वह्निमान् धूमाद्' इत्यत्र पूर्वोक्तप्रकारद्वयप्राप्ताव्याप्तिर्वार्यते।

नन्वेवमपि पूर्वोक्तप्रथमपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणस्य 'पर्वतो वह्मिमान्धूमात्' इत्यत्र पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। तथाहि– अत्र लक्षणे साध्याभावपदेन

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

केवलसाध्यन्निष्ठप्रतियोगितानिरूपकसाध्याभावस्य ग्रहणे तादृशसाध्या भावपदेन पर्वते समवायेन वह्निर्नास्तीत्यकारक प्रतीतिसिद्धसमवायसम्बन्धा वच्छिन्नपर्वतीयवह्न्यभावस्य तथा संयोगसम्बन्धा वच्छिन्नतत्तद्वह्नित्व घटत्वैतदुभयधर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकतत्तद्वह्निघटोभया भावस्य च ग्रहीतुं शक्यत्वेन तादृशवह्निघटोभया भावाधिकरणनिरूपित वृत्तित्वस्यैव धूमे सत्त्वेन वृत्तित्वाभावस्य चासत्त्वेनैतादृशपूर्व पक्षीयव्याप्तिलक्षणस्य पुनः 'पर्वते वह्निमान्धूमाद्' इत्यत्राव्याप्तिस्स्यात्।

अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणघटक साध्यनिष्ठ–प्रतियोगितायां साध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नत्वमिति विशेषणं निवेशनीयम्। दत्ते च तादृग्विशेषणे साध्यतावच्छेदकसम्बन्धा वच्छिन्नसाध्यनिष्ठप्रतियोगिता निरूपकात्यन्ताभावनिष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणतावन्निरूपितहेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्न हेतु निष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणतावन्निरूपितवृत्तित्वावच्छिन्नप्रतियोगिता निरूपकात्यन्ता भावो व्याप्तिरिति तल्लक्षणं फलति। एतल्लक्षणस्वीकारे पर्वतो वह्निमान् धूमादित्यत्र साध्याभावपदेन समवायसम्बन्धावच्छिन्नवह्नित्वावच्छिन्न वह्निनिष्ठप्रतियोगिता निरूपकवह्न्यभावस्य तथा संयोगसम्बन्धावच्छिन्न तत्तद्वह्नित्वघटत्वोभयधर्मावच्छिन्नप्रतियोगितानिरूपकतत्तद्वह्नि घटोभयाभावस्य चाग्रहणात् संयोगसम्बन्धावच्छिन्नतत्तद्वह्नित्व घटत्वैतदुभयधर्मावच्छिन्न प्रतियोगिता कतत्तद्वह्निघटोभयाभावस्य चाग्रहणात् संयोगसम्बन्धावच्छिन्नवह्नित्वावच्छिन्नवह्नित्वेन वह्निर्नास्ति इत्याकारक वह्न्यभावस्यैव ग्रहणाच्च तादृशवह्न्यभावाधिकरणनिरूपित वृत्तित्वस्य जलह्रदादौ तादृश वह्न्यभावाधिकरणनिरूपित वृत्तित्वाभावस्य च धूमेसत्त्वात् पूर्वोक्तपूर्वपक्षव्याप्ति–लक्षणस्य पर्वतो वह्निमान् धूमादित्यत्र पूर्वोक्तप्रकारद्वयेन प्रसक्ताव्याप्तिर्वार्यते।

नन्वेवमेता दृशपरिष्कृतपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणस्यापि तत्तद्वह्न्यभावमादाय पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्र पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। तथाहि– साध्यं वह्निः, साध्याभाव इत्युक्ते पर्वते महानसीयवह्निनर्नास्तीत्यकारकप्रतीतिसिद्धो महानसीयवह्न्यभावः स्वीक्रियते। तादृशमहानसीयवह्न्यभावाधिकरण निरूपितवृत्तित्वस्यैव पर्वते सत्त्वेन वृत्तित्वसामान्याभावस्य चासत्त्वेनोक्तपूर्व–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पक्षव्याप्तिलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्राव्याप्तिस्स्यात्।

अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तप्रथमपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षण घटकसाध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नसाध्यनिष्ठप्रतियोगितायां साध्यतावच्छेदकावच्छिन्नत्वमिति विशेषणं निवेशनीयम्। दत्ते च तादृग्विशेषणे पूर्वोक्तपूर्वपक्षव्याप्तिघटकसाध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नसाध्यतावच्छेदकावच्छिन्नसाध्यनिष्ठप्रतियोगिताकसाध्याभावपदेन पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्र पर्वते संयोग-सम्बन्धेन वह्निर्नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धसंयोगसम्बन्धावच्छिन्नपर्वतीयवह्न्यभावस्यैव ग्रहणीयत्वेन चत्वरमहानसीय गोष्ठीयतद्वह्न्यभावस्य चाग्रहणान्निरुक्त दिशाव्याप्तिर्वार्यते। एवमेतादृशपूर्वपक्षीय व्याप्तिलक्षणस्याव्याप्यवृत्तिकसाध्यस्थले अयं वृक्षः कपिसंयोगी एतद्वृक्षत्वाद् इत्यत्र एकत्रैव वृक्षे स्थलभेदेन कपिसंयोगकपिसंयोगाभावयोस्सत्त्वेन तादृशवृक्ष समानाधिकरणकपि संयोगाभावाधिकरण निरूपितवृत्तित्वस्यैव वृक्षे तदभावस्य अग्रावच्छेदेन वृक्षाग्रभागेऽभावेन चाव्याप्तिः प्रसज्येत। अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तपूर्वपक्ष व्याप्तिलक्षणघटकाभावे प्रतियोगिवैयधिकरण्यं निवेशनीयम्। दत्ते च तादृक्प्रतियोगिवैयधिकरण विशेषणे साध्यनिष्ठ प्रतियोगिताकाभावपदेन प्रतियोगिवैयधिकरण्याभावस्यैव धर्तव्यत्वेन प्रतियोगिसमानाधिकरणकपि संयोगाभावस्यग्रहणात्पूर्वोक्तपूर्व पक्षव्याप्तिलक्षणस्य अयं वृक्षः कपिसंयोग्येतद्वृक्षत्वादित्याकारका-व्याप्यवृत्तिसाधक स्थले अव्याप्तिर्वार्यते। निष्कर्षे तु साध्यतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्न साध्यतावच्छेदकावच्छिन्नसाध्यनिष्ठ-प्रतियोगितावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगितावच्छेदका वच्छिन्नसाध्यनिष्ठ प्रतियोगिता निरूपकव्यधिकरणधर्मावच्छिन्नात्यन्ताभावनिष्ठस्वरूप सम्बन्धा-वच्छिन्नाधेयतानिरूपिताधिकरणतावद्वृत्तिहेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नहेतुतावच्छेदकावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणतावन्निरूपितवृत्तित्वावच्छिन्न वृत्तित्वनिष्ठप्रतियोगितानिरूपकात्यन्ताभावः प्रथमपूर्वपक्षव्याप्ति-लक्षणं फलति। इङ्गितञ्चैतोर्वर्धनपण्डितेन तर्क संग्रहव्याख्यायां न्यायबोधिन्याम्।

यद्यपि व्याप्तिपदार्थविवरणावसरे गङ्गेशोपाध्यायेन मणिग्रन्थे न तावदव्यभिचरितत्वम्, तद्धि न साध्याभाववद्वृत्तित्वमथवा न

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साध्यवद्भिन्नसाध्याभाववदवृत्तित्वमथवा न साध्यवत्प्रतियोगिकान्योन्याभावा समानाधिकरण्यमथवा सकलसाध्या—भाववन्निष्ठाभावप्रतियोगित्वमथवा साध्यवदन्यावृत्तित्वं वा यन्न भवति तदेवाव्यभिचरितत्वरूपा व्याप्तिः इत्याकारकग्रन्थमुखेन पञ्चपूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणानि पूर्वपक्षग्रन्थोपष्टम्भकमुखेन प्रण्यनायिषत। तमेव तत्त्वचिन्तामणिमाधारींत्य गङ्गेशादर्वाचीना यज्ञपत्युपाध्यायपक्षधरमिश्रवासुदेवसार्वभौमरघुनाथशिरोमण्यादयो नैके नैयायिकमूर्धन्यास्स्वस्वप्रणीतग्रन्थेषु नैकानि पूर्वपक्ष—व्याप्तिलक्षणानि व्यरचयन्। परन्तु तेषां सर्वेषां पूर्वपक्षव्याप्तिलक्षणाना 'मिदं वाच्यं ज्ञेयत्वात्', 'सर्वमभिधेयं प्रमेयत्वात्' इत्यादावप्रसिद्धप्रतियोगिताकवाच्यत्व प्रमेयत्वाभावयोरप्य प्रसिद्धत्वेनासम्भवदोषग्रस्तत्वादपि च वह्निनत्वेन घटो नास्तीत्याकारकप्रतीति सिद्धव्यधिकरणधर्मा वच्छिन्न प्रतियोगिताकाभावस्य सर्वतन्त्रसिद्धान्त विरुद्धत्वाच्चौतत्सर्वं निर्मूलीकृत्य गङ्गेशोपाध्यायः सूत्रप्रायं व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणं परिष्कृतवान्। 'अत्रोच्यते—प्रतियोगिसमानाधिकरणं यत्समानाधिकरणं प्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नं यन्न भवति तेन समं तस्य व्याप्ति' रिति। इदमेव व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणं कारिकावलीकारः स्वविरचितायां कारिकावल्यामथवा हेतुमन्निष्ठविरहाप्रतियोगिनः इति कारिकामुखेन सूक्ष्मतया परिष्कृतवान्। अतो हि मणिकारिकावलीग्रन्थाभ्यां हेतु व्यापक साध्य सामानाधिकरण्यं व्याप्तिरिति फलति।

हेतुव्यापकसाध्यसमानाधिकरण्य सिद्धान्तव्याप्तिलक्षणेऽत्र एतल्लक्षण—घटकव्यापकत्वञ्च स्वसमानाधिकरणात्यन्ताभावाप्रतियोगित्वम्। तथा च हेतुव्यापक साध्यसामानाधिकरणमित्याकारकवाक्यात् हेतु निष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणताश्रयवृत्त्यत्यन्ताभावा प्रतियोगिसाध्य निष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणताश्रयत्वं सिद्धान्तव्याप्तिलक्षणं फलति। एतस्य सिद्धान्तव्याप्तिलक्षणस्य 'पर्वतो वह्निमान्धूमात्' इत्येत्थं लक्षणसमन्वयः— अत्रैतत्सिद्धान्तव्याप्तिलक्षणघटकहेतुपदेन धूमः स्वीकार्यः। तादृशहेत्वधिकरणं पर्वतः। तद्वृत्तिर्योऽत्यन्ताभावः इत्युक्ते संयोगसम्बन्धेन पर्वतीयवह्निः पर्वते नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धः पर्वतीयवह्न्यभावो नैव समायाति। अपितु पर्वते घटो नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धो घटाभावस्समायाति। तादृशघटाभावीय प्रतियोगितावच्छेदकं घटत्वम्। तत्प्रतियोगितानवच्छेदकं वह्नित्वम्,

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तदवच्छिन्नो वह्निः, तदधिकरणं पर्वतः, तदवृत्तित्वं धूमे वर्तत इति।

'धूमवान् वह्नेः' इत्यादौ धूम समानाधिकरणात्यन्ताभावाऽप्रतियोगित्वस्यैव वह्नै सत्त्वेन प्रतियोगितानवच्छेदक–साध्यसामानाधिकरण्यस्य पर्वतादावसत्वेन पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य धूमवान् वह्नेरित्यत्र नातिव्याप्तिः। अत्रैतत्सिद्धान्त–व्याप्तिलक्षण घटकहेतु निष्ठाधेयताया हेतुतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नत्वमिति विशेषणन्निवेशनीयम्। अन्यथा समवायेन पर्वतो वह्निमान्धूमावयवादित्यत्र समवाय सम्बन्धावच्छिन्नधूम निष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणता वदवृत्तिघटात्यन्ताभावीयप्रति–योगितानवच्छेदकावच्छिन्नसाध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमावयवे सत्त्वात् पूर्वोक्तव्याप्ति सिद्धान्तलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्राव्याप्तिः। अतस्तद्वारणायैतल्लक्षण घटकहेतुनिष्ठाधेयतायां हेतुतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नत्वविशेषण दानात्पर्वतो वह्निमान्धूमाद् इत्यत्र हेतुतावच्छेदक संयोगसम्बन्धा वच्छिन्नवह्नित्वा वच्छिन्न वह्नि निष्ठ वह्निर्नास्तीत्याकारक प्रतीतिसिद्धवह्न्यभावस्य धर्तुमशक्यत्वेन घटाभावस्यैव स्वीकर्तव्यतया तादृशघटाभावीयप्रतियोगितानवच्छेदकवावच्छिन्नसाध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमे सत्त्वान्नाव्याप्तिः।

नन्वेवमपि पूर्वोक्तसिद्धान्तव्याप्तिलक्षणघटकहेतुनिष्ठाधेयतायां हेतुतावच्छेदकत्वानिवेशे पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्र कालिक सम्बन्धावच्छिन्न पर्वतीयवहन्य भावाधिकरण निरूपितवृत्तित्वस्य जले सत्त्वेन तत्प्रतियोगितानवच्छेदकावच्छिन्नसाध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमेऽसत्त्वेन पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तसिद्धान्तव्याप्तिलक्षण–घटक–हेतुनिष्ठाधेयतायां हेतुतावच्छेदकावच्छिन्नत्वमिति विशेषणं निवेशनीयम्। तन्निवेशे तु हेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नहेतुतावच्छेदकावच्छिन्न–हेतु–निष्ठाधेयता–निरूपिताधिकरणतावद्वृत्यन्ताभावीय–प्रतियोगितानवच्छेदकं यत्साध्यतावच्छेदकं तदवच्छिन्नसाध्य सामानाधिकरण्यं व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणं फलति। एतल्लक्षणस्वीकारात्तत्रापि हेतुतावच्छेदक–सम्बन्धावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयतायां हेतुतावच्छेदकावच्छिन्नत्वविशेषणदानात् पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्र कालिकसम्बन्धावच्छिन्नवह्निनिष्ठात्यन्ताभावीय–प्रतियोगितानवच्छेदकसाध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमे सत्त्वेन पर्वतो वह्निमान्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धूमादित्यत्र नाव्याप्तिः।

पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणघटकाभावे प्रतियोगिवैयधिकरण्यानिवेशे–अयं वृक्षः कपिसंयोगी एतद्वृक्षत्वादित्यत्रा–व्याप्यवृत्तिकसाध्यस्थले अग्रे वृक्षः कपिसंयोगी, मूलेनेत्याकारकप्रतीत्यैकस्मिन्नेव वृक्षे कपिसंयोगतदभावयोरेकाधिकरण–वृत्तित्वेन पूर्वोक्तहेतुतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नहेतु तावच्छेदका वच्छिन्नहेतु निष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणता वृत्तिकपिसंयोगा–भावाख्यप्रतियोगिसमानाधिकरणात्यन्ताभावीयप्रतियोगिवच्छेदकत्वस्यैव वृक्षे सत्त्वेन तदनवच्छेदकत्वस्य चाभावेन च पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्त लक्षणस्याव्याप्यवृत्तिसाध्यकस्थले अयं वृक्षः कपिसंयोगी एतदवृक्षत्वादित्यत्राव्याप्तिः प्रसज्यते। अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्त–व्याप्तिसिद्धान्त–लक्षणघटकाभावे प्रतियोगिवैयधिकरण्यमिति विशेषणन्निवेशनीयम्। दत्ते च तादृग्विशेषणे पूर्वोक्तव्याप्तिलक्षणघटकाभावपदेन प्रतियोगिव्यधिकरणाभावस्यैव स्वीकर्त्तव्यतया तादृशव्यधिकरणधर्मावच्छिन्नकपिसंयोगाभावस्य पूर्वोक्ता–व्याप्यवृत्तिकसाध्यस्थले अयं वृक्षः कपिसंयोगी एतदवृक्षत्वादित्यत्राभावेन घटाभावीय प्रतियोगितानवच्छेदक साध्यसामानाधिकरण्यस्य पूर्वोक्ताव्याप्य–वृत्तिकस्थले नाव्याप्तिर्लक्षणसमन्वयश्च।

नन्वेवमेतादृशसिद्धान्तव्याप्तिलक्षणस्यापि पर्वतो वह्निमान् धूमात् इत्याकारक सद्धेतुस्थले पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। तथाहि–हेतुतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नहेतुतावच्छेदकावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणतावद् वृत्तिप्रतियोगिव्यधिकरणो योऽत्यन्ताभाव इत्युक्ते पर्वते महानसीय वह्निर्नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धो महानसीयवह्न्यभावोऽत्र स्वीक्रियते तादृश महानसीय वह्न्यभावीयप्रतियोगितानवच्छेदकसाध्यतावच्छेदकवह्नित्वा वच्छिन्नवह्निसामानाधिकरण्यस्य पर्वतेऽभावादुक्तदिशा पर्वतो वह्निमान् धूमादित्यत्र पुनरव्याप्तिः।

अतस्तद्दोषवारणाय पूर्वोक्त लक्षण घटक तादृश महानसीय वह्न्य भावाय्प्रतियोगितायां साध्यतावच्छेदकतादितरोभयधर्मानवच्छिन्नत्वन्निवेशनीयम्। दत्ते च तादृग्विशेषणे महानसीयवह्न्य–भावीयप्रतियोगितायां साध्यतावच्छेदकवह्नित्वमहानसीयत्वोभयधर्मावच्छिन्नत्वस्यैव सत्त्वेन तदनवच्छिन्नत्वस्य चाभावेन पूर्वोक्त व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान्

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धूमादित्यत्र नाव्याप्तिः।

नन्वेवमपि पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान्धूमादित्याकारकसद्धेतुस्थले पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। तथाहि हेतुतावच्छेदक–सम्बन्धावच्छिन्न हेतुतावच्छेदकावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणतावद्वृत्तिप्रतियोगिव्यधिकरणात्यन्ताभावपदेन वह्निघटोभयाभावस्वीकारे तादृशवह्नि घटोभयाभावीय प्रतियोगितावच्छेदकस्यैव धूमाधिकरणे पर्वते सत्त्वेन प्रतियोगितानवच्छेदकत्वस्याभावेन पूर्वोक्ततादृश हेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नहेतुतावच्छेदकावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणतावदवृत्तिप्रतियोगिवैयधिकरण्यावच्छिन्नाभावीयप्रतियोगितानवच्छेदकसाध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमेऽसत्त्वादुक्तदिशा पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य पुनः पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्राव्याप्तिः प्रसज्यते। अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तव्याप्तिलक्षणघटकाभावीयप्रतियोगितायां प्रतियोग्यधिकरणावृत्तित्वमिति विशेषणं निवेशनीयम्। दत्ते च तादृग्विशेषणे पूर्वोक्तस्थले पूर्वोक्त–वह्निघटोभयाभावीयप्रतियोगित्वस्यैव वह्निघटद्वये सत्त्वेन तादृशपूर्वोक्त वह्निघटोभयाभावीयप्रतियोगिता नवच्छेदक–साध्यसामानाधिकरण्यस्य धूमेऽभावादुक्त व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान् धूमादित्याकारकसद्धेतुस्थले नाव्याप्तिः। तथा च प्रकृतव्याप्तिसिद्धान्त–लक्षणप्रकारश्चेत्थम्–हेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्न–हेतुतावच्छेदकावच्छिन्न–हेतुनिष्ठाधेयता–निरूपिताधिकरणतावदवृत्ति–प्रतियोगितावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्न–प्रतियोग्यधिकरणा–वृत्तिव्यधिकरण–धर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकात्यन्ताभावीय–प्रतियोगितानवच्छेदकं यत्साध्यतावच्छेदकं तद्वच्छिन्नसाध्यसामानाधिकरण्यं व्याप्तिरिति।

नन्वेवमपि पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणघटकद्वितीयविशेषणान्तर्गतसाध्यनिष्ठाधेयतायां साध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नत्वमित्याकारकविशेषणदलानुपादाने कालिकसम्बन्धावच्छिन्नवह्निनिष्ठ प्रतियोगिताकवह्न्यभावीयप्रतियोगितावच्छेदकवह्नित्वस्यैव वह्नित्वे सत्त्वेन तादृशवह्निरूपसाध्याधिकरणे पर्वते धूमेऽभावेनैतल्लक्षणस्य पर्वतो वह्निमान् धूमादित्याकारकसद्धेतुस्थले पुनरव्याप्तिः प्रसज्यते। अतस्तद्वारणाय पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणघटकद्वितीयविशेषणान्तर्गतसाध्यनिष्ठ–

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रतियोगितायां साध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नत्वमिति विशेषणन्निवेशनीयम्। दत्ते च तद्विशेषणे पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यादौ पर्वते कालिकसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकवह्न्यभावस्य, तादृशवह्न्यभावीय–प्रतियोगितावच्छेदकस्य च सत्त्वेऽपि साध्यतावच्छेदकसंयोगसम्बन्धावच्छिन्न–वह्न्यभावस्याभावेन तादृशसंयोगसम्बन्धावच्छिन्नवह्न्यभावीय–प्रतियोगितानवच्छेदकसाध्यसामानाधिकरण्यस्य वह्न्यधिकरणे पर्वतादौ सत्त्वेनोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्य पर्वतो वह्निमान्धूमादित्यत्राव्याप्तिर्वार्यते।

एवं पूर्वोक्तव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणघटकपूर्वोक्त तादृशसाध्यनिष्ठाधेयतायां साध्यतावच्छेदकावच्छिन्नत्वमिति विशेषणदानेन वह्निघटोभयाभावमादाय प्रसक्ताव्याप्तिर्वार्यते। तथा च हेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नहेतुतावच्छेदकावच्छिन्न–हेतुनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणतावदवृत्तिप्रतियोग्यधिकरण–वृत्ति–प्रतियोग्यधियधिकरणात्यन्ताभावीयप्रतियोगितानवच्छेदक–साध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नसाध्यतावच्छेदकावच्छिन्नसाध्यनिष्ठाधेयतानिरूपिताधिकरणताश्रयत्वं व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणं फलति।

नन्वेवमप्येतादृशव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणस्यापि कालो घटवान् कालपरिमाणवत्वात् इत्यत्राव्याप्तिः प्रसज्यते। तथाहि–यादृश प्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नानधिकरणं हेत्वधिकरणं तादृशप्रतियोग्यधिकरणावृत्त्यन्ताभावीयप्रतियोगितानवच्छेदकं यत्साध्यतावच्छेदकं तदवच्छिन्न–साध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नसाध्यतावच्छेदकावच्छिन्न–साध्यनिष्ठाधेयता–निरूपिताधिकरणतावदवृत्तित्वं व्याप्तिरिति व्याप्ति–सिद्धान्तस्वीकारे 'कालो घटवान् कालपरिमाणवत्त्वात्' इत्यत्र सर्वाधारः कालः इति प्रतीत्या कालस्य सर्वाधारत्वेन तादृशकालिकसम्बन्धा वच्छिन्नवह्न्यभावायप्रतियोगितानवच्छेदकत्वस्या प्रसिद्ध्या तादृशप्रतियोगिताकसाध्यतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्न–साध्यतावच्छेदकावच्छिन्न–साध्यसामानाधिकरण्यस्याभावात् पूर्वोक्तव्याप्तिलक्षणस्य कालो घटवान् कालपरिमाणत्वात् इत्यत्रा–व्याप्तिः प्रसज्यते। अतस्तद्वारणाय यावत्पदघटितं व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणन्निर्वचनीयम्। निष्कर्षे तु हेतुतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्न–हेतुतावच्छेदकावच्छिन्नहेतुनिष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणता–वदवृत्तयो यत्सम्बन्धावच्छिन्नयद्धर्मावच्छिन्नाः प्रतियोग्यसमानाधिकरणाः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यावन्तोऽभावास्तत् प्रतियोगितानवच्छेदकं यत्साध्यतावच्छेदकं तादृशसाध्यतावच्छेदक सम्बन्धावच्छिन्नसाध्यतावच्छेदकतदितरोभय धर्मानवच्छिन्नसाध्यनिष्ठाधेयता निरूपिताधिकरणताश्रयत्वं व्याप्तिरिति निर्दुष्टं व्याप्तिसिद्धान्तलक्षणमेव मूर्धन्यतया शिरोधार्यमिति रसगङ्गाधरस्य निगूढाशयः। एतावन्तमेतादृशमनितरसाधारणं मर्मगर्भं वैदुष्यपूर्णं निगूढं व्याप्तिसिद्धान्तसमन्वयपूर्वकं साङ्गोपाङ्गमनुमानालङ्कारसिद्धान्तं पण्डितराजजगन्नाथोऽभि वर्णयामासेत्यलमतिविस्तरेणेति दिक्।

***

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भवानन्द–गदाधरदिशा विशेषणोपलक्षणविवेकः

डॉ० सन्तु–सिंहः
असि० प्रोफेसर, संस्कृतविभागः
बाँकुडाविश्वविद्यालयः, पश्चिमबङ्गस्थस्य

उपोद्घातः–काणादं पाणिनीयञ्च सर्वशास्त्रोपकारकम् इति भणितेः पाणिनीयस्येव काणादोपलक्षितस्य न्यायशास्त्रस्यापि व्युत्पत्त्याधायकत्वेन–सर्वशास्त्रोपयोगित्वं विद्वद्भिः समैः समस्वरैः स्वीकृतम्। व्युत्पत्तिमृते शब्दानां स्वारसिकार्थज्ञानाभावः। शब्दार्थज्ञानाभावे च वाक्यार्थज्ञानमप्यसम्भावि। अतश्च व्युत्पित्सुभिर्न्यायशास्त्रमवश्यमध्येतव्यम्। भारतीयदर्शनेष्वनन्यञ्चेदं न्याय–दर्शनं गोतमसूत्रनिबद्धं सद्भ्याष्यवार्तिकादिक्रमेण बहुधा प्रसृतिमगात्। भाष्यवार्त्तिकादिपरम्परा प्राचीनन्याय इत्यभिहितम्। ततश्च गङ्गेशोपाध्या–यादारब्धं रघुनाथभवानन्दजगदीशगदाधरादिनिबद्धं न्यायशास्त्रं नव्यन्याय इत्यभिहितम्। प्राचीननैयायिकैः कृतेऽपि कारकार्थविचारे नव्यनैयायिककृत–विचारो हि विद्वद्गोष्ठ्यां सातिशयं विद्वद्भिराद्रितः। यद्यपि नव्यनैयायिकैर्मूलग्रन्थव्याख्यानवेलायां प्रसङ्गसङ्गत्या कारकार्थो निरूपितस्तथापि मौलिकग्रन्थेष्वपि तैर्नव्यन्यायनयानुगुणं कारकार्थनिरूपणं कृतम्। तत्रापि नव्यनैयायिकेषु पाणिनीयसूत्रमाश्रित्य कारकार्थविचारे भवानन्द–गदाधरौ हि प्रामुख्यं भजेते। तथाहि भवानन्दैः कारकचक्रं नाम शब्दशास्त्रसरणेरतिगहनं कारकविभक्त्याद्यंशं समुद्भासयितुं परमोपयोगि नातिस्थूलकलेवरमपूर्वमेकं ग्रन्थरत्नं प्रणीतम्। भवानन्दो हि नवद्वीपनिवासी वङ्गीयो नैयायिकधुरन्धरः। तदनु च, तार्किकचक्रवर्तिभिर्भट्टाचार्यैर्गदाधरैः वङ्गदेशाभिजनैर्व्युत्पत्तिवादे नव्यन्यायदिशा प्रत्ययार्थो निरूपितः। तत्र भट्टाचार्यैः सुपामर्थाः साडम्बरं प्रतिपादिताः। इत्थमुभाभ्यां भवानन्दगदाधराभ्यां तृतीयाकारके **इत्थम्भूतलक्षणे**[1] इति सूत्रव्याख्यानवेलायां प्रसङ्गसङ्गत्या विशेषणोपलक्षणलक्षणं महता प्रयत्नेन न्यरूपि। तद्धि नव्यन्यायभाषा–

---

1. अष्टाध्याय्याम्, २.३.१८

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जालजटिलं सुकठिनमिति सरलगिरा तत्प्रतिपाद्य किं तत्र सादृश्यं वैसादृश्यं वा, किञ्चात्र तद्वीजमित्यत्र निबन्धे गुरुपयोपनिबद्धुमीहे।

भवानन्ददिशा विशेषणोपलक्षणलक्षणम्–

भवानन्दसिद्धान्तवागीशैः कारकचक्रस्य तृतीयाकारकव्याख्यानवेलायाम् 'इत्थम्भूतलक्षणे' इति सूत्रविवेचने विशेषणोपलक्षणलक्षणं लक्षितम्। तथाहि सिद्धान्तवागीशैरुपलक्षणलक्षणं लक्षितम्– **बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदकत्वे सति तत्समानाधिकरणत्वमुपलक्षणत्वम्।**[2] इति। बोध्या या इतरव्यावृत्तिः अतद्व्यावृत्तिः। बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदकत्वं नाम बोध्येतरव्यावृत्त्यवच्छेदक–भिन्नत्वं बोध्येतरव्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तित्वमिति यावत्। तत्समानाधिकरणत्वं नाम अतापसव्यावृत्तिसमानाधिकरणत्वम्। तथा च, बोध्येतरव्यावृत्तिन्यूना–धिकवृत्तित्वे सति तत्समानाधिकरणत्वमुपलक्षणम्। यथा जटाभिस्तापस इत्यत्र जटा–बोध्येतरव्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तिर्बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदिका अतापसव्या– वृत्तिन्यूनाधिकवृत्तिरिति यावत्। तथाहि केषुचित्तापसेषु जटा वर्तते, तदितरेषु मुण्डितापसेषु न वर्तते। एवञ्च अतापसेषु वञ्चकेषु क्वचिज्जटा वर्तत इति जटायास्तापसत्वन्यूनातिरिक्तवृत्तित्वेन अतापसव्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तित्वरूपं बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदकत्वं सिद्धम्। एवं क्वचित्तापसेषु जटायाः सत्त्वादतापसव्यावृत्तिसमानाधिकरणत्वं नाम तापसत्वाधिकरणवृत्तित्वमपि सिद्धमिति जटाया उपलक्षणत्वं, न तु विशेषणत्वम्। यद्यपि भवानन्दैर्विशेषणस्य किमपि लक्षणं कण्ठतो न कृतं तथाप्युपलक्षणलक्षणं विचार्य भवानन्दसम्मतं विशेषणलक्षणमित्थं वक्तुं शक्यते बोध्येतरव्यावृत्त्यवच्छेदकत्वे सति तत्समानाधिकरणत्वं विशेषणत्वम् इति। यथा शमदमादिमान् तापस इत्यत्र शमदमादिमत्त्वं बोध्येतरव्यावृत्त्यवच्छेदकं नाम अतापसभेदव्यावृत्त्यवच्छेदकम्। शमदमादिमत्त्वं हि तापसेतरभेदान्यूनवृत्तित्वे सति तापसेतरभेदानतिरिक्त– वृत्तित्वेन बोध्येतरव्यावृत्त्यवच्छेदकम्। तथा च, तापसत्वसमानाधिकरणं नाम तापसत्वाधिकरणवृत्तित्वं शमदमादिमत्त्वम्। तेन शमदमादिमत्त्वस्य बोध्येतरव्यावृत्त्यवच्छेदकत्वे सति तत्समानाधिकरणत्वात् विशेषणत्वम्। तथाहि भवानन्दसिद्धान्तवागीशैरुक्तम्– [illegible]

---

२. माधवीटीकायुक्ते कारकचक्रे पृ. ६६

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बोध्येतरव्यावृत्त्यन– वच्छेदकत्वे सति तत्समानाधिकरणत्वम्, जटाया अतापसव्यावृत्त्यन– वच्छेदकत्वात्, शमदमादिमत्त्वस्यैवातापस– व्यावृत्त्यन्यूनानति– रिक्तवृत्तित्वेना– वच्छेदकत्वात्।[३] इति। तथा च तद्व्याख्यायां श्रीमन्माधवतर्कालङ्कारैरुक्तम् **–उपलक्षणत्वञ्चेति। बोध्यः–तापसः, व्यावृत्तिः–भेदः, तथा च प्रकृते तापसेतरभेदानवच्छेदकत्वे सति तापसेतरभेदसमानाधिकरणत्वं पर्यवसितम्, अवच्छेदकत्वञ्चा– न्यूनानतिरिक्तवृत्तित्वरूपं ग्रन्थकृतैवानुपदं व्यक्तीकरिष्यते।**[४] **इति।**

गदाधरदिशा विशेषणोपलक्षणलक्षणम्– भट्टाचार्यैर्व्युत्पत्तिवादग्रन्थे तृतीयाकारके इत्थम्भूतलक्षणे इति सूत्रविचारावसरे विशेषणोपलक्षणयोर्विचार उपस्थापितः। गदाधरनये व्यवर्त्तकत्वाश्रयधर्मो हि द्विविधो विशेषणोपलक्षणभेदात्। गदाधरदर्शितं विशेषणोपलक्षणमधस्तात् निरूप्यते।

प्रथमलक्षणम्– तत्र विशेष्ये वर्तमानं सद्विशेषणम् इति। विशेष्ये चावर्तमानं सदुपलक्षणम्। तथाहि गदितं गदाधरैः**–विद्यमानं सद् व्यावर्तकं विशेषणम्, पुरुषादौ वर्तमानकालावच्छेदेन विद्यमानो दण्डादिः। अविद्यमानं सद व्यावर्तकमुपलक्षणम्, तापसादेः कालान्तरीणजटादिकम्।**[५] इति। तथा च, दण्डी पुरुष इत्यत्र पुरुषे वर्तमानकालावच्छेदेन विद्यमानो दण्डो विशेषणम्। जटाभिस्तापस इत्यत्र च प्रतीतिकाले तापसे अविद्यमाना कालान्तरीयजटा उपलक्षणभूता। तेन जटाभिस्तापस इत्यत्र जटासम्बन्ध एव तृतीयार्थ इति फलितम्। तथा सति तु सम्बन्धार्थकमतुप्रत्यय एव भवतु, न तु तृतीयेति चेन्न वर्तमानसम्बन्धविवक्षायामेव मतुप्प्रत्ययप्रयोगात्। ननु कथं मतुपो वर्तमानसम्बन्धसत्त्वे प्रयोग इति चेन्न तदस्त्यस्मिन्निति मतुप् इति सूत्रे अस्तीति वर्तमाननिर्देशात्। तेनाविद्यमानजटासम्बन्धाविवक्षायां मतुप्प्रयोगासम्भवाद् इत्थम्भूतलक्षणे इति सूत्रेण तृतीया। तथा च, तृतीयया सम्बन्धमात्रं प्रतिपाद्यते, न तु वर्तमानत्वावर्तमानत्वे।

---

३. तत्रैव

४. माधवीटीकायुक्ते कारकचक्रे पृ. १००

५. सादर्शे व्युत्पत्तिवादे पृ. ७४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वितीयलक्षणम्– क्वचिद्विधेयान्तरसमानकालीनमपि विशेषणम्, तदनन्वयितया तदन्वयिन्युपलक्षणम् इति। यथा रूपवान् रसवान् इत्यत्र विधेयान्तरं हि रसः। विधेयान्तरसमानकालीनमपि रससमानकालीनमपि विशेषणं रूपं तदनन्वयितया रसानन्वयितया तदन्वयिनि रसान्वयिनि उपलक्षणम्। वस्तुतः रससमानकालीनमपि रूपादिकं रसान्वयितया रसवति द्रव्ये उपलक्षणम्। एवं हि सास्नावान् गोपदवाच्यः इत्यत्र विधेयान्तरं गोपदवाच्यत्वं, विधेयान्तरसमानकालीनमपि गोपदवाच्यत्वसमानकालीनमपि सास्ना अपि तदनन्वयितया गोपदवाच्यत्वानन्वयितया तदन्वयिनि गोपदवाच्यत्वान्वयिनि गवि उपलक्षणम्।

उक्तवैपरीत्येन विशेषणलक्षणं स्याद् यस्य धर्मस्य धर्मिणि स्वसमानकालीनधर्मान्तरे चान्वयो भवति स विशेषणम् इति। यथा दण्डी अस्ति इत्यत्र वर्तमानकालीनसत्त्वं पुरुषे तदन्वितदण्डे चान्वेतीति विशेषणम्। तथाहि उक्तम्–**क्वचिद्विधेयान्तरसमानकालीनमपि विशेषणं तदन्वयिन्युपलक्षण–मुच्यते। यथा रूपवान् रसवानित्यादौ रूपादिकं रसान्वयिनि। सास्नावान्गोपदवाच्य इत्यादौ सास्नादिकं गवादिवाच्ये।**[६] **इति।**

तृतीयलक्षणम्– क्वचिद्धर्मिसम्बद्धधर्मान्तरसम्बन्ध्यपि धर्मो धर्मान्तर–सम्बन्धितानवच्छेदकतया धर्मान्तरसम्बन्धिन्युपलक्षणम्। तथाहि व्युत्पत्तिवादे गदितम्–**क्वचिद्धर्मिसम्बद्धधर्मान्तरसम्बन्ध्यपि धर्मो धर्मान्तरसम्बन्धितान–वच्छेदकतया धर्मान्तरसम्बन्धिन्युपलक्षणम्। अतो दण्डपुरुषा–वित्यादिसमूहालम्बनबोधो दण्डाद्युपलक्षितपुरुषादिविषयको न तु विशिष्टविषयक इत्युच्यते। विशेष्यसम्बद्धासम्बन्ध्यपि तत्सम्बन्धिता–वच्छेदकतया तद्वति विशेषणम्।**[७] इति। यथा दण्डपुरुषौ इत्यत्र दण्डो ह्युपलक्षणम्। तथाहि धर्मी पुरुषः। धर्मिसम्बद्धधर्मान्तरं द्वित्वम्। धर्मिसम्बद्धधर्मान्तरसम्बन्धी धर्मः दण्डः। स च दण्डरूपो धर्मो द्वित्वरूप–धर्मान्तरनिरूपितसम्बन्धितायाः पुरुषनिष्ठायाः अनवच्छेदक इति द्वित्वसम्बन्धिनि पुरुषे दण्ड उपलक्षणम्।

---

६. तत्रैव पृ. ७८

७. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चतुर्थलक्षणम्–गदाधरसम्मतं चतुर्थं विशेषणोपलक्षणं स्यादभाव-प्रतियोगितावच्छेदकं विशेषणम्, अभावप्रतियोगितानवच्छेदकम् उपलक्षणम् इति। तथाहि नीले घटे नष्टे सति घटत्वनीलयोः समवायस्य नित्यत्वेनासत्त्वविरहादभावाप्रतियोगत्वम्। एवं घटत्वनीलयोरभावा-प्रतियोगित्वाविशेषे अपि घटत्वं प्रतियोगितावच्छेदकमिति विशेषणं तथा नीलमभावप्रतियोगितानवच्छेदकमित्युपलक्षणम्। तथाहि भट्टाचार्यैरगादि–**एवमप्रतियोगित्वाविशेषेऽपि घटसामान्याभावादिप्रतियोगिनि घटत्वादिकं विशेषणम्, नीलादिकमुपलक्षणमित्युच्यते।**[८] **इति।**

पञ्चमलक्षणम्– गदाधरसम्मतं पञ्चमं विशेषणोपलक्षणं स्यात्विद्यमानमप्यत-द्व्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्ति उपलक्षणम् इति, विद्यमानमप्यत-द्व्यावृत्त्यन्यूनानधिकवृत्ति विशेषणम् इति च। अत्र अतद्व्यावृत्तिस्तद्भिन्नभेदः। तन्न्यूनवृत्तित्वं नाम तत्समानाधिकरणाभावप्रतियोगित्वम्, तदधिकवृत्तित्वं नाम तदभाववद्वृत्तित्वम्। यथा जटाभिस्तापस इत्यत्र तापसवृत्तिर्जटा तापसभिन्नभेदवति कस्मिंश्चित्तापसे विद्यमानस्य जटाभावस्य प्रतियोगिभूता तथा तापसत्वाभाववत्सामान्यजनवृत्तिरित्युपलणक्षम्। तथा च, शमदमादिमान् तापस इत्यत्र शमदमादिः तापसभिन्नभेदवति तापसे विद्यमानस्य शमदमाद्यभावस्याप्रतियोगिभूता तथा तापसत्वाभाववत्सामान्यजनावृत्तिरिति विशेषणम्। तथाहि गदाधरैः निरुक्तम्– **क्वचिच्च विद्यमानमप्यतद्व्या-वृत्तिन्यूनाधिकवृत्तितया तत्र न विशेषणमित्युच्यते, किं तूपलक्षणम्, यथा विद्यमानापि जना तापस उपलक्षणं, न तूपलक्ष्यतावच्छेदकशमदमा-दिवद्विशेषणमित्यलम्।**[९] इति।

विशेषणोपलक्षणलक्षणे भवानन्द–गदाधरयोर्मतविवेकः–

भवानन्दसिद्धान्तवागीशैः अवच्छेदकत्वम् अनवच्छेदकत्वञ्चाश्रित्य विशेषणोपलक्षणलक्षणं लक्षितम्। अत्रेदं वक्तव्यं यद् भवानन्दैरुपलक्षणस्यैव कण्ठतो लक्षणं कृतं न तु विशेषणस्य। भवानन्दः विशेषणोपलक्षणविषये

---

८. तत्रैव, पृ. ८०

९. तत्रैव

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साक्षादेव उपाध्यायान् गङ्गेशान् अनुगच्छति। तथाहि गङ्गेशोपाध्यायैस्तत्त्वचिन्तामणिग्रन्थे विशेषणोपलक्षणलक्षणं कृतम्–एवञ्च, **प्रत्याय्यव्यावृत्त्यधिकरणतावच्छेदकत्वे सति व्यावर्तकं विशेषणं, तदन्यव्यावर्तकमुपलक्षणम्।**[१०] इति। भट्टाचार्यैः कृतानि विशेषणोपलक्षणलक्षणानि विचार्यैतद्वक्तुं शक्यते यदन्ततो गत्वा भट्टाचार्यैरप्यवच्छेदकत्वमनवच्छेदकत्वञ्चाश्रित्य विशेषणोपलक्षणलक्षणं विहितम्। तथा च, क्वचिद्धर्मिसम्बद्धधर्मान्तरसम्बन्ध्यपि धर्मो धर्मान्तरसम्बन्धितानवच्छेदकतया धर्मान्तरसम्बन्धिन्युपलक्षणम् इति, अभावप्रतियोगितावच्छेदकं विशेषणम्, अभावप्रतियोगितानवच्छेदकम् उपलक्षणम् इति, क्वचिच्च विद्यमानमप्यतद्व्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तितया तत्र न विशेषणमित्युच्यते, किं तूपलक्षणम् इत्येवंविधैस्तैः अवच्छेदकानवच्छेदकत्वाश्रितं हि विशेषणोपलक्षणलक्षणं कृतम्। अत्रेदमवधेयं यत् क्वचिच्च विद्यमानमप्यतद्व्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तितया तत्र न विशेषणमित्युच्यते इत्यत्र साक्षाद् अवच्छेदकानवच्छेदकशब्दमप्रयुज्य तैरनवच्छेदकरूपं न्यूनाधिकवृत्तित्वं लक्षणे प्रयुक्तमित्येव विशेषः। किञ्च, गदाधरकृतमन्तिममुपलक्षणलक्षणं क्वचिच्च विद्यमानमप्यतद्व्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तितया तत्र न विशेषणमित्युच्यते, किं तूपलक्षणम् इति भवानन्दकृतं बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदकत्वे सति तत्समानाधिकरणत्वमुपलक्षणत्वम् इत्युपलक्षणलक्षणं साक्षादनुगच्छति। अत उभयोर्मतं मथित्वैतद्ब्रूमो यन्नास्ति मतेष्वनयोरर्थतो वैमत्यम्। भवानन्दैः यत् प्रयुक्तं बोध्येतरव्यावृत्त्यनवच्छेदकत्वं तस्य स्थाने भट्टाचार्यैस्तत्तात्पर्यमनुसृत्य सरलतयोक्तम् अतद्व्यावृत्तिन्यूनाधिकवृत्तीत्यादिकम् इति शब्दत एव वैभिन्न्यं, न त्वर्थत इति दिक्।

***

१०. तत्त्वचिन्तामणौ पृ. ८३४

Sanskrit Digital Preservation Foundation

वाक्यपदीयदृशा ध्वनिस्फोटयोःसम्बन्धविमर्शः

प्रो. अनिलप्रतापगिरिः
आचार्यः, संस्कृतविभागः
इलाहाबादविश्वविद्यालयः, प्रयागराजः

वाक्यपदीयकारेण भर्तृहरिणा ब्रह्मकाण्डस्य प्रथमायां कारिकायां शब्दतत्त्वं ब्रह्मत्वेन प्रतिपादितम्। तत्र शब्दतत्त्वमितिपदेन स्फोट एव तस्याभिमतमिति प्रतीयते। शब्दस्य द्वैविध्यं प्रदर्शयन्भर्तृहरिःकथयति–

द्वावुपादानशब्देषु शब्दौ शब्दविदो विदुः।
एको निमित्तं शब्दानामपरोऽर्थे प्रयुज्यते।।[1]

अस्यां कारिकायां निमित्तत्वेन य उपादानशब्दो वर्णितः स तु स्फोटः। अन्यो यः उपादानशब्दः अर्थे प्रयुज्यते सः तु ध्वनिरूपः। तस्य स्फोटरूपत्वे अयं हेतुः– **स्फुटति व्यक्तीभवति अर्थो यस्मात् सः स्फोट** इति व्युत्पत्या स्फोट एव अर्थस्य प्रकाशक इति फलति। तस्माद् य उपादानशब्दः अर्थे प्रयुज्यते सः स्फोटादन्यो न भवितुमर्हति। सः शब्दः स्फोटः उच्चार्यमाणशब्दात् पृथग् वर्तते न वा इति जिज्ञासायां भर्तृहरिः कथयति–

आत्मभेदस्तयोः केचिदस्तीत्याहुः पुराणगाः।
बुद्धिभेदादभिन्नस्य भेदमेके प्रचक्षते।।[2]

अस्यां कारिकायां स्फोटभूतशब्दस्य ध्वनिरूपशब्दस्य च वास्तविको भेदोऽस्ति इति केषाञ्चिन्मतं प्रतिपादितम्, परन्तु अन्येषां मते स्फोटरूपशब्दस्य अर्थप्रतिपादकध्वनिरूपशब्दाद् भेदो नास्ति। तयोः अभेदे सत्यपि बुद्धिभेदाद् भेदः प्रतीयते। न चायं भेदः वास्तविकः। मतद्वयेऽपि स्फोटरूपशब्दो योऽर्थप्रतिपादकः स एव अपरस्य प्रकाशननिमित्तभूतस्य ध्वनिरूपशब्दस्य श्रूयमाणस्य कारणं भवति।

---

१. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/४३
२. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/४४

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्फोटरूपं शब्दमेव बुद्धिस्थशब्दत्वेन प्रतिपादयन् भर्तृहरिः कथयति–

अरणिस्थं यथा ज्योतिः प्रकाशान्तरकारणम्।

तद्वच्छब्दोऽपि बुद्धिस्थः श्रुतीनां कारणं पृथक्।।[3]

यथा अरणौ स्थिता ज्योतिः मन्थनक्रियया अभिव्यज्यते तमुपादाय प्रकाशान्तरं समुत्पाद्यते तथैव स्फोटरूपशब्दः यदा बुद्धिस्थो भवति तदा न श्रूयते। यदा च वक्तुः अर्थप्रकाशनेच्छावशात् प्रयत्नविशेषेण वायुना प्रेरितः ध्वनिरूपं लभते तदा स्फोटरूपशब्दः श्रूयते। अस्य श्रवणस्य बुद्धिस्थः शब्दः स्फोटरूप एव कारणं भवति।

स्फोटरूपशब्दस्य बुद्धौ निवेशनं तत्पश्चाद्ध्वनिरूपे बहिः प्रकाशनञ्च भर्तृहरिणा वाक्यपदीय एवं वर्णितम्–

वितर्कितः पुरा बुद्ध्या क्वचिदर्थे निवेशितः।

करणेभ्यो विवृत्तेन ध्वनिना सोऽनुगृह्यते।।[4]

अस्यां कारिकायां स्फोटरूपशब्दस्य बुद्धौ निवेशनस्य प्रक्रिया द्विधा विभज्य इदं वर्णितम्। प्रथमं स्फोटरूपशब्दः अर्थविशेषे अवधारितसम्बन्धस्सन् बुद्धौ प्रवेशं लभते तत्पश्चात् तमेव प्रकाशयितुं वक्तुः इच्छायां सञ्जातायां तस्य प्रयत्नविशेषेण ऊर्ध्वं चरन् वायुः विभिन्नेभ्य उच्चारणस्थानेभ्यः कण्ठताल्वादिभ्यो विवर्तमानो ध्वनिरूपं सम्प्राप्य प्रकाशितो भवति।

वस्तुतस्तु भगवान् भर्तृहरिः शब्दब्रह्माद्वैतवादस्य नूतनं सिद्धान्तं प्रतिपादयति परन्तु शब्दाद्वैतवादसिद्धान्तोऽयं वल्लभाचार्यस्य शुद्धाद्वैतवादेन तुल्यं दरीदृश्यते। शुद्धाद्वैतवादानुसारन्तु यथा सुवर्ण कटक–कुण्डलादिवद् विपरिणमते तथैव ब्रह्म संसाररूपेण विपरिणमते। अनया रीत्यैव शब्दब्रह्म एव संसारस्य विविधपदार्थरूपेण विपरिणमते। यथा ब्रह्मणो वस्तुरूपेण जगतः प्रक्रिया प्रचलति तथैव शब्दतत्त्वस्य अक्षरस्य वस्त्वात्मकपदार्थेन सह वाच्य–वाचकभावरूपेण जगतः प्रक्रिया विवर्तते। अयं संसारः शब्दस्य परिणाम इति वेदपण्डिता जानन्ति। छन्दोभ्यः (शब्देभ्यः) एव इदं विश्वमाविर्भूतम् येन

३. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/४५

४. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/४६

Sanskrit Digital Preservation Foundation

जगतः प्रक्रिया प्रचलति।

भर्तृहरेः विश्वं प्रति दृष्टिरियमेव वर्तते–एकमेव शब्दब्रह्म कालशक्तिवशाद् विविधपदार्थरूपात्मकविश्वरूपेण विपरिणमितम्। कालशक्तिवशात् शब्दब्रह्मणा पदार्थरूपं गृहीतम्। कालशक्तिवशात् पदार्थे षड्भावविकारा ये भावभेदस्य योनयो यस्मात् कारणात् पदार्थेषु भेदा दरीदृश्यन्ते। अत एव एकमपि तद् ब्रह्म संसारे भिन्नमिव प्रतीयते। एषा भिन्नता न तु वास्तविकी अपितु औपाधिकी। ब्रह्मणः एकैव शक्तिः सा तु कालशक्तिः परन्तु षड्भावविकारत्वाद् विविधाः शक्तयो भवन्ति। तासां शक्तीनां समाश्रयादेकं सदपि ब्रह्म जगति अनेकमिव आभासते। आभ्यः शक्तिभ्यः ब्रह्म पृथङ् नास्ति तथापि पृथग्भूत इव आभासते। उक्तं च एतद् भर्तृहरिणा–

एकमेव यदाम्नातं भिन्नं शक्तिव्यपाश्रयात्।
अपृथक्त्वेऽपि शक्तिभ्यः पृथक्त्वेनेव वर्तते।।[५]

शक्तीनां सत्ता स्वीकृता। आसां शक्तीनां समाश्रयेण एव जगतो विचित्रता आपद्यते जगति वर्तमानानां विभिन्नानां भावानां यो भेदो दृश्यते तस्य भेदरूपा भावविकारा एव कारणत्वेन वर्तन्ते। ते भावविकाराः षट् सङ्ग्यायन्ते– जायते–अस्ति–विपरिणामते–वर्धते–अपक्षीयते–नश्यति इति ते भावविकाराः।

स्फोटस्य स्वरूपम्–

१. स्फोट एव अर्थस्य प्रकाशकः

२. अयं बुद्धिस्थः

३. मध्यमा वाग्रूपः

४. बुद्धिस्थः शब्दोऽपि स्फोटो भवति

५. बुद्धिस्थः अथोऽपि स्फोटो भवति

६. यद्यपि स्फोट एक एव बुद्धिस्थः अखण्डरूपः, परन्तु कालशक्तिवशात् तस्मिन् भेदाः दृश्यन्ते

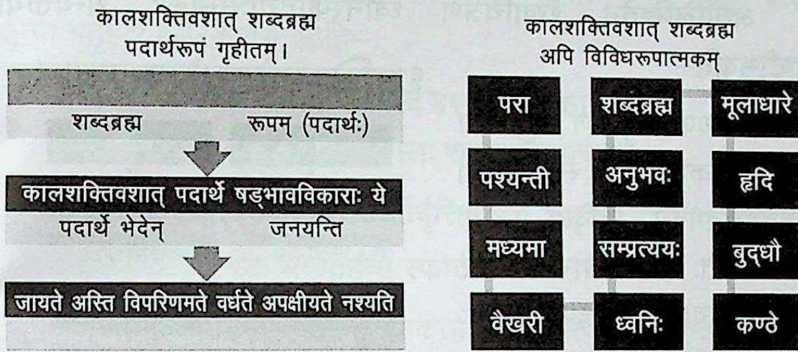
---

५. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/२

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधोलिखितेन रेखाचित्रेण शब्दब्रह्मणस्स्वरूपं विपरिणमनञ्च समुपवर्णितम्–

एकमेव शब्दब्रह्म कालशक्तिवशात् विविधपदार्थरूपात्मकविश्वरूपेण विपरिणमितम्



ध्वनिस्फोटयोर्बिम्बप्रतिबिम्बभावसम्बन्धः–

यथा सूर्यादिबिम्बाः उदके प्रतिबिम्बरूपेण भासमाना आकाशे स्थिता एव सन्तः अपि लोके कम्पादिक्रियावशात् प्रतिबिम्बरूपेण तोयस्य कम्पादिक्रियाम् अनुवर्तन्त इव तथैव बिम्बस्थानीयस्स्फोटः नादस्य द्रुतमध्यमविलम्बिता–दिवृत्तिषु ह्रस्वदीर्घप्लुतादिभेदेषु च अभिद्यमानोऽपि ताः विविधाः वृत्तीः अनुकुर्वन् भिद्यमान इव लक्ष्यते। तस्मात् स्फोटनादयोः बिम्बप्रतिबिम्बभावः सम्बन्धोःयुज्यते।

उच्चारणे सति शब्दे पूर्वापरीभूतो यः क्रमो वर्णानुपूर्वीजन्य उपलभ्यते स नादस्य एव धर्मः। नादो हि क्रमेण जन्यते न तु शब्दः इति भर्तृहरेरभिमतस्य सिद्धान्तः। नादेनैव हि क्रमरूपेण सह कृतः स्फोटः अक्रमोऽपि सन् क्रमयुक्त इव लक्ष्यते सुस्पष्टं चैतद् अस्यां कारिकायाम्–

नादस्य क्रमजन्मत्वान्न पूर्वो न परश्च सः।

अक्रमः क्रमरूपेण भेदवानिव जायते।।[६]

अभिन्नकालोऽपि स्फोटो ध्वनिकालम् अनुपतति। ध्वनिकालस्यैव भेदेन स्फोटस्य वृत्तिभेदः इति कथ्यते तत्र ध्वनिर्द्विविधः प्राकृतो वैकृतश्च। तत्र

६. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/४७

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राकृते ध्वनिः स्फोटरूपं व्यञ्जयति वैकृतश्च अभिव्यक्तेः पश्चात् स्थितिभेदाय कल्पते। परन्तु एतैः भेदैः स्फोटरूपः शब्दो न "भिद्यते" अयमेवार्थः भर्तृहरिणा एवं प्रकटीकृतः–

अधोलिखितेन रेखाचित्रेण ध्वनिस्फोटयोःसम्बन्धः सम्यक्तया स्पष्टीभवति–

ध्वनिस्फोटयोस्सम्बन्धः

स्फोटः	ध्वनिः
बिम्बः	प्रतिबिम्बः
नित्यरूपः	कार्यरूपः
जातिः	व्यक्तिः
	प्राकृतध्वनिः
	वैकृतध्वनिः

वाक्यपदीयकारेण भर्तृहरिणा ध्वनेः प्रकारद्वयं स्वीकृतम्। प्राकृतवैकृतभेदेन द्विविधो ध्वनिः समुपवर्णितः। उच्चारणानन्तरं शब्दस्य ह्रस्वदीर्घप्लुतरूपो यो भेदः प्रतीयते सः प्राकृतध्वनेः कालभेदात् शब्दे उपचर्यते। अनेन प्रकृतेन ध्वनिना विना स्फोटरूपम् अनभिव्यक्तं परिछिद्यते। शब्दस्य अभिव्यञ्जनसमये ध्वनिस्फोटयोः नीरक्षीरन्यायेन पृथक्त्वेन उपलब्धिर्न भवति। तस्मात् तं स्फोटं तस्य ध्वनेः प्रकृतिं स्वभावमिव मन्यन्ते। ततः "प्रकृतौ भवः प्राकृतः" इति व्युत्पत्या प्राकृतपदस्य शब्दाभिव्यक्तिनिमित्तो ध्वनिः इति अर्थो भवति। तदुत्तरकाले शब्दस्य स्थितिभेदे यो ध्वनिः निमित्तरूपे उपजायते स ध्वनिः प्राकृताद् ध्वनेः विलक्षण एव भवति। तेन ध्वनिना स्फोटस्य विकारप्राप्ति इव भवति। अतः ध्वनिः अयं वैकृतो ध्वनिः इत्युच्यते। "विकृतः एव वैकृतः" इति प्रज्ञादित्वात् स्वार्थे अण् प्रत्यये सिद्धिः। प्राकृतेन ध्वनिना अभिव्यक्तं स्फोटरूपं येन ध्वनिना प्रचित–प्रचिततरं कालं पौनः पुन्येन अविच्छेदेन उपलभ्यते सः वैकृतो ध्वनिः। यावद् अयं ध्वनिः वैकृतरूपः नोपरमति तावत् स्फोट उपलभ्यते इति हि स्थितिः प्राकृतवैकृतध्वनिविषये एवं हि सङ्ग्रहकारः पठति–

शब्दस्य ग्रहणे हेतुः प्राकृतो ध्वनिरिष्यते।
स्थितभेदे निमित्तत्वं वैकृतः प्रतिपद्यते।।[७]

---

७. वाक्यपदीये १.७५, स्वोपज्ञवृत्तिः

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भर्तृहरिस्तु ह्रस्वदीर्घप्लुतादिषु शब्दाभिव्यञ्जनस्य समये प्राकृतध्वनेः कालभेदाद् भेदं मन्यते। शब्दाभिव्यक्तेरनन्तरन्तु वृत्तिभेदे वैकृतो ध्वनिः कारणम् इति तस्य मतम्

एतैर्ध्वनिभिः स्फोटरूपः शब्दो भिन्नतां न भजते। अमुम् एवार्थं मनसि कृत्वा भर्तृहरि कारिकाद्वयं पठति–

स्वभावभेदान्नित्यत्वे ह्रस्वदीर्घप्लुतादिषु।
प्राकृतस्य ध्वनेः कालः शब्दस्येत्युपचर्यते।।
शब्दस्योर्ध्वाभिव्यक्तेर्वृत्तिभेदं तु वैकृताः
ध्वनयः समुपोहन्ते स्फोटात्मा तैर्न भिद्यते।।[८]

शब्दानित्यवादिनां मते तु प्राकृतो ध्वनिः स्फोटो वैकृतो ध्वनिश्च शब्दजन्यत्वाद् ध्वनिः इति कथ्यते एषां मते स्फोटरूपस्य नित्यशब्दस्य अवकाश एव नास्ति। एतेषां मतं भर्तृहरिणा अस्यां कारिकायां उपन्यस्तम्

यः संयोगविभागाभ्यां करणैरुपजन्यते ।
सः स्फोटः शब्दजाः शब्दा ध्वनयोऽन्यैरुदाहृताः।।[९]

एवं भर्तृहरिणा नित्यवादिनां मते प्राकृत–वैकृत भेदेन ध्वनेः प्रकारद्वयं स्वीकृतम्। अनित्यवादिनां मते प्राकृतो ध्वनिरेव स्फोटो वैकृतो ध्वनिश्च ध्वनिमात्रम् इति कथ्यते।

***

---

८. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १७५–७६
९. वाक्यपदीये ब्रह्मकाण्डे १/१०१

Sanskrit Digital Preservation Foun...

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Sanskrit Digital Preservation Foun

'अ
(के
सम

१–

२–

३–

४–

५–

६–

इ

Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh

घोषणा–पत्र

'अजस्रा' नामक समाचारपत्र के सम्बन्ध में समाचारपत्र– रजिस्ट्रीकरण (केन्द्रीय) नियमावली, १९५६ के नियम ८ (१) के अधीन प्रकाशितव्य स्वामित्व–सम्बन्धी तथा अन्य ब्योरे।

प्रारूप चार

१–प्रकाशन का स्थान– अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्, 'देववाणी–भवनम्,' अलीगञ्ज, लखनऊ–२२६ ०२४

२–प्रकाशन की कालिकता– त्रैमासिक (मकर, मेष तथा कर्क, तुला की सङ्क्रान्तियों को)

३–मुद्रक का–
(१) नाम–श्री मनीष मेहता
(२) राष्ट्रिकता–भारतीय
(३) पता–प्नार आफसेट, १७, अशोक मार्ग, हजरतगंज लखनऊ–२२६ ०१८

४–प्रकाशक का
(१) नाम–प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र
(२) राष्ट्रिकता–भारतीय
(३) पता–अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्, 'देववाणी–भवनम्,' लखनऊ–२२६ ०२४

५–सम्पादक का
(१) नाम–प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र
(२) राष्ट्रिकता–भारतीय
(३) पता–अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्, 'देववाणी–भवनम्,' लखनऊ–२२६ ०२४

६–स्वामी का नाम और पता– अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्, 'देववाणी–भवनम्,' लखनऊ–२२६ ०२४

मैं, प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र, एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि ऊपर दिये हुये ब्योरे मेरे पूर्णतम ज्ञान और विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

(ह.) प्रो० प्रयाग नारायण मिश्र
प्रकाशक (अखिल भारतीय संस्कृत–परिषद्,
लखनऊ की ओर से)

Sanskrit Digital Preservation

ISSN : 2278-3741

पञ्ची. सङ्ख्या आर. एन. २६२३२/७७
अङ्काः १ – ४
वर्षद्वयम् ४५–४६



Sanskrit Digital Preservation Foundation, Chandigarh